भूमिका।

श्री हरिश्चन्द्रकला की आरम्भिक भूमिका में मैंने यह प्रतिज्ञा की थी कि
महामान्य गोलोकवासी भारतेन्दु के रचित तथा संगृहीत अन्यान्य विषयों के
पृथक् २ प्रकाशित करूंगा, तथा उसी के अनुसार प्रथमखंड में केवल नाटक,
प्रहसन इत्यादि का संग्रह किया गया और अब इस दूसरे भाग में ऐतिहासिक
विषय मात्र प्रकाशित किये जाते हैं।

यद्यपि बाबू हरिश्चन्द्र जी का ऐतिहासिक अनुभव इतना अधिक था कि वह
किसी एक देश का कोई विशेष इतिहास लिखते तथापि इस ओर उन की रुचि
नहीं हुई और कहा करते थे कि देशों के बड़े २ इतिहास बने हुए है उन में
करने की आवश्यकता नहीं। महामान्य उक्त बाबूसाहिब को सदा प्राचीन
तथा अप्राप्य वस्तुओं की खोज रही और इसी से उन्होंने इतिहास सम्बन्धी
विषयों मे भी प्राचीन तथा अपूर्व संग्रहों का विशेष ध्यान रक्खा। इस भाग में
१३ ग्रंथ हैं और उन में एक से एक उत्तम कहे जा सकते है, परन्तु काश्मीर
कुसुम, बादशाहदर्पण, पुरावृत्त संग्रह, रामायण का समय और चरितावली
अधिक प्रशंसनीय हैं और उन के निर्माण में ग्रंथकार को जो परिश्रम हुआ होगा
वह सहजही में पाठकों को विदित हो सकता है। पुरावृत्त संग्रह में अनेक
प्राचीन लिपी तथा चरितावली के अन्त में अलभ्य जन्म कुंडलियों का होना क्या
साधारण बात समझी जा सकती है, कदापि नहीं।

इस स्थान पर मेरा यह कहना अनुचित न होगा कि भारतेन्दुजी के इति-
हास सम्बन्धी समस्त लेख तथा संग्रह मुझे अभीतक प्राप्त नहीं हुए। जहां लों
हुए मुद्रित किये और शेष के परिशोध में हूं क्योंकि बाबू साहिब के संग्रहों
हाल सुन २ कर चित्त आकुल हो जाता है कि कैसे और कहां से उन को
संवत् १९४९ में जो ऐतिहासिक विषय छप चुके हैं उस के अनन्तर
के स्नेह भाजन श्री बाबू राधाकृष्ण दास जी से "कालचक्र" नाम
प्राप्त हुआ है और इसी प्रकार से एक सज्जन के पास दो अल्बम्
के सुने गये जिन में शाही फार्सी पत्रों का संग्रह है, अतः उन
द्रव्य दे कर दोनों अल्बम् के लिये गये। देखने पर ज्ञात हुआ कि
बहुतेरे पुरातन पत्र निकल गये तथापि इतनी लिपियां उन में है कि
का एक असाधारण ग्रन्थ बन सकता है। एक मित्र ने मुझ ऐ

कहा है कि किसी के यहां बाबूसाहिब की संग्रह की हुई २०० से अ प्रशस्तियां हैं, उन को भी ला दूंगा, निदान इसी भांति जहां कहीं उस सर्वसंग्र के भाण्डार का पता लगता है उस की प्राप्ति का यत्न किया जाता है आशा है कि कालक्रम से अनेक अलभ्य वस्तुएं हाथ आ जायगी।

ऊर्द्धोक्त ग्रंथों के मुद्रण होने के पश्चात् जो विषय प्राप्त हुए उन को इस लिये इस खण्ड में प्रकाशित नहीं किया कि जब सब स्फुट लेख एकत्रित हो जांय तो सर्व-संग्रह का एक भाग पृथक् ही छाप दिया जाय।

श्रीमान् भारतेन्दु के ग्रन्थों के विषय में यथार्थ प्रशंसा का दम भरना झख मारना है क्योंकि जो कुछ हम लोग न कह सकैंगे वह सब ग्रन्थ ही आप से आप पुकारेंगे परन्तु जिन अनुरक्त महानुभावों ने अपने हृदय का उद्गार प्रकाटित किया है उस का गोपन करना भी कृतघ्नता है अत: निज सम्मति कुछ न लिख कर चन्द्रकला की जहां कों समालोचना प्राप्त हुई हैं उन को इस ग्रंथ के अन्त में (६ ठा खंड के अंत में) एकत्रित कर के रख दिया है, सहृदय उन के पढ़ने से अधिक आनन्द होगा।

प्रकाशक.

ग्रन्थसूची।

KASHMIR FLOWER.

CONTAINING

A SHORT HISTORY OF KASHMIR,

A GENEALOGICAL TABLE OF RAJAS

WITH DATES, &C., SRI HARSA,

A REVIEW OF KALHANA'S RAJATARANGINI

AND A SHORT HISTORY

OF THE

PRESENT JAMBOO RAJ FAMILY,

———o———

काश्मीर कुसुम

अथवा

राजतरंगिणी कमल

(काश्मीर का संक्षिप्त इतिहास, राजाओं के नाम और समय का सविस्तर चक्र, राजतरंगिणी की समालोचना, श्रीहर्ष और वर्तमान महाराज काश्मीर के वंश का छोटा इतिहास)

श्री हरिश्चन्द्र लिखित

'कोऽन्यः कालमतिक्रान्तं नेतुं प्रत्यक्षतां क्षमः ।
कवीन् प्रजापतींस्त्यक्त्वा रम्यनिर्माणशालिनः' ॥
'भुजतरुवनच्छायां येषां निषेव्य महौजसां ।
जलधिरसनामेदिन्यासीदसावकुतोभया ॥
स्मृतिमपि न ते यान्ति क्ष्मापा विना यदनुग्रहं ।
प्रकृतिमहते कुर्मस्तस्मै नमः कविकर्मणे' ॥

बांकीपुर

खड्गविलास छापेखाने में छापा गया ।

सन् १८८७ ई० । विक्रमाब्द १९४४ । हरिश्चन्द्र सम्वत् ३ ।
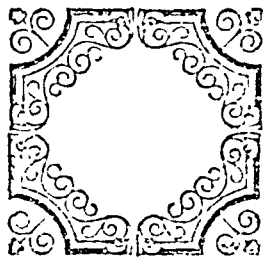
भूमिका।

भारतवर्ष के निर्मल आकाश में इतिहास चन्द्रमा का दर्शन नहीं होता क्योंकि भारतवर्ष की प्राचीन विद्याओं के साथ इतिहास का भी लोप हो गया। कुछ तो पूर्व समय में शृङ्खलाबद्ध इतिहास लिखने की चाल ही न थी और जो कुछ बचा बचाया था वह भी कराल काल के गाल में चला गया। जैनों ने वैदिकों के ग्रन्थ नाश किए और वैदिकों ने जैनों के। एक राजधानी में एक वंश राज्य करता था जब दूसरे वंश ने उस को जीता तो पहले वंश की संपूर्ण वंशावली के ग्रन्थ जला दिए। कवियों ने अपने अन्नदाता के झूठी प्रशंसा की कहानी जोड़ लीं और उनके जो शत्रु थे उनकी सब कीर्ति लोप कर दीं। यह सब तो था ही अन्त में मुसल्मानों ने आकर जो कुछ बचे बचाए ग्रन्थ थे जला दिए। चलिए छुट्टी हुई। ऐसी काली घटा छाई कि भारतवर्ष के कीर्तिचन्द्रमा का प्रकाश ही छिप गया। हरिश्चन्द्र, राम, युधिष्ठिर से महानुभावों की कीर्ति का प्रकाश अति उत्कट था इसी से घनपटल को वेध कर अब तक हम लोगों के अंधेरे हृदय को आलोक पहुंचाता है। किन्तु ब्रह्मा से ले कर आज तक और जितने बड़े बड़े राजा या बीर या पंडित या महानुभाव हुए किसी का समाचार ठीक ठीक नहीं मिलता। पुराणादिकों में नाम मिलता है तो समय नहीं मिलता।

ऐसे अंधेरे में काश्मीर के राजाओं के इतिहास का एक तारा जो हम लोगों के दिखलाई पड़ता है इसी को हम कई सूर्य से बढ़ कर समझते हैं। सिद्धान्त यह कि भारतवर्ष में यही एक देश है जिसका इतिहास शृङ्खलाबद्ध देखने में आता है और यही कारण है कि इस इतिहास पर हमारा ऐसा आदर और आग्रह है।

काश्मीर के इतिहास में कल्हण कवि की राजतरंगिणी ही मुख्य है। यद्यपि कल्हण के पहले सुव्रत क्षेमेन्द्र हेलाराज नीलमुनि पद्ममिहिर और श्री छविल्लभट्ट आदि ग्रन्थकार हुए हैं किन्तु किसी के ग्रन्थ अब नहीं मिलते। कल्हण ने लिखा है कि हेलाराज ने बारह हजार ग्रन्थ काश्मीर राजाओं के वर्णन के एकत्र किए थे। नीलमुनि ने इस इतिहास में एक बड़ा सा पुराण ही बनाया था किन्तु हाय! अब वे ग्रन्थ कहीं नहीं मिलते। काश्मीर के बचे बचाए जितने ग्रन्थ थे सब दुष्टों ने जला दिए। आर्यों की मन्दिर मूर्ति आदि में कारीगरी, कितिस्तम्भादिकों के लेख और पुस्तकों का इन दुष्टों के

हाथ से समूल नाश हो गया। परशुराम जीने राजाओं का यद्दीस्सात नाश किया किन्तु इन्हीं ने देह बल विद्या धन प्राण की कौन कहै कीर्ति का भी नाश कर दिया।

कल्हन ने जयसिंह के काल में सन् ११४८ ई० में राजतरंगिणी बनाई। यह काश्मीर के अमात्य चम्पक का पुत्र था और इसी कारण से इसको इस ग्रन्थ के बनाने में बहुत सा विषय सहज ही में मिला था।

इसके पीछे जोन राजने १४१२ में राजावली बनाकर कल्हण से लेकर अपने काल तक के राजाओं का उस में वर्णन किया। फिर उसके शिष्य श्री बरराज ने १४७७ में एक ग्रन्थ और बनाया। अकबर के समय में प्राज्यभट्ट ने इस इतिहास का चतुर्थ खंड लिखा। इस प्रकार चार खंडों में यह काश्मीर का इतिहास संस्कृत में श्लोकबद्ध विद्यमान है।

महाराज रनजीत सिंह के काल में जान मैकफेयर नामक एक यूरोपीय विद्वान ने काश्मीर से पहिले पहल इस ग्रन्थ का संग्रह किया। विल्सन साहब ने एशियाटिक रिसर्चेज़ में इसके प्रथम छ सर्ग का अनुवाद भी किया था।

इसी राजतरंगिणी ही से यह इतिहास मैंने लिखा है। इस में केवल राजाओं के समय और बड़ी बड़ी घटनाओं का वर्णन है। आशा है कि कोई इस को सविस्तर भी निर्माण करके प्रकाश करेगा।

राजतरंगिणी छोड़ कर और और भी कई ग्रन्थों और लेखों से इस में संग्रह किया है। यथा आइने अकबरी, ··· ··· ··· का फारसी इतिहास, एशियाटिक सोसाइटी के पत्र; विलसन, विल्फर्ड, प्रिंसिप, कनिंगहम, टाड, विलिअमस्, गोरीन और ड्रायर आदि के लेख, बाबू जोगेशचन्द्रदत्त की अङ्गरेज़ी तवारीख़, दीवानक्रपाराम जी की फारसी तवारीख़ आदि।

बहुतों का मत है कि काश्मीर शब्द काश्यपमेरु का अपभ्रंश है। पहले पहल काश्यप मुनि ने अपने तपोबल से इस प्रदेश का पानी सुखा कर इस को बसाया था। इन के पीछे गोनर्द तक अर्थात् कलियुग के प्रारम्भ तक राजाओं का कुछ पता नहीं है। गोनर्द से ही राजाओं का नाम शृङ्खलाबद्ध मिलता है। मुसल्मान लेखकों ने इस के पूर्व के भी कई नाम लिखे हैं किन्तु वे सब ऐसे अशुद्ध और प्रति शब्द में खां उपाधि विशिष्ट हैं कि उन नामों पर श्रद्धा नहीं होती।

गोनर्द से लेकर सहदेव तक पूर्व में सैंतीस सौ बरस के लगभग डेढ़ सौ हिन्दू राजाओं ने कश्मीर भोगा फिर पूरे पांच सौ बरस मुसल्मानों ने इस का उत्पीड़न किया। (बीच में बागी हो कर यद्यपि राजा सुखजीवन ने ८ बरस राज्य किया था पर उस की कोई गिनती नहीं) फिर नाममात्र को कश्मीर मुसल्मानी राज्यभुक्त होकर आज चौंसठ बरस से फिर हिन्दुओं के अधिकार में आया है। अब ईश्वर सर्वदा इस को उपद्रवों से बचावे। एवमस्तु।

—※—

कश्मीर के वर्त्तमान महाराज की संक्षिप्त वंशपरम्परा यों है। ये लोग कछवाहे क्षत्री हैं। जैपुरप्रान्त से सूर्यदेव नामक एक राजकुमार ने आकर जम्बू में राज्य का आरम्भ किया। उस के वंश में भुजदेव, अवतारदेव, यशदेव, कृपालुदेव, चक्रदेव, विजयदेव, नृसिंहदेव, अजैनदेव और जयदेव ये क्रम से हुए। जयदेव का पुत्र मालदेव बड़ा बली और पराक्रमी हुआ। इसने हंसी हंसी में पचास पचास मन के जो पत्थर उठाए हैं वह उसकी अचल कीर्त्ति बन कर अब भी जम्बू में पड़े हैं। उस के पीछे हम्बीर देव, अजैव्यदेव, वीरदेव, घोगड़देव, कर्पूरदेव और सुमहलदेव क्रम से राजा हुए। सुमहलदेव के पुत्र संग्रामदेव ने फिर बड़ा नाम किया। आलमगीर इन की वीरता से ऐसा प्रसन्न हुआ कि महाराजगी का पद छत्र चंवर सब कुछ दिया। ये दक्षिण की लड़ाई में मारे गए। इन के पुत्र हरिदेव ने और उनके पुत्र गजसिंह ने राज को बहुत ही बसाया। सब प्रकार के नियम बांधे और महल बनवाए। गजसिंह के पुत्र ध्रुवदेव ने बहुत दिन तक ऐश्वर्य पूर्वक राज्य किया। ध्रुवदेव के रणजीतदेव और सूरतसिंह पुत्र थे। रणजीतदेव को व्रजराजदेव और उन को निज परम्परा सम्पूर्ण कारी सम्पूर्णदेव हुए। सम्पूर्णदेव को सन्तति न होने के कारण रणजीतदेव के दूसरे पुत्र दलेलसिंह के पुत्र जैतसिंह ने राज्य पाया। महाराज रणजीतसिंह लाहोरवाले के प्रताप के समय में जैतसिंह को पिनशिन मिली और जम्बू का राज्य लाहोर में मिल गया। जैतसिंह के पुत्र रघुवीरदेव के पुत्र पौत्र अब अम्बाले में हैं और सर्कार अङ्गरेज़ से पिनशिन पाते हैं। ध्रुवदेव के दूसरे पुत्र सूरतसिंह को जोरावरसिंह और मियां मोटासिंह दो पुत्र थे। मियां मोटा को विभूतिसिंह और उन को एक पुत्र व्रजदेव हैं जिन को वर्त्तमान महाराज जम्बू ने क़ैद कर रक्खा है। जोरावरसिंह को किशोरसिंह और उन को तीन पुत्र हुए, गुलाबसिंह, ध्यान-

सिंह और ध्यानसिंह। महाराज गुलाबसिंह ने महाराजाधिराज रणजीतसिंह से जम्बू का राज्य फिर पाया। सुचेतसिंह का वंश नहीं रहा। राजा ध्यानसिंह को हीरासिंह जवाहरसिंह और मोतीसिंह हुए जिन में राजा मोतिसिंह का वंश है। महाराज गुलाबसिंह के उद्धवसिंह रणधीरसिंह और रणवीरसिंह तीन पुत्र हुए। प्रथम दोनों नौनिहालसिंह और राजा हीरासिंह के साथ भ्रम से मर गए इस से महाराज रणवीरसिंह वर्त्तमान जम्बू और काश्मीर के महाराज ने राज्य पाया। इन के एक वैमात्रेय भाई मियां छट्टूसिंह है जिन को महाराज ने क़ैद कर रक्खा था पर सुनते हैं कि आज कल वह क़ैद से निकल कर नैपाल प्रान्त में चले गए हैं। सन् १८६१ में महाराज को जी० सी० एस० आई० का पद सर्कार ने दिया और १८६२ में दत्तक लेने का आज्ञापत्र भी दिया। इन को २१ तोप की सलामी है। दिल्ली दरबार में इनको और भी अनेक आदरसूचक पद मिले हैं। ये संस्कृत विद्या और धर्म के अनुरागी हैं। इनको तीन पुत्र हैं यथा युवराजप्रतापसिंह, कुमार रामसिंह और कुमार अमरसिंह *।

राजतरङ्गिणी की समालोचना।

जिस महाग्रन्थ के कारण हम लोग आज दिन काश्मीर का इतिहास प्रत्यक्ष करते हैं उस के विषय में भी कुछ कहना यहां बहुत आवश्यक है। इस ग्रन्थ को कल्हण कवि ने शाके एक हज़ार सत्तर १०७० में बनाया था उस समय तीसरे गोनर्द से तेईस सौ तीस बरस बीत चुके थे। इस ग्रन्थ की संस्कृत क्लिष्ट और एक विचित्र शैली की है। कवि के स्वभाव का जहां तक परिचय मिला है ऐसा जाना जाता है कि वह उद्धत और अभिमानी था किन्तु साथही यह भी है कि उसकी गवेषना अत्यन्त गम्भीर थी। नीलपुराण छोड़

* वर्त्तमान महाराजके पारिषद्वर्ग भी उत्तम हैं। इन के एक बड़े शुभ चिन्तक पण्डित रामकृष्ण जी थे कई वर्ष हुए लोगों ने षड्चक्र कर के राज्य से अलग कर दिया था और अब उनके पुत्र पण्डित रघुनाथ जी काशीमें रहते हैं। महाराज के अमात्य दीवान ज्वाला सहाय के पौत्र दीवान कृपाराम के पुत्र दीवान अनन्तराम जी हैं, जो अङ्गरेजी फ़ारसी आदि पढ़े और सुचतुर है। बाबूनीलाम्बर मुकुर्जी बाबू गणेशचौबे प्रभृति और भी कई चतुर लोग राज्यकार्य में दक्ष हैं।

कर ग्यारह प्राचीन ग्रन्थ इसने इतिहास के देखे थे । केवल इन्हीं ग्रन्थों के भरोसे इसने यह ग्रन्थ नहीं बनाया वरंच आजकल के पुरातत्ववेत्ता (Antiquarians) की भांति प्राचीन राजाओं के शासनपत्र दानपत्र तथा शिवालय आदि की लिपि भी इसने देखी थीं। (प्रथम तरंग १५ श्लोक देखो) यह मन्त्री का पुत्र था इस से सम्भव है कि इन वस्तुओं को देखने में इसको इतना परिश्रम न पड़ा होगा जितना यदि कोई साधारन कवि बनाता तो उस को पड़ता । इस ग्रन्थ में आठ हजार श्लोक हैं। साढ़े छ सौ बरस कलियुग बीते कौरव पांडवों का युद्ध हुआ था यह बात इसी ने प्रचलित की है। जरासन्ध के युद्ध में काश्मीर का पहला राजा गोनर्द मारा गया यहां से कथा का आरम्भ है *। इसी आदि गोनर्द के पुत्र को श्रीकृष्ण ने गान्धार देश के स्वय-

---

* इस ग्रन्थ कर्त्ता के पिता श्रीयुत कविवर गिरिधरदास जी ने अपने जरासन्धवध नामक महाकाव्य में जरासन्ध की सेना में काश्मीर के आदि गोनर्द के वर्णन में कई एक छन्द लिखा है वह भी प्रकाश किया जाता है (२ सर्ग ४० छन्द)

चलेउ भूप गोनर्द वर्दवाहन समान बल,
संग लिये बहु मर्द सर्द लखि होत अपर दल ।
फेंटा सीस लपेटा गल मुकता को माला,
सिर केसर को पुंड्र धरे पचरङ्ग दुमाला ।
रथ चारु जराऊ सोहतो रूप सबन मन मोहतो,
कासमीर भूप अरि बिसि लसी मथुरापुर दिसि जोहतो ॥

(६ सर्ग २५ छन्द)

छप्पय—मद्रक मुश्नक पनस किंपुरुस द्रुमन्टप कोसल,
सोमदत्त वाल्हीक भूरि सह भूरिस्रवा खल ।
युधामन्यु गोनर्द अनामय पुनि उतमौजा,
चेकितान अरु अङ्ग वङ्ग कालिङ्ग महौजा ।
न्टपवृहत छत्र कैसिक मुदित आहूति सहित भुआल सब ।
चढ़ि लरें द्वार पश्चिम जबर अरि गति पश्चिम देन ढब ॥

(१० सर्ग ११ छन्द)

कैसिकन्टप अति विक्रमवन्त, अरिमरदन संगभिस्रोतुरन्त ।
धरम वृद्ध गोनर्द महीप, करन लगे रथ जोरि समीप ।

रन में मारा और उसकी सगर्भा रानी को राज्य पर बैठाया। उस समय श्रीकृष्ण ने कश्मीर की महिमा में एक पुरान का श्लोक कहा (१त० ३२श्लोक) यही प्रकरण इस बात का प्रमाण है कि काश्मीर का राज्य बहुत दिन से प्रतिष्ठित है। इस रानी के पुत्र का नाम द्वितीय गोनर्द हुआ जो महाभारत के युद्ध में मारा गया। इसी से स्पष्ट है कि पूर्वोक्त तीनों राजा जवानी ही में मरे क्योंकि एक पांडवों के काल में तीनों का वर्णन आया है। इन लोगों के अनेक काल पीछे अशोक राजा जैनी हुआ। इसी ने श्रीनगर बसाया। इसके पीछे जलौक राजा प्रतापी हुआ जिसने कान्यकुब्जादि देश जीता। यह शैव था (भारतवर्ष में मूर्तिपूजा और शैव वैष्णवादि मत बहुत ही थोड़े काल से चले हैं यह कहने वाले महात्मागण इस प्रसंग को आंख खोल कर पढ़ें) (१ त० ११३ श्लो०) फिर हुष्क जुष्क और कनिष्क ये तीन विदेशी (Bactro-Indian-tribe) राजा हुए। इन के समय में शाक्य सिंह को हुए डेढ़ सौ बरस हुए थे। (१ त० १७१ श्लोक) इस से स्पष्ट होता है कि राजतरंगिणी के हिसाब से

हरिगीती छन्द—तहं कासमीरी भूमिपति गोनर्द धनु टङ्कारि कै ।
भट धर्म वृद्धहि छाय दीनो मारु मारु पुकारि कै ।
सुफलक सुवन धनु धरि निज अहि सरिस बान प्रहारि कै ।
सब काटि कै दुसमन विसिख महि मध्य दीनो डारि कै ॥ ८५ ॥
गोनर्द तब बोलत भयो तू ज्ञान प्रगट लखात है ।
क्यों धर्म वृद्ध कहात है आचरज यह अधिकात है ।
पै एक बात बिचार करि संदेह मेरो जात है ।
रन धरम हुदन को धरै अति सिथिल तेरो गात है ॥ ८६ ॥
जदुबीर अब बोलत भयो नृप सांच तोहि बातै कहैं ।
हम धर्म वृद्ध कहात हैं पै करम वृद्ध नहीं अहैं ।
अरु धर्म वृद्ध को नाम है सो वृद्ध बहु दिन को भयो ।
गोनरंद तू रद रहित बूढ़ो पतिहि क्यों चाहै नयो ॥ ८७ ॥
इमि बचन सुनि सुफलक सुवन के कासमीरी कोपि कै ।
बहु बरखि आयुध वारिधर सम दियो पर रथ लोपि कै ।
तिमि धर्म्मवृद्ध बजाय धनु सर त्याग कीने चोपि कै ।
गोनर्द सस्त्र उड़ायकै गरज्यो विजय पन रोपि कै ॥ ८८ ॥

शाक्यसिंह को हुए पचास सौ बरस हुए। इसी समय में नागार्जुन नामक सिद्ध भी हुआ। इन के पीछे अभिमन्यु के समय में चन्द्राचार्य ने व्याकरण के महाभाष्य का प्रचार किया और एक दूसरे चन्द्रदेव ने बौद्धों को जीता। कुछ काल पीछे मिहिरकुल नामक एक राजा हुआ। इस के समय की एक घटना विचारने के योग्य है। वह यह कि इस की रानी सिंहल का बना रेशमी कपड़ा पहने थी उस पर वहां के राजा के पैर की सोनहली छाप थी। इस पर काश्मीर के राजा ने बड़ा क्रोध किया और लङ्का जीतने चला। तब लङ्कावालों ने 'यमुषदेव' नामक सूर्य के बिम्ब के छापे का कपड़ा दे कर उस से मेल किया (१ त० ३०० श्लो०) इस से स्पष्ट होता है कि चांदी सोने से कपड़ा छापना लंका में तभी से प्रचलित था। अद्यापि दक्षिण हैदराबाद में (लंका के समीप) छापा अच्छा होता है। उस समय तक भाट्ट (Bhatti) दारद (Dardareans) और गांधार (Kandharians) ब्राह्मण होते थे।

फिर तुंजीन नामक राजा के समय में चन्द्रक कवि ने नाटक बनाया (२ त० १६ श्लो०] इसकी समय में एक बात और आश्चर्य की लिखी है कि एक समय बड़ा काल पड़ा था तो परमेश्वर ने कबूतर बरसाये थे। (२ त० ५१ श्लो०) और हर्ष नामक एक कोई और राजा उस काल में हुआ था। इस राजा के कुछ काल पीछे सन्धिमान राजा की कथा भी बड़ी था यों की लिखी है कि वह सूली दिया गया था और फिर जी गया इत्यादि। विक्रमादित्य के मरने के थोड़े ही समय पीछे प्रवरसेन राजा ने नाव का पुल बांधा और वह ललाट में त्रिशूल की भांति तिलक देता था (३ त० ३५६ और ३६७ श्लो०)

जयापीड राजा का समय फिर ध्यान देने के योग्य है। क्योंकि इस के समय में कई पण्डित हुए हैं। जिन में शंकु नामक कवि ने मम्म और उत्पल की लड़ाई में भुवनाभ्युदय नामक काव्य बनाया था। (४ त० २५ श्लो०) इसी के समय में वामन नामक वैयाकरण पण्डित हुआ है जिस की कारिका प्रसिद्ध है। (४ त० ४८७ से ४९४ श्लो० तक) इसी वामन का बोपदेव ने खण्डन किया है (बोपदेव महाग्राहग्रस्तो वामने कुंजरः (इस से बोपदेव जयापीड़ के समय (७५ ई०) के पीछे हुए हैं यह सिद्ध होता है। जयापीड ने द्वारका फिर से बसा कर मन्दिर बनवाए। (४ त० ५६० श्लो०) और उस समय नेपाल का राजा अरमुड़ि था। (४ त० ५२८ श्लो०)

राजा शंकरवर्मा का समय भी दृष्टि देने के योग्य है। इस के पास ९०० हाथी लाख घोड़े और नौ लाख प्यादे थे। उस समय गुजरात में 'खालान खान' का ज़ोर था। दरद और तुरुष्क देश के राजा भारत में बड़ा उपद्रव मचाए हुए थे। लल्लियशाह खानालखान का सर्दार था। (५ त० १५३ से १६० श्लो० तक) इस ग्रन्थ में मुसल्मानों का वर्णन पहले यहीं आया है। इस से स्पष्ट होता है कि ईसवी नवीं शताब्दी के अन्त तक जो मुसल्मान चढ़ाई करते थे वे गुजरात की राह से करते थे उत्तर पच्छिम की राह नहीं खुली थी। इस तरंग में कायस्थों की बड़ी निन्दा की है (४ त० ६२५ श्लो० से और ५ त० १७८ श्लो० आदि)

चतुर्थ और पञ्चम तरङ्ग में कई बात और भी दृष्टि देने के योग्य हैं। जैसे तांबे की 'दीनार' पर राजाओं का नाम खुदा रहना। (४ त० ६२० श्लो०) जहां पथिक टिकें उस स्थान का नाम गंज (४ त० ५८२ श्लो०) रुपयों की हुण्डिका (हुण्डी) का प्रचार। (५ त० १५८ श्लो०) मेष के ताज़े चमड़े पर खड़े होकर तलवार ढाल हाथ में लेकर शपथ खाना इत्यादि। (५ त० ३३० श्लो०) इसी तरंग में गानेवालों का नाम डोम लिखा है। (५ त० ३५८ श्लो०) यह दीनार गंज हुण्डी और डोम शब्द अब तक भाषा में प्रचलित हैं वरंच मीरहसन ने भी 'वडोमनपना' लिखा है। जैसा इस काल में रंडी और उन की बुढ़िया तथा भडुओं के समझने की और साधारण लोग जिस में न समझें* ऐसी एक भाषा प्रचलित है वैसीही उस काल में भी थी। गानेवाले को हेलू गांव दिया गया इसकी उस काल की भाषा हुई 'रंगस्सहेलुदिराणा' (५ त० ४०२ श्लो०)

षष्ठतरंग में दिद्दारानी का उपद्रव और बहुत से राजाओं के नाम के पूर्व में शाहि पद ध्यान देने के योग्य है।

सप्तमतरंग (५३ श्लो०) में हम्मीर नाम का एक राजा तुंग के समय में और (१८० श्लो०) अनन्त के समय में भोज का राजा होना लिखा है। मान

---

* वर्त्तमान काल में रंडियों की भाषा का कुछ उदाहरण दिखाते हैं। नगर की वारबधूगण की संकेत भाषा-यथा-लूरा-पुरुष, लूरी-रंडी, चीसा-अच्छा बीला, बुरा, भीमटा, रुपया, आदि। ग्राम्य रंडियों की भाषा यथा-सेरुआ-पुरुष, सेरुई-स्त्री, कनेरी-रुपया, सेसिख-अच्छा है और कौलिआयस्य: अर्थात् रुपया सब ठग लो।

के हेतु लोगों को ठाकुर की पदवी दी जाती थी। (७ त० २९ श्लो०) तुरुष्क देश से सोने का सुलम्मा करने की विद्या हर्ष के समय में आई। (७ त० ५३ श्लो०) इसी के काल में खस लोगों ने पहले पहल बन्दूक का युद्ध किया (७ त० ९८४ श्लो०) कलिंजर के राजा, राजा उदयसिंह आदि कई राजाओं के प्रसंग से (१३०० श्लो० के आसपास) नाम आए हैं। युद्ध हारने के समय चत्रानियां राजपुताने की भांति यहां भी जल जाती थीं। (७ त० १५०० श्लो०)

अष्टमतरंग में भी कायस्थों की बहुत निन्दा की है। (८ त० ८९ श्लो० आदि) कैदियों को भांग से रंग कर कपड़ा पहनाते थे। (८ त० ९३ श्लो०) कल्याण के हेतु लोग भीष्मस्तवराज, गजेन्द्रमोच, दुर्गापाठ आदि का पाठ करते थे (८ त० १०६ श्लो०) टकसाल का नाम टंकशाला। (८ त० १५२ श्लो०) उस समय में भी राजाओं को इस बात का आग्रह होता था कि उन्हीं के नाम के सिक्के का प्रचार विशेष हो। इस समय (बारवीं शताब्दी के मध्य में) कालिंजर का राजा कल्ह था। (८ त० २०५ श्लो०) कटार को कट्टार कहते थे। (८ त० ५१५ श्लो०) हर्ष का सिर काट कर लोगों ने भाले पर चढ़ाया किन्तु इस के पहले किसी राजा के सिर काटने की चाल नहीं थी। हर्ष का व्याख्यान इस तरंग में अवश्य पढ़ने के योग्य है जिस से शृङ्गार वीर आदि रसों का हृदय में उदय होकर अन्त में बैराग्य आता है।

राजतरंगिणी में रामलक्ष्मण की मूर्त्ति का पृथ्वी के भीतर से निकलना इस बात का प्रमाण है कि मूर्त्ति पूजा यहां बहुत दिन से प्रचलित है।

इस में देवी, देवता, भूत प्रेत और नागों की अनेक प्रकार की आश्चर्य कथा हैं जिन को ग्रन्थ बढ़ने के भय से यहां नहीं लिखा। और भी वृक्ष, शस्त्र औषधि और मणि आदिकों के अनेक प्रकार के वर्णन हैं। कोई महात्मा इस का पूरा अनुवाद करैंगे तो साधारण पाठकों को इसका पूर्ण आनन्द मिलेगा।

इस में एक मणिका वर्णन बड़ा आश्चर्य जनक है। एक बेर राजा नदी पार होना चाहता था किन्तु कोई सामान उस समय नहीं था। एक सिद्ध मनुष्य ने जल में एक मणि फेंक दी उस से जल फट गया और सैना पार उतर गई। फिर दूसरी मणि के बल से इस मणि को उठा लिया। एक कहानी ऐसी और भी प्रसिद्ध है कि किसी राजा को अंगूठी पानी में गिर पड़ी। राजा को उस अमूल्य रत्न का बड़ा शोच हुआ यह देख कर मंत्री ने अपनी अंगूठी डोरे में बांध कर पानी में डाली। मंत्री के अंगूठी के रत्न में ऐसी शक्ति थी कि अन्य रत्नों को वह खींच लेती थी इस से राजा की अंगूठी मिल गई।

हर्षदेव ।

हर्षदेव के विषय में यद्यपि राजतरंगिणी में कुछ विशेष नहीं लिखा है किन्तु इस राजा का नाम भारतवर्ष में बहुत प्रसिद्ध है और एक इस बात की प्रसिद्धि पर कि रत्नावली इत्यादि काव्यग्रन्थ उस के समय में बने थे इस राजा पर मेरी विशेष दृष्टि पड़ी। इस का समय विक्रम और कालिदास के समय के बहुत पीछे स्पष्ट होने से इस बात की मुझ को बड़ी चिन्ता हुई कि वह कौन पुण्यात्मा श्री हर्ष है धावक ने जिस की कीर्ति आचन्द्रार्क स्थिर रक्खी है। वह श्री हर्ष निश्चय सम्राट कालिदासादि के पूर्व और वत्सराज के पश्चात् हुआ है। वंशावलियों में खोजने से कई हर्ष मिले। यथा मालवा के राजाओं में एक हर्षसेव १८१ ई० पू० हुआ है। यह युद्ध में मारा गया और कोई विशेष कथा इसकी नहीं है। छतरपुर में एक लिपि में श्री हर्ष नाम का एक राजा विहल का पुत्र यशोधर्मदेव का पिता लिखा है। और यह लिपि श्री हर्ष के प्रपौत्र की सं० १०१८ की है। एक श्रीहर्ष नैपाल का राजा ३६३१ ई० पू० हुआ है। एक विक्रमादित्य जिसका दूसरा नाम हर्ष था मातृगुप्त के समय में हुआ। शक १००० में एक विक्रम और इस के कुछही पूर्व कान्यकुब्ज में एक हर्ष नामक राजा हुआ। कालिदास और श्री हर्ष कवि भी इसी काल में थे। जैन लोगों ने लिखा है कि वाराणसी के जयन्तीचन्द्र नामक राजा के दरबार में श्रीहर्ष कवि था। (१०८८ शक) यह जैनों का भ्रम है। और हर्षों को छोड़ कर कान्यकुब्ज के हर्ष को यदि धावक कवि का स्वामी मानें तभी कुछलड़ सब बातों की मिलैगी। जैसा रत्नावली में जिस वत्सराज का चरित है वह कलियुग के प्रारम्भ में उदक्षेप का पुत्र वत्स था। शुनकवंश का प्रथम राजा एक प्रद्योत हुआ है। [३००० ई० पू०] सम्भव है कि इसी प्रद्योत की बेटी वत्स को व्याही हो। धावक ने एक उदयन का भी वर्णन किया है वह पांडवों के वंश की अन्तावस्था में हुआ था। यह सब अति प्राचीन हैं। इस से ३६३१ ई० पू० के नैपालवाले श्री हर्ष के हेतु धावक ने काव्य बनाया है यह नहीं हो सकता। कन्नौज में जो श्री हर्ष नामक राजा था जिस की सभा में श्रीहर्ष नामक कवि का पिता रहता था वही श्रीहर्ष धावक का स्वामी था। छतरपुर की लिपि का काल १०१८ है। चार पुश्त पहले यह काल ८५० संबत् में जा पड़ैगा। यशोविग्रह के पहले कदाचित् राज विप्लव हुआ हो और श्रीहर्ष से यशोविग्रह

तक दो एक राजे और होगए हों तो आश्चर्य नहीं। प्रशस्ति के 'क्ष्मापालमाला सुदिवंगतासु' इस पद से ऐसा झलकता भी है। यशोविग्रह से लेकर जयचन्द्र तक तासों में जितनी प्रशस्ति मिली हैं उन में बड़ा ही अन्तर है। जो ताम्र-पत्र मैंने देखा है उस का क्रम यह है यशोविग्रह, महीचन्द्र, चन्द्रदेव, मदन-पाल, गोविन्देन्द्र और जयचन्द्र। जैनों ने इसी जयचन्द्र को जयन्तीचन्द्र लिखा है और काशी का राजा लिखने का हेतु यह है कि 'तीर्थानि काशीकुशिकोत्तरकोशलेन्द्रस्थानीयकानि परिपालयताभिगम्य' इस पद से स्पष्ट है कि काशी भी उस समय कन्नौजवालों के अधिकार में थी इसी से काशी का राजा लिखा। और जयचन्द्र के प्रपितामह या उस के भी पिता के काल में जो श्री हर्ष कवि था उस को जयचन्द्र के काल में लिख दिया। छतरपुर की लिपि में जो श्रीहर्ष राजा का पुत्र यशोधर्म्म वा वर्म्म लिखा है वही यशोविग्रह मान लिया जाय और जयचन्द्र उसके बड़े पुत्र का वंश और छतरपुर की लिपि वाले छोटे पुत्र के वंश में हैं ऐसा मान लीजिए तो विरोध मिट जायगा। चन्द्रदेव ने 'श्रीमद्गाधिपुराधिराज्यमखिलं दोर्विक्रमेनार्जितम्' इस पद से कान्यकुब्ज का राज्य अपने बल से पाया यह भी झलकता है। इस से यह भी सम्भव है कि श्री हर्ष का राज्य कन्नौज में शेष न रहा हो और चन्द्र-देव ने नए सिर से राज्य किया हो। यशोविग्रह के वंश की कई शाखा हैं इस का प्रमाण प्रशस्तियोंके भिन्न भिन्न नामों ही से है। इस से ऐसा निश्चय होता है कि सम्वत् ६०० के लगभग जो श्रीहर्ष नामक कान्यकुब्ज का राजा था उसी के हेतु रत्नावली आदि ग्रन्थ बने हैं *। कालिदास, विक्रम, भोज सब इस काल के सौ बरस के आस पास पीछे उत्पन्न हुए हैं और इसी से कालिदास ने मालविकाग्निमित्र में धावक का परिचय दिया है। कल्हण कवि ने जो राजतरंगिणी में कालिदास या इस श्री हर्ष का नाम नहीं दिया उस का कारण यही है कल्हण का स्वभाव असहिष्णु था और कालिदास से काश्मीर के राजा भीमगुप्त से (जो ६७५ ई० के काल में राज्य करता था) महा वैर था इस से उसने कालिदास का या उसके स्वामी विक्रम का नाम नहीं लिखा। कल्हण प्राय: सभी राजाओं की कुछ कुछ निन्दा कर देता है जैसा इसी हर्षदेव की जिसकी और स्थानों में बड़ी स्तुति है कल्हण ने

* पूर्व में तुंजीन के काल में एक हर्ष हुआ है यह लिख भी आए हैं।

निन्दा की है। और ग्रन्थकारों के मत से श्री हर्ष बड़ा न्यायपरायण स्वयं महा-कवि अति उदार था। पुकार सुनने के हेतु महल की भीत्तियों पर घंटियां लटकती थीं। रात दिन गुणियों से घिरा रहता था और अन्त में संसार को असार जानकर त्यागी हो गया। कल्हण से हर्ष राज से द्वेष का यह कारण है कि इस के स्वामी जयसिंह का बाप सुस्सल हर्ष के पोते भिक्षाचर को मार कर राज्य बैठा था।

राज संख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	द्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन।
१	आदि गोनर्द	६८८॥	०	०	१४०० ई. पूर्व	३५ । ६	२४४८ ईसवी पूर्व, जरासन्ध के युद्ध में बलदेव जी ने मारा. प्रिन्सप के मत से १०४५ ई. पू., नामान्तर गोनन्द वा अंगद, फारसीवालों के मत से राज्य १७ बरस, मुसल्मानों का नाम आदि गंद।
२	दामोदर	७२४	०	०	०	३५ । ६	गन्धार देशके स्वयम्बर में श्रीकृष्ण ने इसको मारा और इसकी यशवती रानी को जो सगर्भा थी राज्य पर बैठाया।
३	बालगोनर्द *	७५४	०	०	०	३०	श्रीकृष्ण ने आप आकर राज पर बैठाया. महाभारत के युद्ध में विद्यमान था।
३८	पैंतीस राजे *	१४६४	०	०	०	वि. ७१०	इनके नाम कर्म कुछ भी विदित नहीं. मुसल्मानों के मत से ये पैंतीस नहीं सैंतीस थे और पांडव वंश में थे।
३९	लव	१४९९	०	०	५७०	३५	लोलूर बसाया. नामान्तर बाललव. मुसल्मानों का लू, लोलूर में बीस लाख अस्सी हजार मनुष्यों की बस्ती थी. १७०९ पू.।
४०	कुशेशय	१५०२ । ८	०	०	०	३ । ८	नामान्तर कुश. १६६४ ई. पू. मुसल्मानों का किशन।

इस चक्र में राजाओं के नाम पर जहां* ऐसा चिन्ह दिया है वहां समझना चाहिये कि पूर्व वंश समाप्त होकर आगे से नया वंश चला

राज संख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विलसन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन।
४१	खगेन्द्र	१५६२। ८	०	•	०	६०	१६६० ई॰ पू॰ मुसल्मानों के मत से काकापुर और कथ नामक नगर बसाए. मुसल्मानों का गुनकन्द।
४२	सुरेन्द्र *	१५८३। २	०	•	•	३०। ६	मुसल्मानों का सुन्दर. १६०० ई० पू० ईरान से माचास नामक हकीम को बुलवाया. ईरान के बादशाह बहमन को जीता. निसंतान मरा. मुसल्मानों के मत से इसकी बेटी बहमन को व्याही थी।
४३	गोधर	१६२८। ६	०	०	०	३५। ७	१५७३ ई० पू.।
४४	सुवर्ण	१६८८। ६	०	०	०	६०	स्वर्णनदी नाम की नदी पहाड़ खोद कर लाया. मुसलमानों का वसरन।
४५	जनक	१६६४। ६	०	०	०	६	१४७७ ई० पू. ।
४६	शचीनर	१७६५। ६	०	०	०	७१	मुसलमानों का संजीनरायन। १४७१ ई. पू.।
४७	अशोक	१८२९। ६	०	०	०	६२	१३२४ ई० पू., यह शचीनर का भतीजा था. श्रीनगर इसी ने बसाया और जैन मत का प्रचार किया. मुसल्मानों ने इस को शुकराज वा शकुनी का बेटा लिखा है. उसकाल में श्रीनगर में छ लाख मनुष्य थे।

४८	जलौक	१८५७।८	०	०	०	३०	जाति विभाग किया. सप्त प्रकृति स्थापन किया। नन्दिपुराण सुना. इसी को और ग्रन्थकारों ने पटने के अशोक का पोता लिखा है. यवनराजा युथिदे-युस को हराया. अन्तिओकस के साथ सुलहनामा किया. बडा प्रतापी था. १३३२ ई० पू. मुसल्मानों का चकवक।
४८	दामोदरद्वितीय*	१८८२।८	०	०	०	२५	१३०२ ई. पू. शैवमत का प्रचार हुआ।
५२	हुष्क, जुष्क और कनिष्क*	१८४२।८	०	०	०	६०	१२७७ ई. पू. ये तीनोंतुर्क (किंवा तातार) थे किन्तु बौद्ध थे. शाक्यसिंह को १५० बरस हुए थे नागार्जुन सिद्ध इन्हों के समय में हुआ औ बौद्धमत को फैलाया।
५३	अभिमन्यु	१८७७।८	०	०	०	३५	मुसल्मानों का अभिगुन वा अभिवलन. १२१७ ई. पू. विल्फर्ड के मत से ४२३ ई. पू. प्रिंसिप के मत से ७३ ई. पू. बौद्धों का उपद्रव हुआ. हिम बहुत पडा. चन्द्रदेव ब्राह्मण ने बौद्धों को जीता. नीलपुराण सुना. महाभाष्य का प्रचार हुआ।
५४	गोनर्द (३)	२०१२।८	११८२ ई. पूर्व	५३।३ ई. सन	११८२ ई. पूर्व	३५	प्रिन्सिप के मत से १०८ ई. पू., मुसल्मानों ने इसका नाम लक्ष्ण लिखा है। विल्फर्ड के मत से ३८८ ई. पू. नागपूजा चलाया।
५५	विभीषण	२०५८।३	११४७	६१।८	११४७	४५।६	विल्फर्ड के मत से ३७० ई. पू. मुसल्मानों के मत से पखनपति नाम रा च काल ५३।६।७।

राज संख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	प्रायर के मत से समय	कनिङ्घम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन।
५६	इन्द्रजित्	२०८८।९	१०९३।६	७३।१	१०९६	३०।६	वि. ३५२. मुसल्मान लेखकों ने इन्द्रजित, रावण इन-दोनों का राज्य ३६ वर्ष लिखा है।
५७	रावण	२११९।३	१०५८	७३।१	१०६०।६	३०।६	वि. ३३४. मुसल्मानोंने इसके बेटे बरवान का नाम और लिखा है और उसका राज्य भी ३५ बरस लिखा है।
५८	विभीषण (२)	२१५४।३	१०२८	८०।८	१०३०।६	३५	वि. ३१६ मुसल्मानों ने लिखा है कि यह त्यागी था. इसका नाम पत्तनपत था यह अजाद राजा का बेटा और बड़ा कवि था। पहले इसका ज्येष्ठ पुत्र इन्द्रायन गद्दी पर बैठा किन्तु उसके दुष्कर्मों से दुखी होकर लोगों ने उस को मार डाला और इस को गद्दी पर बैठाया।
५९	किन्नर	२१९४	९९२।६	८९।२	९९२	३९।९	वि. २९८, नामान्तर नर, बौद्ध था, मुसल्मानों ने इसको बड़ा क्रूर लिखा है और लिखा है कि २ वर्ष मात्र राज्य किया फिर राज्य कुछ दिन शून्य रहा।
६०	सिद्ध	२२५४	९५२।९	९९।२	९५३।३	६०	वि. २८०, मुसल्मानों ने लिखा है कि भाय इसको छिपाए हुए थी।

६१	उपल	२२८४ । ६	८८२ । ८	११४ । २	८८३ । ३	३० । ६	वि. २६२, आइनेअकबरी में इसका नाम आदित्य वल्लभ लिखा है नामान्तर उत्पलाच, मुसल्मानों का गुरुदत्त वा पलाश्चन. यह आंख का कंजा था ।
६२	हिरण्य	२३२२ । १	८६२ । ३	१२१ । ८	८६२ । ८	३७ । ७	वि. २४४, नामान्तर हिरण्याच . मुसल्मानों का तिरन्य
६३	हिरण्यकुल	२३८२ । १	८२४ । ८	१३१ । २	८२५ । २	६०	वि. २३६, मुसल्मानों का हिरनकुल।
६४	वसुकुल	२४४२ । १	७६४ । ८	१४६ । २	७६५ । २	६०	वि.२१८,आईने अकबरी का एविग्राक. बड़ा विषयी था
६५	मिहिरकुल	२५१२ । १	७०४ । ८	१६३ । ८	७०५ । २	७०	वि. २००, ट्रायर के मत से नाम सुकुल. लंका पर चढ़ाई की. बड़ा क्रूर था. दारद गान्धरी और भाटियों का प्राबल्य हुआ. पहाड़ तोड़ कर हाथियों से ढोंके हटाकर एक नदी निकलवाई लंका में राजा का पैर छपा कपड़ा होता था. यह ऐसा क्रूर था कि एक बेर हाथी का पहाड़ पर से गिरना उसको अच्छा मालूम हुआ इससे सौ हाथी पहाड़ परसे गिरवा दिए. बहुत सी स्त्रियोंको भी इसने मारडाला ।
६६	वक	२५४८ । १	६३४ । ८	१७४ । ८	६३५ । २	३६	वि. १८२, मुसमानों का ज़ंग. इस को एक स्त्री ने वलि दे दिया।
६७	चितिनन्दन	२५७८ । १	५७१ । ८	१८७ । ८	५७२ । २	३०	वि. १६४, चितिनन्द वा नन्दन. मुसल्मानों का आनन्दकान्त. इसका बेटा वतानन्द उसको वसुनन्द हुआ.
६८	वसुनन्द	२६३६ । १	५४१ । ८	१९५ । २	५४२ । २	५२	वि.१४६,आईने अकबरीका विस्नन्द. कामशास्त्रबनाया.
६९	नर (२)	२६९० । १	४८४ । ६	२०८ । २	४९०	६०	वि. १२८, नामान्तर बर. आईने अकबरी का निर।
७०	अच	२७५० । १	४२९ । ६	२२३ । २	४३०	६०	वि. १००, आईने अकबरी का अज. सुल्मान इतिहास लेखकों ने इस का नाम लिखाही नहीं है।

राज संख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ड्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन।
७१	गोपादित्य	२८१० । १	३६८ । ६	२३८ । २	३७०	६०	वि. ८२ ई. पू. आइने अकबरी काकुलवती. मुसल्मानों का कोमानन्द. वैदिक धर्म की उन्नति की।
७२	गोकर्ण	२८६७ । १	३०८ । ६	२५३ । २	३१०	५७	वि. ६४ ई. पू. आ. अ. का करन।
७३	नरेन्द्रादित्य	२९०३ । ४	२५१ । ७	२६८ । ११	२५३	३६ । ३	वि. ४६ ई. पू. आ. अ. का नरेन्द्रावत, मुसल्मानों का नरानंद, नामान्तर खिंखिल।
७४	अन्धयुधिष्ठिर*	२९३७ । ४	२१५ । ४	२७९	२१६ । ९	३४	वि. २८ ई. पू. अन्धसंज्ञा कमती सूझने से हुई, विषयी था, अन्त में राज्य छोड़कर भाग गया।
७५	प्रतापादित्य	२९६९ । ४	१६७ । ३	२८७ । ६	१६८ । ९	३२	वि. १० ई. पू. किसी विक्रमादित्य का नातेदार था. मुसल्मानों के मत से नाम बरतपात है और मालवा से वहां जाकर राजा हुआ।
७६	जलौक (२)	३००१ । ४	१३५ । ३	३०३ । ६	१३६ । ९	३२	वि. २२ ई. सन्, आ. अ. का जलुक।
७७	तुंजीन *	३०२९ । ४	१०३ । ३	३१९ । ६	१०४ । ९	२६	वि. ५४ ई. मुसल्मानों ने इसका नाम यचीनर और इसकी रानी का नाम दक्षिणा लिखा है. नामान्तर वंजोर. बड़ा भारी काल पड़ा खजाना सब गरीबों को बांट दिया. आकाश से लोगोंके घर में कबूतर गिरे. बड़ा धर्मात्मा था. चन्द्रक कवि ने नाटक काव्य बनाए।
७८	विजय	३०३५ । ४	६७ । ३	३३८ । ६	६६ । ९	८	वि.८०ई. नामान्तर वेजिरो. मुसल्मानों का विजयमल्ल।

७९	जयेंद्र *	३०७२ । ४	५९ । ३	३४१ । ६	६० । ९	३७	वि.९८ ई. नामान्तर चन्द्र. सुल्मानों का विजयेन्द्र।
८०	सन्धिमान *	३११९ । ४	२२ । ३	३६९	२३ । ९	४७	नामान्तर आर्यराज. जयेन्द्र का मन्त्री था. इसके विषय में यह विचित्र बात प्रसिद्ध है कि फांसी पड़कर मरकर फिर जिया था. मुहम्मद अज़ीम ने अपने फारसी इतिहास में लिखा है कि जिस समय सन्धिमान शूली पर मरगया उसी काल में राजा भी मर गया. तब प्रजा लोगों ने सन्धिमान मन्त्री के पुत्र अरिराय को राज पर बैठाया और इस भांति सन्धिमानके कपालका लिखा पूरा हुआ. अरिरायविरागी हो कर जंगल में चला गया फिर युधिष्ठिर का पोता गोपाल राजा जो बड़ाही सुन्दर था राजा हुआ. अपने ससुर खता के बादशाह की मदद से कश्मीर का राजा हुआ था और सूरत तक जीता।
८१	मेघवाहन	३१५३ । ४	२४ । ९ ई. सन	३८३	२३ । ३ ई. सन	३४	गान्धार (कन्दहार) का था. वहां के राजा गोपादित्य ने इसको पाला था. बौद्धों को बसाया।
८२	श्रेष्ठसेन	३१८३ । ४	५८ । ९	४००	५७ । ९	३०	मुसल्मानों के अनुसार खता के बादशाह की बेटी इस को ब्याही थी इसने प्रत्यक्ष पशु से छूए करके पिष्ट की चाल चलाई. रुपये को दीनार कहते थे. आईने अकबरी का मेघदहन।
८३	हिरण्य * (२)	३२१३ । ६	८८ । ९	४१५	८७ । ३	३० । २	तोरमान कुमार का प्रतिद्वंदी था. मुसल्मानोंने लिखा है कि इसका भाई पुरवाहन इसका मंत्री था।

राज संख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	कुरार के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन।
८४	मातृगुप्त *	३२१७ । ३	११७ । ११	४३०	११८ । ५	४ । ९	विक्रमादित्य ने उज्जैन से भेजा. जाति का ब्राह्मण था. इस विक्रमादित्य का नाम हर्ष था. उसकाल में लोग ललाट में त्रिशूल की मुद्रा देते थे. किन्तु कालिदास वाला विक्रम यह नहीं है।
८५	प्रवरसेन	३२७७ । ३	१२१ । ८	४३२ । ६	१२२ । २	६०	यह प्राचीन वंश का था. शीलादित्य नामक गुजरात के राजा से लड़ा. मुसल्मानों के अनुसार पुरवाहन का बेटा था. श्री नगर फिर से बसाया. मुसल्मानों ने शीलादित्य को विक्रमादित्य का बेटा लिखा है।
८६	युधिष्ठिर (२)	३३१६ । ६	१८३ । ८	४६४	१८५ । २	३९	मुसल्मान लेखकों से यहां बड़ा भेद है. वे लिखते हैं प्रवरसेन का बेटा चन्द्रश्री. उसने ७३ बरस ३ महीना राज्य किया. उसका बेटा लक्ष्मण. राज्यकाल ९ बरस. उसका बेटा जयादित्य ।
८७	नरेन्द्रादित्य	३३१६।११।१३	२०४ । ११	४८३	२२४ । ५	० ।८।१३	इसी का नामान्तर कोई लक्ष्मण मानते हैं वा नन्द्रावत।
८८	रणादित्य	३६१६।११।१३	२१७ । ११	४९०	२३७ । ५	३००	इसका राज्यकाल ग्रन्थ में तीन सौ बरस लिखने से अनुमान होता है कि इसके पीछे के कुछ राजाओं के नाम छूट गए हैं. चोलराज की बेटी व्याही. मुसल्मानों

							ने लिखा है कि महात्मा मुहम्मद इसी के समय में उत्पन्न हुए थे और इसको राज्य करते जब २५८ वर्ष बीते थे तब वह मक्के से मदीने गए अर्थात् सन हिजरी आरम्भ हुआ।
८९	विक्रमादित्य	३६५८।११।१३	५१७ । ११	५५५ । ६	५३७ । ५	४२	
९०	बालादित्य*	३६८६।११।१३	५५९ । ११	५७६ । ६	५७९ । ५	३७	गोनर्दवंश का अन्तिम राजा. मुसल्मानों का जयानन्द. मुसल्मान लेखकों ने लिखा है कि उपलास नामक एक बड़ा पंडित इस के समय में हुआ. इस के पास पचीस हज़ार खासेके घोड़े और तीन लाख सवार और रात को प्रकाश करनेवाले लाल थे। मुसल्मानों के अनुसार पहले इस का बेटा चन्द्रानन्द फिर उसका भाई रवाजीत फिर उससे छोटा अलतादित गद्दी पर बैठा ।
९१	दुर्लभवर्धन	३७३२।११।१३	५९७ । ३	५९४ । ६	६५१ । ५	३६	नामान्तर प्रज्ञादित्य. कर्कोटक वंश का. यज़दिजिर्द (Yezdejerd) का समकालीन।
९२	प्रतापादित्य (२)	३७८२।११।१३	६३३ । ३	६३० । ६	६५१ । ५	५०	नामान्तर दुर्लभक।
९३	चन्द्रापीड़	३७९१ । ७।१३	६८३ । ३	६८० । ६	७०१ । ५	८ । ८	नामान्तर चन्द्रानन्द । बहुत धर्मिष्ठ था इसके समय में भी चमाविक्रम नाम का कोई राजा था।
९४	तारापीड़	३७९५ । ८ । ७	६९१ । ११	६८८ । २	७१० । १	४।०।२४	मुसल्मानों का रवाजीत ।
९५	ललितादित्य	३८२२ । ३।१८	६९५ । ११	६९३ । २	७१४ । १	२६।७। ११	चमार को एक झोपड़ो मन्दिर में पड़ती थी। वह नहीं देता था। राजा ने स्वयं उस को राजी किया. कन्नौज के यशोवर्म से लड़ा. खुता और खुतन तथा

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विलसन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन।
८६	कुवलयापीड	३८२३।४।२	७२२।७	७२८।६	७५०।८	२।०।१५	बुखारा गुजरात तिब्बत बंगाल तक जीता. बड़ा प्रतापी था. पृथ्वी में से राम लक्ष्मण की मूर्ति मिलीं उन की प्रतिष्ठा की. मनद और सुलहनामा लिखने की चाल थी. शाहि शब्द सर्दार वाचक था. भवभूति महाकवि इसी के समय में था. इस समय में देवताओं के भीतर द्रव्य भी रहता था. राजा लोग जैन मतवालों का भी आदर करते थे।
८७	वज्रादित्य ४	३८३०।४।३	७२३।७	७३०।६	७५१।८	७	मुसल्मानों से गुलाम बेंचने की चाल सीखी. मुसल्मानों ने ललितादित्य का बेटा रमा वा रणानन्द उस का पुत्र सगरानन्द या संग्रामानन्द राजा हुआ यह क्रम लिखा है और इस के पीछे ललितादित्य का छोटा लड़का प्रह्लस्त गद्दी पर बैठा. ३१ वर्ष इन तीनों ने राज्य किया. इस्के पीछे विजयानन्द ५ वर्ष राजा रहा फिर ३ वर्ष सगरानन्द का बेटा रतिकाम राजा रहा. और फिर २ वर्ष ग्रमदानन्द राजा

							हुआ कारकोटक वंश का यह अंतिम राजा था . इस वंश में २००० वर्ष ५ महीना १० दिन राज्य रहा और जब यह वंश समाप्त हुआ तब हिजरी सन् २०९ था।
९८	पृथिव्यापीड	३८३४।५।३	७४०।७	७३७।९	७५८।८	४।२	
९९	संग्रामापीड़	३८३४ ५।१०	७४४।८	७४१।११	७६२।१०	०।०।७	
१००	जज्ज *	३८३७।५।१०°	७५१।८	७४८।११	७६९।१०	३	जज्ज जयापीड का साला था. जब जयापीड़ परदेस गया तब वह राज्य पर बैठ गया ।
१०१	जयापीड़	३८६८।५।१०	७५४।८	७५१।११	७७२।१०	३१	गौड़देश के जयंत राजा की बेटी ब्याही. गुजरात राजा भीमसेन को जीता. विद्या का प्रचार किया. (८४१) महाभाष्य की पुस्तक मंगाई. चोर और उद्भट पंडित तथा मनोरथ शंखदत्त चटक सन्धिमान और बामन इत्यादि इस की सभा के कवि थे. द्वारका नगर बसाया और मूर्ति स्थापना की. तांबे के दीनार अपने नाम के चलाए. उस समय नेपाल का राजा अरमुड़ि था. शंभुकवि ने भुवनाभ्युदय नामक काव्य मम्म और उत्पल की लड़ाई का बनाया. इसका नामांतर विजयादित्य था. लोग गंजों में टिकते थे।
१०२	ललितापीड	३८८०।५।१०	७८५।८	७८२।११	८०३।१०	१२	
१०३	संग्रामापीड़(२)	३८८७ ५।१०	७९७।८	७९४।११	८१५।१०	७	नामांतर पृथिव्यापीड ।
१०४	बृहस्पति *	३८९९।५।१०	८०४।८	८०१।११	८२२।१०	१२	नामान्तर चिप्पटजय. वेश्यापुत्र था. इसकी पांच भाइयों ने इस के नाम से राज चलाया ।
१०५	अजितापीड	३९३५।५।१०	८१६।८	८१३।११	८३४।१०	३६	इन्हीं लोगों ने राज्य पर बठाया ।

राज संख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	द्वायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन।
१०६	अनंगापीड़	३८३८ ५।१०	८५२ । ८	८४८।११	८७०।१०	३	
१०७	उत्पालपीड़ *	३८५८।५।१०	८५५ । ८	८५२।११	८७३।१०	२१	कर्कोटकवंश का अन्तिम राजा ।
१०८	आदित्यवर्मा	३८८६।५।१०	८५७ । ८	८५४।११	८७५।१०	२७	नामान्तर अवन्तिवर्मा. बडा काल पडा बहुत से इतिहासवेत्ताओं का निश्चय है कि जालन्धर के यादव राजाओं से इसका वंश निकला है. मुसल्मानों ने लिखा है कि यह मखतवर्मा (शक्तिवर्मा) का पुत्र था और अपने रिश्तेदार शिववर्मा मंत्री की सहायता से गद्दी पर बैठा. इस्का राज्य अट्ठाईस बरस तीन महीना तीन दिन ।
१०९	शंकरवर्मा	४०१४।५।१०	८८६ । ८	८८३ । २	९०४ । १	१८	गुर्ज्जर और भोज से लडा. बड़ा वहत था. नामान्तर श्रीवर्मा या शिववर्मा. सु. राजत्काल १७ बरस ७ महीना १८ दिन।
११०	गोपालवर्मा	४०१६ ५।१०	९०४ । ८	९०१।१०	९२२ । ९	२	जवानी में मारा गया. इसका मंत्री प्रभाकरदेव बड़ा लोभी था. इसने अपने जामाता लकुन को शाहराज की पदवी देकर बड़े पद पर पहुंचाया किन्तु यही पीछे से राजा मंत्री दोनों की मृत्यु का कारण हुआ।

१११	शंकटवर्मा*	४०१६।६।०	८०६।८	८०३।१०	८२४।८	२० दिन	वर्मवंश का अन्तिम राजा. मुसल्मानों के मत के अनुसार यह गोपालवर्मा का वास्तविक भाई नहीं था मुंहबोला भाई था ।
११२	सुगन्धारानी	४०१८।६	८०६।८	८०३।१०	८२४।८	२	पार्थ को राज्य पर बैठाया. शंकरवर्मा की स्त्री थी ।
११३	पार्थ	४०२८।६	८०८।८	८०५।१०	८२६।८	१०	तातारी और एकांग जाति ने उपद्रव किया. निर्जितवर्मा का पुत्र था ।
११४	निर्जितवर्मा	४०३६।६	८२४।८	८२०।१०	८४१।८	८	पंगु था ।
११५	चक्रवर्मा [मी	४०५०।६	८२५।८	८२१।१०	८४२।८	१४	जातियुद्ध हुआ. राजचक्र में बड़ा गड़बड़ हुआ ।
११६	सुरवर्मायामुरव-	४०५१।६	८२६।८	२७।१०	८५२।८	१	मुसलमानों का शिववर्मा ।
११७	पार्थवर्मा	४०५६।६	८२७।८	८३२।१०	८५३।८	५	फिर से गद्दी पर बैठा ।
११८	चक्रवर्मा	४०५६।६	८३८।८	८३३।४	८५४।३	०	फिर से बैठा ।
११९	शंकरवर्धन	४०५६।६	८३९।३	८३३।१०	८५४।८	०	राजतरंगिणी में इस का नाम नहीं है. मुसल्मानों ने इसका नाम शंकर दास लिखा है और लिखा है कि यह बड़ा ही क्रूर था ।
१२०	चक्रवर्मा	४०५६।६	८३९।७	८३५।४	८५६।३	०	तीसरी बेर गद्दी पर बैठा ।
१२१	उन्मत्तवर्मा	४०५८।६	८३९।११	८३६।८	८५७।७	२	अवन्तिवर्मा नामान्तर ।
१२२	शूरवर्मा (२) *	४०५९।६	८४१।११	८३८।१०	८५९।८	१	
१२३	यशस्करदेव (तथा वर्णद)	४०६८।६	८४२	८३९	८६०	९	इसके पीछे वर्णट ने ६ दिन राज्य किया. प्रभाकरदेव का पुत्र था. बड़ा ही उत्तम राजा हुआ है. अन्त में फ़कीर हो गया. कहते हैं कि मम्मट इस समय में था. मुसल्मान लेखकों ने लिखा है कि संग्रामदेव का लड़का अमान था इस को इस की मा ने मार-

राज संख्या	नाम राजाओं की	गत कलि	क्राइर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विलसन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन ।
							डाला. उस का पुत्र एक बरस राज करके दाढो के डर से फ़कीर हो गया. फिर त्रिभुवनगुप्त और बह्मन (भीमगुप्त) गद्दी पर बैठे पर इन को दाढो ने इनको मारडाला । फिर विग्रहदेव राजा हुआ। यह दिद्दा का भतीजा था। इस को भी नृसिंहराय नामक दिद्दा के साधक वज़ीर ने मारडाला ।
१२५	संग्रामदेव *	४०६६	०	६४८	६६६	०।६।०	पर्वगुप्त ने मारडाला ।
१२६	पर्वगुप्त	४०७०।४	६५१	६४८	६६८	१।४	सुरेश्वरी चेत्र में मारा गया ।
१२७	क्षेमगुप्त	४०७४।१०	६५२	६५०	६७१	४।६	बौद्धों के बहुत से विहार तोड़ डाले। किसी के मत से आठ बरस ।
१२८	अभिमन्युगुप्त	४०८८।८	६६१	६५८	६७६	१३।१०	
१२९	नन्दिगुप्त	४०८९।९	९७५	६७२	९९३	१।१	इसकी दादी दिद्दारानी ने इसको मारडाला ।
१३०	त्रिभुवनगुप्त	४०९४।९	९७६	९७३	९९४	४	तथा ।
१३२	भीमगुप्त *	४०९९।९	९७८	९७५	९९६	५	भुवाचार्य और पिचुल पंडित इसकी सभा में थे। कालिदास तथा श्रीहर्षादि कवि और एक विक्रम भी इसी के समय में थे। अर्थात् इस समय से हर्ष के

							राज्यारम्भ तक कवियों के उदय का काल था ।
१३३	दिद्दा	४१२२।८	६८२	६८०	१००१	२३	पूर्वोक्त तीनों को मार कर राज पर बैठी ।
१३४	संग्रामदेव	४१४६।८	१००६।८	१००३।६	१०२४।७	२४	इसके काल में हम्मीर नामक तुर्क ने चढ़ाई की और हार पाई ।
१३५	हरिराज और अनन्तदेव	४१८८।१।७	•	१०२८	१०३२	५२।४।७	सोमदेव ने बृहत्कथा में अनन्त का पिता संग्रामदेव लिखा। हरि ने २२ दिनमात्र राज्य किया या फिर अनन्त राजा हुआ अनन्त ने फौज के लोगों को एक बेर ८२ करोड कश्मीरी रुपया बांटा था ।
१३६	कलश	४२०७।२।७	०	१०८०	१०५४	८।१	मुसल्मानों का गुजमन। विल्हण ने अपने विक्रमांक चरित में इसकी बडी स्तुति लिखी है। इसकी माता का नाम सुभटा और मामा का नाम लोहराखण्डल चितिपति था। ये लोग वैष्णवउदार और पण्डित थे।
१३८	उत्कर्ष और हर्ष*	४२०७।२	०	१०८८	१०६२	०।०२३	विल्हण ने इन का एक भाई विजयमल्ल नामक और लिखा है। सोमदेव ने बृहत्कथा इसी के समय में बनाई और लेखकों के मत से इस ने १२ वर्ष राज्य किया थां। चालुक्य वंश में एक विक्रम उस समय भी था। और लेखकों का मत है कि यह पिता पुत्र भाई सब एक काल में जुदा जुदा राज्य बांटकर करते थे मुसल्मानों ने लिखा है कि १२०० मशालें नित्य इस की सभा में बलती थीं. और बडाही न्यायी था ।
१३९	उदयन विक्रम*	४२५४।७।२	०	११००	१०६२	१०।४।२	हर्ष से राज्य पाया. नामान्तर उद्दाम विक्रम वा उच्चल. मुसल्मानों का बाजिल ।

राज संख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	डायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विलसन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन।
१४०	शंखराज	४२१७।७।२	•	११००	१५२	•	उच्चल को मारकर राजपर बैठा. नामान्तर रड्ड. इस को उच्चल के भाई सुस्सल ने मारडाला. मुसल्मानों ने इस का नाम हेन लिखा है ।
१४१	सल्ह	४२१७।८.२२	•	१११०	१००२।०	१। २२	इन राजाओं के समय में बड़ी लड़ाई हुई. मुसल्मानों ने इस का नाम घसस और इस के भाई का नाम एजिल लिखा है ।
१४२	सुसल्ह	४२३३।८।२२	०	११११	१०७२	१६	मल्लदेवका छोटा बेटा उच्चल का भाई ।
१४३	भिक्षाचर *	४२३४।२।२२	•	११२७	१०८८	•।६।•	
१४४	जयसिंहदेव	४२५६।२।२२	०	११२७	१०८८	२२	मुसल्मानों का जैनक. मुसल्मानों ने इस के राज्य का अन्त ५३५ हिजरी में लिखा है. राजतरंगिणी बनी. शाके १०७० में यहां तक पूरा हिसाब करने से गतकलि ईसवी हिजरी संवत शाका सब दस पंदरह बरस के हेर फेर में ठीक हो जाते हैं ।
१४५	परमान	४२६५।८।२२	०	११४९	१११०	८। ६	
१४६	वन्तिदेव	४२७२।८।२२	•	११५९	१११९	७	
१४७	वोप्यदेव	४२८१।८।२२	०	११६६	११२६	९	

१४८	जस्सदेव	४२०६।८।२२	०	११७५	११३५	२५	बोप्यदेव का भाई था. खब्ती था. किसी के मत से १८ बरस ।
१४९	जगदेव	४२२०।८।२२	०	११९३	११७३	१४	
१५०	राजदेव	४२४२।८।२२	०	१२०८	११६७	२३	
१५१	संग्रामदेव	४२५१।८।२२	•	१२३१	११९०	१६	
१५२	रामदेव	४२८०।९।२२	•	१२४७	१२०६	२१।१	
१५३	लच्मणदेव*	४२८३।३।२४	०	१२६८	१२२७	३।४	
१५४	सिंहदेव *	४२९८।७।२४	०	१२८१	१२६१	१४।४	
१५५	सिंहदेव (२)*	४४१७।७।२४	०	१२९२	१२७०	१९	
१५६	श्रीरिंछण *	४४२०।४।२४	•	१३१८	१२९४	३।२	ड्रायर के मत से नाम उदयदेव. भोटवंश का ।
१५७	कोटारानी	४४२७।७।२४	०	१३३४	१२९४	१६।१	रिंछन सुलतान के काल में द्वितीय कालस्वरूप दुलच नामक मुग़ल ने (जो न मुसल्मान था न हिन्दू) कश्मीर में प्रवेश कर के वहां के नगर मन्दिर अट्टालिका बगीचा सब निर्मूल कर दिया और मनुष्यों को घास की भांति काट कर देश उजाड़ कर दिया. मानों आर्यों का राज्य नाश होता है यह समझ कर ईश्वर ने कश्मीर की प्राचीन शोभा हो शेष नहीं रक्खो. फिर कोटारानी के साथ उसके पालित दास शाहमीर ने विश्वासघात और कृतघ्नता करके अपने को राजा बनाया.-और कोटा से विवाह करने को विचारी को तंग किया. पहले कोटा भागी किन्तु पकड़ आने पर व्याह करना स्वीकार किया. व्याह की मह-

राज संख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	डायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन ।
							फल सजी गई । जब दुलहीन श्रृंगार कर के निकाह पढ़ाने आई साथमें कटार छिपाकर लाई. ठीक विवाह केसमय कटार पेटमें मारकर मर गई. अन्त समय कहा 'ले विश्वासघातक जिस शरीर को तू चाहता है यह तेरे सामने, है ! ! ! हिन्दुओं का राज्य इसी के साथ समाप्त हुआ. कुछ-कम चार हज़ार बरस आर्य लोगों ने काश्मीर का भोग किया ।
१५८	शाहमीर	४४४१।०।२४	०	१३३४ ६ १०	०	३ । ५	नामान्तर शमसुद्दीन ।
१५९	जमशेद	४४४२।११।२४		१३३७ । ५		१।११	
१६०	अलाउद्दीन	४४५४।११।२४		१३३८ । ४		१२	
१६१	शहाबुद्दीन	४४७२।११।२४		१३५२।०।२३		१८	
१६२	कुतुबुद्दीन	४४८८।११।२४		१३७०।०।२३		१६	
१६३	सिकन्दर	४५१२।११।२४		१३८६।०।२३		२४	तैमुर का आना. यह ऐसा कट्टर मुसल्मान था कि केवल काश्मीर के प्राचीन मन्दिर ही नहीं तोडे आपने मारे काश्मीर मण्डल में संस्कृत के जितने ग्रन्थमिले सब को दीवार की नेव में डाल दिया !!! हा ! आज वे ग्रन्थ होते तो न जाने क्या क्या बात हम लोग जानते ।

१६४	अलीशाह	४५१८।११।२४	०	१४१०।०।२३	•	७	फकीर होकर मक्के चला गया. कोई कहता है कि जैनलाबदीन की कैद में मरा।
१६५	जैनलाबदीन	४५१८।११।२४		१४१७।०।२३		५०	नामान्तर बडशाह वा शाहीखां. पंचाइत को अदालत (Local Self-Government.) जारी किया।
१६६	हैदरशाह	४५७१।११।२४		१४६७।०।२३		२	बडा विषयी था. दीवार के नीचे दब कर मर गया।
१६७	हसन	४५८३।११।२४		१४६९।०।२३		१२	बड़ा विषयी था।
१६८	मुहम्मद	४५८५।११।२४		१४८१।०।२८		२	
१६९	फतहशाह	४५९६।११।२४		१४८३।७।२८		११	
१७०	मुहम्मद (२ वेर)	४६२७।११।२४		१४९१।७।२८		३१	
१७१	फतह (२ वेर)	४६४९।११।२४		१५१३।५।७		२२	
१७२	मुहम्मद (३ वेर)	४६५०।११।२४		१५१४।५।७		१	
१७३	फतह (३ वेर)	४६५३।११।२४		१५१७।५।७		३	
१७४	मुहम्मद (४ वेर)	४६५६।११।२४		१५२०।५।७		३	
१७५	नाजुकशाह	४६६४		१५२८।५।७		७	
१७६	मुहम्मद (५ वेर)	४६६७		१५३०।५।७		३	
१७७	नाजुकशाह (२वेर)	४६७४		१५३७।५।७		७	समसुद्दीन, इस्माइलशाह, इबराहीमशाह, हबीबशाह, अलीशाह और ग़ाज़ीशाह इतने बादशाहों के नाम यहां भिन्न भिन्न तवारीखों में और मिलते हैं।
१७८	मिरज़ा हैदर	४६७८		१५४१।५।७		४	शीओं को बड़ी दुर्दशा से मारा। नाजुकशाह के नाम से राज्य करता रहा।
१७९	हुमायूं	४६७८		•		०	बीच में हुमायूं के समय से उस के मरने तक कामरां

राज संख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	डायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन।
			०	०	०		का काश्मीर में आना और उपद्रव करना और अनेक उपद्रवों में २५ या ३० वर्ष काल नष्ट हुआ।
१८०	ग़ाज़ीशाह	४६८८				११	मुसल्मानों के मत से नौ बरस । राजावली में ६ वर्ष और लोगों का राज्य स्फुट रहा ऐसा लिखा है।
१८१	हुसैनशाह	४६८५				६	
१८२	अलीखां आदिलशाह	४७०४				८	
१८३	यूसुफ़शाह *	४७०५				१	
१८४	सैयदमुबारकखां	४७०६				१	
१८५	लोहरशाह	४७०६				०। २	राजावली में लोहर के पुत्र याकूब का राज्य एक वर्ष लिखा है।
१८६	यूसुफ़शाह (२बेर)	४७०८				३	
१८७	याकूबशाह	४७१०				१	राजा भगवानदास से लड़कर अपने नाम का सिक्का जारी किया।
१८८	हुसैनशाह*	४७१०				०	
१८९	शमसीचक *	४७११				०	
१९०	अकबर	४७३०				१९	१५८३ में अकबर ने कश्मीर लिया। इस प्रसिद्ध और

							बुद्धिवान बादशाह की कहानी संसार में प्रसिद्ध है।
१९१	जहांगीर	४७५२				२२	सन् १६०५ में तख़्त पर बैठा १६२७ ई० में मरा।
१९२	शाहजहां	४७८३				३१	१६२८ में तख़्त पर बैठा १६५९ में औरंगज़ेब ने क़ैद किया १६६४ में मरा।
१९३	औरंगजेब	४८३१				४८	१७०७ में मरा।
१९४	मुअज़्ज़मबहादुर शाह शाह आलम	४८३६				५	औरंगज़ेब के पीछे मुसल्मानों का राज्य शिथिल हो गया इससे कई बादशा हुए। सब नाम यथाक्रम लिए जायं तो पहले आज़िम फिर मुअज़्ज़म, जहांदारशाह, फ़र्रुख़सियर, रफ़ीउलदरजात, रफ़ीउलदौलत, नकोसीर, मुहम्मदशाह, इबराहीमशाह, अहमदशाह, आलमगीरसानी, शाहजहान, शाहआलम, बदरबख़्त अकबरसानी और बहादुरशाह ये नाम होंगे।
१९५	जहांदारशाह	४८३७				१	
१९६	फ़र्रुख़सियर	४८४३				६	
१९७	मुहम्मदशाह *	४८६३				२०	१७१९ में तख़्त पर बैठा।
१९८	नादिरशाह *	४८७८				१५	सन् ११५१ हिजरी में नादिरशाह का खुतवा कश्मीर में पढ़ा गया। किन्तु नादिर के मरने पर कश्मीर फिर कुछ दिन गड़बड़ में रहा। ११६१ हिजरी में अहमदशाह के वज़ीर असमतुद्दीनखां ने चढ़ाई की थी पर हार गया।
१९९	अहमदशाह *	४८७९				१	११६६ हिजरी में पूरी तरह पर कश्मीर अहमद के अधिकार में आया।

राज संख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विलसन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन।
२००	राजासुखजीवन *	४८८७				८	इसने बागी होकर आठ वर्ष चार महीने राज्य किया
२०१	अहमदशाह (२वेर)	४८८६				८	११७५ हिजरी में फिर अहमदशाह की सैना ने जीता। महानन्द पंडित और कैलाश पंडित नामक इसके दीवानों ने प्रबन्ध किया। ११७८ में बड़ी बड़ी लड़ाई हुईं।
२०२	तैमूरशाह *	४८२०				२४	११८४ में गद्दी पर बैठा। ३ महीने बड़ा भूकंप हुआ। पहले वज़ीर ने बड़ा उपद्रव किया बहुत से लोग जल में डुबा दिए। तब पंडितदिलाराम नामक बड़ा बुद्धिमान यहां का सूबा हुआ। यह बड़ा बुद्धिमान था। अन्त में पहले वज़ीर के बेटे को फिर सूबेदारी मिली और इस ने भी बाप की भांति महा अनर्थ किया।
२०३	ज़मांशाह	४८४६				२६	१२०८ हिजरी में गद्दी पर बैठा। दीवान नन्दराम कश्मीर का सूबेदार हुआ।
२०४	सुलतान महमूद					०	इन दोनों के काल का विशेषवृत्त नहीं ज्ञात हुआ। ज़मांशाह के २६ वर्ष में इन दोनों का भी समय समझना चाहिए।

२०५	शाह शुजा *					०	महाराज रणजीतसिंह ने कोहनूर हीरा इसी से लिया था।
२०६	महाराजरणजित सिंह	४९४६				२०	१२३४ हिजरी अर्थात् १८१८ ईसवी १८७५ संवत् में काश्मीर जीता। काश्मीर जीतने की तारीख़। براوجي واه گروجي کا خالصه براوجي واه گروجي کي فتح
२०७	महाराजखड्गसिंह	४९४७				१ । ४	१८९६ संवत में महाराज रणजीतसिंह मरे और ये राज पर बैठे।
२०८	कुंअरनौनिहालसिंह	४९४७				०।०।१	ये अपने पिता की क्रिया करके आए उसी समय पत्थर के नीचे दबकर मरगए।
२०९	महाराजशेर सिंह	४९५०				३	इन को सिंधांवालों ने मारडाला।
२१०	महाराजदलीप सिंह *	४९५२				२	बालक अवस्था में नाममात्र को राजा थे। अब बिलायत में पिनशिन पाते हैं।
२११	राजराजेश्वरी विक्टोरिया *	४९५२				०।०।७	सन् १८४६ ईसवी संवत १९०२ में सर्कार ने पंजाब जीता। सात दिन मात्र काश्मीर सर्कार के अधिकार में रहा।
२१२	महाराजगुलाबसिंह	९६३				११	१८४६ ईसवी के १६ मार्च को सर्कार से काश्मीर इन्हीं ने पाया।
२१३	महाराजरणवीर सिंह	४९७०					सं० १९१४ में महाराज गुलाबसिंह के मरने पर ये राजा हुए अब काश्मीर का रक़बा २५००० और आमदनी ५०००० समझी जाती है।

author of this work, written by Babu Rama Sankara Vyasa.

The ancestors of the author of this work were very rich and much respected, holding high positions at Delhi and Gour Royal Durbars. They first settled in Gour (Lakhanouti in Bengal) and then at Rájmahal and Murshidábád. His great-grand-father Bobu Fatehchanda Sáhu came to Benares and resided there. He had nine brothers, three of them were entitled Rajàs ; one Ray Bahádur and the rest Babus ; but only his great-grand-father had issue. He rendered very good services to the British Government and greatly assisted the Judicial authorities in the discharge of their duties. Mr. Duncan was much obliged to him for his valuable services during the Permanent Settlement. Babu Harakhachanda was the only son of Babu Fatehchanda and the only heir to such an illustrious family of ten brothers. He was so popular in the country that his name is still sung in the family songs, lavanis, shair, ets. His name is well known in India as a famous Mahàjan and man of generosity. Babu Gopàlchandra was Babu Harakhachand's only son. He died at the early age of 27, and in the same short period he wrote forty works in Hindi and Sanskrit. He named himself Giridharadása in his works. He left two sons, the elder of these two is our eminent author and the younger Babu Gokulachanda. Our author was born on the 9th September 1850 A. D. His mother died when he was 5 years old and his revered father left him totally an orphan at the age of 9. He was educated in the Queen's College, Benares, for a few years but the thorough knowledge which he gained of Sanskrit, Persian and Bengali, was the result of his private study

and his own genius. From his early age he used to compose Poetry and in 1864 at the age of only 14 his first Drama was published. He was an Honorary Magistrate and a Municipal Commissioner for four years. He lost no opportunity to come forward in showing loyalty to the Throne when Princes of the Royal Blood visited this country. His liberal hand supported good many of his poor country men at all public events. He started a paper Kavivachanasudha, which is still in existence and two monthly magazines. If all the works which he published in the said papers be collected their number will be more than three hundred. He contributed not only to these three but to almost all the Hindi Journals and Periodicals. His liberality was so unlimited that for its sake he was often in trouble. A school in the midst of the city is existing as a good example of his liberality. He could read and write almost all the languages of India, Telgu] and Tamil. His thoughts also were very liberal and that is the cause that he was not so much liked by the bigoted aristocracy. All Hindi Newspapers and leading Hindi and Sanskrit scholars of India gave him the title of Bhàratendu (moon of India.)

List of the books compiled by Babu Harischandra, published separately, Benares.

---

(1) Mudràràkshasa Nàtaka (Translation of Sanskrita Drama, with commentary and a brief riview of that period.)
(2) Satya Harishchandra (an original Drama in Hindi.)
(3) Kashmirakusuma (History of Kashmir.)
(4) Karpuramanjari (from original Pràkrita.)
(5) Nildevi (original Drama.)
(6) Vidyàsundar (translated from a Bengálee Drama.
(7) Bhárata Durdashà

(8) Bhàrata Janani (a Drama.)
(9) Bharata Biratva (a poem.)
(10) Bhàrata Bhikshà (a poem.)
(11) Vijaini Vaijaya Vaijayanti (a poem.)
(12) Dhananjay Vijay (from a Sanskrit Drama.)
(13) Bhakti Sutra Vaijayanti (philosophy of faith.)
(14) Nârada Sutra Bhâshya (Do.)
(15) Tadiya Sarvaswa (Do.)
(16) Andhera Nagari (a farce.)
(17) Madhu Mukula (a poem.)
(18) Prema Taranga (a poem.)
(19) Premashru Varsana (a poem.)
(20) Phulon kâ Guchchhâ (a poem.)
(21) Prema Mâlikâ (a poem.)
(22) Prema Phulwâri (a poem.)
(23) Prema Mâdhuri (a poem.)
(24) Gita Gobindânanda (a poem from Jeyadeva with his life.)
(25) Prem Jogini.
(26) Prätas Smarana Mangala Pätha.
(27) Utsawawali.
(28) Nataka
(29) Bhruna Hatya.
(30) Hindi Prathama Vyakarana.
(31) Manalila Phula-bujhauwal.
(32) Pancha Pavitratma (lives of Mohmet, Fatima, Ali, Hasan and Husain with dates of different Mohamadan Imams.)
(33) Chakk Chakkawa Chakra (a brief sketch of the dates, &., of Indian Kings.)

(34) Gomahima.

(35) Satipratapa (a drama on chastity.)

(36) Varsa Malika.

(37) Madhyanha Sarani.

(38) Tazirat Shouhar (Persian character.)

(39) Witness on Education of India. (English)

(40) Jaina Kutuhala.

(41) * Chamanistan Hameshabahar.

(42) * Sundari Tilaka.

(43) * Rasa Barasata.

[44] * Gulzarpurbahar.

[45] * Nai Bahar.

[46] * Ramarya.

[47] Holi.

[48] Sita Ram Vivah Mangal.

[49] Stotra Pancharatna.

[50] Offering of flowers to H. R. H. the Duke of Edinburgh.

[51] Manasopayana to H. R. H. the the Prince of Wales.

[52] Mano Mukulu Mala to H. E. M. the Empress of India.

[53] Louisa biwaha Varnana.

[54] * Kajali, Malar, Hindola Sangrah.

[55] † Hamira Hatha [an original Novel.]

[56] † Nawa Mall ka [an original drama.]

[57] † Bharatavarsha and Vaishnawism.

[58] † Ham Murti pujaka ham.

[59] † Sita bata Nirnaya.

[60] Chandrawali Nataka [an original Drama.]

[61] Sangita Sar [To teach music.]

[62] * Sri Radha Sudha Shatak.

[63] Lives of Vikrama and Bilhana.

[64] * Urdhpundra Martanda.

[65] Bhakta Sarvaswa.

[66] Vaishnawa Sarvaswa.

[67] Vallabhi Sarvaswa.

[68] Yugula Sarvaswa.

[69] Vaidiki hinsa hinsa na-bhawati [Vaidic killing is not a killing.]

[70] Pakhanda Vidambana.

[71] Delhi Darbar Darpana.

[72] Karttika Karma Vidhi.

[73] Karttika Naimittika Kritya.

[74] Baisakh Snana Vidhi.

[75] Magha Snana Vidhi.

[76] Purushottama Masa Vidhana.

[77] Margashirsa mahima.

[78] Agarwalon ki Utpatti.

[79] Karttika Snana [a poem.]

[80] Prema Pralapa.

[81] Kalachakra.

[82] Bhangdarbhang.

[83] Rajakumar Biwah barnana.

[84] Burhwa Mangal.

[85] Visasya visa maushadh^a^m Bhana.

[86] Sri Sita Vallabha Stotra.

[87] Puranopakramanika [or a key to 18 Purans.]

[88] Life of Suradas.

[89] Life of Ramanuja Swami.

[90] Uttrardha Bhaktamala.

[91] * Satasayi Shringara.

[92] Origin of Khatris.

[93] Prema Sarowara.

[94] Parihasini.

[95] Ramayana ka Samaya [Review of Valmiki's time.] Besides these his numerous compositions, translation's and editions were published in the Kavivachanasudha, Harishchandra's Magazine and Balbodhini.

Book marked* in this list are not his own works but edited by him,

Bookmarked † are unpublished.

महाराष्ट्रदेश का इतिहास ।
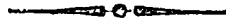
महाराष्ट्रदेश का इतिहास।

महाराष्ट्र देश का शृङ्खलाबद्ध इतिहास नहीं मिलता। शालिवाहन राजा यहां के पुराने राजों में गिना जाता है। इसने शाका चलाया है और यह भी प्रसिद्ध है कि इसने किसी विक्रम को मारा था। इस की राजधानी प्रतिष्ठान थी जिसे अब पैठण कहते हैं। देवगिरी का राज्य यहां मुसल्मानों के आगमन तक स्वाधीन था और रामदेव वहां का आखिरी स्वतन्त्र राजा हुआ। तेरहवें शतक में मुसल्मानों ने देवगिरी (देवगढ़) विजय कर के उस का नाम दौलताबाद रक्खा। सन् १३५० के लगभग दिल्ली के बादशाह के जाफरखा नामक सूबेदार ने दक्षिण में एक मुसलमानी स्वतंत्र राज्य स्थापन किया और वह पहिले एक ब्राह्मण का सेवक था इस से अपना पद ब्राह्मण रक्खा था। इस वंश ने पहिले कलबर्गे में फिर बिदर में अन्दाजन डेढ़ सौ बरस राज किया। सन्.१५०० के लगभग इस राज की पांच शाखा हो गई थी जिन में गोलकुंडा बीजापूर और अहमद नगर वाले विशेष बली थे। इस वंश के राज में सन् १३९६ में बारह बरस का दक्षिण में एक बड़ा भारी अकाल पड़ा था। हिन्दुओं में उस समय कोंकण में सिर का नाम का केवल एक स्वाधीन सरदार था बाकी सब लोग इन के आधीन थे, ब्राह्मणी राज्य नाश होने के समय सन् १४९६ ई० में वास्कोडिगामा पुर्तगाल लोगों के साथ कालीकट में प्रथम प्रवेश किया और सन् १५१० में गोआ उन लोगों के आधीन हो गया। बीजापूर के बादशाह अदलशाही और गोलकुंडे के कुतुबशाही और अहमद नगर के निशामशाही कहलाते थे। सन्.१६२८ में अहमद नगर की बादशाहत दिल्ली के अधिकार में हो गई और गोलकुंडा और बीजापूर भी सन् १६८७ ई० में दिल्ली में मिल गए।

महाराष्ट्रों का राज स्थापन करने वाला सेवा जी सन् १६२७ ई० में उत्पन्न हुआ।

उस के पूर्वजों का नाम भोंसला था जो लोग दौलताबाद के पास वेरूल गांव में रहते थे।

शिवा जी का दादा मालोजी भोंसला अपने वंश में पहिला प्रसिद्ध मनुष्य हुआ और उसने अपने बेटे शहा जी का बिवाह अहमद नगर के बाद-

शाह के दशहजारी सरदार जादोराव की बेटी से किया और पूना सूपा बादशाह से जागीर में पाया और शिवनेरी और चाकण दोनों किलों का सरदार भी नियत हुआ।

अहमद नगर की बादशाहत बिगड़ने पर शहा जी दिल्ली में शाहजहां के पास गया और वहां से अपनी जागीर कायम रखने की सनद ले आया पर थोड़े ही दिन पीछे किसी वैमनस्य से दिल्ली का अधिकार छोड़ कर वह बीजापूर के बादशाह से जामिला और अपने राज्य में करनाटक के बहुत से गांव मिला लिये।

शिवा जी शिवनेरी किले में जनमा और तब उस का बाप करनाटक में रहता था इस से उसने छोटेपन में पूनाप्रान्त में दादोजी कोण देव से शिक्षा पाई थी। छोटे ही पन से इस में बीरता के चिन्ह और लड़ाई के उत्साह प्रगट थे।

उन्नीस बरस की अवस्था में तोरन का किला जीत लिया और दादो जी कोणदेव के मरने पर पूना के जिले का सब काम अपने हाथ में ले लिया।

बीजापूर के पुरन्दर और दूसरे दूसरे कई किले अपने अधिकार में करके उस पर सन्तोष न कर के दिल्ली के बादशाही देशों में भी लूट कर इसने अपना बल, सेना और धन बढ़ाया।

मावल नाम की शूरजाति के लोग इस की सेना में बहुत थे और सन् १६४८ ई० में बीजापूर के बादशाह से इस के कल्यान की सूबहदारी लिया परन्तु जब बादशाह ने उस का बल बढ़ते देखा तो सन् १६५९ में अपने अफ़-जुल खां नामक सरदार को उस्से लड़ने को भेजा पर शिवा जी ने धोखा दे कर इस सरदार को मार डाला।

सन् १६६४ ई० में शिवा जी का बाप मर गया और तब से उसने अपना पद राजा रख कर अपने नाम की एक टकसाल जारी किया।

यह पहले राजगढ़ और फिर रायगढ़ के किले में रहता था और उसने अपने बहुत से किले बनाये थे जिन में राजगढ़ और प्रतापगढ़ ये दो मुख्य थे।

सन् १६५६ ई० में मास राजपन्त को शिवा जी ने पेशवा नियत किया।

बीजापूर का बादशाह तो शिवा जी को दमन करने में समर्थ न हुआ पर औरङ्गजेब ने राजा जसवन्त सिंह को बहुत सी फौज दे कर शिवा जी को जीतने को भेजा पर शिवा जी ने बादशाह के आधीन रहना स्वीकार करके

राजा से मेल कर लिया। और सन् १६६६ में आप भी दिल्ली गया पर वहां उस का यथेष्ट आदर न हुआ इस से उसने बादशाह को कटु बचन कहा जिस से थोड़े दिन तक क़ैद में रह कर फिर अपने बेटे समेत दक्खिन भाग गया कुछ दिन पीछे औरङ्गजेब ने उस को राजा का खिताब दिया और उसी अधिकार से उसने दक्खिन में सन् १६७० में चौथाई और सर देश मुखी नाम कर दो कर स्थापन किये। सन् १६६५ में इसने पानी के राह से माला-बार पै चढ़ाई की और दो बेर सूरत लूटा जब यह दूसरे बेर सूरत लूटने जाता था तब १५००० फ़ौज इस के साथ थी और राह में हुगली नामक शहर लूटने से बहुत सा धन इसके हाथ आया और फिर तो वह यहां तक बलवान हो गया था कि जो अपने भाई बेङ्को जी से बाप को जागीर बंटवाने और बीजापूर का इलाका लूटने को करनाटक की तरफ गया था तो इस के साथ ४०००० पैदल और ३०००० सवार थे।

सामराज पन्त से पेशवाई ले कर मेरी पन्त पिङ्गला को उस स्थान पर नियत किया और प्रताप राव गूजर इस का मुख्य सेनापति था जिस के मरने पर हम्बीर राव मोहिता उसी काम पै हुआ।

सन् १६७६ रामगढ़ में शिवा जी का विधिपूर्वक राज्याभिषेक हुआ और तब इसने आठ अपने मुख्य प्रधान रक्खे थे। पेशवापन्त, अमात्य, पन्त सचिव, मन्त्री, सेनापति, सुमन्त, न्यायाधीश और पण्डितराव ; यही आठ पद उसने नियुक्त किये थे और अपने जीते हुए देशों का काम आवाजी सोन देव के अधिकार में दिया।

जिस समय सब कोंकन और पूना का इलाका और करनाटक और दूसरे देशों में भी कुछ पृथ्वी इस के आधीन थी उस समय सन् १६८० ई० में सम्भा-जी और राजाराम नाम के दो पुत्र छोड़ कर ५३ बर्ष की अवस्था में यह पर-लोक सिधारा।

शिवा जी के मरने के पीछे २३ वर्ष की अवस्था में सम्भाजी गद्दी पर बैठा पर यह ऐसा क्रूर और दुर्व्यसनी था कि इस से सब लोग दुखी थे। इसने अपने छोटे भाई राजाराम की मा को मार डाला और सब पुराने कारवारि-यों को निकाल कर कलूसा नामक कनौजिया ब्राह्मण को सब राज काज सौंप दिया। इस की दुष्टता से इस के पिता का सब प्रबन्ध बिगड़ गया और सब सर्दार इस के अशुभ चिन्तक हो गये और यहां तक कि सन् १६८९ ई०

में जब यह सङ्गमेश्वर की ओर शिकार खेलने गया था तो इस को मुग़लों ने पकड़ कर औरङ्गजेब की आज्ञा से कलूसा ब्राह्मण समेत तुलापूर में मार डाला।

इस का पुत्र शिवा जी जिस को साहू जी भी कहते हैं औरङ्गजेब की क़ैद में था इस से इस का सौतेला भाई राजाराम गद्दी पर बैठा। इसने सितारा में अपनी राजधानी स्थापन किया और पन्त प्रतिनिधि नाम का एक नया पद नियुक्त किया और बड़े भाई के बिगाड़े हुए सब प्रबन्धों को नए सिर से सवांरा। यह १७०० ई० में मरा और फिर ८ वर्ष तक इस की स्त्री ताराबाई ने अपने पुत्र शिवा जी को गद्दी पर बिठा कर उस के नाम से राज्य का काम चलाया।

इन लोगों के समय में औरङ्गजेब ने महाराष्ट्रों को बहुत बिगाड़ना चाहा परन्तु कुछ फल न हुआ यहां तक कि वह सन् १७०७ में आपही मर गया। जब सम्भा जी का पुत्र शिवा जी औरङ्गजेब के पास रहता था तब औरङ्गजेब इस के दादा को लुटेरा शिवा जी और उस को साहू शिवा जी कहता था इसी से दूसरे शिवा जी का नाम साहू राजा हुआ। सन् १७०८ ई० में जब साहू औरङ्गजेब की क़ैद से छुट कर आया तब सर्दारों ने उसे सितारे की गद्दी पर बिठाया और तब उस की चाची ताराबाई ने अपने पुत्र शिवा जी को ले कर कोलापूर का एक अलग स्वतन्त्र राज स्थापन किया।

जब साहू राजा १७ वर्ष तक क़ैद में था तब औरङ्गजेब की बेटी उस पर और उस की मा पर बड़ी मिहरबान थी इसी से औरङ्गजेब ने अपने यहां के दो बड़े बड़े मरहठे सरदारों की बेटी उसे व्याह दी थी और उसे बहुत सी जागीर भी दी थी। जब साहू राजा दिल्ली से सितारे आता था तब एक स्त्री ने अपना दूध पीनें वाला बालक उस के पैर पर रख दिया था जिस के वंश में अब अक्कलकोट के राजा हैं। साहू राजा का स्वभाव विषयी था इसी से उसने अपना सब काम धना जी राव यादव को सौंप रक्खा था और उसने आबा जी पुरन्दरे और बाला जी बिश्वनाथ नाम के दो मनुष्य अपने नीचे रक्खे थे धना जी के मरने पर सन् १७१४ ई० में बाला जी बिश्वनाथ पेशवा हुआ और महाराष्ट्र के इतिहास में इस का नाम सब से प्रसिद्ध है।

साहू राजा ४२ वर्ष राज करके ६६ वर्ष की अवस्था में सन् १७४९ ई० में मर गया और इसके पीछे सितारे का राज्य पेशवा के अधिकार में रहा यह

मरती समय लिख गया था कि ताराबाई के पोते राजाराम को गोद लेकर हमारा गद्दी पर बिठा कर राज काज पेशवा करें।

राजाराम सन् १७४९ ई० में नाम मात्र का राजा हो कर सन् १७७० तक राज्य करके अपुत्र मरा फिर शिवाजी के भांजे के वंश का एक पुरुष दत्तक लेकर साहू महाराज के नाम से गद्दी पर बिठाया जो सन् १८०८ ई० में मरा और उसके पीछे उसका पुत्र प्रताप सिंह गद्दी पर बैठा इसको सन् १८१८ में सर्कार अङ्गरेज बहादुर ने पेशवा के राज्य से बहुत सा मुल्क दिया पर सन् १८४९ में इस पर दोषारोप होने से अङ्गरेजों ने इसे निकाल कर इसके छोटे भाई शाहाजी को गद्दी पर बिठाया जो सन् १८४८ ई० में नि-र्वंश मर कर इस वंश का अन्तिम राजा हुआ और उसका सारा राज्य सर्कारी राज्य में मिल गया। इति १ ला भाग।

—※—

दूसरा भाग।

बालाजी बिश्वनाथ ने पेशवा होकर सैयदों की सहायता स दिल्ली के परतंत्र बादशाह से अपने स्वामी का गया हुआ सब राज्य फेर लिया। और छः वर्ष पेशवाई करके सन् १७२० में सास बड़ गांव में मर गया, उसी साल में हैदराबाद के नव्वाबों का मूल पुरुष निजामुल मुल्क नर्मदा के इस पार आकर बादशाही सेना से लड़ाई कर रहा था और अपना अधिकार बहुत बढ़ा लिया था।

साहू राजा ने बालाजी विश्वनाथ के बड़े पुत्र बाजीराव को पेशवाई का अधिकार दिया। यह मनुष्य शूर और युद्ध में बड़ा कुशल था और उसका छोटा भाई चिमनाजी आप्पा भी बड़ा बुद्धिमान और वीर था और अपने बड़े भाई को राज्य और लड़ाई के कामों में बड़ी सहायता करता था। नि-जामुल मुल्क से इसने तीन लड़ाई बड़ी भारी २ जीती और गुजरात मालवा इत्यादि अनेक देशों पर अपना इखतियार कर लिया। और अपनी सेना ले कर सारे हिन्दुस्तान को लूटता और जीतता फिरता था। सेंधिया हुल्कर और गाइकवाड़ ने इसी के समय उत्कर्ष पाया पर सेंधिया के पुरुषा पहले से बादशाही फौज के सरदारों में थे। वरञ्च कहते हैं कि औरङ्गजेब ने इन्हीं के पुरुषों में से किसी की बेटी साहुराजा को ब्याही थी। नागपूर वाला ने भी इसी के समय राज पाया। चिमनाजी आपा ने पोर्तुगीज लोगों से

साष्टीवेट का इलाका बड़े बहादुरी से छीन लिया था। बाजीराव सन् १७४० में मरा और उसका बड़ा पुत्र बाला जी उर्फ नाना साहब पेशवा हुआ। इस का एक छोटा भाई रघुनाथ राव नाम का था इसने पूना को अपनी राज-धानी बनाया। इसके छोटे भाई के अधिकार में फ़ौज का और चचेरे भाई सदाशिव राव भाऊ के अधिकार में राज्य का सब काम था। यद्यपि नाना साहब राज्य के कामोंमें बड़ा चतुर था पर कपटी और बड़ा आलसी मनुष्य था पर उसके दोनों भाई अपने काम में ऐसे सावधान थे कि उसकी बात में कुछ फरक न पड़ने पाया।

सदाशिव राव भाऊ ने रामचन्द्र बाबा शेणवी को साथ लेकर महाराष्ट्री राज्य का फिर से नया और पक्का प्रबन्ध किया। महाराष्ट्रों का दल उस समय पूरा जमा हुआ था और हिन्दुस्तान में ये लोग चारो ओर चढ़ाइयां करते फिरते थे। दिल्ली का बादशाह तो मानो इनकी कठपुतली था। नाना साहब से नागपुर के सरदार राघोजी भोसला से कुछ वैमनस्य हो गया था पर साहू-राजा ने बीच में पड़ कर बिहार अयोध्या और बंगाल का मरहटी अधिकार भोसला को छुड़वा कर आपस का द्वेष मिटा दिया।

सन् १७४८ ई० में एक सौ चार वर्ष का होकर निजामुल मुल्क मर गया। उसके पीछे बारह वर्ष तक उसका राज्य अव्यवस्थित पड़ा रहा फिर उसके पुत्रों में से निज़ामअली नाम के एक मनुष्य ने वह राज्य पाया। रघुनाथ राव ने अटक से कटक तक हिन्दुस्तान को दो बेर जीता पर वहां का रुपया वसूल करना हुल्कर और संधिया के अधिकार में करके आप फिर आया।

इसी अवसर में अहमदशाह अफ़गानों की बड़ी भारी फौज लेकर हि-न्दुस्तान में मराठों को जीतने के लिये आया। तब सदाशिव राव भाऊ और पेशवा का बड़ा लड़का विश्वास राव ये दोनों संधिया हुल्कर गाइकवाड़ और और और सर्दारों के साथ डेढ़ लाख पैदल पचपन हजार सवार और दो सौ तोप की फौज से दिल्ली की ओर चले और सन् १७६० ई० में जब मरहटों ने दिल्ली जीती थी तब से उन की बहुत सी फौज दिल्ली में भी थी सो वह फ़ौज भी इन लोगों के साथ मिल गई पर दो महीने पीछे इनके फ़ौज में अनाज का ऐसा टोटा पड़ा मरहटों से सिवा लड़ने के और कुछ बन न पड़ा। यह बड़ी लड़ाई पानीपत के मैदान में सन् १७६१ ई० के जनवरी महीने की सातवीं तारीख़ को हुई। भाऊ निजामअली के जीतने से ऐसा गर्वित हो रहा

था कि इस लड़ाई को वह बड़ी असावधानी से लड़ा जब उसने सुना कि विश्वास राव बहुत ज़खमी हो गया है तब हाथी पर से उतर पड़ा और फिर उसका पता न लगा। जनकी जी संधिया और इब्राहीम खां गारदी भी मारे गये और दूसरे भी अनेक बडे बड़े सरदार मारे गये। और मरहटों को ऐसी भारी हार हुई कि सारे दक्खिन में सियापा पड़ गया। और नाना साहिब को तो इस हार से ऐसी ग्लानि और दुःख हुआ कि थोड़े ही दिन पीछे परलोक सिधारे। इस मनुष्य के समय में जैसी पहिले महाराष्ट्रों की वृद्धि हुई थी वैसाही एक साथ क्षय भी हो गया। सन् १७६१ में बालाजी बाजीराव उर्फ नाना साहब के मरने पीछे उनका पुत्र पहिला माधवराव गद्दी पर बैठा। यह स्वभाव का न्यायी सूर धीर और दयालु था। मराठी राज से बेगार की चाल इसने एक दम उठा दी थी और गरीबों के पालने से इसका चित बहुत ही बहलता था। नाना फड़नवीस नामक प्रसिद्ध मनुष्य इसका मुख्य वज़ीर था और मराठी राज्य की आमदनी उसके समय सात करोड़ रुपया थी। इसी के काल में हैदरअली ने मैसूर को राज की नेव दी थी। इसन राघोबा दादा को कैद करके पूने भेज दिया और आप न्याय और धर्म से ११ बरस राज करके २८ बरस की अवस्था में क्षय रोग से मरा। इसके मरने पीछे इसके भाई नारायण राव को गद्दी पर बैठाया पर आठ ही महीने पीछे रघुनाथ राव ने उस को एक सूबेदार से मरवा डाला और आप गद्दी पर बैठा। इस से सब कारबारी इतने नाराज़ थे कि जब नारायण राव की स्त्री गंगाबाई (जो विधवा होने के समय गर्भवती थी) पुत्र जनी तो सवाई माधवराय के नाम से उस को राजा बना के उसके नाम को सुनादी फिरवा दी और नाना फडनवीस सब काम काज करने लगा। राघोबा ने अंगरेजों से इस शर्त पर सहायता चाही कि साष्टीबेट बसई गांव और गुजरात के कुछ इलाके अंगरेज सरकार को दिये जायं पर पोर्तुगीज और बादशाह के कलह से अंगरेज़ों ने आप ही वह बेट ले लिया और फिर कलकत्ते के गवर्नर के लिखे अनुसार नाना फडनवीस ने साष्टीबेट अंगरेजों को लिख दिया और कोंपर गांव में राघोबा को कुछ महीना करके रख दिया। राघोबा दादा को बाजीराव चिमना आप और अमृतराव से तीन पुत्र थे परन्तु अमृतराव दत्तक थे। राघोबा का कोई मनोरथ पूरा नहीं हुआ और सन् १७८४ में मर गया। नाना फड़नवीस से महाजी संधिया से कुछ लाग थी इससे महाजी उसके तावे कभी नहीं

हुआ और सदा कुछ उत्पात करता रहा। नाना की फ़ौज के हरिपन्त फड़के और परशुराम पन्त पट्टवर्द्धन ये दो बड़े सरदार थे। सन् १७९५ में निसाम अली से महाराष्ट्र लोगों से एक बड़ी लड़ाई हुई जिस में मरहठे जीते और अङ्गरेजों से भी तीन बरस तक कुछ कलह रही पर फिर मेल हो गया। सन् १७९६ में नाना फड़नवीस के बंश में रहने के दुख से माधव राव गिर के मर गया और राघोबा का बड़ा बेटा दूसरा बाजीराव पेशवा हुआ पर इस से भी नाना फड़नवीस से खट पट चली ही गई। बाजीराव ने दौलतराव सेंधिया को उभारा और उसने छल बल करके नाना फड़नवीस को नगर के किले में क़ैद कर लिया पर बाजीराव को उसके क़ैद से छुड़ा कर फिर से दीवान बनाना पड़ा क्योंकि ऐसा चतुर मनुष्य उस काल में उसको दूसरा मिलना कठिन था। नाना फड़नवीस सन् १८०० में मर गया और मराठी राज्य की लक्ष्मी और बल अपने साथ लेता गया।। राज पर बैठने के पहिले बाजीराव ने दौलतराव से करार किया था कि हम पेशवा होंगे तो तुमको दो करोड़ रुपया देंगे पर जब इतना रुपया आप न दे सका तो दौलत राव ने साथ पूना लूटा। सन् १८०२ में जब दौलत राव कहीं दौरा करने गया था तब यशवन्त राव हुलकर ने पूना पर चढ़ाई किया और पेशवा और सेंधिया दोनों की सेना को हरा कर पूने को खूब लूटा। बाजीराव इस समय भाग कर अङ्गरेजों की शरण गया और उनसे बसई में यह बात ठहराई कि सर्कारी ८००० फौज पूने में रहै और बाजीराव को शत्रुओं से बचावे और उसका सब खर्च बाजी राव दे। अङ्गरेजी फौज पहुंच जाने के पूर्वही हुलकर पूना छोड़ के चला गया और बाजीराव फिर से पेशवा हुआ। बाजी राव ऊपर से तो अङ्गरेजों से मेल रख-ता था पर भीतर से बड़ाही बैर रखता था और दूसरे राजों को बहकाने सिवा आप भी छिपी२ फौज भरती करता जाता था। सन् १८ १५ में गङ्गाधर शास्त्री पट्टवर्द्धन जो गाइकवाड़ का वकील होकर सर्कार अङ्गरेज की सलाह से बाजीराव के दरबार में गया था, उसको बाजीराव ने त्रम्बक डेङ्गला नाम के एक अपने मुंह लगे हुये सरदार से मरवा डाला जो सर्कार के और बाजी-राव के बैर का मुख्य कारण हुआ और सर्कार ने उस त्रम्बकजी को सन्१८१८ में पकड़ कर चुनार के किले में क़ैद किया। सर्कारी फ़ौज इस समय गवर्नर जेनरल की आज्ञा से पिंडारो को शमन करती फिरती थी कि इसी बीच में भी बाजीराव ने किसी बहाने से सर्कार से लड़ाई करनी आरम्भ करदी और

बापू गोखला को सेनापति नियत किया पर अन्त में हार कर सन् १८१८ ई० ३ जून को मालकम साहिब के शरण में जाकर आठ लाख रुपया साल लेकर बिठूर में रहना अङ्गीकार किया। और इसी बीच में अष्ट गांव पर छापा मार के सितारा के राजा को पकड़ लिया और इसी लड़ाई में बापू मारा गया। जब बाजीराव भागा फिरता था उन्हीं दिनों में भीमा के किनारे कारे गांव में मरहटों की फ़ौज से और सर्कारी फ़ौज से एक बड़ा घोर युद्ध हुआ जिसमें सर्कारी ३०० सिपाही और बीस अङ्गरेज मारे गये पर इन लोगों ने बहादुरी से उनको आगे न बढ़ने दिया। सर्कार की ओर से यहां जय सूचक एक कीर्तिस्तम्भ बना है। सर्कार ने महाराष्ट्र देश का राज अपने हाथ में लेकर एलिफिस्टन साहिब को वहां का प्रबन्ध सौंपा और पूर्वोक्त साहब ने महाराष्ट्रों की परम्परा के मान और रीति का पालन करके किसी को जागीर किसी के साथ बन्दोबस्त करके वहां की प्रजा को ऐसा सन्तुष्ट किया कि वे लोग अब तक उन को स्मरण करते हैं।

बून्दी का राजवंश ।

दोहा ।
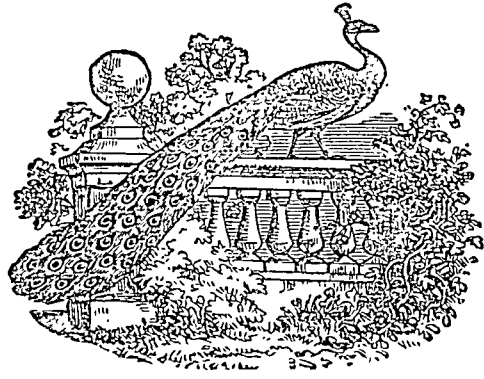
चार बेद प्रिय चार पद, चारहु जुग परमान ।
जयति चतुरभुज जासुजग, बिदित बंस चौहान ॥ १ ॥
बूंदीराज प्रसिद्ध अति, राजपुताना देस ।
जहं के भारत में प्रगट, हाड़ा नाम नरेस ॥ २ ॥
यह तिनकी बंशावली, छत्रिनहित सानन्द ।
लिखी अतिहि संक्षेप में, ग्रन्थन सों हरिचन्द ॥ ३ ॥

बाबू हरिश्चन्द्र लिखित ।

पटना ।

"खड्गविलास" प्रेस—बांकीपुर ।

साहब प्रसाद सिंह ने छाप कर प्रकाशित किया ।

१८८८

बूंदी का राजवंश ।

बूंदी का राजवंश चौहान क्षत्रियों से है । इस वंश का मूल पुरुष अन्हल चौहान प्रसिद्ध है । भट्ट लोगों के मत से चौहान का शुद्ध नाम चतुर्भुज है । अन्हल अनल शब्द का अपभ्रंश है क्योंकि अनल अग्नि को कहते हैं और आबू के पहाड़ पर जो चार क्षत्री वंश उत्पन्न किए गए वे अग्नि से उत्पन्न किए गए थे । जेम्स्प्रिंसिप साहब को संदेह है कि पार्थिअन * (पार्थिव ?) Parthian Dynesty से यह वंश निकला है । उन्हीं के मत के अनुसार ईसा मसीह से ७०० वर्ष पूर्व्व अनल ने गढ़मंडला में राज स्थापन किया । अनल के पीछे सुवाच और फिर मल्लन हुआ (जिस ने मल्लनी वंश चलाया ?) फिर गलन सूर हुआ । यहां तक कि ईसवी सन् १४५ में (विराट का सं० २०२) अजयपाल ने अजमेर बसा कर राज किया । इस के पूर्व्व ८०० बरस और पीछे ५०० बरस ठीक ठीक नामावली नहीं मिलती । विल्फर्ड साहब के मत के अनुसार सन् ५०० ई० के अन्त तक सामन्तदेव, महादेव, अजयसिंह [अजयपाल ?] बीरसिंह, बिन्दुसूर और बैरी विहंड इनराजाओं के नाम क्रमसे मिलते हैं । यदि अजयपाल से मिलाकर यह क्रम मानाजाय तो बैरि-विहंड तक एक प्रकार का क्रम मिलैगा किन्तु दोलाराय [दुर्लभराय ?] जिस से सन् ६८४ ई० में मुसलमानों ने अजमेर छीना उस के पूर्व्व दो सौ बरस के लगभग कौन राजे हुए इस का पता नहीं । दोलाराय के पीछे मा-णिक्यराय (सन् ६९५ ई०) हुआ जिस ने सांभर का शहर बसाया और सां-भरी गोत स्थापन किया । फिर महासिंह, चन्द्रगुप्त [?] प्रतापसिंह, मोह-नसिंह, सेतराय, नागहस्त, लोहधार, बीरसिंह [२], बिबुधसिंह और

---

* और पठान शब्द भी इसी से निकला हुआ मालूम होता है क्योंकि जो हिन्दुस्तान के पासके क्षत्रियधर्म्मी मुसल्मान हैं वेही पठान कहलाते हैं ।

चन्द्रराय ये नाम क्रम से मिलते हैं । Bombay Government Selection Vol. III. P. 193 टाड साहब लिखते हैं कि भट्टलोगों ने दूसरे ग्यारह नाम यहां पर लिखे हैं। परन्तु प्रिंसिप साहब के क्रम सें दीलाराय के पीछे हरिहरराय [टाड साहब के मत से हर्षराय] सन् ७७४ ई० में हुआ और इस ने सुबुक्तगीं को लड़ाई में हराया, फिर बली अगराय (बेलनदेव Tod) हुआ जो सुलतान महमूद के अजमेर के युद्ध में मारा गया। उस के पीछे प्रथमराय और उस को गंगराज. (अमिलदेव) हुआ। अमिलदेव के बाद विशालदेव राजा हुआ। (विलफर्ड १०१६ ई०, लिपि १०३१ से १०८५ ई० तक टाड साहब के मत में चन्द के रायसे के अनुसार सम्बत् ८२१ में और फीरोज को एक लिपि से १२२० संवत) फिर सिरंगदेव [सारंगदेव वा श्रीरंगदेव,] अन्हदेव [जिस ने अजमेर में अन्हसागर खुदवाया]; हिसपाल [हंसपाल] जयसिंह तारीख फिरिश्ता का जयपाल जो प्रिन्सिप साहब के मत से सन् ८७७ ई० में हुआ,] आनन्ददेव [आमन्दपाल वा अजयदेव सन् १०००ई०] सोमेश्वर [जिसने दिल्ली के राजा अनङ्गपाल की बेटी से ब्याह किया] पृथीराय [लाहोर का जिसे शाहाबुद्दीन ने क़त्ल किया ११७६] रायनसी (रायन्र्सिंह जो ११८२ में दिल्ली के युद्ध में मारा गया) विजयराज और उस के पीछे लक्कनसी (लछ्मनसिंह] हुआ जिस की सत्ताईसवीं पीढ़ी में वर्त्तमान समय के नीमरान के राजा हैं।

अब टाड साहब का मत है कि हाड़ालोगों का बंश माणिक्यदेव की शाखा में वा विशाल देव के पुत्र अनुराज से यह बंश चला है। प्रिन्सिप साहब अनुराज ही से हाड़ा लोगों की बंशावली लिखते हैं। किंतु बूंदी के भट्ट संग्रहीत ग्रन्थों में और तरह से इस बंश की उत्पत्ति लिखी है। ये लिखते हैं * "वशिष्ट जी ने आबू पहाड़ पर यज्ञ किया उस से चार उत्तम पुरुष उत्पन्न

---

* अग्नि कुल की उत्पत्ति पुराणों में इस तरह लिखी है। जब परशुराम जी के मारे क्षत्रिय कुल का नाश हो गया तब उन्हों ने पृथ्वी की रक्षा के हेतु चिन्ता कर के आबू पर्व्वत पर ऋषियों से इस विषय का परामर्श कर के सब के साथ क्षीरसागर पर जा कर भगवान की स्तुति किया। आज्ञा हुई कि चार कुल उत्पन्न करो। फिर ऋषियों के साथ ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, और इन्द्र आबू पहाड़ पर आये; और वहां यज्ञ किया। इन्द्र ने पहले अपनी शक्ति से

हुए उनमें से चतुर्भुज जी (चौहान वा चहुआन) से १५६ पीढी में भौम-चन्द्र राजा हुआ उस का पुत्र भानुराज राक्षसों (यवनों) की लड़ाई में मारा गया तब आशापुरा देवी ने कृपा करके भानुराज की अस्थि एकत्र करके जिला दिया और तब से भानुराज का नाम अस्थिपाल हुआ। अस्थिपाल के पीछे क्रम से पृथ्वीपाल, सेनपाल, शत्रुशल्य, दामोदर, नृसिंह, हरिवंश हरि-जश, सदाशिव, रामदास, रामचन्द्र भागचन्द्र, रूपचन्द्र सखुन जी (जिस ने दक्षिण में मांदलगढ़ बसाया) आत्माराम, आनन्दराम, रावहमीर, राव सुमेर, राव सरदार, राव जोधराज, राव रत्न जी, राव कोल्हण जी, राव आशुपाल, राव विजयपाल और राव बङ्गदेव जी हुए।" राव बङ्गदेव से भट्टों की और प्रिन्सिप साहब की वंशावली एक है। प्रिन्सिप साहब के मत से अनुराज ने आसी वा हांसी का राज किया। उसके पीछे इष्टपाल वा इष्टपाल (शायद अस्थिपाल यही है) ने १०२४ ई० में असीर गढ़ में राज किया। उसका चण्डकर्ण वा कर्णचन्द्र उस का लोकपाल और उस का हम्मीर हुआ। इस हम्मीर का पृथ्वीराज रायसे में भी जिक्र है और पृथ्वीराजहीके युद्ध में यह ११८३ ई० में मारा गया। हम्मीर के पीछे क्रम से काल काल कर्ण, महामज्ज (महामत्त) राव बच (राववत्स) और रावचन्द्र हुए। रावचन्द्र का

घास का पुतला बना कर कुंड में डाला। जिस से मार मार कहता हुआ भाला लिये हुए एक पुरुष निकला जिस को ऋषियों ने प्रमार नाम देकर धार और उज्जैन का देश दिया। उसी भांति ब्रह्मा ने बेद और खड्ग लिये हुए एक पुरुष उत्पन्न किया, एक चुलुक (चुल्लू जल से जी उठने से इसका नाम चालुक्य हुआ, और अन्हल पुर इसकी राजधानी हुई। रुद्र ने तीसरा क्षत्री गंगाजल से उत्पन्न किया यह धनुष लिये काला और कुरूप था इस से इस का नाम पारिहार रख कर पर्बतों और बनों की रक्षा इस को दी। अन्त में विष्णु ने चार भुजा का एक मनुष्य उत्पन्न चतुर्भुज नामक किया इस की राजधानी अकावती (गढ़ मंडल) हुई। इन्हीं चार पुरषों से क्रम से पंवार सोलंखी परिहार और चौहान बंश हुए।

प्राचीन काल में चौहान लोगों का सामवेद, पञ्च प्रवर, मधु (मध्य ?) शाखा वत्सगोत्र, विष्णु, (श्रीकृष्ण) वंश होने से सोमवंश, अम्बिका देवी, अर्बुद अ-चलेश्वर शिव, भृगुलक्षण विष्णु और काल भैरव क्षेत्रपाल थे।

परिवार शहाबुद्दीन ने सन् १२६८ में मारा केवल एक पुत्र रायसी बच गया जो चित्तौर में पाला गया और जिसने भैंसरोर में राज स्थापन किया। रायसी के कोलन राय हुए जिस ने मध्यदेश में पसारों का राज्य किया और उन के बङ्गदेव हुए जो हुन के राजा हुए और मैनाल लोगों पर प्रभुत्व किया रावबङ्गदेव से बंश परम्परा में और भेद नहीं है केवल समर सिंह के पुत्र हर राज (हाराराज जिससे हाड़ा बंश चला) प्रिन्सिप साहब बंशावली में विशेष मानते हैं। बूंदीवालों के मत से बङ्गदेव ने (सन् १३४१ ई० में) बंबावदा में राज किया और इनके पुत्र रावदेव सिंह ने बूंदी में राज स्थापन किया और अपने पुत्र देव सिंह (संबत १२६८) को बूंदी राज देकर चले गए। यही राव देव चौधी लोगों के दरबार में बुलाए गए जो प्रिन्सिप साहब के मत से अपने पुत्र हरराज को राज देकर चले गए बूंदी परम्परा में हरराज का नाम नहीं है इस से सम्भव होता है कि हरराज और समरसिंह दोनों राव देव के पुत्र हैं, हरराज ने कुछ दिन राज किया फिर समरसिंह ने भीलों को जीता था। समरसिंह के पीछे क्रम से ये राजा हुए। राव रनपालसिंह (नापा जी) संबत १३३२ राव हम्मीर (हामाजी वा हामूजी) सं० १३४३ राव बरसिंह वा बीरसिंह सं० १३६३ राव बैरीशल्य वा बैरीसाल वा बीरूंजी सं० १४५० (P. 4190, A. D. G.) राव सुभांडदेव वा बांदा जी सं० १४६० इनके समय में बड़ा काल पड़ा (ई०१४८७) और समरकन्दी असरकन्दी नामक दो भाइयों ने इनको राज से उतार कर बारह बरस राज्य किया राव नरायण दास ने पिताका राज्य अपने चचा लोगों से लिया। राव सूरजमल ने संवत १५८४ 1533. A.D.) भट्ट लोगों के मत से महाराना रत्नसिंह जीका बध किया किन्तु जेम्स प्रिन्सिप साहब के मत से महाराना ने इन्हें मारा इससे सम्भव होता है कि इन दोनों राजाओं में ऐसा घोर बैर हुआ कि दोनों परस्पर मृत्यु के कारण हुए। राव राजा सुरतानजी सं० १५८८ [1537 A. D.] यह पागल थे इससे पंचों ने इनको राज से अलग कर के नरायनदास के पुत्र अर्जुनराव को राजा किया। इनके बहुत थोड़े ही समय राज के पीछे चितोर की लड़ाई में मारे जाने से राजावली में इन को गिनती नहीं हुई। राव राजा सुरजन जी सं० १६११ [1560 A. D.] इन्हों ने महाराजाधिराजअकबर से काशी और चनार पाया और काशी में राजमन्दिर बसाया। राव राजा भोज सं० १६४२ इन के समय से कोटा और बूंदी का राज अलग हुआ।

राव रतन जी सं० १६६४ (T. 1613 A. D.) इनके पुत्र कुंअर माधवसिंह ने जहांगीर से कोटा पाया और कुंवर गोपीनाथ जुवराज हुए। कुंवर गोपीनाथ भी [सं० १६७१] युव राजत्व के समय ही में प्राप्त हुए इस से उन के पुत्र रावराजा शत्रुशाल रावरत्न जी के गोद बैठे [सं० १६८८] और माधव सिंह कोटा के राजा हुए। यह राजा शत्रुशाल [प्रसिद्ध छत्रसाल] बड़ा वीर हुआ है जिसने कुलवर्गा जीता और उज्जैन की प्रसिद्ध लड़ाई में १२ राजाओं के साथ मारा गया, * रावराजा भावसिंह सं० १७१५ (1660 A. D.) इन्हों ने औरङ्गजेब से औरङ्गाबाद की सूबेदारी पाया। रावराजा अनरुद्धसिंह सं० १७३८ (P. 1687. A. D.) ये भावसिंह के छोटे भाई के पौत्र थे। रावराजा बुधसिंह† सं० १७५२ (P. 1710 A. D.) इन्हों ने बहादुरशाह की सहायता की

---

* दारासाहि औरंगजुरेहैं दोऊ दिल्ली दल एकैगएभाजि एकै रहे रूंधि चाल में।
भयो घोर जुद्ध उद्ध माच्यो आति दुन्द जहां कैसहु प्रकार प्रान बचत न काल में ॥
हाथी तें उतरि हाड़ाजूझ्यो लोह लंगर दै एतीलाज का मैं जेती लाज छत्रसाल में
तन तरवारन में मन परमेश्वर में प्रन स्वामि कारज मैं माथो हरमाल में ॥

† शिवसिंहसरोज में लिखा है बुद्धराव (संवत् १७९९)—

ये महाराज बूंदी के राजा औ जयसिह सवाई आमेर वाले के बहनोई थे बहादुरशाह बादशाह ने इनका बड़ा मान किया इस बादशाह के इहां दूसरे की ऐसी इज्जत न थी जब सय्यद बारहा ने बादशाह को बेदखल करि आपही बादशाही नक्कारा बजाते हुए गली कूचों में निकलने लगा तब तौ इस शूरबीर से कब रहा जाता था शय्यदों का मुह तरवारों की धार से फेर दिया औ तमाम उमर बादशाह के इहां रहा कविता इनकी बहुत ही अपूर्व है औ कवि लोगों का बड़ा मान दान देने वाला था।

कीनो तुम मान मैं कियो है कब मान अब कीजै सनमान अपमान कीनो कब मैं।
प्यारी हंसि बोलु और बोलैं कैसे बुद्ध राज हंसि हंसि बोलु हंसि बोलि हौं जू अब मैं॥
दृग करि सौंहैं कोरि सौंहैं करि जानत है अब करि सौंहैं अनसौंहैं कीने कब मैं।
लीजै भरि अंक जहां आये भरि अंक हौ न काहू भरि अंक उर अंक देखे अब मैं॥१॥
ऐसी ना करी है काहू आजु लौं अनैसी जैसी सैयद करी है ये कलंक काहि चढैंगे।
दूजे को नगाड़े बाजै दिल्ली में दिलीश आगे हम सुनि भागैं तौ कबिंद कह पढैंगे॥

थी किन्तु जयपुरवालों ने इन्हें राज्यच्युत कर दिया। महाराव राज उमेद सिंह सं० १८०५ (1745 A. D.) होलकर की सहायता से बूंदी फेर लिया (1747 और फिर विरक्त हो कर राज छोड़ कर चले गए। अजीत सिंह सं० १८२७ (1776) महाराव राजा विष्णुसिंह सं० १८३० इन्होंने सम्वत् १८७४ में सर्कार से अहदनामा किया। महाराव राजा रामसिंह। ये वर्त्तमान बूंदी के महाराव हैं सं० १८७८ में सावन कृष्ण ११ को इन्हों ने राज पाया और पूस सुदी ३ सं० १८६६ को इनका जन्म है। ये महाराज बड़े धर्म्मनिष्ट और संस्कृत के अनुरागी हैं। सर्कार से इस राज्य की सलामी १७ तोप की नियत की गई है और महारावराज श्री रामसिंह जी को जी० सी० एस० आई और "काउन्सेलर आफ् दी इम्प्रेस" (राज राजेश्वरी के सलाहकार) की उपाधि दिल्ली के दरबार में (1877 A. D.) मिली।

कोटा की शाखा।

राव माधोसिंह सन् १५७९ ई०
राव मुकुन्द सिंह सन् १६३० ई०
राव जगतसिंह सन् १६५७ ई०
राव किशवर (किशोर) सिंह सन् १६६९ ई०
राव रामसिंह सन् १६८५ ई०
राव भीमसिंह सन् १७०७ ई०
महाराव अर्जुनसिंह सन् १७१९
महाराव दुर्जनशाल (निस्सन्तान)
महाराव अजीतसिंह [विष्णुसिंह के पोते]
महराज छत्रसाल
महाराज गुमानसिंह सन् १७६५ (अपने भाई छत्रसाल की गद्दी बैठे)
जालिम सिंह इन के फौजदार थे।
महाराव उमेदसिंह सन् १७७० ई०
महाराव किशोरसिंह सन १८१९ ई०

कहै राव बुद्ध हमैं करनें हैं युद्ध स्वामि धर्म्म में प्रबुद्ध जेह जान जस मढ़ैंगे।
हाड़ा कहवाय कहा हारि करि कढ़ै ताते झारि शमशेर आजु रारि करि कढ़ैंगे ॥२॥

रामायण का समय ।

(रामायण बनने के समय की कौन कौन बातें विचार करने के योग्य हैं)

पुराने समय की बातों को जब सोचिये और विचार कीजिये तो उन का ठीक ठीक पता एक ही बेर नहीं लगता, जितने नये नये ग्रन्थ देखते जाइये उतनी ही नई नई बातें प्रकट होती जाती हैं। इस विद्या के विषय में बुद्धिमानों के आजकल दो मत हैं। एक तो वह जो बिना अच्छीतरह सोचे, विचारे, पुराने अंग्रेजी विद्वानों की चाल पर चलते हैं और उसी के अनुसार लिखते पढ़ते भी हैं और दूसरे वे लोग जिन को किसी बात का हठ नहीं है जो बातें नई जाहिर होती गईं उन को मानते गये। दूसरा मत बहुत दुरुस्त और ठीक तो है पर पहिला मत माननेवालों को ऐंटिक्वेरियन(Antiquarian)बनने का बड़ा सुभीता रहता है। दो चार ऐसी बंधी बातें हैं जिन्हें कहने ही से वे ऐंटिक्वेरियन हो जाते हैं। जो मूर्त्तियां मिले वह जैनों की हैं, हिन्दू लोग तातार से वा और कहीं पश्चिम से आये होंगे, आगे यहां मूर्त्ति पूजा नहीं होती थी, इत्यादि, कई बातें बहुत मामूली हैं जिन के कहने ही से आदमी ऐंटिक्वेरियन हो सकता है। जो कुछ हो इस बात को लेकर हम इस समय हुज्जत नहीं करते, हम सिर्फ़ यहां वाल्मीकीय रामायण में से ऐसी थोड़ी सी बातें चुन कर दिखाते हैं जो बहुत से विद्वानों की जानकारी में आज तक नहीं आई हैं।

रामायण बनने का समय बहुत पुराना है यह सब मानते हैं, इस से उस में जो बातें मिलती हैं वे उस जमाने में हिन्दुस्तान में बरती जाती थीं यह निश्चय हुआ। इस से यहां वेही बातें दिखाई जाती हैं जो वास्तव में पुरानी हैं पर अब तक नई मानी जाती हैं और विदेशी लोग जिन को अपनी कह कर अभिमान करते हैं।

रामायण कैसा सुन्दर ग्रन्थ है और इस की कविता कैसी सहज और मीठी है इसे जिन लोगों ने इस की सैर की है वे अच्छी तरह जानते हैं कहने की आवश्यकता नहीं, और इस में धर्मनीति कैसी अच्छी चाल पर कही है यह भी सब पर प्रकट ही है इस से हम यहां पर और बातों को छोड़ कर केवल वही बातें दिखाना चाहते हैं जो प्राचीन विद्या (ऐंटीक्वेटी) से सम्बन्ध रखती हैं।

बालकाण्ड—अयोध्या के वर्णन में किले की छत पर यंत्र रखना लिखा है। यंत्र का अर्थ कल है* इस से यह स्पष्ट होता है कि उस जमाने में किले की बचावट के हेतु किसी तरह की कल अवश्य काम में लाई जाती थी चाहे वे तोप हों या और किसी तरह की चीज (या यंत्र से दूरबीन मतलब हो)।

शतघ्नी † यह उस चीज़ को कहते हैं जिस से सैकड़ों आदमी एक साथ

---

* यन्त्र उस को कहते हैं जिस से कुछ चलाया जाय श्रीगीता जी में लिखा है " ईश्वरः सर्व्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति। भ्रामयन् सर्व्व भूतानि यन्त्रारूढ़ानि मायया "। ईश्वर प्राणियों के हृदय में रहता है और वह भूत, मात्र को जो (मानो) कल पर बैठे हैं माया से घुमाता है। तो इस से स्पष्ट प्रकट होता है कि यन्त्र से इस श्लोक में किसी ऐसी चीज़ से मतलब है जो चरखे की तरह घूमती जाय। कल शब्द भी हिन्दी है "कत गतौ" से बना हो वा " कल प्रेरणे " से निकला होगा (कवि कल्पद्रुम कोष देखो) दोनों अर्थ से उस चीज़ को कहेंगे जो आप चले वा दूसरे को चलावे।

† शतघ्नी को भी यन्त्र करके लिखा है। शतघ्नी कौन चीज़ है इस का निश्चय नहीं होता। तीन चीज़ में इस का सन्देह हो सकता है एक तोप दूसरे मतवाले तीसरे जम्हीरे में। इस के वर्णन में जो २ लक्षण लिखे हैं उन से तोप का तो ठीक सन्देह होता है पर यह मुझे अब तक कहीं नहीं मिला कि ये शतघ्नियां आग के बल से चलाई जाती थीं इसी से उन के तोप होने में कुछ संदेह हो सकता है। मतवाले से शतघ्नी के लक्षण कुछ नहीं मिलते क्योंकि मतवाले तो पहाड़ों वा किलों पर से कोल्हू की तरह लुड़काये जाते हैं और इस के लक्षणों से मालूम होता है कि शतघ्नी वह वस्तु है जिस से पत्थर छुटें। जहमीरा वा जम्हीरा एक चीज़ है उस से पत्थर छुट छुट कर दुश्मन की जान लेते हैं (हिन्दुस्तानकी तवारीख़ में मुहम्मद क़ासिमकी लड़ाई देखो) इस से शतघ्नी के लक्षण बहुत मिलते हैं। पर रामायण में लिखा है कि लोहे की शतघ्नी होती थीं और फिर सुंदरकाण्ड में टूटेहुए वृक्षों की उपमा शतघ्नी की दी है इस से फिर संदेह होता है कि हो न हो यह तोप ही हो। रामायण के सिवा और पुराणों में भी किले पर शतघ्नी लगाना लिखा है। (मत्स्य पुराण में राजधर्म्म वर्णन में) दुर्गयन्त्राः प्रकर्त्तव्याः नाना प्रहरणान्विताः। सहस्रघातिनो राजंस्तैस्तुरक्षाविधीयते ॥ १ ॥ दुर्गञ्च परिखोपेतं वप्राट्टालक

मारे जा सकें। कोषों में इस शब्द के अर्थ यह दिए हैं कि शतघ्नी उस प्रकार की कल का नाम है जिस से पत्थर और लोहे के टुकड़े छूट कर बहुत से आदमियों के प्राण लेते हैं और इसी का दूसरा नाम वृश्चिकाली है। (सर राजा राधाकान्त देव का शब्द कल्पद्रुम देखो।) इस से मालूम होता है कि उस समय में तोप या ठीक उसी प्रकार का कोई दूसरा शस्त्र अवश्य था।

अयोध्या के वर्णन में उसकी गलियों में जैन फ़कीरों का फिरना लिखा है इस से प्रकट है कि रामायण के बनने से पहिले जैनिओं का मत था।

जिस समय राजा दशरथ ने अश्वमेध यज्ञ किया उस समय का वर्णन है कि रानी कौशिल्या ने घोड़े को तलवार से काटा। इस बात से प्रकट होता है कि आगे की स्त्रियों को इतनी शिक्षा दी जाती थी कि वह शस्त्र विद्या में भी अति निपुणता रखती थीं।

अभी एशियाटिक सोसाइटी के जरनल में पण्डित प्रान नाथ एम्० ए० ने इस का खण्डन किया है कि वाराहमिहर के काल में श्रीकृष्ण की पूजा ईश्वर समझ के नहीं करते थे, और बराहमिहर के श्लोकों ही से श्रीकृष्ण की पूजा और देवतापन का सबूत भी दिया है। और भी बहुत से विद्वान इस बात में झगड़ा करते हैं। और योरोप के विद्वानों में बहुतों का यह मत है कि श्रीकृष्ण की पूजा चले थोड़ेही दिन हुए, पर ४० सर्ग के दूसरे श्लोक में नारायण के वास्ते दूसरा शब्द वासुदेव लिखा है और फिर पचीसवें श्लोक में कपिल देव जी को वासुदेव का अवतार लिखा है; इस से स्पष्ट प्रकट है कि उस काल से श्रीकृष्ण को लोक नारायण कर के जानते और मानते हैं।*

संयुतं। शतघ्नी यन्त्र मुख्यैश्च शतशश्च समावृतं॥ २॥ इस में ऊपर के श्लोक में शतघ्नी के बदले सहस्रघाती शब्द है (यहां शत और सहस्र शब्दों से मुराद अनगिनत से है)। तोप की भांति सुरंग उड़ाना भी यहां के लोग अति प्राचीन काल से जानते हैं। आदि पर्व का ३७८ श्लोक देखो। सुरंग शब्द ही भारत में लिखा है।

* भारत के भी आदि पर्व का २४७ से २५२ श्लोक तक और २४२७ से २४३२ श्लोक तक देखो। श्रीकृष्ण को परंब्रह्म लिखा है। और भी भारत में सभी स्थानों में हैं उदाहरण के हेतु एक पर्व मात्र लिखा।

अयोध्याकाण्ड— २० वें सर्ग के २९ श्लोक में रानी कैकयी ने राम जी को बन जाते समय आज्ञा दिया कि मुनियों की तरह तुम भी मांस न खाना केवल कंद मूल पर अपनी गुज़रान करना। इस से प्रगट है कि उस समय मुनि लोग मांस नहीं खाते थे *।

३० वें सर्ग के २९ श्लोक में गोलोक का वर्णन है। प्राय: नये विद्वानों का मत है कि गोलोक इत्यादि पुराणों के बनने के समय के पीछे निकाले गए हैं। और इसी से सब पुराणों में इन का वर्णन नहीं मिलता। किंतु इस वर्णन से यह बात बहुत स्पष्ट हो गई कि-गोलोक, का होना हिन्दू लोग उस काल से मानते हैं जब कि रामायण बनी §।

३२ वें सर्ग में तैत्तिरीय शाखा और काठकालाप शाखा का नाम है। इस से प्रकट होता है कि वेद उस काल तक बहुत से हिस्सों में बट चुके थे।

रामजी के बन जाने की राह इस तरह बयान की गई है। अयोध्या से चल कर तमसा अर्थात् टोंस नदी के पार उतरे। फिर वेदश्रुति, ‡ गोमती, स्यन्दिका † और गंगा पार होते हुए प्रयाग आये। और वहां से चित्र कूट (जोकि रामायण के अनुसार १० कोस है) ऽ गए। यह बिल्कुल सफ़र उन्होंने पांच दिन में किया। और सुमन्त उनको पहुंचा कर शृङ्गवेरपुर अर्थात् सिंगरामऊ से दो दिन में अयोध्या पहुंचा। पहली बात से प्रकट हुआ कि पुराने ज़माने के कोस बड़े होते थे। और दूसरी बात से विदित हुआ कि सड़क उस समय में भी बनाई जाती थी नहीं तो इतनी दूर की यात्रा को पांच दिन में ते करना कठिन था।

---

* यहां मांस से बिना यज्ञ के मांस से मुराद होगी।

§ वेद में ब्रह्म के धाम के वर्णन में लिखा है कि वहां अनेक सींगों की गऊ हैं।

‡ वेदसा नाम की एक छोटी नदी गोमती में मिलती है शायद उसी का नाम वेदश्रुति लिखा है।

† जिस को अब सई कहते हैं।

ऽ यह बड़े सन्देह की बात है अब जो चित्रकूट माना जाता है वह प्रयाग से तीन चार मंज़िल है पर यहां दस कोस लिखा है। इस दस कोस से यह आशय है कि वहां से उस पर्ब्बत की श्रेणी (लाइन) आरम्भ होती है पर जहां डेरा किया था वह स्थान दूर होगा।

भरतजी जब अपने नाना के पास से जो कि कैकय अर्थात् गक्कर देश का राजा था आने लगे तो उस ने कई बहुत बड़े और बलवान कुत्ते दिये और तेज़ दौड़नेवाले गदहों (खच्चर) के रथ पर उनको विदा किया। वे सिन्धु और पंजाब देते हुए इक्षुमती को पार कर अयोध्या आये। इस्से दो बात प्रकट हुई; एक तो यह कि उस काल में कैकय देश में गदहे और कुत्ते अच्छे होते थे, दूसरे यह कि वहां कि हिंदुस्तान से राह सिन्धु देकर थी।

७७ वें सर्ग में मूर्त्तियों का वर्णन है इस्से दयानन्द सरस्वती इत्यादि का यह कहना कि रामायण में कहीं मूर्त्ति पूजन का नाम नहीं है अप्रमाण होता है।

इसी स्थान में निषाद का लड़ाई की नौकाओं के तैयार करने का वर्णन है। जिस्से यह बात प्रमाणित होती है कि उस काल के लोग स्थल की भांति पानी पर भी लड़ सक्ते थे।

दक्षिण के लोगों की सिर में फूल गूंधने की बड़ी प्रसंशा लिखी है। इससे यह बात झलकती है कि उत्तर के देश में फूल गूंधने का विशेष रिवाज नहीं था।

१०८ सर्ग में जाबालि मुनि ने चार्वाक का मत वर्णन किया है। और फिर १०६ सर्ग में बुध का नाम और उनके मत का वर्णन है। इससे प्रगट है कि ये दोनों वेद के विरुद्ध मत उस समय में भी हिंदुस्तान में फैले हुये थे। अभी हम ऊपर बालकाण्ड में जैनियों के उस काल में रहने का जिक्र कर चुके हैं तो अब ये सब बातें रामायण के बनने के समय, बुध के जन्म का और बौद्ध और जैन मत अलग होने के समय की विवेचना में कितनी हल्-चल् डालेंगी प्रगट है।

आरण्यकाण्ड—चौथे सर्ग के २२ श्लोक में लिखा है कि असुरों की यह पुरानी चाल हैं कि वे अपने मुर्दे गाडते हैं। इससे प्रकट है कि वेद के विरुद्ध मत माननेवालों में यह रीति सदा से चली आती है।

किष्किन्धाकाण्ड—१३ वें सर्ग के १६ श्लोक में कलम अर्थात् जोंधरी के खेत का बयान है, और कोष में "लेखनी कलमि इत्यपि" लिखा है इस वाक्य से प्रगट होता है कि क़लम लिखने की चीज़ का नाम संस्कृत में भी हैं और वह और चीज़ों के साथ जोंधरी का भी होता था; और इसी से यह भी साफ हो जाता है कि सिवा ताड़ के पत्र वो काग़ज़ पर भी आगे के लोग

लिखते थे क्योंकि ताड़ पर मिटने के डर से सिर्फ लोहे की क़लम से लिखा जा सकता है जैसा कि अब तक बंगाले और ओड़ीसे में रिवाज है। *

६२ वें सर्ग के ३ श्लोक में पुराणों का वर्णन है जिससे नई तबियत और नई तलाश (लाइट) के लोगों का यह कहना कि पुराण सब बहुत नए हैं कहां तक ठीक है आप लोगों पर आप से आप विदित होगा।

इस कांड में और बातों की भांति यह भी ध्यान करने के योग्य है कि रामजी ने बालि से मनु के दो श्लोक कहे हैं और यह भी कहा है कि मनु भी इसको प्रमाण मानते हैं इससे प्रकट हुआ कि मनु की संहिता उस काल में भी बड़ी प्रमाणिक और प्रतिष्ठित समझी जाती थी। ¶

सुन्दरकाण्ड—तीसरे सर्ग के १८ श्लोकमें क़िले के शस्त्रालय (सिलहगाह) के वर्णन में लिखा है कि जिस तरह से स्त्री गहनों से सजी रहती है वैसेही बुर्ज यंत्रों से सजे हुए थे। इस से स्पष्ट प्रकट होता है कि तोप या और किसी प्रकार का ऐसा हथिआर जिस से कि दूर से गोले के भांति कोई वस्तु छूट कर जानलें उस समय में अवश्य था।

चौथे सर्ग के १८ श्लोक में फिर क़िले पर शतघ्नी रखने का वर्णन है।

५ वें सर्ग के पहिले श्लोक में लिखा है कि चन्द्रमा सूर्य्य के प्रकाश से चमकता है इससे स्पष्ट प्रकट हो सक्ता है कि उस समय में ज्योतिष विद्या की बड़ी उन्नति थी।

८ वें सर्ग के १३ श्लोक में लिखा है कि पुष्पक विमान के चारो ओर सोने के हुंडार बने थे और खाने पीने की सब वस्तु उस में रक्खी रहा करती थीं और वह बहुत से लोगों को बिठला कर एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाता था। इससे सोचा जाता है कि यह विमान निस्सन्देह कोई बेलून के भांति की वस्तु होगी। और हुंड़ार उसमें पहचान के हेतु लगाये गये होंगे।

८ वें सर्ग के २५ और २६ श्लोकों में वर्णन है कि लंका में जो गलीचे बिछे थे उन में घर, नदी, जंगल, इत्यादि बुने हुये थे। अब यदि विलायत का कोई ग़लीचा आता है जिस्में मकान उद्यान इत्यादि बने रहते हैं तो देख कर हम लोग कैसा आश्चर्य करते हैं। कैसे शोच की बात है कि हमलोग नहीं जानते कि हमारे हिन्दुस्तान में भी इस प्रकार की चीजें पहिले बनती थीं! यहीं

---

* इस विषय के लिये "सज्जन बिलास" देखो।

¶ भारत में भी कई स्थान पर मनु का नाम है उदाहरण के हेतु आदि पर्व का १७ २२ श्लोक देखो।

पर जब हनुमान जी ने रावण के मन्दिरों को जा कर देखा है तो उस में भोजन के अनेक प्रकार के धातुओं के मणियों के और कांच के पात्रों को भी देखा है। चिमचा कांटा आदि भी उस समय होता था और बड़ी शोभा से खाना चुना जाता था। और भी अङ्गरेजी चाल के पात्र और गहने भुवनेश्वर के मन्दिर में भी बहुत प्राचीन काल के बने हैं बाबू राजेन्द्र लाल मित्र का उड़ीसा प्रथम भाग देखो।

इसी स्थान में अशोक बन में जानकी जी के शिंशिपा के दरख्त के नीचे रहने का वर्णन है।

हिन्दुस्तान के बहुत से पण्डितों का निश्चय है कि शिंशिपा शीशम वृक्ष को कहते हैं। किन्तु हमारी बुद्धि में शिंशिपा सीताफल अर्थात् शरीफ़े के वृक्ष को कहते हैं। इस के दो बड़े भारी सबूत हैं। प्रथम तो यह कि यदि जानकी जी से शरीफ़े से कुछ संबंध नहीं तो सारा हिन्दुस्तान उस को सीता फल क्यों कहता है। दूसरे यह कि महाभारत के आदि पर्व में राजा जन्मे-जय के सर्पयज्ञ की कथा में एक श्लोक है जिस का अर्थ यह है कि आस्तीक की दोहाई सुन कर जो सांप न हट जायगा उसका सिर शिंश वृक्ष के फल की तरह सौ टुकड़े हो जायगा * शिंश और शिंशपा दोनों एकही वृक्ष के नाम हैं यह कोषों से और नामों के सम्बन्ध से स्पष्ट है। शीशम के वृक्ष में ऐसा कोई फल नहीं होता जिस में कि बहुत से टुकड़े हों। और शरीफ़े का फल ठीक ऐसाही होता है जैसा कि श्लोक में लिखा है। इस से लोग निश्चय करें कि सीता जी शरीफ़े ही के वृक्ष के नीचे थीं।

१८ वें सर्ग के १२ श्लोक में गुलाब पाश का वर्णन है इसलिए हमारे भाई लोग यह न समझें कि यह निधि हम को मुसल्मानों से मिली है, यह हिन्दु-स्तान ही की पुरानी वस्तु है।

३० वें सर्ग के १८ श्लोक में लिखा है कि ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य प्राय: संस्कृत बोलते थे किन्तु जब छोटे लोगों से बात करते थे तो ये संस्कृत से नीच भाषा में बोलते थे, इससे बहुत लोगों का यह कहना कि संस्कृत कभी बोलीही नहीं जाती थी खंडित होता है। हां इसमें कोई सन्देह नहीं सब से इसको काम में नहीं लाते थे।

---

* आस्तीक वचनं श्रुत्वाय: सर्पोन निवर्त्तते।
शतधाभिद्यतेमूर्ध्ना शिंशिवृक्ष फलंयथा॥

६४ वें सर्ग के २४ श्लोक में लिखा है कि हनुमान जी राक्षसों के सिर इस तरह से तोड़ २ कर फेंकते थे जैसे यंत्र से ढेले छूटें इससे ऊपर जहां हम यंत्रों का वर्णन कर आए हैं उससे लोग समझें कि वह निस्सन्देह कोई ऐसी वस्तु थी जिससे गोली या कंकड़ पत्थर छोड़े जाते थे।

लंकाकाण्ड—(३ सर्ग १२ श्लोक) (३ सर्ग १३ श्लोक) (३ सर्ग १६ श्लोक) (३ सर्ग १७ श्लोक) ४ सर्ग २३ श्लोक) (२१ सर्ग श्लोक अन्तका) (३८ सर्ग२६ श्लोक (६० सर्ग ५४ श्लोक) (६१ सर्ग ३२ श्लोक) (७६ सर्ग ६८ श्लोक) (८६ सर्ग २२ श्लोक) इन श्लोकों में यंत्र और शतघ्नी का वर्णन है।

यंत्र और शतघ्नी ये रामायण में किस२ प्रकार से वर्णन की गई हैं यह ऊपर के श्लोकों के देखने से प्रगट होगा। इन दोनों के विषय में हमें कुछ विशेष कहना नहीं है। क्योंकि हमारे पाठकों पर आप से आप यह प्रगट होगा कि यंत्र और शतघ्नी का कोई रूप रामायण से हम ठीक नहीं कर सके।

पत्थर ढोने की कल किसी चाल की वाल्मीकि जी के समय में अवश्य रही होगी। और किवाड़ भी किसी चाल की कल से बंद किये जाते होंगे।

यंत्र बहुत ऊंचे २ भी होते थे जैसा कि कुम्भकर्ण की उपमा में कहा गया है। शतघ्नी फौलाद की बनती थी और वृक्षों की तरह लंबी होती थी और केवल किलेही पर नहीं रहती थी परन्तु लड़ाई में भी लाई जाती थी। इन बातों से हमारा यह कहना तो ठीक ज्ञात होता है कि आगी कल * अवश्य थी पर शतघ्नी किस चाल का हथियार था यह हम नहीं कह सकते। †

११५ सर्ग ४२ श्लोक में राजा भोज के बेटे के नाम से जो सिंह और रीछ की कहानी प्रसिद्ध है वह ठीक २ यहां कही गई है।

---

* महाभारत की टीका में युद्ध में नीलकंठ चतुर्धर ने यंत्र का अर्थ अग्नि यंत्र लिखा है पर राजा राधाकान्त ने अग्नियंत्र और चम्मयस्त्र इन दोनों शब्दों का अर्थ बन्दूक किया है ("कामान बन्दूक इतिभाषा") और दारुयंत्र का अर्थ कल लिखा है। महाभारत में एक जगह और लिखा है "यंत्रस्यगुण दोषौ न विचार्यौ मधसूदन। अहं यंत्रो भवान् यंत्री न मे दोषी नमे गुणः।

† विजय रक्षित ग्रन्थ में लिखा है अयः कांटक संछन्ना शतघ्नी महती शिला,, अर्थात् लोहे के कांटों से छिपाई हुई सिल का नाम शतघ्नी है। मेदिनी कोष में करंज भी इसका नाम है।

(१५ सर्ग २७ श्लोक) राम जी से ब्रह्मा ने कहा है कि सीता लक्ष्मी हैं और आप कृष्ण हैं। (इस से हमारा वासुदेव शब्द वाला पहिला प्रमाण और भी दृढ़ होता है) । *

(१२८ सर्ग ३ श्लोक) पुराणों का वर्णन है।

(१३० सर्ग) जब राजा लोग राज पर बैठते थे तब नज़र खिलअत-इत्यादि आगे भी ली और दी जाती थीं। इसी सर्ग में लिखा है कि रामायण बाल्मीकि जी ने जो पहिले से बनाया है वह जो सुनता है सो सब पापों से छूट जाता है। इस में (पुराकृतं) पद से जैसे मनु का शास्त्र भृगु ने एकत्र किया वैसे ही बाल्मीकि जी की कविता भी किसी ने एकत्र किया है यह संदेह होता है। इसी सर्ग के १२० श्लोक में लिखा है कि जो रामायण लिखते हैं उन को भी पुण्य होता है। इस से उस काल में पोथियां लिखी जाती थीं यह भी स्पष्ट है।

उत्तरकाण्ड—उत्तरकाण्ड में बहुत सी बातें अपूर्व और कहने सुनने के योग्य हैं पर अंगरेज़ विद्वानों ने उस के बनने का काल रामायण से पीछे माना है इस से हमारा उन बातों के लिखने का उत्साह जाता रहा तब भी जो बातें विशेष दृष्टि देने के योग्य हैं यहां लिखी जाती हैं।

(४४ सर्ग श्लोक ४२ । ४३) रावण शिव जी की पूजा करता था † इस से दयानन्द स्वामी का यह कहना कि रामायण में मूर्ति पूजा नहीं है खंडित होता है हां यदि वे भी यह कह दें कि यह कांड क्षेपक है या नया बना है तो इस का उत्तर नहीं।

(५३ सर्ग श्लोक २०, २१, २२) श्रीकृष्णावतार का वर्णन है ‡ विदित

---

* पाणिनि के सूत्रों में भी वासुदेव आदि शब्द मिले हैं। इस विषय का विस्तार हमारे प्रबन्ध वैष्णवता और भारतवर्ष में देखो।

† यत्रयत्रस्मयातीह रावणोराक्षसेश्वरः जाम्बूनदमयं लिङ्गं तत्रस्मनीयते ॥४२॥
वालुका वेदि मध्ये तु तल्लिङ्गंस्थाप्य रावणः अर्चयामासगन्धैश्चपुष्पैश्चामृतगन्धिभिः ४३

‡ उत्पत्स्यतेहिलोकेऽस्मिन् यदूनां कीर्तिवर्द्धनः ।
वासुदेव इति ख्यातो विष्णुःपुरुष विग्रहः ॥ २० ॥
सते मोचयिता शापात् राजस्तस्माद्भविष्यसि ।
कृताच तेन कालेन निष्कृतिस्ते भविष्यति ॥ २१ ॥
भारावतरणार्थंहि नरनारायणावुभौ । उत्पत्स्येते महावीर्यौकलौयुगउपस्थिते २२

हो कि तीसरे सर्ग के १२ श्लोक में भी एक जगह विष्णु का नाम गोविन्द कहा है " गोविन्द कर निसृता " और गोविन्द श्रीकृष्ण का नाम तब पड़ा है जब गोवर्द्धन उठाया है यह विष्णुपुराणादिक से सिद्ध है यथा " गोविन्द इतिचाभ्यधात् " तो इस से भी हमारी बालकांड वाली युक्ति सिद्ध हुई।

(९४ सर्ग श्लोक ८) छन्दोविदः पुराणज्ञान् इस वाक्य में पुराणों का वर्णन किया है। पुराणज्ञैश्च महात्मभिः इत्यादि वाक्यों में और भी कई स्थानों पर पुराणों का वर्णन है और पुराणों की अनेक कथा भी इस काण्ड में मिलती हैं इस से यह निश्चय होता है कि उत्तरकाण्ड के बनने के पहले पुराण सब बन चुके थे।

पुराणों के विषय की बहुत सी शंकाएं काल क्रम से मिट गईं। जिन पुराणों के विलायती विद्वानों चार पांच सौ बरस का बना बतलाया था उन की सात सात सौ बरस की प्राचीन पुस्तकें मिलीं। लोग भागवत ही को बोपदेव का बनाया कहते थे किन्तु चन्द के रायसे में भागवत का वर्णन मिलने से और प्राचीन पुस्तकों से यह सब बातें खंडित हो गईं।

उत्तरकाण्ड से मालूम होता है कि अयोध्या काशी और प्रयाग ये तीनों राज्य उस समय अलग थे और उस समय हिन्दुस्तान में तीन सौ राज्य अलग २ थे।

इसी काण्ड के चौरानवे सर्ग में यह लिखा है कि उत्तरकाण्ड भार्गव ऋषि ने बनाया है। यह भी एक आश्चर्य्य की बात है इस वाक्य से तो अंगरेज़ी विद्वानों का सन्देह सिद्ध होता है। इति

एकश्लोकी रामायणम्।

आदौ रामतपोवनादिगमनं हत्वा मृगं काञ्चनम्,
वैदेहीहरणं जटायुमरणं सुग्रीवसम्भाषणम्।
वालीनिग्रहणं समुद्रतरणं लङ्कापुरीदाहनम्,
पश्चाद्रावणकुम्भकर्णहननम् एतद्धि रामायणम्॥

THE
ORIGIN OF AGARWALAS

BY

HARISH CHANDRA,

BENARES.

अगरवालों की उत्पत्ति

हरिश्चन्द्र लिखित ।

PRINTED BY SAHIB PRASAD SINHA, KHADGAVILAS PRESS,

BANKIPUR.

1888.

भूमिका।

यह वंशावली परम्परा की जन श्रुति और प्राचीन लेखों से संगृहीत हुई है परन्तु इसका विशेष भाग भविष्य पुराण के उत्तर भाग में के श्रीमहालक्ष्मी व्रत की कथा से लिया गया है; इस में वैश्यों में मुख्य अगरवालों की उत्पत्ति लिखी है। इस बात का महाराज जय सिंह के समय में निर्णय हुआ था कि वैश्यों में मुख्य अगरवाले ही हैं, इन अगरवालों का संक्षेप वृत्तान्त इस स्थान पर लिखा जाता है। इनका मुख्य देश पश्चिमोत्तर प्रान्त है और इनकी बोली स्त्री और पुरुष सब की खड़ी बोली अर्थात् उरदू है इन के पुरोहित गौड़ ब्राह्मण हैं और इनका व्यवहार सीधा और प्रायः सच्चा होता है और इस जाति में एक विशेषता यह है कि इन में कोई ऊंचे नीचे नहीं होते और न किसी को कोई अल्ल (उपाधि) होती है, बनारस और मिरजापुर में तो पुरबियों का नाम भी सुनाता है पर जो देश में पूछो कि तुम पुरबिए हो कि पछांहीं तो वे लोग बड़ा आश्चर्य करते हैं और कहते हैं कि पुरबिए शब्द का क्या अर्थ है। बनारस के पछांही लोगों में भी ठीक अगरवालों की रीतें नहीं मिलतीं और उनकी बोली भी वैसी नहीं है केवल जो घर दिल्ली वाले लोगों के हैं उन में वे बातें हैं। इन लोगों में जैसा विवाहादिक में उत्साह होता है वैसा ही मरने में बरसों दुःख भी करते हैं परन्तु जो बूढ़ा मरता है तब तो विवाह से भी धूमधाम विशेष कर देते हैं!!!

देश में तो जामा पगड़ी पहन के सब दाल भात खाते हैं पर इधर वह व्योहार नहीं करते और केवल पूरी खाने में जाति का साथ देते हैं एक बात यह भी इस जाति में उत्तम है कि अगरवालों में मांस और मदिरा की चाल कहीं नहीं है पर हुक्का इनके पुरोहित और ये दोनों पीते हैं यों जो लोग नेमी हों वे न पियें पर जाति की चाल है। विवाह के समय इन का बहुत व्यय करना सब में प्रसिद्ध है और इसी विपत से कई घर बिगड़ गए पर यह रीति छोड़ते नहीं। इन में कुछ लोग जैनी भी होते हैं और देस में सब जनेऊ प-हिरते हैं पर इधर पूरब में कोई कोई नहीं भी पहिरते, इन के पुरुषों का प-हिरावा पगड़ी पायजामा या धोती और अंगा है और स्त्रियों का पहिरावा

ओढ़ना घांघरा या छोटेपन में सुथना है। और दशो संस्कार होने की चाल इन में अब तक मिलती है। पुरबियों के अतिरिक्त मारवाड़ी अगरवाले भी होते हैं पर इनका ठीक पता नहीं मिलता कि कब से और कहा से हैं। जैसे पछांही अगरवालों की चाल खत्रियों से मिलती है वैसे ही इन माड़वारियों की महेश्वरियों से मिलती है पर पुरबियों की चाल तो इन दोनों से विलक्षण है।

अगरवालों की उत्पत्ति की भूमिका में यह बात लिखनी भी आनन्द देने वाली होगी कि श्रीनन्दरायजी जिन के घर साक्षात् श्रीकृष्णचन्द्र प्रगट हुए वैश्यही थे और यह बात श्रीमद्भागवतादि ग्रंथों से भी निश्चय की गई है, जो हो इस कुल में सर्व्वदा से लोग बड़े धनवान और उदार होते आए पर इन दिनों वे बातें जाती रहीं थीं, मुगलों के समय से इनकी वृद्धि फिर हुई और अब तक होती जाती है।

मैंने इस छोटे से ग्रन्थ में संक्षेप से इनकी उत्पत्ति लिखी है निश्चय है कि इसे पढ़ के वे लोग अपनी कुल परम्परा जानैंगे और मुझे भी अपने दीन और छोटे भाइयों में स्मर्ण रक्खैंगे।

वैसाख शुक्ल ५ सं १९२८ काशी } श्री हरिश्चन्द्र।
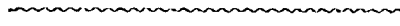
के बहुत से मन्दिर बनाए इसका पड़पोता नेमिनाथ हुआ जिसने नैपाल ब-साया और उसका पुत्र हन्द हुआ जिसने श्री वृन्दावन में यज्ञ करके वृन्दा देवी की मूर्त्ति स्थापन किया। इस वंश में गुर्जर बहुत प्रसिद्ध हुआ जिस के नाम से गुजरात का देश बसा है। इसके वंश में हीर नामा एक राजा हुआ जिसके रंग इत्यादिक सौ पुत्र थे जिन में रंगने तो राज पाया और सब बुरे कर्म्मों से शूद्र हो गए और तप के बल से फिर इन लोगों ने वंश चलाये—जिन के वंश के लोग वैश्य हुए पर उनके कर्म्म शूद्रों के से थे। रंग का पुत्र विशोक हुआ उस के पुत्र का नाम मधु और उसका पुत्र महीधर हुआ। महीधर ने श्री महादेव जी को प्रसन्न करके बहुत से बर पाये—इसके वंश में सब लोग व्यौहार में चतुर और सब धन और पुत्र से सुखी थे।

इसी वंश में वल्लभ नामा एक राजा हुए और उसके घरमें बड़े प्रतापी अग्र राजा उत्पन्न हुए इस को अग्रनाथ और अग्रसेन भी कहते थे। यह बड़ा प्रतापी था। इसने दक्षिण देश में प्रतापनगर को अपनी राजधानी बनाया। यह नगर धन और रत्न और गज से पूर्ण था। यह ऐसा प्रतापी था कि इन्द्रने भी उससे मित्रता की थी। एक समय नाग लोक से नागों का कुमुद नाम राजा अपनी माधवी कन्या को लेकर भूलोक में आया और उस कन्या को देखकर इन्द्र मोहित हो गया और नागराज से वह कन्या मांगी पर नागराजने इंद्र को वह कन्या नहीं दी और उसका विवाह राजा अग्र से कर दिया यही माधवी कन्या सब अगरवालों की जननी है और इसी नाते से हम लोग सर्प्पों को अब तक मामा कहते हैं॥

इन्द्र ने इस बात से बड़ा क्रोध किया और राजा अग्र से बैर मान कर कई बरस उनकी राजधानी पर जल नहीं बरसाया और अग्रराजा से बड़ा युद्ध किया तब भगवान ब्रह्मदेव ने दोनों को युद्ध से रोका इस्से राजा अपनी राजधानी में फिर आया और राज अपनी स्त्री को सौंप के आप तीर्थों में घूमने चला या और सब तीर्थों में फिर कर महालक्ष्मी की उपासना किया और काशी में आकर कपिलधारा तीर्थ पर महादेव जी का बड़ा यज्ञ करके बहुत सा दान किया, तब श्री महादेवजी प्रसन्न होकर प्रगट हुए और कहा कि बर मांगो तब राजा ने कहा कि मैं केवल यही बर मांगता हूं कि इन्द्र मेरे बश में होय—इसपर प्रसन्न होकर अनेक बर दिये और कहा कि तुम महालक्ष्मी की उपासना करो तुमारी सब इच्छा पूरी होगी यह सुन कर राजा फिर तीर्थ

का शुद्ध नाम पुन्यपत्तन जाना जाता है। ८ करनाल । ९ कोट कांगडा जिस का शुद्ध नाम नगर कोट है। अगरवालों की कुलदेवी महामाया का मन्दिर यहीं है और ज्वाला जी का मन्दिर भी इसी नगर की सीमा में है। १० लाहौर इस नगर का शुद्ध नाम लवकोट है। ११ मंडी इसी नगर की सीमा में रैवालसर तीर्थ है। १२ बिलासपुर इसी नगर की सीमा में नयना देवी का मन्दिर बना है। १३ गढ़वाल। १४ जींदसफीदम। १५ नाभा १६ नारनौल इस का शुद्ध नाम नारिनवल है। ये सब नगर उस राजधानी में थे, और राजधानी का नाम अग्र नगर था जिसे अब अगरोहा कहते हैं। आगरा और अगरोहा * ये दोनों नगर राजा अग्रसेन के नाम से आज तक प्रसिद्ध हैं। राजा अग्रसेन ने अपनी राजधानी में महालक्ष्मी का एक बड़ा मंदिर किया था।

राजा अग्रसेन ने साढ़े सत्रह यज्ञ किये—इसका कारण यह है कि जब राजाने अठारवां यज्ञ आरम्भ किया और आधा हो भी चुका तब राजा को यज्ञ की हिंसा से बड़ी ग्लानि हुई और कहा कि हमारे कुल में यद्यपि कहीं भी कोई मांस नहीं खाता परन्तु देवी हिंसा होती है सो आज से जो मेरे वंश में हो उसको यह मेरी आन है कि देवी हिंसा भी न करे अर्थात् पशु यज्ञ और बलिदान भी हमारे वंश में न होवे और इस्से राजा ने उस यज्ञ को भी पूरा नहीं किया। राजा को १७ रानी और एक उपरानी थीं उनसे एक एक को तीन तीन पुत्र और एक एक कन्या हुई और उसी साढ़े सत्रह यज्ञ से साढ़े सत्रह गोत्र हुए। कोई लोग ऐसा भी कहते हैं कि किसी मनुष्य का व्याह जब गोत्र में हो गया तो बड़े लोगों ने एकही गोत्र के दो भाग कर दिये इस्से साढ़े सत्रह गोत्र हुए पर यह बात प्रमाण के योग्य नहीं है। राजा अग्र के उन ७२ बहत्तर पुत्र और कन्याओं के बेटा अग्रवाल कहाए। अग्रवाल का अर्थ अग्र के बालक हैं। अग्रवालों के साढ़े सत्रह गोत्रों के ये नाम हैं। १ गर्ग २ गोइल ३ गावाल ४ बात्सिल ५ कासिल ६ सिंहल ७ मंगल ८ भद्दल ९ तिंगल १० ऐरण ११ टैरण १२ ठिंगल १३ तित्तल १४ मित्तल १५ तुन्दल १६ तायल १७ गोभिल, और गवन अर्थात् गोइन आधा गोत्र है, पर अब नामो में के कुछ अक्षर उलट पुलट भी हो गए हैं।

* अब यह एक गांव सा बच गया है।

राजा अग्र ने अपने सहायक गर्ग ऋषि के नाम से अपना प्रथम गोत्र किया और दूसरे गोत्रों के नाम भी यज्ञों के अनुसार रक्खे। राजा अग्र ने अपने कुल पुरोहित गौड़ ब्राह्मण बनाए और उस काल में सब अगरवाले वेद पढ़-ने वाले और त्रकाल साधने वाले थे। राज अग्र बूढ़ा होकर तप करने चला गया—और उस्का पुत्र विभु राज पर बैठा और उस्के कई वंश तक राजा लोग अपने धर्म में निष्ठ होकर राज करते रहे। इस वंश में दिवाकर एक राजा हुआ जो वेदधर्म छोड़कर जैनी हो गया और उसने बहुत से लोगों को जैनी किया और उसी काल से अगरवालों से वेदधर्म छूटने लगा परन्तु अगरोहा और दिल्ली के अगरवालों ने अपना धर्म नहीं छोड़ा। इस वंश में राजा उग्रचन्द्र के समय से राज घटने लगा और जब शहाबुद्दीन ने चढ़ा-ई किया तब तो अगरोहा सब भांति नाश कर दिया—शहाबुद्दीन की लड़ाई में बहुत से लोग मारे गए और उनकी बहुतसी स्त्री सती हुईं जो हम लोगों के घर में अब तक मानी और पूजी जाती हैं। यह अगरवालों के नाश का ठीक समय था इसी समय से इन में से बहुतों ने धर्म छोड़ दिये और यज्ञोपवीत तोड़ डाले। उस समय जो अगरवाले भागे वे मारवाड़ और और पूर्व में जा बसे। और उनके वंश में पुरबिये और माड़वारी अगरवाले हुए, और उतराधी और दखिनाधी लोग भी इसी भांति हुए, पर मुख्य अग-रवाले पछांही वेही कहलाए जो दिल्ली प्रान्त में बच गए थे। जब मुगलों का राज हुआ तब अगरवालों की फिर बढ़ती हुई और अकबर ने तो अगर-वालों को अपना वजीर बनाया—उसी काल से अगरवालों की विशेष वृद्धि हुई—अकबर के दो मुख्य और प्रसिद्ध अगरवाले वजीर थे जिनका नाम महा-राज टोड़रमल और मधूशाह था, मधूसाही पैसा इन्हीं के नाम से चला है॥

खत्रियों की उत्पत्ति ।

जिसे अनेक शास्त्रों से संग्रहित ।
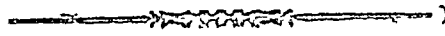
क्षत्रियों की उत्पत्ति ॥
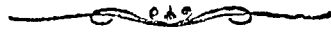
मेरी बहुत दिन से इच्छा थी कि मैं इस जाति का पुरावृत्त संग्रह करूं परंतु मुझे इस में कोई सहायक न मिला और जिन २ मित्रों ने मुझ से पुरावृत्त देने कहा था वे इस विषय में असमर्थ हो गए और इसी से मेरा भी उत्साह बहुत दिनों तक मन्द पड़ा रहा परन्तु मेरे परम मित्र ने इस विषय में मुझे फिर उत्साहित किया और कुछ मुझे ऐसी सहायता भी मिल गई कि मैं फिर से इस जाति के समाचार अन्वेषण में उत्सुक हुआ ।

लाहौर निवासी श्रीपण्डित राधाकृष्ण जी ने इस विषय में मुझे बड़ी सहायता दी और वैसी ही कुछ कुछ सहायता श्रीमुनशी बुधसिंह के मिहिर प्रकाश और श्रीयुत शेरिङ्ग साहब के जाति संग्रह से मिली ।

इस समय में प्रायः बहुत जाति के लोग अपनी अपनी उन्नति दर्शन में प्रवृत्त हुए हैं जैसा दूसर (जिन के वैश्यत्व में भी सन्देह है क्योंकि उनके यहां फिर से कन्या का पति होता है) अपने को कहते हैं कि हम ब्राह्मण हैं। कायस्थ (जो शूद्रधर्म्म कमलाकर की रीति से संकर शूद्र हैं) कहते हैं कि हम क्षत्रिय हैं और जाट लोगों में भी मेरे मित्र बेसवां के राजा श्री ठाकुर गिरिप्रसाद सिंह ने निश्चय किया है कि वे क्षत्रिय हैं तो इस दशा में इस आर्य्य जाति का पुरावृत्त संग्रह होना भी अवश्य है, जो मुख्य आर्य जाति के निवास स्थल पंजाब और पश्चिमोत्तर देश में फैली हुई है और जिस में सर्व्वदा से अच्छे लोग होते आए हैं। हमारे पूर्व्वोक्त आर्य्य शब्द के दो बेर के प्रयोग से कोई यह शंका न करे कि देश के पक्षपात से मैंने यह आग्रह से आदर का शब्द रक्खा है क्योंकि आर्य्य जाति के निवास का मुख्य यही देश है और यहीं से आर्य्य जाति के लोग सारे भारतवर्ष में फैले हैं यह अङ्गरेजी हिन्दुस्तान के इतिहासों के पाठ से स्पष्ट हो जायगा । हमारे एक मित्र से इस बात का मुझ से बड़ा विवाद उपस्थित हुआ था, वह कहते थे कि पंजाब देश अपवित्र है क्योंकि महाभारत में कर्ण पर्व्व के आरम्भ में शल्य राजा से कर्ण ने पंजाब देश की बड़ी निन्दा की है और वहां के बहुत बुरे

आचरण दिखाये हैं परन्तु वह निन्दा निन्दा की भांति गृहीत नहीं होती क्योंकि पञ्जाब में गुजराती वा मध्य देश के वासियों की भांति धोती पगड़ी का प्रचार नहीं है और न ऊपर से वे लोग स्वच्छ रहते हैं परन्तु यह मैं निस्सन्देह-कह सक्ता हूं कि यहां के कोरे चित्तवाले मनुष्यों से उनका चित्त कहीं उजला है इसके अतिरिक्त कर्म भ्रष्ट का भ्रष्ट है इससे भ्रष्ट की की हुई निन्दा निन्दा नहीं कहाती हां इस बात का हम पूर्ण रूप से प्रमाण देते हैं कि भारतवर्ष में पहिले पहिले आर्य्य लोग केवल पंजाब से लेकर प्रयाग तक बसते थे, श्रीमान जानम्योर साहब ने लाहौर के चीफपण्डित पण्डित राधाकृष्ण को जो पत्र लिखा है उसमें मुक्त कंठ से उन्हों ने स्थापन किया है कि जहां तक मैंने प्राचीन वेदादिक पुस्तकें पढ़ीं उनसे मुझे पूरा निश्चय है कि आर्य्य लोग पहले इन्हीं देशों में बसते थे। "ऋग्वेद संहिता दशम मंडल ७५ सू० ५ ऋक् इमं मे गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया। ६ मंडल सू. ४५ ऋ. ३१ अधि बृबुः पणीनां वर्षिष्ठे मूर्धन्नस्थात् उरुः कक्षो न गांग्यः। १० मंडल० सू. ७५ ऋ. और ५ मं ६२ सू. ऋ. १७ सप्तमे सप्तशाकिन एकमेका शता ददुः यमुनायामधि श्रुतमुद्राधो गव्यं मृजे निराधो अश्व्यं मृजे मंड ३. सू० ३३ ऋ. १ प्रपर्वतानामुशती उपस्थादश्वे इव विषिते हासमाने गावेव शुभ्रे मातरारिहाणे विपाट् छुतुद्री पयसा जवेते ३ मंड २३ सू० ४ ऋ० नित्वादधे वर आपृथिव्या इळायास्पदे सुदिनत्वे अह्नाम् दृषद्वत्यां मानुष आपयायां सरस्वत्यां रेवदग्ने दिदीहि ६ मंड ६१ ऋ. २ इयंशुष्मेभिर्विसखा इवारुजत् सानुगिरीणां तविषेभि रूर्मिभिः पारावतघ्नीमवसे सुवृक्तिभिः सरस्वतीमा विवासेम धीतिभिः" इत्यादि श्रुतियों में गङ्गा यमुना व्यासा सतलज सरस्वती इत्यादि नदियों की महिमा कही है और ऋग्वेद में पहले और दूसरे मं० में कई ऋचाओं में सरस्वती की महिमा कही है, यास्क ने अपने निरुक्त में इन ऋचाओं के अर्थ में विश्वामित्र ऋषि के सतलज और व्यासा के सुहाने पर यज्ञ करने का और इन नदियों के स्तुति करने का प्रकरण लिखा है *। और कीकट देश तथा अन्य प्रदेश और इत्यादि प्रदेश और गोमती इत्यादि

* मनु ने भी इन्हीं को पुण्य देश कहा है "सरस्वती दृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरं" "कुरुक्षेत्रं च मत्स्याश्च पांचालाः शूरसेनकाः"

नदियों के जो कहीं स्मृतियों में नाम आगये हैं वे परस्पर विरुद्ध होने के कारण तादृश प्रमाणी भूत नहीं होते इससे इस बात को हम पूर्ण रूप से प्रमाण प्रमित कर चुके कि आर्य्य लोगों के निवास का स्थान पंजाब से लेकर यमुना के किनारे तक के देश हैं तो इससे वहां के प्राचीन निवासियों को यदि हम परम आर्य्य कहें तो क्या हानि है।

अब इस बात का झगड़ा रहा कि ये कौन वर्ण हैं? तो हम साधारण रूप से कहते हैं कि ये क्षत्री हैं, क्षत्री से खत्री कैसे हुए इस में बड़ा विवाद है बहुत लोगों का तो यह सिद्धान्त है कि पंजाब के लोग क्ष उच्चारण नहीं कर सके इससे ये क्षत्री से खत्री कहलाये, कोई कहते हैं कि जब परशुराम जी ने निक्षत्र किया तब पंजाब देश में कई बालक खत्री कहकर बचा लिये गये थे वे ब्राह्मण वैश्य और शूद्रों के घरों में पले थे और अब उन्हीं से खत्री अरोड़े भाटिये इत्यादि अनेक उपजाति बन गईं और उनके आचरण भी अपने २ पालकों के अनुसार अलग २ होगये, तीसरे कहते हैं कि क्षत्री और खत्री में भेद राजा चन्द्रगुप्त के समय से हुआ क्योंकि चन्द्रगुप्त शूद्री के पेट से था और जब उसने चाणक्य ब्राह्मण के बल से नन्दों को मारा और भारतवर्ष का राजा हुआ तो सब क्षत्रियों से उसने रोटी और बेटी का व्यवहार खोलना चाहा तब से बहुत से क्षत्री अलग होकर हिमालय की नीची श्रेणी में जा छिपे और जब उसने क्षत्रियों का संहार करना आरम्भ किया तब से ये सब खत्री क्षत्रियों के नाम से बनिये बनकर बच गये, कोई कहते हैं कि ये लोग हैं तो क्षत्री पर कलयुग के प्रभाव से वैश्य होगये हैं क्योंकि कलजुग के प्रकरण में लिखा है कि "वैश्य वृतयातु राजानः"। कोई ऐसा भी निश्चय करते हैं कि किसी समय सारे भारतवर्ष में जैनों का मत फैल गया था तब सब वर्ण के लोगजैन होगये थे विशेष करके वैश्य और क्षत्री. उन में से जो क्षत्री आबू के पहाड़ पर ब्राह्मणों ने संस्कार देकर बनाये व तो क्षत्री हुए और उन लोगों से सैकड़ों वर्ष पीछे जो क्षत्री जैन धर्म छोड़ कर हिंदू हुए वे खत्री कहाये और क्षत्रियों के पंक्ति मे न मिले, गुरु गोविन्द सिंह ने अपने ग्रन्थ नाटक के दूसरे तीसरे चौथे पांचवे अध्याय में लिखा है कि "सब खत्री साह सूर्य्यवंशी हैं, रामजी के दो पुत्र लव और कुश ने मद्र देश के राजा की कन्या से विवाह किया और उसी प्रान्त में दोनों ने दो नगर बसाये कुश ने कसूर लव ने लाहौर उन दोनों के वंश में कई सौ वर्ष लोग राज्य करते चले

आये एक समय में कुशवंश में कालकेत नामा राजा हुआ और लव वंश में कालराय, इन दो राजाओं के समय में दोनों वंशों से आपुस में बड़ा विरोध उत्पन्न हुआ कालकेतु राजा बलवान था उसने सब लववंशी चत्रियों को उस प्रान्त से निकाल दिया, राजा कालराय भाग कर सनौड देश में गया और वहां के राजा की बेटी से विवाह किया और उससे जो पुत्र हुआ उस का नाम सोढीराय रक्खा, उस सोढीराय के वंश के खत्री सोढ़ी कहाये कुछकाल बीते जब सोढियों ने कुश वंशवालों को जीता तो कुश वंश के भाग कर काशी में चले आये और वे लोग यहां रह कर वेद पढ़ने लगे और उन में प्रायः बड़े २ पण्डित हुए, बहुत दिनों पीछे जब सोढियों ने सुना कि हमारे दूसरे भाई लोग काशी में वेद पढ़कर पण्डित हुए हैं तो उनको काशी से बुलाया और वेद सुनकर अपना सब राज्य उन लोगों को दे दिया जिनकी बेद पढ़ने से बेदी संज्ञा होगई थी, काल के बल से इन दोनों वंश के राज्य नष्ट हो गये और वेदियों के पास केवल बीस गांव रह गये और उन्हीं बेदियों के वंश में सम्बत १५२६ में कालू चोखे के घर बाबा नानक का जन्म हुआ और सोढियों के वंश में गुरु गोविन्द सिंह हुए " गुरु नानक साहब अपने ग्रन्थ साहब में जहां चारो वर्णों का नाम लिखते हैं वहां ब्राह्मण खत्री वैश्य शूद्र लिखते हैं।

कोई कहते हैं कि बाबर के पहिले की किसी पुस्तक में खत्री का शब्द नहीं मिलता इससे निश्चय होता है कि बाबर ने जिन चत्रियों को अपने सेना में नौकर रक्खा था उनका नाम खत्री रक्खा।

परंतु कोई कहते हैं कि पञ्जाब मे नाग भाषा का बहुत प्रचार था और अब भी पंजाबी भाषा में उनके बहुत शब्द मिलते हैं और चत्री खत्री की नाग भाषा है॥

ऊपर के लेख से हम सिद्ध कर चुके कि खत्री चत्रिय हैं और उस में लोगों के जो अनेक विकल्प हैं वे भी लिखे गए परंतु हम कोई विकल्प नहीं करते क्योंकि नीचे लिखे हुए वाक्य पुराणोपपुराण सारसंग्रह में दशावतार प्रकरण में परशुराम जी के दिग्विजय में मिले हैं जिन से इनका चत्रिय होना स्पष्ट है यथा—

यदा श्रीमत्परशुरामो गतो दिग्विजयेच्छया ॥

सकला भूस्तदा जाता पूर्णं मोदान्विता यतः ॥ २४ ॥
दुष्टसंहारकृद्धीमान् दुष्टभाराकुला रसा ।
पर्यटन् सकलां पृथ्वीं जयन् बाहुबलेन च ॥ २५ ॥
गतः पंचमहान्देशान्यद्राज्ञा क्रूरसंगरं ।
कृतं परशुरामेण महाविक्रमशालिना ॥ २६ ॥
एकाकिनापि तद्राज्ञः सैन्यं सर्वं विनाशितं ।
कतिचिद् द्रुवुर्वीरा हतास्तु बहवो ऽभवन् ॥ २७ ॥
असृङ्मेदवती भूमिः शुशुभे रणमंडले ।
धुनी लोहितपङ्काढ्या बभूवातिभयंकरा ॥ २८ ॥
धूलिः सैन्यस्य यस्यां सा मग्ना पंकीबभूव ह ।
जन्यभूमिगता यत्र वीराणां स्तमस्तकाः ॥ २९ ॥
कमलाभां वहन्ती या कल्लोलैरावृताप्यभूत् ।
राजानं संनिहत्यासौ रामस्तत्र तरोः पदे ॥ ३० ॥
श्रान्तो ऽतिष्ठत् क्षणं यावद्रिपुनार्यः समागताः ।
अन्वेषयन्त्यः संग्रामभूम्यां स्वीयान् पतीन् मृतान् ३१ ॥
आक्रोशंत्योऽभिधेयेन पुत्रबृत्तगृहादिना ।
विलपन्, योसुहृद्दुःखाद्घातयन्त्य उरःस्थलं ॥ ३२ ॥
लक्ष्मीविलास नामैको वैश्यस्तावत्समागतः ।
करुणा पूर्ण हृदयो दृष्ट्वा तासां हि दुर्गतिं ॥ ३३ ॥
पत्युर्नाशं महद्दुःखं ज्ञात्वा ताः शीलशालिनीः ।
दानशौण्डोधनाढ्यश्च सद्बुध्या ताः सुदुःखिताः ॥ ३४ ॥
बालाननाथान् मत्वा ऽसा वनयत् स्वगृहं प्रति ।
सान्त्वयित्वा विवेकेन परेण परमाः सतीः ॥ ३५ ॥

लालनं पालनं तेषां पोषणं तत्स्त्रिया सुत ।
बालानां क्षत्रवंश्यानामकरोत् स्नेह भावत: ॥ ३६ ॥
एवमेव ततो रंग भूम्या: काश्चित् स्त्रियो हृता: ।
दुष्टै: काश्चिद्द्विजन्मैश्च दयालुभिरुपाहृता: ॥ ३७ ॥
लक्ष्मी विलास संज्ञे न विशा ते बालका यदा ।
व्रतबंधार्हतां प्राप्ता: समकार्युपनायनं ॥ ३८ ॥
स्वधर्माचरणे चैवं विशा ते सुनियोजिता: ।
एवमेवापरे बाला: स्त्रियो येन सुरक्षिता: ॥ ३९ ॥
पोषिता: स्वीयदत्तेन अन्नेनैव तथैव ते ।
मत्वा तमेव चाचारं वर्तुं लेन सन्मुदा । ४० ॥
इमे लक्ष्मीविलासेन रक्षिता: क्षत्रवंशजा: ।
शुद्धा: सदाचारयुक्ता बभूवुर्भाग्यशालिन: ॥ ४१ ॥
येषां कलियुगेप्यमे चत्वारो वंशजा स्मृता: ।
अग्नि: सोमश्च सूर्य्यश्च नाग एते चतुर्विधा: ॥ ४२ ॥
अद्यापि भूमौ वर्तते चतुष्कान्तानवङ्का: ।
दानशूरा: सदाचारा आढ्यवन्त: सुविक्रमा: ॥ ४३ ॥

अर्थ—जब परशुराम जी दिग्विजय करने निकले तब सब पृथ्वी आनन्द पूर्ण होगई क्योंकि दुष्टों के भार से पृथ्वी व्याकुल हुई थी और इन्होंने दुष्टों का संहार किया। सब पृथ्वी पर घूमते और बाहुबल से जय करते हुए पंचनद देशों में गए और वहां के राजा से बड़ा संग्राम किया यद्यपि भगवान् अकेले थे तथापि वहां के राजा की सब सेना मार डाली—इत्यादि ।

उन हत बीरों की स्त्रियां और बालकों को लक्ष्मीविलास नामक वैश्य ले गया और धर्मपूर्वक रक्षण किया और उनके पुत्रों का लालन पालन और यज्ञोपीवतादि संस्कार किया इसी भांति उन मृत बीरों की स्त्रियां और बालक ब्राह्मण वा शूद्रादि भिन्न वर्णों के घर गए उन के ऐसेही आचरण हुए

और लक्ष्मीविलासका पालित क्षत्रियों का समूह जो अग्नि, सूर्य, चन्द्रमाऔर नागवंश का था क्षत्रिय संस्कार पाकर भी वैश्यधर्म में निष्ठ हुआ इत्यादि।

इनका विशेष वर्णन भविष्यपुराण के पूर्वार्द्ध में जो लिखा है उस से और भी निश्चय होता है कि ये सब क्षत्रिय हैं ० इन श्लोकों की संस्कृत ऐसी सहज है कि अर्थ लिखने की आवश्यकता नहीं ० सिद्धान्त यह है कि वैश्यों की वा दूसरी वृत्ति करनेवाले क्षत्रिय जो पंजाब देश में हैं वे क्षत्रिय ही हैं किन्तु परशुराम जी के समय से वहां के क्षत्रियों का शुद्ध संस्कार छूट गया है और ऐसे लोगों की एक पृथक् जाति, खत्री रोड़े भाटिये इत्यादि हो गई है ० इस विषय के दोनो अध्याय यहां प्रकाशित किए जाते हैं ॥

सूतउवाच ।

एवं बहुविधे देशे स हत्वा क्षत्रियर्षभान् ।
गतो पञ्चनदे देवो क्षत्रियान्वयसूदनः ॥ १ ॥
तत्र प्राप्तान् महाशूरान क्षत्रियान् रणदुर्मदान् ।
युयुधेऽतिबलो रामः साक्षान्नारायणांशजः ॥ २ ॥
जनन्या जनितो लोके कः शूरो यस्तु पार्थिवान् ।
पाञ्चालान् जयते युद्धे विना नारायणं स्वयं ॥ ३ ॥
सर्व्वान् हत्वा महाराजान् क्षत्रियान् स द्विजोत्तमः ।
ररुधे पङ्कज वने यथा मत्त द्विपाधिपः ॥ ४ ॥
एवं हत्वा रणे शूरान् तरुणान् रण दुर्म्मदान् ।
प्रवृत्तो वृद्धबालेषु हन्तुं क्रोधाकुलेक्षणः ॥ ५ ॥
हाहाकारो महानासीत् तत्र क्षत्रिय पर्य्यये ।
नार्य्यो वृद्धाश्च बालाश्च मुमुहु र्भयविह्वलाः ॥ ६ ॥
हतेषु तेषु शूरेषु बालवृद्धेषु च क्रमात् ।
अनाथाश्चाभवन् सर्व्वाः क्षत्रियाण्यो हतान्वयाः ॥ ७ ॥

तत्र कश्चिन् महावैश्यः सुधर्म्मा नामकः प्रभुः ।
आसीन् नागान्वये जातः क्षत्रियाणां प्रियंकरः ॥ ८ ॥
हतेषु सर्वबालेषु व्याकुलाश्च कुलेक्षणः ।
चतुः पञ्चावशेषेषूपायं समकरोत्तदा ॥ ९ ॥
नीत्वा स बालान् तान् सर्व्वान् स्वप्रियायै प्रदत्तवान् ।
तस्य भार्य्या महाप्राज्ञी सुशीला नाम नामतः ॥
वात्सल्यं समकरोत्तेषु यथा स्वोदरजे भृशं ॥ १० ॥
यदा निवर्त्तितो देवो निःक्षत्रीकृत्य पार्थिवान् ।
ऊचुस्तस्मै समागत्य तद्वृत्तं पिशुनास्तदा ॥ ११ ॥
अस्ति कश्चिन् महावैश्यो क्षत्रियाणां प्रियं करः ।
रक्षितास्तेन बालास्ते क्षत्रियाणां नरोत्तम ॥ १२ ॥
तच्छ्रुत्वा स द्विजो धावन्श्वसन् रगो यथा ।
उद्यम्य परशुं तत्र गतः क्रोधाकुलेन्द्रियः ॥ १३ ॥
तं दृष्ट्वा स महान् वैश्यः प्राप्तं कालानलोपमं ।
दुर्निवारं मनुष्येभ्यो भक्त्या बुध्या प्यपूजयत् ॥ १४ ॥
सारस्वतास्तु ये विप्राः क्षत्रियाणां पुरोहिताः ।
तेपि तत्रागमन् सर्व्वे यजमानहितेप्सवः ॥ १५ ॥
ऊचुः प्राञ्जलयो विप्राः प्रणामानत कन्धराः ।
वैश्यः सुधर्म्मा तत्पत्नी भार्गवं भर्गविक्रमं ॥ १६ ॥

सर्वे ऊचुः

नमो नमस्ते श्रितविग्रहाय । नमो नमस्ते हृत विग्रहाय ।
नमो नमस्ते कृत विग्रहाय । नमो नमस्ते धृत प्रग्रहाय ।
नमस्ते पूर्णकामाय दुष्ट वामाय ते नमः ।

नमो रामाभिरामाय रूपश्यामाय ते नमः ॥ १८ ॥
पापद्रुम कुठाराय चाकूपाराय ते नमः ।
नमस्ते ऽद्भुतद्वाराय चाकूपाराय ते नमः ॥ १९ ॥
नमो नमस्ते सर्व्वार्यार्चितशर्व्वाय ते नमः ।
हृतराजन्य गर्व्वाया ऽपूर्व्वैश्वर्व्वाय ते नमः ॥ २० ॥
मीन कच्छप वाराह नृसिंह वटु रूपिणे ।
क्षत लीलावताराय विष्णवे प्रभविष्णवे ॥ २१ ॥
रेणुका गर्भ रत्नाय च्यवनानन्द दायिने ।
भार्गवान्वय जाताय नमो रामाय विष्णवे ॥ २२ ॥
नमः परशुहस्ताय खड्गिने चक्रिणे नमः ।
गदिने शार्ङ्गिणे नित्यं शौरिणे ते नमोनमः ॥ २३ ॥
नमस्ते ऽद्भुत विप्राय धरा भारापहारिणे ।
शरणागत पालाय श्रीरामाय नमोनमः ॥ २४ ॥
इति श्री भविष्यपुराणे पूर्वखण्डे वर्णाचारनिर्णये चत्वारिंशोऽध्यायः ॥

सूतउवाच—इत्थं स्तुतः स भगवान् उवाच श्लक्ष्णया गिरा ।
वरं वृणीध्वं भद्रं वो मा भैष्ट विगत ज्वराः ॥ १ ॥
सारस्वता ऊचुः—नाशिता भवता देव राजन्या भूरिविक्रमाः ।
सन्ति तेषान्दयासिन्धो बाला दीनाः स्त्रियस्तथा ॥ २ ॥
तेभ्योऽभयं वयं त्वत्तो देव वाञ्छामहे सदा ।
सुधर्म्मोवाच—मया संरक्षिता ये तु मामकीं वृत्तिमाश्रिताः ॥ ३ ॥
त्यक्तक्षत्रियधर्म्मास्ते संभविष्यन्ति बालकाः ।
वैश्यस्तु भवतोऽवध्यः सदा त्वत्पाद सेवकः ।
अनुकम्प्यो दया सिन्धो दीनोऽहं बन्धु वर्जितः ॥ ४ ॥

परशुरामउवाच—अद्याऽगतोह नाग्रार्थं तेषामेव न संशयः ।
किन्तु तद् स्तवनात्प्रीतो-विरक्तोहं वधात्प्रति ॥ ५ ॥
मत्प्रसादाद्भविष्यन्ति बाला विट् धर्म्म आश्रिताः ।
लक्ष्मीवन्तः प्रजावन्तो नाना शास्त्र विचक्षणाः ॥ ६ ॥
पश्चवीथीषु चतुरा राजसेवा विधायिनः ।
पुरुषाश्च स्त्रियः सर्व्वा सुभगाः कुलसाश्रिताः ॥ ७ ॥
यूयं सारस्वता विप्राः प्रति गृह्णन्तु बालकान् ।
कुर्व्वन्तु चापि सर्व्वेषां संस्कारं क्षत्रियोचितम् ॥ ८ ॥
सूतउवाच—इति संस्थाप्य भगवान् प्रजावीजं प्रजापतिः ।
जगाम तपसे शैलं गौतमाचल मुत्तमं ॥ ९ ॥
ततः प्रभृति ते सर्व्वे क्षत्रिया द्विज पालिताः ।
त्यक्त्वा क्षत्रिय धर्म्माणो वणिग्वृत्तिं समाश्रिताः ॥ १० ॥
ते सूर्य्य शशि वंशीया अग्निवंश समुद्भवाः ।
उत्तमाः क्षत्रियाः ख्याताः इतरे मध्यमाः स्मृताः ॥११॥
मोठ सिन्ध निवाराद्दि मद्दिषावत कोटकाः ।
दैत्य वंश समुत्पन्नाःक्षत्रिया स्तेपि विश्रुताः ॥ १२ ॥
टिक्कसैल इति ख्याता प्रेत वंशोद्भवाः श्रुताः ।
उन्नाइ वंश संभूता स्ते तु कायस्थ पूर्वजाः ॥ १३ ॥
बसैना बर वाराश्च अवध्या स्तबध्यास् तथा ।
चन्नाश्च चामर गौडाद्या सूत वंश समुद्भवाः ॥ १४ ॥
कन्नान कानवाराश्च मोरभंगास्तु वैश्यकाः ।
सेंगराख्या सोनछहा वत्सा ब्राह्मण वंशजाः ॥ १५ ॥
भरा भद्रा भार्गवाश्च मुण्डिता नाकुलम्भराः ।

एवमन्येपि बहुशो क्षत्रियत्वं समाश्रिता: ॥ १६ ॥
नागवंशोद्भवा दिव्या: क्षत्रिया समुदाहृता: ।
ब्रह्म वंशोद्भवाश्चान्ये तथाऽरुट् वंशसम्भवा: ॥ १७ ॥
एतेषु भविता ह्येको महात्मा विगतज्वर: ।
उदासीन: कुलगुरु: कलौ सार्द्धं चतुर्गते ॥ १८ ॥
इत्येतत् कथितं तात क्षत्रियाणां विनाशनं ।
पालनं चापि सर्द्धेषु कि मन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ १९ ।
इति पूर्व्वभविष्ये एक चत्वारिंशोध्याय: ।

श्रीयुत बाबू हरिश्चन्द्र महाशयेषु साबिनय निवेदनम् ।

खत्री के उत्पत्ति विषय में मेरे मित्र पंडित चण्डिप्रसाद जी वर्णन करते हैं कि जब परशुराम श्री दशरथ जी के समय में क्षत्रियों को मारते थे तो वे सब खत्री कहि के बचि गये। तब से वे खत्री कहलाये अद्यावधि उसी नाम से प्रकट हैं। कोई कहते हैं कि (ख) अकाश निवासी (त्रि) तीन ऋषियों की सन्तान हैं अतएव खत्री शब्द से प्रसिद्ध हैं। और जो परशुराम जी को शिरोनमन पूर्वक प्रणाम करि बद्धांजलि हो गये तब तो परशुराम जीने प्रसन्न हो कर कहा धन्य हो तुम निर्भय रहो क्योंकि तुम अरुट् हो अर्थात् क्रोध बिना ही सोई अब अरोड़ा कहलाते हैं। और मेरे मित्र पंडित गोकुलचन्द्र जी के पास एक पुस्तक थी। तिस में लिखा है कि लव जी के वंश में एक राजा थे तिन्ह के दो स्त्री थीं जो कि छोटी थी वह राजा को परम प्यारी थी जो दूसरी बड़ी थी उस में कुछ रुचि कम थी एक एक पुत्र दोनों में प्रकट भये। छोटी स्त्री ने स्वामी से कहा कि राज्य मेरे पुत्र को देवो राजा ने न माना अंत में मंत्री को भी उस राणी ने स्ववशवर्ति करि के कहवाया कि छोटे को राज्य देना चाहिये। मंत्रियों ने कहा कि राजन ! एक को समस्त धन दे दो एक को केवल राज्य दे दो। सुनि के राजा ने बड़े पुत्र को समस्त धन दे दिया। छोटे पुत्र को स्वकीय राज्य दे दिया। छोटे पुत्र ने राज्य पाय के बड़े भ्राता से कहा कि तुम मेरे देश तें निकल जावो तब तो वह अति लाचार होकर मूलस्थाण नगर अर्थात् मुलतान के पास में चलाआया।

और उस के और २ जातियों के मित्र जो थे वे भी चलि आये तब तो उसने कहा कि हम सब एक जाति कहलावें और एक अपने नाम पर ग्राम बसावें जहां हमारी जाती सब सुख पूर्वक निवास करै। इस सलाह को सब ने माना तब उस राज कुमार ने सब को कहा कि हम सब कुट् कोप कभी करें नहीं आपस में अतएव अरुट् हमारा नाम हुआ। सब ने प्रसन्न होके माना। परंच जो जो पुरुष आये थे उनके नाम से अरुट् में भी कई जाती हो गईं सो सब इस पंचनद देश में बिस्तृत हैं। उसी समय उस राज कुमार ने उक्त नगर के निकट में एक अरुट कोट नाम ग्राम बनवाय कर निवास किया जिस को आज काल्ह अरोड़कोट कहते हैं। वह ग्राम अरोड़ों का पूर्व निवास भूमि है। आज काल भी कई एक पुरुष उसी स्थान में जाय के विवाहादि करि आते हैं। जिन्हों को इस देश में कन्या नहीं मिलती हैं। अब देश प्रभाव से उस देश के लोक आचार से हीन होते हैं दूसरे गदहा को अनेकहो पुरुष रखते हैं उसपर निःसंक सवार भी हो जाते हैं अतएव नीच गिने जाते हैं नहीं तो जाती में अच्छे हैं। जो लघुराजकुमार चला था उस को इस पांचाल देश के लोगों ने खत्री शब्द से प्रसिद्ध किया क्योंकि जो श्री गुरु अंगद जी ने गुरु मुखी अक्षर बनाये उस में केवल मूर्द्धन्य खकार है और [च] अक्षर नहीं है अतएव देश बोली से सब खत्री कहलाने लगे। सोई रीति अद्यावधि चली आती है। इत्यादि प्रकार से प्रसिद्ध है। जो आकाश निवासी ३ ऋषि हैं उनका नाम १ आकर्ष २ पङ्काख्य ३ खर्चिश इत्यादि सुदर्शनसंहिता में लिखा है। खर्चिश की सन्तान खत्री कहलाते हैं। यह आख्यायिका उक्त संहिता के द्वादश अध्याय में विदित है। इत्यलमलम्बहुना।

(शालिग्रामदास)

आज कल बहुधा लोग श्रेष्ठ वर्ण बनने के अधिकारी हुये हैं उनमें एक खत्री भी हैं। ये लोग अपने को क्षत्री कहते हैं इस बात को मैं भी मानता हूं कि इनके आद्य पुरुष क्षत्री थे। क्योंकि जो जो कहानियां इस विषय में सुनी गई हैं उससे स्पष्ट मालूम होती है कि ये लोग क्षत्री वंश में हैं।

लोग कहते हैं कि खत्रि हैहयी वंश के वंश में हैं सहस्रार्जुन से और परशुराम से जब युद्ध ठनी तो परशुरामने उस वंशके क्षत्रियों को मार डाला और यह प्रतिज्ञा किया कि इस वंश के क्षत्री को निर्वंश कर डालेंगे। यह

प्रतिज्ञा सुनकर इस वंश के दूषण कुलकलंक कईएक कायरों ने यह कह कर बच गये कि हम बनियों के बालक हैं। और जब परशुराम जी चले गये तो ये जाकर हयहोवंशियों से कहने लगे कि भाई हम लोग विपत्ति में ऐसा कहकर बच गये यह सुन कर उन सबों ने बहुत प्रकार से धिक्कार दिया और कहा कि रे चांडाल तुम सबों ने यह क्या किया अपनी जननी को कलंक लगाया। हाय! तुम सब चत्री कुल में कलंक पैदा हुए। जाओ यहां से भागो दूर हटो न तो अभी शिर काट लेंगे क्या तुम सब हम लोगों के तुल्य हो सकते हो? अपने वंश के लोगों की रक्षा क्या करोगे अपने बाप के माथे पाप चढ़ाये अब हम लोग तुम लोगों के साथ कोई व्यवहार न रक्खेंगे तुम लोगों ने अपने माता पिता को कैसा कलंक लगाया। यह सुनकर ये सब अपनी सी गवांकर वहां से आके वैश्यों से कहा कि भाई तुम लोग अपनी जाति अर्थात् वैश्य हम लोगों को बनाओ। कारण हम लोग बनियां के बालक कहकर बच गये हैं और अपनी सारी व्यवस्था कह गये। बनियांओं ने भी इस बात को अस्वीकार किया अर्थात् कहा कि आज विपति पड़ने पर तुम लोग बनियां के बालक कहकर बचगये काल विपति पड़ने पर शूद्र के बालक कहोगे इस से हम लोग तुम लोग को वैश्य अर्थात् बनियां न बनावेंगे इस बात को सुनकर ये लोग बड़े बिपद में पड़े और आपस में सलाह करके न चत्री न वैश्य एक बिचित्र जाति खत्री बन गये।

कोई कोई कहते हैं कि खात नामक राजपूत के वंश में एक वेश्या से इन लोगों की उत्पत्ति है और कोई २ कहते हैं कि नहीं ये लोग बढ़ई के वंश में हैं अर्थात् बढ़ई को खाति कहते हैं काल प्रभाव से कुछ द्रव्य पाकर वैश्यों की गिनती में होगये। जो हो कोई ऐसा भी कहते हैं कि खेचर नामक राजपूत के वंशमें खत्री हैं कोई कहते हैं कि ये लोग चत्री हई नहीं हैं क्योंकि परशुराम जी से जो लोग अभय पाये हैं वे लोग वैश्य चत्री हैं जो वैशवारे में रहते हैं। और खत्रीयों की दास की पदवी अब तक प्रचलित है इस से ये लोग शूद्र हैं परन्तु बड़े अपसोस की बात है कि जिनका बापदास उनके बेटा अपने को चत्री लिखते हैं ठीक है "स्यार सुत सेर होत निधन कुबेर होत दीनन को फेर होत मेरु होत माटि को"। कोई कहते हैं कि यदि इन के मूल पुरुष चत्री थे तो भी ये अब चत्री नहीं हो सक्ते कारण खानपान बैठब उठब सब चत्रियों से न्यारो है और मूल पुरुष तो पैठान के भी चत्री हैं क्योंकि प्राप्ति-

यन से पैठान शब्द बना है और वैश्य वंश के कोल भील खैरी आदि हैं क्या अब वे क्षत्री हो सक्ते कदापि नहीं। कोई कहते हैं कि चीनी लव आदि का व्यापार करने से ब्राह्मण शूद्र होजाता है तो क्षत्री होकर लवण बेचै तो क्या रहा इसी भांति से लोग अनेक प्रकार से क्षत्रियों की उत्पत्ति वर्ण निर्णय बतलाते हैं परन्तु मैं इन बातों को छोड़ कर नृपवंशावली पत्ता देता हूं कि ये लोग क्षत्री के वंश में हैं.।

दोहा—एक समय वसुधा भई, काम धेनु को रूप ।
पुलक गात रोमांच युत, झारिदियो तन कूप ।१।
तेहि रोमांच के कूप ते, प्रगटेउ छत्री खानि ।
ताको निज निज नाम सभ, बिधिवत कहो बखान ।२।
जादव बैश निसेन नृप, खत्री ख्याति बिजवान ।
अगरवार सुरवार भौ, पंचगोतिया नृप जान ।३।
महोदहार कठिहारपुनि, धाकर और सिरमौर ।
लकरिहार जनवास पुनि, बड़ गुंजर सड़िऔर ।४।
भदवरिया प्रगटे बहुरि, काश्यप और सोमवंश ।
मंडवलिया गाड़ सहित, पाछिल भौ अवतंश ।५।
काठहरिया उत्पन्न भौ, मलन हांस करिहार ।
पोड पुंडर बुंदेल पुनि, गौरवार भिलवार ।६।
हाडा भए नरवनी, छत्री अति रणधीर ।
पङ्क दान बर्णन करी, बिरदावलि पति बीर ।७।
सोनको और जगार भौ, बहुरि तरेढ गरेर ।
ठकुराइ सांवत कही, खीची और धंधेर ॥ ८ ॥
पुनि भौ प्रगट सिहोगिया, छत्री नृपति कुलीन ।
किनवार सिंघिल नृप, कुल पालक अघ हीन ॥ ९ ॥
पुनि प्रगटेउ महरौठ नृप, कामधेनु ते जानि ।
करचोलिया छत्री भएउ, एहि प्रकार सभ खानि ॥ १० ॥
नागवंशी छत्री भए, गडवरिया सकसेल ।
जाति वंश कुल उत्तम, पुनि प्रगटेउ रकसेल ॥ ११ ॥
जनटेया अगरेढ नृप, कुश भौ नाम निहार ।
अपर वंश कहां लगि कहौं, भए धेनु औतार ॥ १२ ॥
शिवरामसिंह]

बादशाहदर्पण ।

अर्थात्

हिन्दोस्तान के मुसल्मान बादशाहों के समय और जन्म आदिक मुख्य बातों के वर्णन का चक्र ।

भूमिका।

रामायण में भगवान् बाल्मीकिजी ने कहा है जो वस्तु हुई हैं नाश होंगी, जो खड़ी हैं गिरेंगी, जो मिले हैं बिछुड़ेंगे, और जो जीते हैं अवश्य मरेंगे। सच है, इस जगत की गति पहिये की आर की भांति है। जो आर अभी ऊपर थी नीचे गई और जो नीचे थी ऊपर हो गई। आधीरात को सूर्य का वह प्रचंड तेज कहां है जो दो पहर को था। दिन को ठंढी किरनों से जी हरा करने वाला चन्द्रमा कहां है। संसार की यही गति है। जो भारतवर्ष किसी समय में सारी पृथ्वी का मुकुटमणि था, जिस को मान सारा संसार मानता था और जो विद्या वीरता और लक्ष्मी का एक मात्र विश्राम था वह आज हीन दीन हो रहा है—यह भी काल का एक चरित्र है।

जब से यहां का स्वाधीनता सूर्य अस्त हुआ उस के पूर्व समय का उत्तम शृङ्खलाबद्ध कोई इतिहास नहीं है। मुसल्मान लेखकों ने जो इतिहास लिखे भी हैं उन में आर्यकीर्ति का लोप कर दिया है। आशा है कि कोई माई का लाल ऐसा भी होगा जो बहुत सा परिश्रम स्वीकार कर के एक बेर अपने 'बाप दादों' का पूरा इतिहास लिख कर उन की कीर्त्ति चिरस्थायी करेगा।

इस ग्रन्थ में तो केवल उन्हीं लोगों का चरित्र है जिन्हों ने हम लोगों को गुलाम बनाना आरंभ किया। इस में उन मस्त हाथियों के छोटे छोटे चित्र हैं जिन्हों ने भारत के लहलहाते हुए कमलवन को उजाड़ कर पैर से कुचल कर छिन्न भिन्न कर दिया। मुहम्मद, महमूद, अलाउद्दीन, अकबर और औरंगज़ेब आदि इन में मुख्य हैं।

प्यारे भोले भाले हिन्दू भाइयो! अकबर का नाम सुन कर आप लोग चौंकिए मत यह ऐसा बुद्धिमान शत्रु था कि उस की बुद्धि बल से आज तक आप लोग उस को मित्र समझते हैं। किंतु ऐसा है नहीं। उस की नीति (policy) अङ्गरेज़ों की भांति गूढ़ थी। मूर्ख औरङ्गज़ेब उस को समझा नहीं, नहीं तो आज दिन आधा हिन्दुस्तान मुसल्मान होता। हिन्दू मुसल्मान में खाना पीना व्याह शादी कभी चल गई होती। अङ्गरेज़ों को भी जो बात नहीं सूझी वह इस को सूझी थी।

यद्यपि उस उरदू शैर के अनुसार 'बाग़बां आया गुलिस्तां में कि सैयाद आया। जो कोई आया मेरी जान को जल्लाद आया।' क्या मुसल्मान क्या अङ्गरेज़ भारतवर्ष को सभी ने जीता किन्तु इन में उन में तब भी बड़ा प्रभेद

नम्बर	नाम बादशाहों का	बाप का नाम	जाति	राज्यपाने का समय	अवस्था	मरने का समय	मृत्यु का कारण	विवरण ।
१३	कुतुबुद्दीनमुबारकशाह	अलाउद्दीन	तथा	१३१६	०	१३२१	हिन्दूगुलाम के हाथ मारागया	इसी चांडाल ने तोड़ा । बड़ा ही क्रूर और उपद्रवी था । बाप की भांति नीच हत्या और क्रूर था । विशेषता यह थी कि पाप विषयी और नीच भी थे । इस के पीछे चार महीने इस के गुलाम खुसरोखां ने सिक्का चलाया ।
१४	गयासुद्दीन		तुगलक	१३२१	०	१३२५	काठकेमकानके नीचेदबकरमरा	अच्छा था ।
१५	फखरुद्दीनमुहम्मद तुगलक (अलगखां)	गयासुद्दीन	तथा	१३२५	०	१३५१	स्वाभाविक	राजा शिवप्रसाद के लिखने के अनुसार बड़ा दाता बड़ा पंडित बड़ा बुद्धिमान बड़ा भाग्यवान बड़ा वीर बड़ा मूर्ख बड़ा क्रूर बड़ा झक्की और बड़ा पागल था ।
१६	फीरोज़ शाह	मुहम्मद	तथा	१३५१	९०	१३८८	तथा	अच्छा था । बहुत से धर्मार्थ काम किए ।
१७	गयासुद्दीन	फीरोज़ शाह	तथा	१३८८	०	१३८९	मारा गया	पांच महीने राज्य किया । मूर्ख था ।
१८	अबूबकर	तथा (पोता)	तथा	१३८९	०	०	कैद से मरा	एक वर्ष भी पूरा राज्य न किया ।
१९	नासिरुद्दीन मुहम्मद	तथा	तथा	१३९०	०	०	स्वभाविक	
२०	हुमायूं सिकन्दर शाह	नासिरुद्दीन	तथा	१३९४	०	१३९४	तथा	केवल ४५ दिन बादशाह था ।
२१	नासिरुद्दीन महमूद	सिकन्दर शाह	तथा	१३९४	०	१४१२	तथा	

इनके पो- [illegible] उपनाम क्या कुछ	कहां गाड़े गए।	ईसवी सन जुलूस।	ईसवी सन मरने का	विवरन।
इकलौं अका	समरकन्द	१३९८	१४३४	दिल्ली के मनुष्यों को साग घास की भांति काटा. भारतवर्ष के अन्तिम बादशाह इसीके वंश में हुए हैं. बड़ा ही निर्दय था एक पांव का लंगड़ा था इसीसे इसको तैमूरलंग कहते हैं।
०	मेवात के देश में	१३९८	१३९९	नाम मात्र को राज्य किया।
०	मुल्तान की ओर	१३९९	१४०५	नाम मात्र को राज्य किया
०	फ़िरोज़ाबाद के प्रांत में	१४०५	१४०४	तथा
०	नहीं मिला।	०	०	तथा
०	कैथल	१४०५	१४१२	तथा
०	फिरोज़ाबाद	१४१२	१४१३	तथा
०	दिल्ली	१४१३	१४२१	पंजाब का हाकिम था. स्वयं बादशाह बन बैठा।
०	दिल्ली	१४२१	१४४६	मारा गया
०	दिल्ली	१४३४	१४४६	

नम्बर	बादशाहों के नाम।	उनके पिता के नाम।	माता के नाम।
११	सुल्तान अलाउद्दीन	मुहम्मदशाह	जहानआरा बेगम
१२	सुल्तान बहलूल	कालाबहादुर	०
१३	निज़ामखां उपनाम अलाउद्दीन सिकंदर शाह	सुल्तान बहलूल	पद्मा जो एक सोना की बेटी थी उपनाम बीबी सोनारी
१४	सुल्तान इब्राहीम	सिकंदरशाह	०
१५	ज़हीरउद्दीन मुहम्मद शाह बाबर	उमर शेख़ मिर्ज़ा	कुतलक़ मकरिम योनिमख़ां की बेटी
१६	नसीरउद्दीन मुहम्मद हुमायूं बादशाह पहिली बार	बाबर बादशाह	माहरू बेगम
१७	शेरशाह उपनाम फ़रीदखां	हसनखां	०
१८	इसलाम शाह उपनाम शाहज़ादः जलाल खां नामांतर सलीम शाह	शेरशाह	बीबी गुमानी

(नेके पो- उपनाम [illegible]ा हुआ	कहां गाड़े गए ।	ईस्वी सन जुलूस ।	ईसवी सन मरने का ।	विवरन ।
०	०	१५५३	१५५३	इस के मामा ने इस को मार डाला।
०	०	१५५३	०	बड़ा मूर्ख और बदकार था· लोग अन्धली कहते थे·
०	उड़ीसा	१५५४	०	शेर शाह का चचेरा भाई·
०	०	१५५५	०	शेर शाह का चचेरा भाई·
[illegible]नत आशियां	दिल्ली में नाम मक़्बर: हुमायूं है	जूलाई १५५५	जनवरी १५५६	फिर हिन्दुस्तान जीतने पर छ महीने राज्य किया और सीढ़ी पर से पैर फिसलने के कारण गिरकर मर गया·
अर्शे आशियां	बिहिश्ता-बाद उप-सिकन्दरा अकबरा-बाद	१५५६	१६०५	बड़ा बादशाह हुआ· हिन्दुओं से स्नेह उत्पन्न किया· बादशाहत बढ़ाई· ऐसा नामी मुसल्मान बादशाहों में कोई नहीं हुआ·
[illegible]नत [illegible]कां	शाहदरा लाहौर बाग़ नूर जहां बे-गम	१६०५	१६२७	बड़ा बादशाह हुआ· हिन्दुस्तान की बादशाहत इस के समय में पूरे औज पर थी·

नम्बर ।	बादशाहों के नाम।	उन के पिता के नाम।	माता के नाम।
२६	सुल्तान दावर बख्श उपनाम मिर्ज़ा बुलाकी	शाहज़ाद: सुल्तान खुसरो	०
२७	शहाबुद्दीन मुहम्मद शाहजहां बादशाह	जहांगीर बादशाह	नव्वाब जोध: बा बेटी राजा भगवा दास राजा जोधपु
२८	अबुल मुज़फ़्फ़र मुही उद्दीन औरंगज़ेब आ-लमगीर बादशाह	शाहजहां बादशाह	अरजुमंद बानू उपन बेगम मुम्ताज़महल
२९	मुहम्मद मुअज़्ज़म उपनाम शाह आलम बहादुर शाह	औरंगज़ेब आलम-गीर बादशाह	नव्वाब बाई
३०	ख़ुजिस्त: अख़्तर जहान शाह	मुहम्मद मुअज़्ज़म उपनाम बहादुर शाह	निज़ाम बाई
३१	रफ़ीउलशान	मुहम्मद मुअज़्ज़म उपनाम बहादुर शाह	निज़ाम बाई
३२	मुहम्मद मग़ज़द्दीन जहांदार शाह	मुहम्मद मुअज़्ज़म उपनाम बहादुर शाह	निज़ाम बाई
३३	जलालुद्दीन मुहम्मद फ़र्रुख़सियर	अज़ीम उल-शां बेटा मुहम्मद मुअज़्ज़म उपनाम बहादुर शाह	०
३४	मुहम्मद अबुल बरकात सुल्तान रफ़ीउल-दरजात	रफ़ीउलदर्जात बेटा मुहम्मद मुअज़्ज़म उप॰ बहादुर शाह	नूरुलनिसा बेगम
३५	शमशुद्दीन रफ़ीउद्दौला मुहम्मद शाहजहां बादशाह ग़ाज़ी	रफ़ीउलशां बेटा मुहम्मद मुअज़्ज़म उपनाम बहादुर शाह	नूरुलनिसा बेगम

…की पी- …पनाम हुआ।	कहां गाड़े गए।	ईसवी सन जुलूस।	ईसवी सन मरने का	विवरन।
…रदौस …ामगाह	दिल्ली सुल्तान मशायख़की दरगाहमें	१७१९	१७४८	बड़ा विषयी था· किन्तु औरंगजेब के पीछे इतने दिन तक स्थिर होकर इसी ने दिल्ली भोगी नादिर शाह इसीके काल में आया· कहते हैं कि इस के पहले मुहम्मद नकीमीर नामक शहज़ादा दो चार दिनके हेतु बादशाह हुआ था·
	०	१७२०	१७२०	मुहम्मद शाह के बादशाह होने के पीछे अब्दुल्लाह ख़ां ने १५ दिन के हेतु बादशाह बनाया था·
…स …गाह	दिल्ली सुल्तान मशायख़ की दरगाह में	१७२०	१७४८	नादिर शाह आया· मृतु से मरा·
	दिल्ली	१७४८	१७५४	मृतु से मरा·
	दिल्ली के हाता मक़्बिरः हुमायूं में	१७५४	१७५९	इमादुलमुल्क के कहने से मेहदी कुली ख़ां ने क़त्ल कर दिया·
	दिल्ली	१७५९	१८०५	अन्तिम स्वतन्त्र बादशाह इसी के समय से अङ्गरेजों का राज्य दिल्ली में हुआ· १८०३ ईस्वी·
	दिल्ली	१८०५	१८३७	नाम मात्र·
	रंगून	१८३७	१८६३	दिल्लीके बलवे में अङ्गरेज़ों ने बिचारे बुड्ढे को नाम मात्र होने पर भी क़ैद करके रंगून भेज दिया· और इस की आंख के सामने इस के भाई भतीजे लड़के पोते सब काटे गए·

मुसल्मान राज्यत्व का संक्षिप्त इतिहास।

सन ५७० में महम्मद का जन्म हुआ। ४० बरस की अवस्था में उन्हीं ने मुसल्मान धर्म्म का प्रचार किया। सन ६३२ में इन की मृत्यु हुई। इन के उत्तराधिकारियों में वलीद ख़लीफ़ा ने अपने भतीजा क़ासिम को ६००० फ़ौज के साथ सिन्धु देश जय करने को भेजा। सिन्धु का राजा दाहिर युद्ध में मारा गया और इस की दो बेटियों के कौशल से क़ासिम को भी वलीद ने मार डाला।

सन ८१२ में मामूं ने हिन्दुस्थान पर फिर चढ़ाई किया किन्तु चित्तौर के राजा खुमान ने २४ बेर युद्ध कर के उस को भगा दिया।

बुख़ारा के पांचवें बादशाह अब्दुलमालिक का अलप्तगीन नामक एक ग़ुलाम था जो मालिक के मरने पर बादशाह हुआ। सुबुक्तगीन इस का एक दास था। स्वामीपुत्र के मरने पर यही ख़ुरासान का राजा हुआ और ग़ज़नी को अपनी राजधानी बनाया। सन ९७० में इसने हिन्दुस्थान पर चढ़ाई किया और लाहौर के राजा जैपाल को जीता। सन ९९८ में उस के मरने के पीछे अपने भाई को क़ैद कर के सुलतान महमूद बादशाह हुआ। सन १००१ में महमूद ने हिन्दुस्थान पर चढ़ाई किया और अपने पुराने शत्रु जैपाल को क़ैद कर लिया। सन १००४ में भटनेर के राजा को जीतने को महमूद की दूसरी चढ़ाई हुई। मुलतान के गवर्नर अबुलफतह लोदी को जीतने को वह तीसरी बेर हिन्दुस्तान में आया (१००५ ई०)। चौथी चढ़ाई उसने जयपाल के पुत्र आनन्दपाल के जीतने को की। आनन्दपाल भी असंख्य हिन्दू सैन्य ले कर उस से भिड़ा किन्तु ठीक युद्ध के समय उस के हाथी के बिचलने से वह लड़ाई भी महमूद जीता और नगरकोट लूट कर भारतवर्ष की अनन्त लक्ष्मी ले गया। इस में ২० मन तो केवल जवाहिर था। (१००८ ई०)। अबुलफतह के बागी होने से मुलतान पर उसकी पांचवीं चढ़ाई हुई (१०१०)। छठीं बेर उस ने थानेश्वर लूटा सन (१०११)। सातवीं और आठवीं चढ़ाई इस ने सन १०१३ और १०१४ में काश्मीर पर किया किन्तु वहां के राजा संग्रामदेव ने इस को हटा दिया। नवीं बार यह सन १०१७ में बड़ी धूम से कन्नौज पर चढ़ा किन्तु कन्नौज के राजा के दासत्व स्वीकार करने से मथुरा नाश करता हुआ लौट गया। १० वीं चढ़ाई इस को सन १०२२ में कालिंजर पर हुई और

उसी बरस ११ वीं चढ़ाई इस की फिर लाहौर पर हुई। १२ वीं बेर गुजरात पर चढ़ाई कर.के सन १०२४ में सोमनाथ का प्रसिद्ध मन्दिर तोड़ा। इस के पीछे वह हिन्दुस्तान में नहीं आया और सन १०३०में मर गया। इस के वंश वालों का हिन्दुस्तान में केवल पंजाब पर कुछ अधिकार रहा।

ग़ज़नी राज्य निर्बल होने पर जगतदाहक अलाउद्दीन ग़ोरी ने ग़ज़नी के अन्तिम राजा बहराम को मार कर अपने को बादशाह बनाया और कुछ दिन पीछे उस के भतीजे शहाबुद्दीन महम्मद गोरी ने बहराम के पोते को को मार कर ग़ज़नी के राज्य का नाम भी शेष नहीं रक्खा। यही महम्मद हिन्दुस्थान में मुसल्मानों के राज्य का मूल है। इस ने सन ११७६ से लेकर १६ बरस तक कई बेर हिन्दुस्थान पर चढ़ाई किया किन्तु कुछ फल नहीं हुआ। कन्नौज के राजा जयचन्द के बहकाने से इस ने सन ११८१ में दिल्ली के चौहान राजा पृथ्वीराज पर बड़ी धूम से चढ़ाई किया था किन्तु तरौरी नामक स्थान में वीर युद्ध के पीछे पृथ्वीराज से हार कर वह अपने देश को लौट गया। सन ११८३ में वह बड़ी धूम और कौशल से फिर दिल्ली पर चढ़ा। हिन्दुओं की सेना भी बड़ी धूम से इस के मुक़ाबिले को बाहर निकली। चित्तौर के समर सिंह इस सेना के सेनापति थे। युद्ध के डेरे पड़ने पर सुलह की बातचीत होने लगी। शहाबुद्दीन ने कहा हम ने अपने भाई को सब वृत्तान्त लिखा है उत्तर आने तक लड़ाई बन्द है। हिन्दू सेना इस बात पर विश्वास कर के शिथिल हो गई थी कि धोखा देकर एकाएक शहाबुद्दीन ने लड़ाई आरम्भ की। बहुत से हिन्दू वीर मारे गए। समरसिंह भी वीर गति को गए। पृथ्वीराज और उन के कवि चन्द को क़ैद कर के ग़ज़नी भेज दिया। कहते हैं कि शब्दभेदी बान से अन्धे होने की अवस्था में एक दिन पृथ्वीराज ने शहाबुद्दीन के भाई ग़यासुद्दीन का प्राण विनाश किया और उसी समय पूर्व संकेतानुसार चन्द कवि ने उन को मारा और उन्हीं ने चन्द * को। भारतवर्ष से हिन्दुओं की स्वाधीनता का सूर्य सदा के हेतु अस्त हो गया। पीछे शहाबुद्दीन ने कन्नौज का राज भी ले लिया और बनारस को भी ध्वंस किया।

---

* चन्द की उक्ति-'अब की चढ़ी कमान को जानै फिरि कब चढ़ै।
जिनि चुक्कै चौहान इक्कै मारय इक्क सर॥'

भाई के मरने पर शहाबुद्दीन सन १२०२ में पूरा बादशाह हुआ किन्तु आठ बरस भी राज्य करने नहीं पाया था कि बदमाशों के हाथ से [१२१०] मारा गया। उस समय हिन्दुस्तान उस के दास कुतबुद्दीन ऐबक के हाथ में था कि इसी को वह यहां प्रबन्ध सौंप गया था। यों भारतवर्ष के राजेश्वरों का राज्य एक दास के आधीन हुआ।

कुतबुद्दीन ऐबक को शहाबुद्दीन के भतीजे महमूद गोरी ने बादशाह का खिताब भेज दिया और तब से हिन्दुस्तान का राज्य निष्कण्टक इस के अधिकार में आया। चार बरस राज्य कर के यह मर गया। इस का पुत्र आरामशाह साल भर भी राज्य करने न पाया था कि इस के बहनोई शम-सुद्दीन ने जो पहिले एक गुलाम था इस को सिंहासन से उतार कर मुकुट अपने सिर पर रक्खा। इस के समय में बंगाला मुलतान कच्छ सिन्धु कन्नौज बिहार मालवा और ग्वालियर तक दिल्ली के राज्य में मिल चुका था। इस के मरने के पीछे इस का बेटा रुक्नुद्दीन फ़ीरोज बादशाह हुआ किन्तु यह ऐसा नष्ट था कि इस को उतार कर लोगों ने इस की बहिन रज़ीया बेगम को बादशाह बनाया। साढे तीन बरस राज्य कर के बलवाइयों के हाथ से यह भी मारी गई। इस का भाई मुईजुद्दीन बहराम दो बरस दो महीना बादशाह रहा फिर लोगों ने इस को क़ैद कर के इस के भतीजे अलाउद्दीन मसऊद को बादशाह बनाया। किन्तु चार बरस बाद यह भी मारा गया और इस का चाचा नसीरुद्दीन महमूद बादशाह हुआ। अल्तिमश का दास और दामाद बलबन इस के समय में मन्त्री था और इस ने नरवर और चन्देरी का क़िला तथा ग़ज़नी का राज्य जय किया था। सन १२६६ में नसीर के मरने पर बलबन बादशाह हुआ और बीस बरस राज्य कर के ८० बरस की अवस्था में मर गया। इस का पोता कैक़ुबाद राजा हुआ किन्तु यह ऐसा विषयी था कि दो बरस भी राज्य न करने पाया कि लोगों ने इस को मार डाला और दिल्ली का राज्य गुलामों के वंश से निकल कर खिलजियों के हाथ में आया।

पंजाब से आकर सत्तर वर्ष की अवस्था में जलालुद्दीन खिलजी तख़्त पर बैठा। मालवा और उज्जैन इस के समय में विजय हुए। इस के भतीजे अला-उद्दीन ने सन १२९४ में देवगढ़ भी जीत लिया। किन्तु दुष्ट अलाउद्दीन ने इस विजय के पीछे ही अपने वृद्ध चचा को प्रयाग में मिलने के समय कटवा

दिया और आप बादशाह हुआ। (१२९५] बादशाह होते ही इस जलालुद्दीन के दो लड़के और उस के पक्षपाती कई सर्दारों को क़त्ल किए और फिर बड़ी निर्दयता से गुजरात जीता। अनेक प्रकार के दुखदाई कर प्रचलित किए। १३०० में रणथम्भौर का प्रसिद्ध क़िला एक बरस की लड़ाई में टूटा और शरणागतवत्सल परम वीर हम्मीर † राजा सकुटुम्ब वीरों की गति को गया। १३०३ में इस ने चित्तौर पर चढ़ाई की। राजा रतनसेन से प्रथम मित्रता दिखला कर फिर विश्वासघात कर के उन को बन्दी किया किन्तु रानी पद्मावती अपनी बुद्धि और वीरता से राजा को छुड़ा ले गई। फिर तो क्षत्रियों ने जीवनाशा छोड़ कर बड़ा युद्ध किया और के सब वीरगति को गए। क्षत्रानियां सब चिता पर बैठ कर भस्म हो गईं। १३०६ मे देवगढ के राजा के कर न देने से फिर से उस पर चढ़ाई हुई और किला तोड़ा। १३१० में कर्णाटक में द्वार समुद्र के राजा बल्लालदेव को और तैलंग के राजा लक्षधर को जीता। १३११ में विद्रोह के कारण एक दिन में इस ने अपने पन्द्रह हजार मुगल सिपाही कटवा दिए। यह अति उग्र अभिमानी और निष्ठुर था। इस के मृत्यु के वर्ष १३१६ में देवगढ़ के राजा के जामाता राजा हरपाल ने देवगढ और गुजरात को जीत कर स्वतंत्र कर दिया। इस के मरने पर मलिक काफ़ूर नामक एक इस के गुलाम ने जिसे इस ने सर्दार बनाया था इस के दो बड़े बेटों को अन्धा कर दिया और तीसरे मुबारक को अन्धा करते समय आप ही मारा गया। क़ुतुबुद्दीन मुबारक ने बादशाह हो कर [१३१७] अपने छोटे भाई को अन्धा किया और बहुत से सर्दारों को मार डाला। यह अति विषयी और मूर्ख था। इस के एक हिन्दू गुलाम ने जिस का मुसल्मान होने पर खुसरो नाम हुआ था १३१९ में मलाबार जीता और १३२० में मुबारक को सकुटुम्ब काट कर आप राज

---

† मीर मुहम्मदशाह मंगोल नामक एक सर्दार पर अपनी एक उपपत्नी से व्यभिचार के सन्देह से अलाउद्दीन ने क्रोध करके उस के बध की आज्ञा दी थी. वह हम्मीर की शरण गया. बादशाह ने हम्मीर से मंगोल को मांगा किन्तु धीर वीर हम्मीर ने अपने शरणागत को नहीं दिया इसी पर अलाउद्दीन चढ़ दौड़ा. राजा हम्मीर के विषय में यह दोहा जगतप्रसिद्ध है-सिंह सुअन सुपुरुष बयन कदलि फलै इक बार। तिरिया तेल हमीर हठ चढ़ै न दूजी बार ॥

पर बैठा। दिल्ली में चार महीने तक इस का सिक्का चलता रहा। इस की समय में हिन्दुओं ने मुसल्मान सर्दारों की स्त्रियों को दासी और वेश्या बनाया मसजिदों में मूरतें बिठाईं और कुरान की चौकी बना कर उस पर बैठते थे। यह उपद्रव सुन कर पंजाब का सूबेदार गाज़ीखां सेना लेकर दिल्ली में आया और खुसरो को मार कर आप बादशाह बना।

गाज़ीखां ने बादशाह होकर अपना नाम गयासुद्दीन तुग़लक़ रक्खा (१३२१) इस का बाप बलबन का गुलाम था। बीदर और वारंगोला जीता। तुग़लकाबाद का क़िला बनाया। तिरहुत जीत कर जब लौटा तो नगर के बाहर इस के बेटे जूना ने एक काठ का नाचघर जो इस के लौटने के आनन्द में बनाया था उस के नीचे दब कर मर गया। (१३२५) जूनाखां ने गद्दी पर बैठ कर अपना नाम मुहम्मद तुग़लक़ रक्खा। (१३४५) इसका प्रकृत नाम फ़खरुद्दीन अलगखां था। पहिले यह बड़ा बुद्धिमान और बड़ा दानी था। हज़ार दर का महल बनाया। मुग़लों से सुलह किया। और दक्षिण में अपना अधिकार फैलाया। पर पीछे से ऐसे काम किये कि लोग उसे पागल समझने लगे। हुक्म दिया कि दिल्ली की प्रजा मात्र दिल्ली छोड़ कर देवगढ़ में रहै, जिसको दक्षिण में दौलताबाद नाम से बसाया था। इस का फल यह हुआ कि देवगढ़ तो न बसा किन्तु दिल्ली उजड़ गई। अन्त में फिर दिल्ली लौट आया। फारस और खुरासान जीतने के लिये तीन लाख सत्तरह हज़ार सवार इकट्ठे किए, इन में से एक लाख को चीन लेने के लिये भेजा, ये सब के सब हिमालय में नष्ट हो गये, कोई न बचा। बहुत से कर प्रचलित किये। लोग शहर छोड़ कर जंगलों में भाग गये पर वहां भी पीछा न छोड़ा और जानवरों की भांति उन लोगों का शिकार किया गया कागज़ का सिक्का चलाया। बड़ा भारी दुर्भिक्ष पड़ा। लाखों मनुष्य मरे। चारो ओर विद्रोह हो गया। बंगला और तैलंग स्वाधीन हो गये। मालवा पंजाब और गुजरातवाले विद्रोही हो गये। कर्नाटक में विजयपुर नाम का एक नया राज्य हो गया, हुसैन बामनी ने मध्यप्रदेश में एक नया राज्य बनाया। अन्त में विद्रोह शान्ति के लिये स्वयं सब जगह घूमा किन्तु मालवा और पंजाब छोड़ कर कहीं शांत न हुआ, रास्ते में सिन्धु के पास ठट्ठा में इसकी मृत्यु हुई। [१३५१] मुहम्मद का भाई फ़िरोज़शाह बादशाह हुआ। [१३५१] इस ने स्थान स्थान पर हम्माम, चिकित्सालय, सराय, पुल, तालाब, पाठशाले

और सुन्दर महल बनवाये थे। कर्नाल से हांसी हिसार तक जमुनाजी नहर निकाली। इस ने अपने को गति वृद्ध समझ कर नसीरुद्दीन को राज्य दिया किन्तु इस के दो बरस पीछे नसीरुद्दीन के दो भाइयों ने बलवा करके इस को निकाल दिया और फ़िरोज़ शाह के पोते गयासुद्दीन को तख़्त पर बैठाया। १३८८ में नब्बे बरस की अवस्था में फ़िरोज मरा, और उस के पांच ही महीने बाद १३८८ में इन्हीं बलवाइयों ने गयासुद्दीन को भी मार डाला और उस के भाई अबूबकर को बादशाह किया। अबूबकर साल भर भी राज्य नहीं कर पाया था कि नसीरुद्दीन उस को जीत कर आप बादशाह बन बैठा। चार बरस राज्य करके यह मर गया और इस का बड़ा बेटा हुमायूं अपने को सिकंदर शाह प्रसिद्ध करके बादशाह हुआ। यह केवल ४५ दिन जीआ और इस के पीछे इस का छोटा भाई महमूद तुग़लक़ बादशाह हुआ। [१३९४] इस की अवस्था छोटी होने के कारण राज्य में चारो ओर अप्रबंध हो गया और गुजरात, मालवा, और खांदेश के सूबे स्वतंत्र हो गये और वज़ीर बिगड़ कर जौनपुर का स्वतंत्र राजा बन बैठा। इसी समय अमीर तैमूरलंग जो कि परमेश्वर की मानो मूर्त्तिमयी संहारशक्ति थी बहुत से तातारियों लेकर हिन्दुस्तान मे आया [१३९८] यह लंगड़ा था। इस के नाम तैमूर साहबक़िरां और गोरकां थे और जगद्दाहक चंगेज़ख़ां के वंश में था। पंजाब के रास्ते में भटनेर इत्यादि जितने नगर या गांव मिले उनको प्रलय की तरह लूटता और जलाता हुआ दिल्ली को भी ख़ूब लूटा और जलाया। लाख मनुष्य जो रास्ते में पकड़े गये थे क़तल किये गये। १५ बरस से छोटे लड़के गुलामी के लिये नहीं मारे गये। महमूद गुजरात में भाग गया और तैमूर के नाम का ख़ुतबा पढ़ा गया। सन् १३९९ में मेरट लूटता हुआ यह अपने देश चला गया। महमूद फिर आया और ६ बरस राज्य करके मर गया और दौलतख़ां लोदी ने १५ महीने तक राज्य किया। तैमूर के सूबेदार ख़िज़्र ख़ां सैयद ने इस से राज्य छीन लिया। सैयद अहमद ने अपने जामिजम नामक चक्र में नसीरुद्दीन आदि दो तीन बादशाह और लिखे हैं जो और तवारीखों में नहीं है। १४१४ से १४२१ तक ख़िज़्र ख़ां बादशाह रहा और उस के मरने पर उस का बेटा मुबारकशाह बादशाह हुआ। १४३६ मे उस के मंत्री अबदुल्ल सैयद और सदानन्द खत्री ने उसको मार कर उसके भतीजे मुहम्मद को बादशाह बनाया। १४४४ ई० मे इस के मरने पर इस का बेटा

अलाउद्दीन बादशाह हुआ। उस समय की बादशाहत नाम मात्र को थी। १४५० ई॰ में बहलूल लोदी ने पंजाब से आकर तख़्त छीन लिया और अलाउद्दीन बदाऊं चला गया।

बहलूल के बादशाह होने से पंजाब दिल्ली में मिल गया। जौनपुरवालों से छब्बीस बरस तक लड़कर उस ने वह बादशाहत भी दिल्ली में मिलाली। १४८८ में इस के मरने पर इस का बेटा सिकंदर बादशाह हुआ। इस ने हिन्दुओं को अनेक कष्ट दिए। तीर्थ बंद कर दिए। पोर्तुगीज़ लोग पहले पहल इसी के काल में यहां आए। १५१६ में इस के मरने पर इस का बेटा इब्राहीम बादशाह हुआ। यह सा नीच और दुष्ट और अभिमानी था कि सब सूबेदार इस से फिर गए। पंजाब का सूबेदार सिकंदर लोदी जो इस का गोती था इस से ऐसा दुखी हुआ कि इस ने काबुल के बादशाह बाबर जो तैमूर से छठीं पुश्त में था उस को अपनी सहायता को बुलाया। बाबर ने आतेही पहले सिकन्दर ही का राज नाश किया फिर १५२६ में पानीपत के प्रसिद्ध युद्ध में इब्राहीम को जीत कर आप हिन्दुस्तां का बादशाह हुआ।

बाबर ने बड़ी सावधानी से राज्य करना आरम्भ किया। दिल्ली के अधिनस्थ जो सूबे फिर गये थे सब जीते गए। १५२७ में मेवाड़ के राणा संग्राम सिंह ने बहुत से देश जीत लिए थे, इस से कई बेर इन से घोर संग्राम हुआ १४२८ में चन्देरी का क़िला टूटा। सब राजपूत बड़ी वीरता से खेत रहे। इसी साल राणा संग्रामसिंह ने रंतभंवर का क़िला ले लिया। १५२९ में बिहार लाहौर बंगाल आदि में अफ़गानों को बाबर ने पराजित किया। १५३० सन् में २६ दिसम्बर को बाबर की मृत्यु हुई। कहते हैं कि हुमायूं बहुत बीमार हो गया था। बाबर ने इस बात का इतना शोच किया कि आप ही बीमार होकर मर गया। बाबर में कई गुण सराहने के योग्य थे। हुमायूं ने राज्य पर बैठ कर अपने तीनों भाई कामरान् हिन्दाल और अस्करी को यथाक्रम काबुल, सम्भल और मेवात का देश दिया। पहले जौनपुर का विद्रोह निवारण करके फिर वह गुजरात पर चढ़ा और वहां के बादशाह बहादुर शाह को बड़ी बहादुरी से जीत लिया। १५३७ में शेरशाह ने बंगाला जीत लिया और जब इधर हुमायूं शेरशाह से लड़ने को आया तो बहादुर शाह फिर खतंत्र हो गया। शेरशाह पहले बाबर का एक सैनाध्यक्ष था। हुमायूं ने पहले तो चुनार शेरशाह से जीता किन्तु पीछे शेरशाह ने विश्वासघातक

करके रोहतासगढ़ के राजा को मार कर उस के क़िले में अपना परिवार रख कर हुमायूं पर एकबारगी ऐसा धावा किया कि बनारस औ कन्नौज तक जीत लिया। १५३८ में फिर एक बेर शेरशाह ने हुमायूं का पीछा किया और गंगा में कूद कर हुमायूं ने अपने को बचाया। सन चालिस में फिर हुमायूं शेरशाह से हारा और गंगा में तैर कर किसी तर फिर बच गया। दिल्ली पहुंच कर अपना परिवार लेकर वह लाहौर गय किन्तु वहां भी शेरशाह ने पीछा न छोड़ा इस से वह सिन्ध होता हुआ राजपुताने में आया। यहीं इसी आपत्ति के समय अमरकोट में १५४२ में अकबर का जन्म हुआ। डेढ़ बरस अमरकोट के राजा के आश्रय में रह क हुमायूं ईरान में चला गया और वहां के बादशाह की सहायता से वहीं रहने लगा।

शेरशाह ने (१५४०) हुमायूं के अधिनस्थ सब राज्य अधिकार करके रायसेन माड़वार और मालवा जीता। [१५४५] चित्तौर जीतने का दृढ़ संकल्प कर के मार्ग में कालिंजर का क़िला घेरे हुए पड़ा था कि रात को मेगज़ीन में आग लगने से झुलस कर प्राण त्याग किया। यह बड़ा धीर और बुद्धिमान था। घोड़े की डांक, राजस्वकर, सराय, तहसीलदार आदि कई नियम उसने उत्तम बांधे थे। बंगाले से मुलतान तक एक राजमार्ग इसने बनवाया था। इस के मरने पर इस का छोटा बेटा जलालखां सलीमशाहसूर नाम रख कर बादशाह हुआ। १५५३ में इस के मरने पर इस के बेटे फ़िरोज़शाह को मार कर इस का साला मुहम्मदशाह अदली बादशाह हुआ। यह राज्य का सब भार हेमूं नामक एक बनिये के ऊपर छोड़ कर आप अति विषय में प्रवृत्त हुआ। चारो ओर बलवा हो गया। इसी वंश के इबराहीम सूर ने दिल्ली आगरा, सिकंदर सूर ने पंजाब और मुहम्मद सूर ने बंगाला जीत लिया। हुमायूं जो हिन्दुस्तान जीतने का अवसर देख ही रहा था इस समय को अनुकूल समझ कर पंद्रह हज़ार सवार ले कर सिन्ध उतर कर हिन्दुस्तान में आया औ [१५५५] पंजाब जीतता हुआ दिल्ली में पहुंच कर फिर से भारतवर्ष के सिंहासन पर बैठा। जितने देश अधिकार से निकल गए थे सब जीते गए। किन्तु मृत्युने उस को राज भोग ने न दिया और एक दिन संध्या को महल की सीढ़ी पर से पैर फिसल कर गिरने से (१५५६] परलोक सिधारा।

-

इस की मृत्यु पर इस का पुत्र जगद्विख्यात अबुलमुज़फ़्फ़र जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर शाह साढ़े तेरह बरस की अवस्था में बादशाह हुआ। बैरमखां खानखाना राज्य का प्रबन्ध करता था। बदख़्शां के बादशाह सुलैमान शाह ने काबुल दख़ल कर लिया है, यह सुन कर बैरम अकबर को ले कर पंजाब के मार्ग से काबुल गया। इधर हैमूं * बनियां ने तीस हजार सैन्य ले कर दिल्ली और आगरा जीत लिया और पंजाब की ओर अकबर के जीतने को आगे बढ़ा। बैरमखां ने यह सुन कर शीघ्रही दिल्ली को बाग मोड़ी और पानीपत में हैमूं से घोर युद्ध हुआ जिस में हैमूं मारा गया और बैरम की जीत हुई। इस जय से बैरम को इतना गर्व हो गया कि वह अकबर को तुच्छ समझने लगा। परिणामदर्शी अकबर उस की यह चाल देखकर बहाने से निकल कर दिल्ली चला आया और वहां (१५६०) यह इश्तिहार जारी किया कि सल्तनत का सब काम उसने अपने हाथ में ले लिया है बैरम इस बात से खिसिया कर बाग़ी हुआ किन्तु बादशाही फ़ौज से हार कर बादशाह की शरण में आया। अकबर ने उस के सब अपराध क्षमा किए और भारी पिनशन नियत कर दी। किन्तु बैरम को उसी वर्ष मक्का जाती समय मार्ग में एक पठान ने मार डाला। इसी बैरम का पुत्र अबदुलरहीमखां खानख़ाना संस्कृत और हिन्दी भाषा का बड़ा पंडित और कवि हुआ है। यों अट्ठारह बरस की अवस्था में अकबर इतने बड़े राज्य का स्वतंत्र कर्त्ता हुआ। इसने अपनी परंपारगामिनी बुद्धि से यह बात सोच लिया कि बिना हिन्दुओं का जी हाथ में लिए उस की राज्यश्री स्थिर नहीं रह सकती। इस ने हिन्दू मुसल्मान दोनों को बड़े बड़े काम दिए। योधपुर और जयपुर के राजाओं की बेटियों से ब्याह किया। मत का आग्रह छोड़ दिया। यहां तक कि कई हिन्दुओं के तोड़े हुए मन्दिर इस ने फिर से बनवा दिए। लखनऊ जौनपुर ग्वालियर अजमेर इत्यादि इस के राज्य के आरम्भ ही में इस के आधीन हो गए थे। १५६१ में मालवा भी जो अब तक राजा बाजबहादुर के अधिकार में था इस के सैनापति ने जीत लिया। राजा के पहले ही पकड़ जाने पर उस की रानी दुर्गावती बड़ी शूरता से लड़ी। दो बेर बादशाही

---

* इस का वास्तव में बसन्तराय नाम था। कई तवारीखों में इस की जाति दूसर लिखी है। किन्तु अगरवालों के भाट इस को अगरवाला कहते हैं

फौज को इसने भगा दिया किन्तु तीसरी लड़ाई में जब हार गई तो आ घात कर के मर गई। इस पवित्र स्त्री का चरित्र अब तक बुंदेलखंड में गाय जाता है। अकबर ने बाजबहादुर को अपना निज मुसाहिब बना कर अप पास रक्खा। १५६८ में अकबर ने चित्तौर का क़िला घेरा। राणा उदयसिं पहाड़ों में चले गए किन्तु उन के परम प्रसिद्ध वीर जयमल्ल नामक सैनाध्य ने दुर्ग की बड़ी सावधानी से रक्षा किया। एक रात जयमल्ल क़िले के बुर्ज की मरम्मत करा रहा था कि अकबर ने दूरबीन से देख कर गोली का ऐस निशाना मारा कि जयमल्ल गिर पड़ा। इस सैनाध्यक्ष मरने से क्षत्री लो ऐसे उदास हुए कि सब बाहर निकल आए। स्त्रियां चिता पर जल गईं औ पुरुष मात्र लड़कर वीर गति को गए। उस युद्ध में जितने क्षत्री मारे गए उन सब का जनेऊ अकबर तौलवाया तो साढ़े चौहत्तर मन हुआ। इसी से चिट्ठियों पर ७४॥ लिखते हैं अर्थात् जिस के नाम की चिट्ठी है उस के सिवा और कोई खोले तो चित्तौर तोड़ने का पाप हो। यद्यपि चित्तौर का क़िला टूटा किन्तु वह बहुत दिन तक बादशाही अधिकार में नहीं रहा। राणा उदयसिंह के पुत्र राणा प्रतापसिंह सदा सर्वदा लड़भिड़कर बादशाही सेना को नाश किया करते थे। जहां बरसात आई और नदी नालों से बाहर से आने का मार्ग बन्द हुआ कि वह क्षत्रियों को ले कर उतरे और बादशाही फौज को काटा। मानसिंह का तिरस्कार करने से अकबर की आज्ञा से १५७६ में जहांगीर और महाबत खां के साथ बड़ी सेना लेकर मानसिंह ने राणा पर चढ़ाई की। प्रताप सिंह ने हलदीघाटा नामक स्थान पर बड़ा भारी युद्ध किया जिस में हजार राजपूत मारे गए। इस पर भी राणा ने हार नहीं मानी और सदा लड़ते रहे। अपने बाप के नाम से उदयपुर का नगर भी बसाया और बहुत सा देस भी जीत लिया। १५७३ में गुजरात ७६ में बंगाला और बिहार ८६ में कश्मीर ९२ में सिंध और ९५ में दक्खिन के सब राज्य अकबर ने जीत लिए। अहमदनगर के युद्ध में [१६००] चांदसुल्ताना नामक वहां के बादशाह की चाची ने बड़ी शूरता प्रकाश की थी। इसी समय युवराज सलीम बाग़ी हो गया और इलाहाबाद आदि अपने अधिकार में कर लिया। किन्तु अकबर जब दक्खिन से लौटा तो जहांगीर इस के पास हाजिर हुआ। अकबर ने अपराध क्षमा करके बंगाला और बिहार इस को दिया। १५८३ में युसुफ़ज़ाइओं की लड़ा में अकबर के

प्रिय सभासद महाराज बीरबल मारे जा चुके थे और अवलफ़ज़ल को जहांगीर के विद्रोह के समय ओरछा के राजा ने मार डाला था, तथा उस का दूसरा लड़का मुराद भी अति मद्यपान करके मर चुका था। अब (१६०५) में अकबर को उस के तीसरे लड़के दानियाल के भी अति मद्यपान से मर जाने का समाचार पहुंचा। इतने प्रियवर्ग के मर जाने से इस का चित्त ऐसा दुखी हुआ कि बीमार हो कर ६३ वर्ष की अवस्था में आगरे में अकबर ने इस असार संसार को त्याग किया।

अकबर अति बुद्धिमान और परिणामदर्शी था। आलस्य तो इस को छू नहीं गया था। प्रथमावस्था में तो कुछ भोजन पानादि का व्यसन भी था किन्तु अवस्था बढ़ने पर यह बड़ा ही सावधान हो गया था। बरस में तीन महीना मांस नहीं खाता था। आदित्यवार को मांस की दूकानें बन्द रहती थीं। जिज़िया नामक कर और प्रत्यक्ष गोहिंसा उस ने उठा दिया था और सती होना भी बन्द कर दिया था। कर का भी बन्दोबस्त अच्छा किया था। महाराज टोडर मल्ल (टन्डन खत्री) अबुलफ़ज़ल, ख़ानख़ाना, मानसिंह, तानसेन गंग, जगन्नाथ पंडितराज और महाराज बीरबल आदि सब प्रकार के चुने हुए मनुष्य इस की सभा में थे। कागज़ हुंडी बही आदि का नियम इन्हीं टोड़र मल्ल का बांधा हुआ है। विधवा विवाह के प्रचार में भी इस ने उद्योग किया था और तीर्थों का कर भी छूट गया था। भूमि की उत्पत्ति से तृतीयांश लिया जाता था और पन्द्रह सूबों में राज बंटा हुआ था।

अकबर के मरने पर सलीम नूरुलदीन जहांगीर के नाम से सिंहासन पर बैठा। इस ने बहुत से कर जो अकबर के समय भी बच गए थे बन्द कर दिये। नाक कान काटने की सज़ा, बादशाही फ़ौज का जमीदार या प्रजा से रसद लेना और अफ़ीम और मद्य का प्रचार इस ने बन्द कर दिया। महल में एक सोने की ज़ंजीर लटकाई थी कि किसी दीन दुखी की पुकार जो कोई राजपुरुष न सुने तो वह ज़ंजीर हिला दे। ज़ंजीर की घंटी शब्द पर वह आप बाहर निकल आता था और न्याव करता था। किन्तु १६०६ में जब उस का लड़का खुसरो पंजाब में बागी हो गया था तब जहांगीर ने उस के सात सौ साथियों को बड़ी निर्दयता से उस के आंख के सामने मरवा डाला। १६१० से चार बरस तक मलिक अम्बर और अहमद से लड़ाई होती रही। १६१४ में खुर्रम (शाहजहां) के साथ एक बड़ी सेना इस ने

उदयपुर जीतने को भेजी थी किन्तु राजा ने मेल कर लिया। १६११ में जहांगीर ने नूरजहां से ब्याह किया। नूरजहां का पिता गयासबेग ईरान का एक धनी था किन्तु विपत्ति पड़ने से वह व्यापार को हिन्दुस्तान आता था। मार्ग में नूरजहां का जन्म हुआ। गयास यहां आ कर अकबर के दरबार में भरती हो गया था। उसी समय से जहांगीर की नूरजहां पर दृष्टि थी किन्तु अकबर के डर के मारे कुछ कर न सका और शेर अफ़गन नामक एक पठान अमीर के साथ जिसे अकबर ने बंगाला और बिहार में जागीर दी थी नूरजहां का ब्याह हो गया था। बादशाह होते ही जहांगीर ने बंगाले के सूबेदार को नूरजहां को किसी प्रकार भेज देने को लिखा। शेर अफ़गन बड़ी बीरता से मारा गया और नूरजहां बादशाह के पास भेज दी गई। चार बरस तक जहांगीर ने इस की सुश्रूषा कर के इस के साथ बिवाह किया। फिर तो नूरजहां ही सारी बादशाहत करती थी जहांगीर नाममात्र को बादशाह था। यह स्त्री चतुर भी अतिशय थी। १६२१ में जहांगीर का बड़ा बेटा खुसरो मर गया। परवेज़ मूर्ख था, इस से जहांगीर ने खुर्रम शाहजहां को ही अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहा। किन्तु नूरजहां की बेटी जहांगीर के चौथे पुत्र शहरयार को ब्याही थी इस नूरजहां ने उसी को बादशाह बनाने की इच्छा से जहांगीर का मन शाहजहां से फेर दिया। पिता का मन फिरा देख शाहजहां बाग़ी हो गया। दक्षिण में और बंगाले में यह बराबर लड़ता रहा और बादशाही फ़ौज इसका पीछा किए फिरती थी। अन्त में एक अर्ज़ी भेज कर बाप से इस ने अपराध की क्षमा चाही और अपने दो लड़कों को दरबार में भेज कर आप दक्षिण की सूबेदारी पर चला गया। नूरजहां ने एक बेर बंगाले के सूबेदार प्रसिद्ध बीर महाबतखां को हिसाब देने को बुला भेजा। महाबतखां इस आज्ञा से शंकित हो कर आया सही किन्तु पांच हज़ार चुने हुए राजपूत अपने साथ लाया। इस समय जहांगीर काबुल जाता था। ज्यों ही झेलम पार इस की सैना उतर चुकी थी कि महाबतखां ने बादशाह और बेगम को घेर कर अपने अधिकार में कर लिया। किन्तु नूरजहां की चालाकी से कुछ दिन पीछे (१६२६) जहांगीर महाबतखां के अधिकार से निकल आया। १६२७ में काश्मीर में जहांगीर ऐसा रोगग्रस्त हुआ कि लाहौर में आकर साठ बरस की अवस्था में मर गया। आसिफ़खां नामक नूरजहां के भाई ने जिस के हाथ में सारा राजप्र-

चक्र था खुसरो के बेटे दाविरबख्श को नाममात्र बादशाह कर के आप काम काज करने लगा और शाहजहां को दक्खिन से बुला भेजा। शाहजहां के पहुंचने पर आसिफखां ने दाविरबख्श को मार डाला। कहते हैं कि चौदह महीने यह नाममात्र को बादशाह था। इंग्लिस्तान के बादशाह जेम्स (१) का एलची सर टामसरो जहांगीर की सभा में आया था।

शाहजहां १६२८ में बड़ी धूमधाम से दिल्ली के तख्त पर बैठा। डेढ़ करोड़ रुपया उसी दिन व्यय हुआ था। महावतखां और आसिफखां इस के मुख्य मंत्री थे। दिल्ली फिर से बसाई गई। सात करोड़ दस लाख रुपया लगा कर तख्तेताऊस (मोर का सिंहासन) बनवाया। आगरे में ताजगंज नामक प्रसिद्ध स्थान इसी बादशाह का बनवाया है। नूरजहां जहांगीर पीछे २० बरस जीती रही और शाहजहां पच्चीस लाख रुपया साल इस को देता था। शाहजहां ने जैसा राज भोगा और सुख किया और हिन्दुस्तान को बादशाहत को चमकाया पहले कभी ऐसा किसी और ने नहीं किया था। बत्तीस करोड़ साल इस की आमदनी थी। प्रति वर्ष सालगिरह में डेढ़ करोड़ व्यय होता था। मकानों में सोना और हीरा जड़ा जाता था। इस पर भी मरने के समय यह बयालिस करोड़ रुपया नकद छोड़ गया था। १६३२ में कन्दहार के ईरानी सूबेदार अलीमर्दांखां के शाहजहां से मिलजाने से कन्दहार फिर हिन्दुस्तान के राज्य में मिल गया था किन्तु इक्कीस बरस पीछे ईरानियों ने फिर जीत लिया। १६४६ में बुखारा भी बादशाह ने जीता। १६४७ में कई बरस की लड़ाई के पीछे दक्षिण में भी शान्ति स्थापन हुई और अबदुल्ला शाह गोलकुंडे के बादशाह से सन्धि हो गई। इसी सन्धि में कोहनूर नामक प्रसिद्ध हीरा बादशाह के हाथ लगा। शाहजहां को चार पुत्र थे। दाराशिकोह शुजा औरंगजेब और मुराद। दाराशिकोह बड़ा बुद्धिमान नम्र और उदार था किन्तु औरंगजेब इस के विरुद्ध दीर्घदर्शी और महाछली था। शुजा वीर था परन्तु अव्यवस्थित था और मुराद चित्त का बड़ा दुर्बल था। १६५७ में शाहजहां बहुत ही अस्वस्थ हो गया। दारा के हाथ में राज का शासन था औरंगजेब, इस अवसर को उत्तम समझ कर मुराद को बहकाया कि बेदिन दारा से बादशाहत तुम ले लो हम तुम्हारी सहायता करेंगे और तुम को तख्त पर बैठा कर मक्के चले जायंगे। मुराद दारा से लड़ने चला। औरंगजेब भी आगे बढ़ कर उस से मिल

गया । १६६२ बगाले शाहशुजा भी फौज़ ले कर चढा किन्तु सुलेमां कोह (दाराशिकोह के बेटे) से बनारस के पास लडाई हार कर फिर गाले चला गया । मुराद और औरंगजेब इधर यशवन्त सिंह को जी हुए आगरे से एक मंजिल श्यामगढ में आ पहुंचे । दारा एक लाख स लेकर इन से युद्ध करने को निकला । राजा रामसिंह राजा रूपसिंह छत्रस आदि कई चत्री राजे उस की सहायता को आए थे और बडी वीरता मारे गए । परमेश्वर को मुसल्मानों का राज्यस्थिर नहीं रखना था इस हाथी बिचलने से दारा की फौज भाग गई और औरंगजेब ने आगरे प्रवेश करके विश्वासघातकता से मुराद को कैद कर के १६५८ में अपने बादशाह बनाया । अन्त में एक दिन मुराद को भी मरवा डाला और स सांशिकोह को भी जो कश्मीर से पकड आया था मरवा डाला । शुजा डाई हार कर अराकान भागा और वहीं सर्वंश मारा गया दारा ने सिं को राह से अजमेर आकर बीस हजार सैना एकत्र करके औरंगजेब चढ़ाई किया किन्तु युद्ध में हार गया और औरंगजेब ने बडी निर्दयता उस को मरवा डाला । उस के पुत्र सिपहशिकोह को ग्वालियर के किले कैद किया और फिर बहुत से शहजादों को जिन का बादशाह से दूर भी संबन्ध था कटवा डाला । कहते हैं कि दाराशिकोह बादशाह होता लोग अकबर को भी भूल जाते । इस के पीछे शाहजहां सात बरस जिया था

औरंगजेब के राज्य के आरम्भ ही से मुसल्मानी बादशाहत का वास्तवि ह्रास समझना चाहिए । जिज़िया का कर फिर से जारी हुआ । हिन्दुओं मेले और त्योहार बन्द किए। तीर्थ और देवमन्दिर ध्वंस किए गए । इसी से 'तीन पुश्त की कमाई' स्वरूप हिन्दुओं की जो दिल्ली के बादशाहों से प्रीति थी वह नाश हो गई । इधर दक्षिण में महाराष्ट्रों का उदय हुआ शिवाजी नामक एक वीर पुरुष ने जो यादवराव का नाती और मालूजी का,पुत्र था दक्षिण में अपनी स्वतंत्रता का डंका बजाया । पहले बिजयपुर के राज में लूटपाट करके अपनी सामर्थ्य बढा कर १६६२ में बादशाही देशों को लूटना आरम्भ किया । बादशाही सेनाध्यक्ष शाइस्ताखां ने इन के विरुद्ध आकर पूने में अपना अधिकार कर लिया । किन्तु असमसाहसी शिवाजी केवल पचीस मनुष्य साथ ले कर एक रात उस के डेरे में घुस गए और शाइ-स्ता किनारे गाग लेकर भागे । शिवाजी ने अब को पूने से लेकर, गुजरात

तक अपना प्रताप बढ़ाया और तञ्जौर और मन्दराज जीत कर १६६४ अपने को राजा प्रसिद्ध किया। औरंगज़ेब शिवाजी के इस साहस से बहुत ही खिसिया गया और जयसिंह के साथ बहुत सी सैना उसे जीतने को भेजी। राजा जयसिंह और शिवाजी से सन्धि हो गई और उस से मरहठे दक्षिण में बादशाही मालगुजारी की चौथ लेने लगे। १६६५ में शिवाजी दिल्ली आए और औरंगज़ेब ने जब उन को नज़रबन्द कर लिया तो कुछ दिन पीछे बड़ी सावधानी से वह दिल्ली से निकल गए। १६६७ में औरंगज़ेब ने शिवाजी को राजा की पदवी भेज दी और बीजापुर और गोलकुंडा के बादशाहों से लड़ने को इन को कहला भेजा। शिवाजी इन दोनों बादशाहों से लड़े और अन्त जब सन्धि हुई तो अपने राज्य का शिवाजी ने सुप्रबन्ध किया। १६६८ में शिवाजी का प्रभुत्व दक्षिण में स्थिर हो गया था, इस से औरंगज़ेब ने क्रोध करके महाबतखां को बड़ी सैना के साथ उन को दमन करने को भेजा किन्तु (१६७०) शिवाजी ने उन को परास्त कर दिया। (इसी समय सत्तनामी और सिख नामक दो दल हिन्दुओं के और औरंगज़ेब विरुद्ध खड़े हुए। १६७८ में जोधपुर के राजा यशवन्त सिंह के सिन्धुपार मारे जाने पर उन की स्त्री और पुत्र को निरपराध औरंगज़ेब ने क़ैद करना चाहा। यद्यपि दुर्गादास नामक सैनापति की शूरता से लड़के तो क़ैद नहीं हुए किन्तु बादशाह की इस बेईमानी से राजपुतानासात विरुद्ध हो गया। उदयपुर के राणा राजसिंह जयपुर के रामसिंह और सभी राजाओं ने बादशाह के विरुद्ध शस्त्रधारण किया। इधर दुर्गादास ने औरंगज़ेब के लड़के अकबर को बहका कर बागी कर दिया और सत्तर हज़ार सैना लेकर अजमेर में बादशाही सेना से बड़ा युद्ध किया। १६८० में बिरार खानदेश बिलोर मैसूर आदि देश में अपना अधिकार यश और प्रताप विस्तार करके शिवाजी मर गए। शिवाजी का पुत्र शंभु जी राजा हुआ और बादशाह के पुत्र मुअज़्ज़म को जीत कर बहुत देश लूटा किन्तु एक युद्ध में बादशाही सैना से घिर कर पकड़ गया और औरंगज़ेब ने उस को मरवा डाला। इधर बीस बरस के रगड़े झगड़े के पीछे गोलकुंडा और बीजापुर भी औरंगज़ेब ने जीत लिया। यद्यपि इस जीत से औरंगज़ेब को गर्व बढ़ गया किन्तु साथ ही उस का आयुष्य और प्रताप घट गया। दक्षिण की लड़ाई के मारे खज़ाना खाली हो गया। हिन्दुओं का जी अति खट्टा हो गया। अन्त में

१७०७ में ८८ वर्ष की अवस्था में औरंगजेब मर गया और मुग़लों का सौभाग्य भी उसी के साथ क़ब्र में समाहित हुआ ।

औरंगज़ेब के तीन लड़कों में से आज़म और मुअज़्ज़म दोनों ही बादशाह बन बैठे किन्तु आज़म लड़ाई में मारा गया और कामबख़्श भी दक्खिन में मारा गया, इस से मुअज़्ज़म ही बहादुर शाह के नाम से बादशाह हुआ, इस ने उदयपुर महाराष्ट्र आदि प्रबल राजों से सन्धि की। सिक्खों ने इस के समय में भी बड़ा उपद्रव किया। बहादुर शाह पांच बरस राज कर के मर गया। इस के पीछे सभी बादशाह बनने लगे और बहुत सा रुधिर बहने के पीछे (१७१२) जहांदार शाह बादशाह हुआ। यह भी साल भर नहीं रहा कि इस का भतीजा फर्रुख़सियर इस को सपरिवार मार कर आप बादशाह हो गया (१७१३) इस के समय में भाई बन्दा नामक सिख बड़ी धर्मवीरता से मारा गया। १७१८ में सैयद अब्दुल्ला और सैयद हुसैन जो इस के मुख्य सहायक थे इस से बिगड़ गए और फर्रुख़सियर मारा गया। सैयदों ने रफ़ीउल्दरजात और रफ़िउलशान को सिंहासन पर बैठाया किंतु वे चार चार महीने में मर गए। जहांदार और फर्रुख़सियर ने इतने शहज़ादे मार डाले थे कि सैयदों ने बड़ी कठिनता से रौशनअख़तर नामक एक शहज़ादे को खोज कर क़ैद से निकाला और मुहम्मदशाह के नाम से बादशाह बनाया १७१३ विद्रोह चारो ओर फैल गया। १७२० में मालवा और १७२५ में हैदराबाद स्वतंत्र हो गए। सैयद लोग इस के पूर्वही मारे जा चुके थे। इधर भरतपुर में जाटों ने नया राज स्थापन कर के लूटपाट आरम्भ कर दी। इधर प्रतापशाली बाजीराव पेशवा ने दिल्ली के द्वार तक जीत कर चम्बल के दक्षिण का सब देश अपने अधिकार में मिला लिया १७३७ इस के सर्दारों में से हुल्कर ने इंदौर, सेन्धिया ने ग्वालियर, गायकवाड़ ने बड़ोदा और भोंसला ने नागपुर राज्य स्थापन किया। इसी समय ईश्वर के क्रोध का एक पंचम अवतार ईरान का बादशाह नादिरशाह हिन्दुस्तान में आया. करनाल में मुहम्मदशाह ने इस से मुक़ाबिला किया किन्तु जब हार गया तो नादिरशाह के पास हाज़िर हुआ. नादिर ने इसका बड़ा शिष्टाचार किया. दोनों बादशाह साथ ही दिल्ली आए. उस समय दिल्ली ऐसे निकम्मे और लुच्चे लोगों से भरी हुई थी कि दूसरे ही दिन लोगों ने यह गप्प उड़ा दी कि नादिरशाह मारा गया. बदमाशों ने उस के मनुष्यों को काटना आरम्भ कर दिया. इस

बात पर नादिर ने ऐसा क्रोध किया कि सारी दिल्ली को काट देने का हुकुम दिया. डेढ पहर तक शाक की भांति लाख मनुष्य के ऊपर काटे गए अन्त को महम्मदशाह रोता हुआ उसके सामने गया तब नादिरशाह ने आज्ञा दिया कि काटना बन्द हो जाय. उसकी आज्ञा ऐसी मानी जाती थी कि उसके प्रचार होते ही यदि किसीने किसी के शरीर में आधी तलवार गडाई थी तो वहीं से उठाली. दिल्ली को यों उजाड उजारके अट्ठावन दिन वहां रहकर सत्तर करोड का माल साथ लेकर नादिर अपने मुल्क को लौट गया (१७३८). कुछ दिन पीछे उसके देशवालों ने नादिरशाह को मार डाला और अहमदशाह नामक उसका एक सैन्याध्यक्ष कन्दहार बलख़ सिन्ध और काश्मीर का बादशाह बन बैठा. लाहौर लेते हुए (१७४७) हिन्दुस्थान में भी उसने प्रवेश करना चाहा किन्तु मुहम्मद शाह के पुत्र अहमद शाह ने सरहिन्द में युद्ध करके उसको पीछे हटा दिया. इस के पूर्व (१७४०) बाजी राव मर गए थे किन्तु उन के पुत्र बालाजी राव ने मालवा ले लिया था. १७४८ में मुहम्मदशाह मर गया. यह अति रागरंगप्रिय और विषयी था. इस का पुत्र अहमदशाह बादशाह हुआ. इसके समय में रुहेलों ने बडा उपद्रव उठाया था किन्तु मरहट्टों ने इन का दमन किया. १७५४ में ग़ाजियुद्दीन ने अहमदशाह को अन्धा और क़ैद कर के जहांदारशाह के एक लडके को तख़्त पर बैठाया और आलमगीर सानी उस का नाम रक्खा. ग़ाजियुद्दीन ने अहमदशाह दुर्रानी के पंजाब के सूबेदार की मा को क़ैद कर लिया था. इस बात से अहमदशाह ने ऐसा क्रोध किया कि बडी भारी सैना लेकर सीधा दिल्ली पर चढ दौडा. ग़ाजियुद्दीन बडी दीनता से उस के पास हाज़िर हुआ. किन्तु वह बिना कुछ लिए कब जाता था. (१७४५) बल्लभगढ और मथुरा लूटी और काटी गई. दिल्ली और लखनऊ के लोगों से भी रुपया वसूल किया गया. अन्त में नजीबुद्दौला को दिल्ली का प्रधान मन्त्री बना कर अपने देश को लौट गया. ग़ाजियुद्दीन ने मरहट्टों से सहायता चाही और पेशवा का भाई रघुनाथ राव दिल्ली पर चढ़ आया. नजीबुद्दौला भाग गया और ग़ाजियुद्दीन फिर वज़ीर हुआ. इधर मरहट्टों ने अहमदशाह दुर्रानी के लडके तैमूर को पंजाब से निकाल कर वह देश भी अधिकार में कर लिया अर्थात् अब मरहट्टे सारे भारतवर्ष के अधिकारी हो गए. इसी समय ग़ाजियुद्दीन ने बादशाह को मार डाला और आप दिल्ली छोड़ कर भाग गया ।

अहमदशाह दुर्रानी इस बात से ऐसा क्रोधित हुआ कि बहुत बड़ी सेना ले कर फिर हिन्दुस्तान में आया। पेशवा ने यह सुनकर अपने भतीजे सदाशिवराव भाऊ के साथ तीन लाख सेना और अपने पुत्र विश्वास राव को उस से युद्ध करने को भेजा। मरहट्ठों ने पहले दिल्ली को लूटा फिर पानीपत के पास डेरा डाला। पहले कुछ सुलह की बात चीत हुई थी किन्तु अन्त को ६ जनवरी १७६१ को दोनों दल में घोर युद्ध हुआ जिस में दो लाख से ऊपर मरहट्ठे मारे गए और अहमदशाह की जय हुई। इस हार से मरहट्ठों का उत्साह बल प्रताप सभी नष्ट हो गये और साथ ही मुगलों का राज्य भी अस्त हो गया। शुजाउद्दौला ने आलमगीर के बेटे अलीगौहर को शाहआलम के नाम से बादशाह बनाया (१७६१)। यह दस बरस तक तो पहले नजीबुद्दौला के डर से इलाहाबाद में पड़ा रहा फिर उस के मरने पर मरहट्ठों की सहायता से दिल्ली में गया। थोड़े ही दिन पीछे गुलामक़ादिर नामक नजीबुद्दौला के पोते ने दिल्ली लूट कर बादशाह को पृथ्वी पर पटक कर छाती पर चढ़ कर कटार से आंख निकाल ली और हाथ बांध कर वहीं छोड़ दिया। महाजी सेन्धिया यह सुन कर दिल्ली में आया और गुलामक़ादिर को पकड़ कर बड़ी दुर्दशा से मारा और अन्धेशाह आलम को फिर से तख़्त पर बैठाया। चारो ओर उपद्रव था। १८०३ में लार्ड लेक ने अङ्गरेजी सेना लेकर दिल्ली को रहट्ठों के हाथ से लिया और शाहआलम को पिनशन नियत कर दी। शाहआलम को अकबर सानी और उस को बहादुर शाह हुए। ये लोग ढे सोलह लाख की जागीर और पिनशन भोगते रहे। अन्त को वह भी न रही। यों मुसल्मानों का प्रताप सूर्य आठ सौ बरस तप कर अस्ताचल को गया।

कनकपात्र रतनगजटित फेंकत जौन उगार ।
तिनकी आजु समाधि पर मूतत स्वान सियार ॥
जे सूरज सौं बढ़ि तपे गरजे सिंह समान ।
भुज बल विक्रम पारि निज जीत्यो सकल जहान ॥
तिनकी आजु समाधि पैं बैठ्यो कूकत काक ।
'को' ही तुम अब 'का' भए 'कहां' गए करि साक ॥

॥ इति ॥

ग्रन्थ का उपष्टम्भक ।

अकबर ने काश्मीर में हिन्दुओं के हेतु एक मन्दिर का जिर्णोद्धार कराया था क्योंकि उसको मुसल्मान लोग तोड डाला करते थे और उस पर उस की एक आज्ञा भी खुदी हुई है जो यहां प्रकाशित होती है। इस से लोग उस का चित्त देखें।

کتابه ابوالفضل در لوح سنگ کلیساے کشمیر که بموجب حکم اکبر تعمیر یافته بود و آنرا اورنگزیب عالمگیر غازی مسمار ساخت * الهی بهر کجا که می نگرم جویاے تواند و بهر زبان که می شنوم گویاے تواند * شعر * کفر و اسلام در رهت پویان وحده لا شریک له گویان اگر مسجد است بیاد تو نعره قدوس می زنند و اگر کلیسا است بشوق تو ناقوس می جنبانند * شعر * گهه معتکف دیرم و گهه ساکن مسجد یعنی که ترا می طلبم خانه بخانه * اگرچه خاصان ترا بکفر و اسلام کارے نه بس این هردو را در پرده اسرار تو باری نه * شعر * کفر کافر را و دین دیندار را ذره درد دل عطار را * این خانه که بنیت تالیف قلوب موحدان هندوستان خصوصا معبود پرستان عرصه کشمیر تعمیر یافته * شعر * بفرمان خدیو تخت و افسر * چراغ آفرینش شاه اکبر * هرخانه خراب که نظر بر صدق نه انداخته این خانه را خراب سازد باید که نخست معبد خودرا بر اندازد اگرچه نظر بدل است با همه ساختنی ست و اگر چشم بر آب و گل ست همه انداختنی ست * شعر * خداوندا چو دادے کار دادی * مدارے کار بر نیت نهادی * توئی دربارگاه نیت آگاه * نه بخشش شاه دادی نیت شاه *

हे परमेश्वर जिस स्थान को देखता हूं वहां सब तेरेही खोजमें हैं और जिस से सुनता हूं तेरीही बात करते हैं. धर्माधर्म्म सब तेरेही मार्ग में चलते

دودمان ابہت فروغ خاندان سوکت قرہ ناصر دولت و اقبال طرہ ناصیہ حسمت و اجلال گرامي نسب سمي المکان الممدوح بلسان الدعا واتحر شاھزادہ نامدار کامگار والا تبار محمد سلطان بہادر *

यह आज्ञापत्र शाहजादे मुहम्मद सुल्तान बहादुर के नाम है. इस का आशय यह है—'कुरान में लिखा है कि पुराने मन्दिर को नहीं गिराना और नए नहीं बनाने देना. ऐसा सुना गया है कि बनारस के ब्राह्मणों को लोग दुख देते हैं. इस हेतु यह आज्ञा दी जाती है कि आगे से कोई हिन्दुओं के स्थानों को न छेड़े और ब्राह्मणो को निर्विघ्न पाठ पूजा करने दे—(इत्यादि) १५ जमादिउस्सानी १०६९।

इस के पीछे का कृत्तिवासेश्वर की मस्जिद पर का लेख।

زحکم شاہ سلطان سریعت * دلیل رہ رہان طریقت
سہاب آسمان سروراري محمد شاہ عالم گیر غاری
سراصنام تحانہ سکستہ * ظہور مسجد دل‌واہ گستہ
١٠٧٧
باستصواب نورالہہ مفاي ۔ علام درگہ باران جسای
تناء خانہ رینتست بدا ۔ ردولتخانہ تاریحس ھویدا
١٠٧٧ هج

अर्थ—मुसल्मानी धर्म के स्वामी (इत्यादि) औरंगज़ेब बादशाह की आज्ञा से देवमन्दिर के देवताओं के सिर तोड़ कर यह मस्जिद बनाई गई. (इत्यादि) १०७७ हिजरी।

उदयपुरोदय

अर्थात्

मेवाड़ का पुरावृत्त संग्रह ।
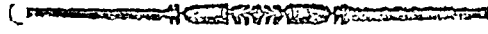
उदयपुरोदय ।

मेवाड़ का शुद्ध नाम मेदपाट है। और यहां के महाराज की संज्ञा सी-सौधिया है। कहते हैं कि इन के वंश में कोई राजा बड़े धार्म्मिक थे । एक समय वैद्यों ने छल औषध में मद्य मिला कर उन को पिला दिया क्योंकि जिस रोग में वे ग्रस्त थे उस की औषधि मद्यही के साथ दी जाती थी । शरीर स्वस्थ होने पर जब उन्हों ने जाना कि हम ने मद्य पिया था, तो उस के प्रायश्चित के हेतु गलता हुआ सीसा पीकर प्राण त्याग किया । तभी से सीसौधिया इस वंश की संज्ञा हुई । यही वंश भारतखण्ड में सब से प्राचीन और सब से माननीय है। इसी वंश में महात्मा मांधाता, सगर, दलीप, भगीरथ, हरिश्चन्द्र, रघु आदि बड़े बड़े राजा हुए हैं और इसी वंश में भगवान श्रीरामचन्द्र ने अवतार लिया है। इसी वंश के चरित्र में कालिदास भवभूति वररुच्च व्यास वाल्मीकि ने भी वह ग्रन्थ बनाए हैं जो अब तक भारतवर्ष के साहित्य के रत्न भूत हैं। हिन्दुस्तान में यही वंश ऐसा बचा है जिस में लोग सतयुग से कर अब तक बराबर राज्यसिंहासन पर अचल छत्र के नीचे बैठते आए। उदयपुर वालेही ऐसे हैं जिन्हों ने और और बिलायत के बादशाहों को बेटी ली पर अपनी बेटी मुसलमान को न दी * ।

आज हम उसी बड़े पराक्रमशाली प्राचीन वंश का इतिहास लिखने बैठे । इस में हमा मुख्य सहायक ग्रन्थ टाडसाहिब का राजस्थान, उद-

---

* कहते हैं कि जब औरङ्गजेब ने उदयपुर घेर लिया था तब राना साहब शिकार खेलते थे और उन को बादशाह की दो बेगम फौज से बिछड़ी जंगल में भटकती हुई मिलीं जिन को राना ने अपनी बहिन कह के पुकारा और रक्षापूर्व्वक लाकर उन को औरङ्गजेब को सौंप दिया । मुसलमान तवारीख़ लिखने वालों ने अपनी क्षति इसी बहाने पूरी की और कहा कि उदयपुर वालों ने बेटी नहीं दी तो क्या हुआ बादशाह बेगम को अपनी बहिन बनाया तो सही। वरंच इसी हेतु उस दिन से उन बेगमों का नाम उदयपुरी बेगम लिखा गया। भाषा ग्रन्थों में इन बेगमों के नाम रंगी चंगी बेगम लिखे हैं।

यपुर के वंश चरित्र के भाषा ग्रन्थ, और प्राचीन ताम्रपत्र हैं । जैसे संसार के सब राजों के इतिहास प्रारम्भ में अनेक आश्चर्य घटना पूरित होते हैं वैसेही इस के भी प्रारम्भ में अनेक आश्चर्य इतिहास हैं। उन से कोई इस के ऐतिहासिक इतिवृत्ति में सन्देह न करे; क्योंकि प्रायः प्राचीन इतिवृत्त अनेक अद्भुत घटना पूर्ण होते हैं और इतिहास वेत्ता लोग उन्हीं चमत्कृत इतिहासों का साराप्तार निस्सार पूर्वक सारा निर्णय बुद्धि बल से कर लेते हैं ।

राज्य स्थान में मेवाड़ और जैसलमेर का राज्य सब से प्राचीन है, आठ सौ बरस से भारतवर्ष में विदेशियों का राज्य प्रारम्भ हुआ, तब से अनेक राज्य बिगड़े और बने पर यह ज्यों का त्यों है। गज़नी के बादशाह लोग सिन्धु नदी का गम्भीर जल पार करके हिन्दुस्तान में आए उस समय जहां मेवाड़ के राज्य का सिंहासन था वहीं अब भी है। बहुत से राजा लोग उस राज्य के चारो ओर बहुत से वहां से और कहीं जा बसे पर इन के महल अब भी वहीं खड़े हैं जहां पहले खड़े थे। सतयुग से आज तक इसी वंश के सब पुरुष सिंहासन ही पर मरे ।

भगवान रामचन्द्र के जेष्ट पुत्र लव ने अपने राज्य समय में लवपुर अर्थात् लाहौर बसाया था और सुमित्र नामक राजा लव से पचपन पीढ़ी पीछे हुआ। पुराणों में लिखा है कि सुमित्र ने कलियुग में राजत्र किया, और बहुत से प्रमाणों से मालूम होता है कि ये विक्रमादित्र के कुछ पहले वर्तमान थे । इन के पीछे कनकसेन तक राजाओं का ठीक वृत्तान्त नहीं मिलता जहां तक नाम मिले हैं उस में पहला महारथ उस का पुत्र अन्तरीक्ष उस का अचलसेन और उस्का पुत्र राजा कनकसेन हुआ। राजा कनकसेन ही सौराष्ट्र देश में आये परन्तु इस का नहीं पता लगता कि उन्हों ने लाहौर किस हेतु से छोड़ा और किस पथ से सौराष्ट्र पहुंचे। यहां आकर इन्हों ने किसी पवांर वंश के राज का अधिकार जीत कर सन् में १४४ बीरनगर नामक नगर संस्थापन किया कनकसेन को महामदनसेन उन को सुधन्वादित्र और उन को विजय भूप हुआ इस ने जहां अब धोल का नगर है वहां पर विजयपुर नामक नगर संस्थापन किया और जहां अब सिहोर है तहां विदर्भ नगर बनाया। और बल्लभीपुर नामक एक बड़ा नगर बसा कर उसे अपनी राजधानी बनाया, अब धोल नगर से पांच कोस उत्तर पश्चिम वालभी नामक जो गांव है वही इस प्रसिद्ध वल्लभीपुर का अवशेष है । शत्रुञ्जय

माहात्म्य नामक जैन ग्रन्थ में भी इस नगर की बड़ी शोभा लिखी है । मेवाड़ के राजा लोग वल्लभीपुर से आए हैं यह प्रवाद बहुत दिन से था पर कोई इस का पक्का प्रमाण नहीं था, अब उदयपुर के राज्य में एक टूटे शिवालय में एक प्राचीन खोदा हुआ पत्थर मिला है उस से यह सन्देह मिट गया क्योंकि उस में लिखा है कि जिन महात्माओं का ऊपर वर्णन हुआ उस्की साची वल्लभीपुर के प्राचीर हैं। राना राजसिंह के समय के बने हुये एक ग्रन्थ में भी लिखा है कि सौराष्ट्र देश पर बरबरों ने चढ़ाई करके बालकानाथ को पराजय किया ।

इस वल्लभीपुर के विप्लव में सब लोग नष्ट होगये और केवल एक प्रमर की दुहिता मात्र बची। वल्लभीपुर शिलादित्य के समय में नाश हुआ। विजय भूप के पद्मादित्य उन के शिवादित्य उन के हरादित्य उन के सुयशादित्य उन के सोमादित्य उन के शिलादित्य ।

शिलादित्य वा शीलादित्य तक एक प्रकार का क्रम लिख आए हैं अब आगे नामों में और उन के समय में कितना गड़बड़ और उस की ठीक निर्णय में कितनी विपत्ति है यह दिखाते हैं। आर्य्य मत के अनुसार चार युग में काल बांटा गया है इस में ब्रह्मा की उत्पत्ति से सतयुग माना जाता है अब अनेक पुराणों से और प्रसिद्ध विद्वानों के मत से प्रारम्भ से काल लिखते हैं।

पुराण के मत से इक्ष्वाकु को २१८५० ०० वर्ष हुए । जोन्स के मत से ६८७७विलफर्ड के मत से ४५७८ टाड के मत से ४०७७ वेण्टली के मत ३४०५॥

श्री रामचन्द्र का समय पुराण० ८६८८७८ वर्ष जोन्स ० ३८०६, विलफर्ड० ३२३७, वेण्टली० २८२७, टाड० ४००० ॥

महाराज युधिष्ठिर का समय पुराण० ४८७८ वेण्टली २४५३, और जोन्स टाड ३३०७, और विलफर्ड के मत से श्री रामचन्द्र का और युधिष्ठिर का समय एक है, विलसन के मत से ३३०७ सुमित्र का समय पुराण० ३८७७, जोन्स २८०६, विलफर्ड २५७८, विण्टली १८८६, विल्सन० २८०२, ब्रह्मा वालों के मत से २४७७।

शिशुनाग का समय पुराण० ३८३६, जोन्स २७४७, विलफर्ड २४७७, विल्सन २६५४ ब्रह्मावाले २४७७।

नन्द का समय पुराण ३४७७, जोन्स २५७६ विल्सन २२८२, ब्रह्मावाले २२८१ ।

चन्द्रगुप्त का समय पुराण० ३३७८, जोन्स २४७७, विलफर्ड २२२७, विल्सन २१८१, टाड २१८७, ब्रह्मावाले २२६८।

अशोक का समय पुराण० ३३४७, जोन्स २५१७, विल्सन २१२९, ब्रह्मावाले २२०७।

जोन्सप्रिन्सिप साहब के मत से परशुराम जी को ३०५२ हुए, और बेंटली साहब के मत से बालमीकी रामायण बने केवल १५८६ वर्ष हुए।

कलियुग का प्रारम्भ पुलोम के समय तक भागवत के मत से ३०३४, ब्रह्माण्ड पुराण के मत से ३६५२, वायु पुराण के मत से ३६०६, जैनों के मत से २८५५, और चीन और ब्रह्मा के मत से २५६८, वर्ष से है, अंगरेजी विद्वानों की पुराणों के अनुसार इस समय तक पुलोम का समय जोड़ कर एक संमति है कि कलियुग बीते ५००० वर्ष लगभग हुए परन्तु इस मत को वे सत्य नहीं मानते क्योंकि फिर आपही लिखते हैं कि स्वायम्भु मनु को हुए ५८८३ वर्ष और वैवस्वतमनु को ४८२७ वर्ष हुए।

युधिष्ठिर के ३०४४ संवत बीते विक्रम का संवत चला और विक्रम १३५ वर्ष पीछे शालिवाहन का शक चला।

ऊपर जो काल निर्णय में विद्वानों के परस्पर विरुद्ध मत वर्णन किए ग इससे यह बात प्रसिद्ध होगी कि प्राचीन समय निर्णय करना कितना दुरु है, इसके आगे जो ब्रह्मा से लेकर सुमित्र पर्य्यन्त नामावली दी जाती है उ के मध्यगत काल का निर्णय न करके सुमित्र के समय से जो हमारे मत अनुसार २००० वर्ष बीते हुआ है काल का निर्णय प्रारम्भ करेंगे।

ब्रह्मा, मरीचि, काश्यप, विवस्वान, श्राद्धदेव इच्छाकु, विकुक्ष १ पुरंजय, काकुस्थ, २ अनेनास, ३ पृथु, ४ विश्वगश्व, ५ अर्द आद्रआर्द, युवनाश्व, ६ श्रवस्थ, वृहदश्व, ७ कुवलयाश्व, दृढ़ाश्व, हर्य निकुम्भ, ८ संकटाश्व, ९ प्रसेनजित्, युवनाश्व, १० मान्धाता, पुरुकुत्स त्रिशदश्व, अनारण्य, पृषदश्व, हर्यश्व, ११ बसुमान, १२ त्रिधन्वा, १

---

१ नामान्तर काकुस्थ। २—३ ना० अनपृथु, ४ ना० विश्वगन्धि। ५ ना चन्द्र। ६ ना० स्वसंव या श्रव। ७ ना० धुन्धुमार। ८ सङ्कटाश्व के पीछे वरुणा और कृशाश्व दो नाम और मिलते हैं। ९ ना० सेनजित। १० ना० सुव इनको चक्रवर्ती लिखा है॥ ११ ना० सहंण या अरुण। १२ ना० त्रिविन्धन १

त्रय्यारुण, त्रिशंकु, हरिश्चन्द्र, रोहिताश्व, हारीत, १४ चुंचु, विजय, १५ रुरुक, हक, १६ बाहु, सगर असमञ्जस, अंशुमान्, दिलीप, भगीरथ, श्रुत, नाभाग, अम्ब-रीष, सिंधुद्वीप, अयुताश्व, १७ ऋतुपर्ण, सर्वकाम, सुदास, कल्माषपाद, १८ अश्मक, १९ हरिकवच, २० दशरथ, इलिवथ, विश्वासह, २१ खट्वाङ्ग, दीर्घबाहु, रघु, अज, दशरथ, श्रीराम, २२ कुश, अतिथि, निषध, नल, नाभ, पुण्डरीक, क्षेमधन्वा, २३ दारिक, अहीनज, कुरुपरिपाच्च, २५ दल, २६ छल, उकथ, २७ वज्रनाभि, २८ शंखनाभि, २९ व्युषिताश्व, ३० विश्वासह, हिरण्यनाभि, ३१ पुष्य, ३२ ध्रुवसंधि, ३३ अपव शीघ्र, ३४ मरु, प्रसव श्रुत, ३५ सुसंधि, आमर्ष, ३६ महाश्व, बृहद्वाल, बृहद्भान, उरुक्षेप, वत्स, वत्सव्यूह प्रतिव्योम, ३७ देवकर, सहदेव, ३८ बृहदश्व, ३९ भानुरत्न, सुप्रतीक, मरुदेव, सुनक्षत्र, ४०

ना० सत्यव्रत। १४ ना० चम्प, किसी पुस्तक में चम्प के पीछे सुदेव तब विजय लिखा है॥ १५ ना० भरुक। १६ ना० बाहुक। १७ ऋतुपर्ण, के पीछे किसी पुस्तक में नल तब सर्व्वकाम लिखा है॥ १८ ना० आमक। १९ ना० मूलक। २० दशरथ, और इलिवथ दो के बदले किसी पुस्तक में ऐडाबिड एकही नाम लिखा है॥ २१ ना० खरभङ्ग। २२ कुश के समय से अनेक ग्रन्थकार द्वापर की प्रवृत्ति मानते हैं *। २३ ना० देवानीक। २४ ना० अहीनग। २५ ना० बल। २६ ना० रणच्छल। २७ बज्रनाभि, के पीछे कोई अर्क तब शङ्खनाभि को लिखता है॥ २८ ना० सगण। २९ ना० विधृत। ३० ना० विश्मिताश्व। ३१ ना० पुष्य। ३२ ध्रुवसन्धि, और अपवर्म्म के बीच में कोई सुदर्शन नामक और एक राजा मानता है॥ ३३ ना० अग्निवर्म्म। ३४ ना० मनु। ३५ ना० सन्धि। ३६ ना० अवस्वान, इसी महाश्व के पीछे विश्वबाहु प्रसेन जित और तक्षक नामक तीन राजा बृहद्वाल के पहले अनेक ग्रन्थकार मानते हैं और कहते हैं कलियुग का प्रारम्भ इसी के समय से हुआ॥ ३७ प्रतिव्योम और देवकर के बीच में कोई भानु को भी जोडते हैं इसी देवकर का नामान्तर दिवाकर है॥ ३८ सहदेव, तब वीर; तब बृहदश्व यह किसी का मत है॥ ३९ ना० भानुमत, वा भानुमान, ग्रन्थकारों का मत है कि ईरान का जो प्रसिद्ध बहमन नामक हुआ था वह यही भानुमान है, इसके और सुप्रतीक के बीच में कोई प्रतिमाश्व नामक राजा मानते हैं॥ ४० ना० पुष्कर

* इन्ही कुश का एक पुत्र कूर्म्म नामक था जिस से कछवाहे लोग अपनी वंशावली मान हैं।

केशीनर, ४१ अन्तरीक्ष, ४२ सुवर्ण, अमित्रजित्, वृहद्राज, ४३ धर्म, ४४ क्रतञ्जय, ४५ रणञ्जय, सञ्जय शाक्य, ४६ शोधदान, शाक्य सिंह, ४७ अतुल, प्रसेनजित्, सद्रक कुन्दक, ४८ सुरथ, सुमित्र ।

महाराज जैसिंह के ग्रन्थ के अनुसार सुमित्र के पीछे महारित्, अन्तरित, अचलसेन, कनक सेन, महामदनसेन, सुदन्त, वा प्रथम सोलादित्य, (विजयसेन, वा अजयसेन, या विजयादित्य) पद्मादित्य, शिवादित्य, हरादित्य, सूर्य्यादित्य, शिलादित्य, ग्रहादित्य, नागादित्य, भागादित्य, देवादित्य, आशादित्य, कालभोज वा भोजादित्य, द्वितीय ग्रहादित्य, और बापा । सुमित्र से महारत् तक चार नाम नहीं मिलते, और इस क्रम से श्रीरामचन्द्र से बापा अस्सी पीढ़ी में हैं, तक्षक से ले करके वा हुमान वा भानुमान तक आठ राजाओं का नाम कई वंशावली में नहीं मिलता, अनेक ग्रन्थकारों का मत है कि इसी तक्षक के समय से ईरान तथा तुरकिस्तान इत्यादि देशों में इसका वंश राज करता था और तुरकिस्तान का प्राचीन नाम तक्षकस्थान बतलाते हैं और यूनान में जो अर्तक्षर्क नाम राजा हुआ है वह भी इसी तक्षक का नामान्तर मानते हैं ।

राजा जयसिंह का मत है कनकसेन के समय में अर्थात् सन् १४४ सौराष्ट्र देश में इस वंश का राज हुआ और वही लिखते हैं कि विजय अजयसेन का नामान्तर नोशेरवां था इसने विजयपुर वा बिराटगढ़ बसा और सन् ३१८ में बल्लभीशक स्थापन किया । उन्हीं का मत है कि शिलादित्य को यवनों ने जीता और सौराष्ट्र से यह राज छिन्न भिन्न होगया अ इस का पुत्र केशव वा गोप वा ग्रहादित्य भांडेर के जङ्गल में रहा और के पुत्र नागादित्य के समय से इस वंश का गोत्र गहलोत कहलाया फिर आशादित्य ने मेवाड में अपने वंश की पहली राजधानी आशा

---

४१ ना० रेव्र । ४२ ना० सुतपा । ४३ ना० वार्हि । ४४ कोई ग्रन्थ कहते हैं कि यही क्रतञ्जय प्रथम सौराष्ट्र में आया ॥ ४५ ना० जयरा ४६ ना० शुद्दोदन इसी का पुत्र प्रसिद्ध शाक्यसिंह है, जो भादों सुदी ५ जन्मा था, और बौद्ध और जैन के नाम से जिसका मत संसार की एक ति में व्याप्त है ॥ ४७ ना० लाङ्गल वा मङ्गल वा सिद्धल वा रातुल ॥ ४८ ना रत वा सुराष्ट्र कहते हैं, कि इसी के नाम से सौराष्ट्र देश बसा है ॥

और आहार बसाया और इसके पीछे बापा ने सन् ७१४ में चितौड़ का राज्य पाया, दूसर ग्रहादित्यक नाम द्वितीय नागादित्य भी लिखा है।

बापा तक नाम का क्रम हम पूर्व्व में लिख आए हैं परन्तु प्राचीन ताम्र-पत्रों से ले कर यदि वंशावली लिखी जाय तो सेनापति वा भट्टारक तथा धरासेन द्रोणसिंह (प्रथम) ध्रुवसेन धरापति ग्रहसेन श्रीधरसेन (प्रथम) शीलादित्य (प्रथम) चारुग्रह वा खड्गग्रह (द्वितीय) श्रीधरसेन (द्वितीय) (ध्रुवसेन तृतीय) श्रीधरसेन (तृतीय) शीलादित्य (इस के पीछे तीन नाम छूट गए हैं) शीलादित्य (-तृतीय) और (चतुर्थ) शीलादित्य।

टाड साहब की वंशावली और वल्लभीपूर की वंशावली में कितना अन्तर है यह ऊपर के नामों से प्रगट होगा। पादरी अण्डरसन साहब ने दो नये ताम्र पत्र पढ़ कर इस वंशावली को शोधा है और वे कहते हैं कि इस में जहां २ श्रीधरसेन लिखा है वह सब नाम धरासेन है और शीलादित्य का नाम धर्मादित्य वा विक्रमादित्य है और इन्ही को धर्म्मादित्य भी कहते हैं (१)। और वंशावली के प्रथम पुरुष को सेनापति वा भट्टारक वा धर्म्मादित्य भी लिखा है। दोनों वंशावली में वल्लभीपुर का अन्तिम राजा शीलादित्य है और इन दोनों के संवत भी पास २ मिलते हैं। पारसी इतिहास वेत्ताओं के मत से इसी शीलादित्य का पुत्र ग्रह वा ग्रहादित्य जिस ने ग्रहलोत वा समोधिया गोत्र चलाया नौशेरवां का रक्षित पुत्र था परन्तु महाराज जैसिंह ने राजा अजयसेन का ही नामान्तर नौशेरवां लिखा है। पारसी इतिहास-वेत्ताओं के मत से नौशेरवां के पुत्र नोशोजाद (हमारे यहां का नागादित्य) और यज़्दिजिर्द की बेटी माहबान जो इन्ही राजाओं में से किसी को व्याही थी इस वंश के मूल पुरुष हैं। विलफर्ड साहब के मत से वल्लभीशक के स्थापन करता अजयसेन वा दूसरी वंशावली के अनुसार धरासेन को ही पुराणों में शूद्रक वा शूरक लिखा है जिस ने ३२९० वर्ष कलियुग बीते सन १९१ वा २९१ में प्रथम विक्रमादित्य के नाम से राज्य किया था (२) मेजर वाटसन के मत से सेनापति भट्टारक से राष्ट्र जीतने के दो वर्ष पीछे प्रसिद्ध स्कन्द गुप्त मरा (३) इस से गुप्त संवत आस ही पास वल्लभी संवत भी है और इस

1 Bomb. Jour. Vr III P. 216.

2 as Ras VL IX pp. 135, 230.

3 In Ant VL III P. XXXIII.

विषय-के उन्हों ने अनेक प्रमाण भी दिए हैं । इस वल्लभी संवत -के निर्णय में एतिहासवेत्ता विद्वानों के बडे २ झगडे हैं जिस से कई दरजन कागज़ के बडे ताव रंग गए है लोग सिद्धान्त करते हैं कि गुप्तवंश जब प्रबल था तब वल्लभीवंश के लोग उस के वंश के अनुगत थे यहां तक कि भट्टारक सेनापति गुप्त वंश बिगड़ने के पीछे स्वाधीन हुआ और अपने दूसरे बेटे द्रोणसिंह को महाराज किया । पांच छ ताम्रपत्र इस वंश के जो मिले हैं उन के परस्पर नामों में बडा फरक है जैसा गुहसेन धरासेन शीलादितर धरासेन शीलादितर वा गुहसेन के दो पुत्र शीलादितर और खडग्रह खडग्रह के दो पुत्र धरासेन और-ध्रुवसेन वा शीलादितर के देवभट्ट उन के शीलादितर खडगग्रह और ध्रुवसेन और शीलादितर के बाद फिर शीलादितर ।

इन नामों के परस्पर अतयन्त ही विरुद्ध होने से कोई निश्चित वंशावली नहीं बन सकती अतएव इन झगडों को छोड़ कर राजा कनकसेन के समय से हमने पूर्व्व वृत्तान्त प्रारंभ किया । कारण यह कि जब एक-बडा वंश राज्य करता है तो उस की शाखा प्रशाखा आस पास छोटे २ राज्य निर्माण कर के राज करती हैं । इस से क्या आश्चर्य्य है कि त म्रपत्रों में ऐसे ही अनेक श्रेणियों की वंशावली का वर्णन हो जो वास्तव में सब वल्लभी वंश से सम्बन्ध रखती हैं । ऐसा ही मान-लेने से पूर्वोक्त समय और-वंश- निर्णय की असमञ्जसता जटिलता घनता असम्बद्धता और विरोधिता दूर होगी ।

सुमित्र से लेकर शीलादितर तक एक प्रकार का निरणय ऊपर हो चुका और इस से निश्चय हुआ कि महाराज सुमित्र कलियुग के अन्त में हुए थे और वल्लभीपुर का नाश भए दो हजार-वर्ष के लगभग हुए। कहा है कि वल्लभीपुर में सूर्य्यकुण्ड नामक एक तीर्थ था । युद्ध के समय शिलादितर के आवाहन करने से इस कुण्ड में से सूर्य्य के रथ का-सात सिर का घोडा निकलता था और इस अश्व के रथ पर बैठने से फिर शिलादितर को कोई जीत नहीं सकता था । और यह भी कथित है कि-सूर्य की दी हुई शिला दतर के पास एक ऐसी शिला थी जिस को दिखा देने से वा स्पर्श करा देने से शत्रुओं का नाश हो जाता था । और इसी वास्ते इन का नाम शिलादितर था । इन के किसी शत्रु ने इन्हीं के किसी निज भेदिये की सम्मति से उस पवित्र कुण्ड को गौरक्त द्वारा अशुद्ध कर दिया जिस से वल्लभीपुर के नाश के समय राजा के बारम्बार आवाहन करने से भी वह अश्व नहीं निकला और राजा

सपरिवार युद्ध में निहत हुआ और वल्लभीपुर नाश हुआ। जैनग्रन्थों के अनुसार संवत २०५ में वल्लभीपुर नाश हुआ और श्री महाराणा उदयपुर के राज्य ख्यात संग्रह के अनुसार राजा शिलादित्य का नाम सलादित्य था और वल्लभीपुर का नाम विजयपुर।

अंगरेजी विद्वानों का मत है कि नगरारोधकारी शत्रु दल ने हिन्दुओं को दुःख देने के हेतु गोरक्त से वल्लभीपुर के जल कुण्डों को अशुद्ध कर दिया होगा जिस से हिंदू लोग घबड़ा कर एक साथ लड़ने को निकल खड़े हुए होंगे। अलाउद्दीन बादशाह ने गागरौन देश के खीचीं राजाओं से यही छल किया था। वल्लभीपुर के शत्रुओं का यही छल मानो इस कथा का मूल है।

वल्लभीपुर को किस असभ्य जाति ने नाश किया इस का निर्णय भली भांति नहीं होता। प्राचीन पारस निवासी लोग वृष को पवित्र समझते थे और सूर्य्य के साम्हने उसको वलिदान भी करते थे इससे निश्चय होता है कि ये लोग पारसी तो नहीं थे. प्राचीन ग्रन्थों में पाया जाता है कि खिष्टीय दूसरी शताब्दी में सिन्धु नद के किनारे पारद वा पार्थियन लोगों का एक बड़ा राज्य था विष्णुपुराण में लिखा है कि सूर्य्यवंशी सगर राजा ने म्लेच्छों को चिन्ह विशेष देकर भारतवर्ष से निकाल दिया था जिनमें यवन सर्व शिरोमुण्डित केश अर्द्धशिर मुण्डित पारद मुक्त केश और पन्हव वा पल्हव श्मश्रुधारी बनाए गए थे। उसी काल में श्वेतवर्ण की एक हून जाति भी सिंधु के किनारे राज्य करती थी. हून जाति नामक प्राचीन असभ्य मनुष्यों का लेख पुराणों और यूरप के इतिवृत्तों में भी पाया जाता है. सम्भावना होती है कि इन्ही जातियों में से किसी ने वल्लभीपुर नष्ट किया होगा. पारद और हून दो जातियों का आदि निवास शाकद्वीप है. महाभारत में शाकद्वीपी और पूर्व्वोक्त हूणादिकों को इसी प्रकार यवन लिखा है पुराणों में इन सबों को एक प्रकार का क्षत्री लिखा है. ये सब असभ्य जाति शाकद्वीप से किस काल में यहां आए इसका पता नहीं लगता. विल्फर्ड साहब का मत है कि शाकद्वीप इङ्गलेण्ड का नामान्तर है. विशेष आश्चर्य्य का विषय यह है कि ये सब शाकद्वीपी काल पाके आर्य्य जाति में मिल गए यहां तक कि ब्राह्मण और क्षत्रियों में भी शाकद्वीपी वर्तमान हैं॥

यह निश्चय हुआ कि इन्ही म्लेच्छ जाति के लोगों में से किसी जाति ने वल्लभीपुर नाश किया. सांदोंराई से जो वंश पत्रिका मिली है उसमें लिखा

है कि वल्लभीपुर नाश होने के पीछे वहां के लोग मारवाड़ में आकर सांडो-रा वाली और नांदोर नगर बसा कर रहने लगे और फिर गाजनी नामक एक नगर का और भी उल्लेख है. एक कबि अपने ग्रंथ में लिखता है "असर्यों ने गाजनी हस्तगत किया. शिलादित्य का घर जन शून्य हुआ और जो बोर लोग उसकी रक्षा को निकले वे मारे गए" ॥

हिन्दू सूर्य्य के वंश का यहां चौथा दिवस अवसान हुआ. प्रथम दिवस इक्ष्वाकु से श्रीरामचन्द्र तक अयोध्या में बीता दूसरा दिन लव से सुमित्र तक अन्य राजधानियों में तीसरा सुमित्र से विजय भूप तक अंधेरे मेघों से छिपा हुआ कहां बीता न जान पड़ा और यह चौथा दिन आज वल्लभीपुर में शीलादित्य के अस्त होने से समाप्त हुआ पांचवें दिन का इतिहास बहुत स्पष्ट है जो गोहा और बाप्पा के विचित्र चिरित्रों से चित्रित हो कर दूसरे अध्याय में वर्णन होगा ॥

इति उदयपुरोदय प्रथम अध्याय।

दूसरा अध्याय।

वल्लभी वंश की रात्रि का अवसान हुआ। उदयपुर के इतिहास को यहां से शृङ्खलाबंधी० पूर्व्व में लिख आए हैं कि वल्लभीपुर को यवनों ने घेरा और राजा शीलादित्य ने सकुटम्ब सपरिवार वीरों की गति पाया०, अब और सोमन्तिनी गण राजा की सहगामिनी हुईं किन्तु रानी पुष्पवती (वा कमलावती) मात्र जीवित रही।

रानी पुष्पवती चन्द्रावती नगर (सांप्रत आबूनगर) के राजा की दुहिता थीं। वल्लभीपुर के आक्रमण के पूर्व्व ही यह रानी गर्भवती होकर अपने पिता के राज में जगदम्बा (आशाम्बिका) के दर्शन को गई थी और वहां से लौटती समय मार्ग में अपने प्राणवल्लभ और वल्लभीपुर का विनाश सुना और उसी समज अपना प्राण देना चाहा० परन्तु बीरनगर की एक ब्राह्मणी लक्ष्मणावती जो रानी के साथ थी उस के समझाने से प्रसव काल तक प्राण धारण का मनोरथ करके मालिया प्रदेश के एक पर्व्वत की गुहा में काल यापन करना निश्चय किया। इसी गुहा में गुहा का जन्म हुआ और रानीने सद्यो जात सन्तान उस ब्राह्मणी को देकर आप अग्नि प्रवेश किया० मरती समय रानी ब्राह्मणी को समझा गई थी कि इस पुत्रको ब्राह्मणोचित शीक्षा देकर चत्रिया कन्या से व्याह देना ॥

लक्ष्मणावती ब्राह्मणी उस बालक का लालन पालन करने लगी और इ-धियों के भय से भांडेरगढ़ और पराशर बन में क्रम से रही। गुहा में जन्म होने के कारण बालक का नाम भी गुहा(ग्रहादित्य वा केशवादित्य)रक्खा। गुहा की प्रकृति दिन दिन अति उत्कट होने लगी और बहुत से बनवासी बालकों को इन्हों ने अपना अनुगामी बना लिया। इसी वृत्तान्त उसदेश में यह अब भी कहावत पर प्रचलित है कि सूर्य्य की किरण को कौन छिपा सकता है॥

मेवाड़ की दक्षिण सोमा पर ईदर के राज्य पर उस समय भीलों का अ-धिकार था और उस समय के भीलों के राजा का नाम मण्डलिका था। प्र-तिपालक शान्तिशील ब्राह्मणों के साथ गुहा का जी नहीं मिलता था इस से सम स्वभाव उग्र प्रकृति वाले भीलों से अपनी उद्दण्ड प्रचण्ड प्रकृति की एकता देख कर गुहा उन्ही लोगों के साथ बन बन घूमते थे और काल क्रम से भीलों के ऐसे स्नेहपात्र हो गए कि सबन पर्व्वत ईदर प्रदेश भीलों ने इन को समर्पण कर दिया। अबुलफ़ज़ल और भट्टग्रन्थ गुहा के भील राज प्राप्ति का बर्णन यों करते हैं। एक दिन खेल में भील बालक लोग एक बा-लक को राजा बनाने चाहते थे और सब ने एक वाक्य हो कर गुहा ही को राजा बनाना स्वीकार किया। एक भील के बालक ने चट से अपनी उंगली काट के ताजे लहू से गुहा के सिर में राजतिलक लगाया। यह खेल का व्यापार पीछे कार्य्यतः सत्य हो गया क्योंकि भील राजा मंडलिका ने यह समाचार सुन कर प्रसन्न हो कर ईदर का राज्य गुहा को दे दिया कहते हैं कि गुहा ने व्यर्थ भीलराज मण्डलिका को पीछे से मार डाला। गुहा के नाम के अनुसार उनके वंश के लोग गोहिलोट (गहिलोत वा गिहलोट) कह-लाए। टाड साहब कहते हैं कि गहिलोट ग्राहिलोत का अपभ्रंश है॥

गुहा (केशवादित्य) के पुत्र नागादित्य हुए। इन्हों ने पराशर बन में ना-गह्रद नामक एक बड़ा ह्रद बनवाया। इन्ही के नाम के कारण लक्ष्मणावती ब्राह्मणी के सन्तान वा वह बन और तालाव सब नागदहा के नाम से प्रसिद्ध है और सिसौधियों को भी नागदहा कहते हैं। नागादित्य के भोगादित्य। इन्हों ने कुटिला नदी पर पक्का घाट बनाया और इन्द्र सरोवर नामक तालाव का जीर्णोद्धार किया। पूर्वोक्त तड़ाग इनके नाम से अब तक भोडेला कहलाता है। इनके पुत्र देवादित्य जिन्हों ने देलवाड़ा ग्राम निर्माण किया और उन के आशादित्य जिन्हों ने अहाड़पुर नगर बसा कर अपनी राजधानी बनाया।

यह अहाड़पुर अब राना लोगों का समाधि स्थल है । कहते हैं कि अहाड़ पुर में जो गङ्गोन्द्रव तीर्थ है वह इसी राजा का निर्माण किया है और इन्ही की भक्ति से उस में गङ्गा जी का आविर्भाव हुआ था । उस प्रान्त में इस तीर्थ का बड़ा महात्म्य है । यह तीर्थ उदयपुर से एक कोस पूर्व को ओर है । आशादित्य के पुत्र कालभोजादित्य और उनके पुत्र ग्रहादित्य (वा द्वितीय नागादित्य) घासागांव इन्ही के नाम से प्रसिद्ध है । गुहा राजा से लेकर नागादित्य पर्य्यन्त छ (टाड साहब के मत से सात) राजाओं ने इसी पर्वत भूमि का राज्य किया पर इनमें से कोई अत्यन्त प्रसिद्ध न था किन्तु नागादित्य के पुत्र बाप्पा बड़ा प्रसिद्ध और नामी मनुष्य हुआ बरञ्च उदयपुर के राज का इसे मूलस्तम्भ कहें तो अयोगय न होगा । बापा का वर्णन उदयपुर से जो लिख कर आया है उसे हम यहां पर अविकल प्रकाश करते हैं " ग्रहादित्य के बाप्प नामक पुत्र हुआ कहते हैं कि बाप्प नंदी गण के अवतार थे यह कथा सविस्तर वायू पुराणांतर्गत एकलिङ्ग माहात्म्य में लिखी है जब राजा ग्रहादित्य के एक शत्रु जुंजावल नाम राजा ने घासा नग्र कों आन आवर्तन किया वहां राजा ग्रहादित्य बड़े पराक्रम के साथ मारे गए अरु घासा में जुंजावल का अधिकार हो गया तब आपत्ति काल अवलोकन कर प्रमरवंशोद्भवाग्रहादित्य की राज्ञी ने अपने पुत्र बाप्प को शिशुता के भय से निज पुरोहित बसिष्ट के ग्रह में गोपन कर पिहित रहना स्वीकार किया बहुत समय व्यतीत होने पीछे बाप्प ने बसिष्ट की गो चारन का नियम लिया लिखा है कि उस गो निकर में एक कामधेनु नाम धेनु थी सो जब बाप्प गो चारन को जाते वहां उक्त गाय एक बेणु चय में प्रवेश करती वहां एक स्फटिक का स्वयंभू लिंग था उस पर अपने स्तनों से दुग्ध श्रवती इस वास्ते गुरु पत्नी ने एक दिन बाप्प को उपालंभ दिया कि इस धेनु के स्तनों में दुग्ध नहीं सो कहां जाता है द्वितीय दिवस बाप्प ने उस गाय को दृष्टि से पिहित न होने दिया वह सुरभी तो शिव लिंग पर पूर्वोक्त दुग्ध श्रवने लगी अरु बाप्प ने इस चरित्र कों देख साक्षी बनाने कों हारीत नामा ऋषि ज्यों भृङ्गी गण का अवतार लिखा है वहां तपस्या करते हुये को देख बाप्प ने निमंत्रण कर वह चरित्र दिखाया तब भृङ्गी गण ने कहा कि हे बाप्प इस श्रीमदेकलिंगेश्वर के दर्शनार्थ तो मैं यहां ऐसा कठिन तप करता था अरु तू भी इन्ही का सेवक नंदीगण का अंशावतार है तब बाप्प को

को स्वरूप प्राप्त हुवा फिर श्रीशंकर की स्तुति कर कर पाय हारीत ऋषि तो कैलास सिधाये और बाप्प ने राज्य की अपेक्षा करी इस्से उन को शंकर ने वरदान दिया कि तेरा शरीर अभिन्न और सहस्तर होगा और तुझे इस भर्तृहरि के पर्वत में खनन करने से बहुत द्रव्य मिलेगा जिस्से सेना एकत्र कर तू चित्तौड़ का राज्य अपने अधिकार में कीजियो और आज से तुमारे नाम पर रावल पद पुत्र्यास रहैगा यह लिंग प्रादुर्भाव विक्रमार्क गताब्द २६० वैशाख शुक्ला १ को हुआ था सो उक्त महीने की इसी तिथि को अब भी प्रादुर्भावोत्सव प्रति वर्ष होता है फिर रावल बाप्प ने इष्टाज्ञा से द्रव्य निष्कासन कर सहस्तर सेना बनाय चित्तौड के राजा मानमोरी को जय किया और उसी दुर्ग को अपनी राजधानी बनाया इस महिपाल ने समस्त भारतवर्ष को विजय किया ॥"

बापा के विषय में ऐसे ही अनेक आश्चर्य उपाख्यान मिलते हैं। पृथिवी पर जितने बड़े बड़े राज वंश हैं उन में ऐसे कोई भी न होंगे जो कवि जनों की विचित्र कल्पना से अलंकृत न हों क्योंकि उस समय में उन के विषय में विविध दैवी कल्पनाओं का आरोप ही मानों उनके प्राचीनता और गुरुत्व का सूत्र था। रोम राज्य के स्थापन कर्त्ता रमुलस देवता के पुत्र थे और बाघिन का दूध पी कर पले थे, ग्रीस राज्य के हक्यूलिस और इङ्गलैंड राज्य के आर थर राजाओं के दैत्यों से युद्ध इत्यादि अनेक अमानुष कर्म्म प्रसिद्ध हैं। जगद्विजयी सिकन्दर को दो सींग थीं और फारस के अफरासियाब ने जब देव सदृश अनेक कार्य्य किए तो हिंदुस्तान के बड़े बड़े उदयपुर, नैपाल, सितारा, कोल्हापुर, ईडरनगर, डूंगरपुर, प्रतापगढ और अलीराजपुर इत्यादि राजवंशों के मूलपुरुष बापा के विषय में विचित्र बातें लिखी हैं तो कौन आश्चर्य्य की बात है। बापा सैकड़ों राजकुल के आदि पुरुष लोकातीत संभ्रम भाजन और चिरजीवी फिर उनके चरित्र अलौकिक घटनाओं से क्यों न संघटित हों।

बापा बाल्य काल से गोचारण करते थे यह पूर्व्व में कह आए हैं। कहते हैं कि शरत्काल में गो चारण के हेतु बन में गमन करके बापा ने एक साथ छ सौ कुमारियों का पाणिग्रहण किया। उस देश में शरद ऋतु में बालक और बालिका गन बाहर जा कर झूला झूलते हैं। इसी रीति के अनुसार नगेन्द्रनगर के सोलंकी राजा की क्वारी कन्या अपनी अनेक सखियों के साथ

झूलने को आई थी किन्तु उन के पास डोरी नहीं थी कि वह झूला बांधें। बापा को देख कर उन सबों ने इन से डोरी मांगी इन्हों ने कहा पहिले व्याह खेल खेलो तो डोरी दें। बालिका लोगों के हिसाब सभी खेल एक थे इस से इन लोगों ने पहिले व्याह खेल ही खेलना आरम्भ किया। राजकुमारी और बापा की गाठ जोडकर गीत गाकर दोनों को सब ने सात फेरी किया। कुछ दिन पीछे जब राजकुमारी का व्याह ठहरा तब एक वरपक्ष के ज्योतिषी ने हाथ देख कर कहा कि इस का तो व्याह हो चुका है। कुमारी का पिता यह सुन के बहुत ही घबडाया और इस की खोज करने लगा। बापा के साथी गोपाल गण यह चरित्र जानते थे परन्तु बापा ने इसके प्रगट करने को उनसे शपथ ली थी। यह शपथ भी विचित्र प्रकार की थी। एक गडहे के निकट बापा ने अपने सब संगियों को बैठाया और हाथ मे एक एक छोटा पत्थर दे कर कहा कि तुम लोग शपथ करो कि "तुमारा भला बुरा कोई हाल किसी से न कहैंगे, तुम को छोड के न जायंगे, और जहां जो कुछ सुनेंगे सब आ कर तुम से कहैंगे यदि इस में कोई बात टालें तो हमारे और हमारे पुरखों के धर्म्म कर्म इस ढेले की भांति धोबी के गडहे में पडें" बापा के संगियों ने यही कह कह के ढेला गडहे में फेंका और उस के अनुसार बापा का विवाह करना उन के संगियों ने प्रकाश न किया। किन्तु छ सौ सरला कुमारियो पर जो बात विदित है वह कभी छिप सकती है। धीरे धीरे यह विवाह खेल की कथा राजा के कान तक पहुंची। बापा को तीन वर्ष की अवस्था से भाण्डीर दुर्ग * से लाकर ब्राह्मणों ने इसी नगेन्द्र नगर †

---

* बापा भांडीर दुर्ग में भीलों के हाथ से पले थे। जिस भील ने बापा को पाला वह जदु वंशी था। उस प्रदेश में भीलों की दो जाति है। एक उजले अर्थात शुद्ध भील वंश के दूसरे संकर भील। यह संकर भील राजपूतों से मिलकर उत्पन्न हुए हैं और पंवार चौहान रघुवशी जदुबशी इतत्रादि राजपूतों की जाति के नाम उनकी जाति के भी होते है। यह भाण्डीर दुर्ग मेवार में जारोल नगर ८ कोस दक्षिण पश्चिम है॥

† नगेन्द्र नगर का नाम नागदहा प्रसिद्ध है। यह उदयपुर से पांच कोस उत्तर की ओर है। यहां से टाड साहब ने अनेक प्राचीन लिपि संग्रह किया था। इन सबों मे एक पत्थर ईसवी नवम शतक का है जिस में रानाओं की उपाधि (गोहिलोट) लिखी है॥

के समीप निविड़ पराशर कानन में त्रिकूट पर्व्वत के नीचे अपने घर में रक्खा था इस से बापा उसी सोलङ्की राज की प्रजा थे। राजा ने यह समाचार सुन लिया यह जान कर बापा नगेन्द्र नगर छोड़ कर पर्व्वत में छिप रहे और उसी समय से उनका सौभाग्य संचार होने लगा। किन्तु इन छः सौ कुमारियों का फिर पाणिग्रहण न हुआ और बापा ही के ग पड़ीं। इसी कारण सैकड़ों राजा जमींदार सरदार सिपाही अभी अपने को बापा * की सन्तान बतलाते हैं।

नागेन्द्र नगर से चलने के समय में दो भील बाप्पा के सहगामी हुए थे इन में एक उन्द्री प्रदेश वासी और इस का नाम बालव अपर † अगुणा—पानोर नामक स्थान निवासी, इस का नाम देव। इन दोनों भीलों का नाम बाप्पा के नाम के साथ चिरस्मरणीय हो रहा है। चितौर के सिंहासन पर अभिषिक्त होने के समय बालव ने स्वीय करांगुलि कर्त्तन कर के सद्यो शोणित से बाप्पा के ललाट में राज तिलक प्रदान किया था तदनुसार अद्यावधि पर्यन्त बाप्पा वंशीय राज गण के सिंहासनारोहण के दिवस इन्हीं दो भीलों के सन्तान गण आ कर अभिषेक विधि सम्पादन करते हैं। अगुणा प्रदेश के भील स्वीय शोणित से राजललाट में तिलकार्पण और राजकीय बाहु धारण कर के सिंहासन में अधिष्ठित कराते हैं। उन्द्री प्रदेश का भील तावत् काल दण्डायमान हो कर राजतिलक का उपकरण ‡ द्रव्य का पात्र लिये रहता

---

* बाप्पा दुलार में लड़के को कहते हैं। एक प्राचीन ग्रन्थ में बापा का नाम शिलाधीश लिखा है किन्तु प्रसिद्ध नाम इन का बापा ही है।

† टाड साहब कहते हैं, भारतवर्ष के मध्य अगुनापनोर प्रदेश अद्यावधि प्राकृतिक स्वाधीन अवस्था में है। अगुना एक सहस्र ग्राम में विभक्त। तत्रस्थ भीलगण जातीय जनक प्रधान के अधीन में निर्विघ्नता से वास करते हैं। इस प्रधान की उपाधि भी राणा है, पर किसी राजा के साथ इन लोगों का विशेष कोई संस्रव नहीं। विग्रह उपस्थित होने से अगुना का राणा धनुःशर पांच सहस्र जन एकत्र कर सकता है। आगुनापनोर मिवार राजा के दक्षिण पश्चिम प्रान्त में अवस्थित हैं।

‡ राज टीका का प्रधान और प्राचीन उपकरण जल संयुक्त तण्डुल चूर्ण राजस्थान की चलित भाषा में उस राज टीका का नाम "खुशकी" काल क्रम से सुगन्धि मिला हुआ चूर्ण तदुपकरण मध्य परिगणित हो गया है।

है। जो प्रथा पुरुषानुक्रम से इस प्रकार से प्रतिपालित होती चली आती है उस का मूल किस प्रकार से उत्पन्न हुआ था यह अनुसन्धान कर के अवगत होने से अन्तःकरण कैसा विपुल आनंद रस से आप्लुत हो जाता है।

मिवार के राज्याभिषेक के समुदय प्राचीन नियम रक्षा करने में विपुल अर्थ का व्यय होता है इसी कारण उस का अनेक अंग परित्यक्त हो गया है। राणा जगतसिंहके पश्चात् और किसी का अभिषेक पूर्ववत् समारोह के साथ सम्पन्न नहीं हुआ। उन के अभिषेक में नब्बे लक्ष रुपया व्यय हुआ था। मिवार के अति सच्छल समय में समग्र भारतवर्ष का आय ९० लक्ष रुपया था।

नगेन्द्र नगर से बाप्पा के जाने का कारण पहिले वर्णित हुआ है, वह संपूर्ण संगत है, परंतु भट्ट कविगण के ग्रन्थ में उन के प्रस्थान का अन्य प्रकार का विवरण दृष्ट होता है उन लोगों ने कविजन सुलभ कल्पना प्रभाव से दैव घटना का आरोप कर के उसकी विलक्षण शोभा सम्पादन किया है। काल्पनिक विवरण से अलंकृत न हो ऐसा संभ्रान्त वंश भारतवर्ष में अतीव दुर्लभ है सुतरां हम भी भट्टगण वर्णित बाप्पा के सौभाग्य सञ्चार का विवरण निम्न में प्रकटित करते हैं:—

पहिले कह आए हैं कि बाप्पा ब्राह्मण गण का गोचारण करते थे * उन को पालित एक गऊ के स्तन में ब्राह्मण गण ने उपर्य्युपरि कियद्दिवस तक दुग्ध नहीं पाया इससे सन्देह किया कि बाप्पा इस गऊ को दोहन करके दुग्ध पान कर लेते हैं। बाप्पा इस अपवाद से अति क्रुद्ध हुए किन्तु गऊ के स्तन में स्वरूपतः दुग्ध न देख कर ब्राह्मण गण के संदेह को अमूलक न कह सके। पश्चात् स्वयं अनुसन्धान करके देखा कि यह गऊ प्रत्यह एक पर्वत गुहा में जाया करती थी और वहां से प्रत्यागमन करने से उसके स्तन पयःशून हो जाते हैं। बाप्पा ने गऊ का अनुसरण करके एक दिन गुहा में प्रवेश किया, और देखा कि उस बेतसवन में एक योगी ध्यानवस्था में उपविष्ट है। उनके सन्मुख में एक शिव लिंग है और उसी शिव लिंग के मस्तक पर पयस्विनी का धवल पयोधर प्रचुर परिमाण से परिवर्षित होता है।

पूर्वकाल के योगी ऋषिगण भिन्न यह प्राकृतिक और पवित्र देवस्थली इति पूर्व में और किसी के दृष्टिगोचर नहीं हुई थी। बाप्पा ने जिन योगी का

---

* सूर्य्यवंशियों में ब्राह्मण की गोचारण करना प्राचीन प्रथा है. रघुवंश में दिलीप का इतिहास देखो।

ध्यान अवस्था में दर्शन किया था उनका नाम हारीत † उन समागम से योगी का ध्यान भंग हुआ, बाप्पा का परिचय जिज्ञासा करने से बाप्पा ने आत्म वृत्तान्त जहां तक अवगत थे सब निवेदन किया। योगी के आशीर्वाद ग्रहणान्तर उस दिन गृह में प्रत्यागत भए। अतः पर बाप्पा प्रत्यह एक बार योगी के निकट गमन करके उन का पाद प्रक्षालन, पानार्थ पयः प्रदान और शिव प्रीति काम होकर धतूरा अर्क प्रभृति शिव-प्रिय वन पुष्प समूह चयन किया करते। सेवा से तुष्ट होकर योगी वर ने उन को क्रम क्रम से नीति शास्त्र में शिक्षित और शैव मन्त्र से दीक्षित किया और स्व कर से उनके कण्ठ में पवित्र यज्ञसूत्र समर्पण पूर्व्वक "एक लिङ्ग को देवान" यह उपाधि प्रदान किया।

तत्पश्चात् बाप्पा का यह क्रम था कि नित्य प्रति योगी का दर्शन करना और तत्कथित मंत्र का अनुष्ठान करना. काल पा कर भगवती पार्व्वती ने मंत्रप्रभाव से बाप्पा को दर्शन दिया और राज्यादिक के वरप्रदान पूर्व्वक दिव्य शस्त्र से बाप्पा को सुसज्जित किया।

कियत् कालानन्तर ध्यान से योगी ने अपने परमधाम जाने का समय निकट जान कर बाप्पा को तद्वृत्तान्त विदित कर बोले "कल तुम अति प्रत्यूष में उपस्थित होना?" बाप्पा निद्रा के वशीभूत होकर आदेशानु रूप प्रत्यूष में उपस्थित हो नहीं सके और विलम्ब करके जब वहां गए तो देखा कि हारीत ने आकाश-पथ में कियद दूर तक आरोहण किया है। उनका विद्युत-निभ विमान उज्ज्वलांग अप्सरागण बहन करती हैं। हारीत ने विमान गति स्थगित करके बाप्पा को निकटस्थ होने का आदेश किया। उस विमान तक पहुंचने के उद्यम से बाप्पा का कलेवर तत्क्षणात् २० हाथ दीर्घ होगया। किंतु तथापि उनको गुरुदेव का रथ प्राप्त नहीं हुआ। तब योगी ने उनको मुख व्यादान करने को कहा। तदनुसार बाप्पा ने वदन व्यादित किया। कथित है योगीवर ने उनके मुख विवर में उगाल परित्याग

---

† हारीत के वंशीय ब्राह्मण लोग अद्यावधि एक लिङ्ग के पूजक पद में प्रतिष्ठित हैं। टाड् साहब के समकालीन पुरोहित हारीत से षष्टाधिक षष्ठितम पुरुष थे उनके निकट में राणा के मध्य वर्त्तिता से शिवपुराण प्राप्त हो कर टाड साहब ने इंग्लण्ड के 'रायल एशियाटिक सोसाइटी (*Royal* Asiatic Society) समाज को प्रदान किया था।

किया था। * बापा ने उस से घृणा कर के इस निष्ठीवन का पदतल में निक्षेप किया और इसी अपराध से उनको अमरत्वलाभ नहीं हुआ। केवल उनका शरीर अस्त्र शस्त्र से अभेद्य होगया। हारीत अदृश्य हुए। बाप्पा ने इस प्रकार दैवानुगृहीत होकर और अपने को चितौर के मोरी राजवंश का दौहित्र जानकर और आलस्य में कालक्षेप करना युक्ति संगत अनुमान नहीं किया। अब गोचारण से उनको अत्यन्त घृणा हुई और उन्होंने कतिपय सहचर समभिव्यवहार में ले कर अरण्यवास परित्याग करके लोकालय में गमन किया। मार्ग में †नाहर-मगरा नामक पर्वत में विख्यात 'गोरखनाथ' ऋषि के साथ उनका साक्षात हुआ था। गोरख ने उनको और द्विधार तीक्ष्ण करवाल‡ प्रदान किया था। मंत्रपूत कर के चलाने से उस तीक्ष्ण कृपाण के आघात से पर्व्वत भी विदीर्ण हो जाता था। बाप्पा ने उसी के प्रताप से चितौर का सिंहासन प्राप्त किया था। भट्ट कविगण के ग्रन्थ में बाप्पा के नागेन्द्र नगर से प्रस्थान का यह विवरण प्राप्त होता है। और इस विवरण में मिवार निवासी लोगों का प्रगाढ़ विश्वास भी है॥

मालव के भूत पूर्व्व अधिपति प्रमार वंशीय तत्काल में भारत वर्ष के सार्व्वभौम थे। इस वंश की एक शाखा का नाम मोरी। मोरी वंशियों का इस समय में चितौर पर अधिकार था किन्तु चितौर तत्काल में प्रधान राजपाट था या नहीं यह निश्चित नहीं। विविध अट्टालिका और दुर्ग प्रभृति में इस वंश के राजत्व काल की खोदित लिपि विद्यमान हैं, उससे ज्ञात होता है कि मोरी राजा गण उस समय में विलक्षण पराक्रम शाली थे॥

बाप्पा जब चितौर में उपस्थित हुए तात्काल में मोरी वंशीय मान राजा

---

* कथित है मुसलमान धर्म्म प्रचारक महम्मद ने स्वीय प्रिय दौहित्र हसन के वदन में ऐसाही निष्ठीवन परित्याग किया था क्या आश्चर्य है जो मुसल्मान लोगों ने यह कथा भारतवर्ष के इसी उपाख्यान से ली है।

† मेवार के राजधानी उदयपूर के पूर्व्व भाग में प्रवेश करने को रास्ते में कोस के अन्दर नाहरमगरा पर्व्वत अवस्थित है। इस पर्व्वत में राजा और तत्पारिषद वर्ग मृगया काल में उपवेशन करते थे। उनलोगों के बैठने के स्थान सब अद्यापि असंस्कृत और जीर्ण अवस्था में पतित हैं।

‡ कथित है वह करवाल अद्यावधि विद्यमान हैं। राणा प्रति वत्सर में निरूपित दिवस में उसकी पूजा करते हैं।

सिंहासनारूढ़ थे। चितोर के राजवंश के साथ उनका सम्बन्ध था *सुतरां वि-शेष समादर से राजा ने उनको सामन्त पद में अभिषिक्त करके तदुचित भूमि वृत्ति प्रदान किया। चितोर के सरदार गण सैनिक नियम भोग करते थे †। वे लोग समुचित सम्मानभाव से इति पूर्व्व में मान राजा के ऊपर विरक्त हो रहे थे। एक आगन्तुक बाप्पा के ऊपर उनके समधिक अनुराग सन्दर्शन से वे लोग और भी सातीशय ईर्षान्वित हुए। इसी समय में चितोर राजविदेशीय शत्रु कर्त्तृक आक्रान्त होने से सर्दार लोग युद्धार्थ आहूत हुए परन्तु उन लोगों ने युद्धोद्योग नहीं किया। अधिकन्तु सैनिक नियमानुसार भुक्त भूमि का पट्टा प्रभृति दूर निक्षेप करके साहङ्कार वाक्य बोले कि राजा अपने प्रियतर सरदार को युद्धार्थ नियोग करें॥

बाप्पा ने यह सुन कर उपस्थित युद्ध का भार ग्रहण कर के चित्तोर से यात्रा किया। सरदार गण यद्यपि भूमि-वृत्ति-बञ्चित हुए थे तथापि लज्जा-वशत: बाप्पा के अनुगामी हुए। समर में विपक्ष गण ने पराजित हो कर पलायन किया। बाप्पा ने सरदार गण के साथ चितोर में प्रत्यागत न होकर स्वीय पैत्रिक राजधानी गाजनी नगरमें गमन किया। सलीम नामक जनैक असभ्य उस काल में गाजनी के सिंहासन पर था। बाप्पा ने सलीम को दूरी-भूत कर के वहां का सिंहासन जनैक चौर वंशीय राजपूत को दिया और आप पूर्वोक्त असन्तुष्ट सरदार गण के साथ चितोर प्रत्यागमन किया। कथित है कि बाप्पा ने इस समय सलीम की कन्या का पाणिग्रहण किया था।

---

* बाप्पा की माता प्रमारा वंशीया थी। सुतरां वर्त्तमान प्रमारा के सहित मामा भागिनेय का सम्बन्ध था।

† सैनिक नियम (Feudal System) इस नियमानुसार से भुक्त भूमि के कर के परिवर्त्त में प्रत्येक सरदार को अपने अपने वृत्ति भूमि के परिमा-णानुरूप नियमित संख्या की सेना लेकर विग्रह समय में विपक्ष के साथ सं-ग्राम करना होता है। प्राचीनकाल में वृहत् वृहत् राज्य भूमि संक्रान्त यह नियम प्रचलित था। राजा और सरदारगण के मध्य और सरदार और तद-धीन साधारण प्रजावर्ग के मध्य पूर्व्वोक्त मूल नियम के आनुषंगिक अन्यान्य नियम समुदय पृथक पृथक रूप से व्यवस्थित करते थे। राजस्थान के सैनिक नियम का विवरण इत: पर पृथक एक खण्ड में सविस्तर से प्रकटित होगा।

जातीय सरदार गण ने चितौर राजा के साथ वैरनिर्यातन में कृतसङ्कल्प होकर सब ने एक वाक्य होकर नगर परित्याग कर के अन्यत्र गमन किया। राजा ने उन लोगों के साथ सन्धि करने के मानस से बारम्बार दूत प्रेरण किया किन्तु किसी प्रकार सरदार गण का कोप शान्त नहीं हुआ। उन लोगों ने कहा, "हम लोगों ने राजा का नमक खाया है इस से एक वत्सर काल मात्र प्रतीक्षा करेंगे। अनन्तर उन को व्यवहार के विहित प्रतिशोध देने में त्रुटि न करेंगे।" बाप्पा के वीरत्व और उदार प्रकृति के वशम्वद हो कर सरदार गण ने उन को चितौर का अधिपति करने का अभिप्राय प्रकाश किया। बाप्पा ने सरदार गण के सहायता से चितौर नगर आक्रमण कर के अधिकार कर लिया। भट्ट कविगण ने लिखा है "बाप्पा मोर राजा के निकट से चितौर ले कर स्वयं उस के "मौर" (अर्थात् मुकुट स्वरूप) हुए। चितौर प्राप्ति के पश्चात् सर्व्व सम्मति से बाप्पा ने 'हिंदूसूर्य' 'राजगुरु' और 'चक्रवै' यह तीन उपाधि धारण किया था। शेषोक्त उपाधि का अर्थ सार्व्वभौम।

बाप्पा के अनेक पुत्र हुए थे। उन में किसी २ ने स्वीय वंश के प्राचीन स्थान सौराष्ट्र राज्य में गमन किया। आईन अकबरी ग्रन्थ में लिखा है कि अकबर सम्राट के समय में इस वंश के पचास सहस्र पराक्रान्त सरदार सौराष्ट्र देश में वास करते थे। बाप्पा के अपर पांच पुत्र ने मारवाड देश में गमन किया था। गोहिल-वाल नामक स्थान में गोहिल वंशीय भी बाप्पा की सन्तान हैं। परन्तु वे लोग अपने वंश का मूल विवरण आप भूल गए हैं। इति पूर्व्व में उन लोगों ने खेर* प्रदेश में आ कर वास किया था। और अब पूर्व्व काल के पूर्व्व पुरुषगण के नाम वा वंश का अन्य कोई विवरण वह लोग नहीं बतला सकते। घटना क्रम से उन लोगों ने वालभी ग्राम में वास भी किया किन्तु यह नहीं जाना कि यही स्थान उन लोगों की पैत्रिक भूमि है। यह लोग अब अरब गण के सहवास से वाणिज्य कर के जीविका निर्व्वाह करते हैं।

बाप्पा के चरम काल का विवरण सर्व्वापेक्षा आश्चर्य्य है। कथित है परिणत वयस में उन्हों ने स्वीय राज्य सन्तान गण को परित्याग कर के खुरा-

* मारवाड़ प्रदेश के दक्षिण पश्चिम प्रान्त में लूणी नदी के निकट खेर भूमि है।

ान राज्य में गमन किया था, और तद्देश अधिकार कर के स्लेच्छ वंशीया अनेक रमणी का पाणिग्रहण किया था। इन सब रमणी के गर्भ से उन की बहु संख्यक सन्तान समुत्पन्न हुए थे।

सुना जाता है कि एक शतवर्ष की अवस्था में बाप्पा ने शरीर त्याग किया। देलवारा प्रदेश के सर्दार के निकट एक ग्रन्थ है उस में लिखा है कि बाप्पा ने इस्पहान, कन्दहार, काश्मीर, इराक, तूरान, और काफरिस्तान प्रभृति देश अधिकार कर के तत् समुदय देशीया कामिनियों का पाणिपीडन किया था। उन म्लेच्छ महिला के गर्भ से उन को १३० पुत्र जन्मे थे। उन लोगों की साधारण उपाधि "नौशीरा पठान" है उन सब पुत्रोंमें से प्रत्येक ने अपने अपने मातृनामानुयायी नाम से एक एक वंश विस्तार किया है। बाप्पा के हिन्दू सन्तान की संख्या भी अल्प नहीं। हिन्दू महिला गण के गर्भ में उन्हों ने ९८ पुत्र सन्तान उत्पादन किया था उन लोगों की उपाधि "अग्नि उपासी सूर्य्यवंशीय" है उक्त ग्रन्थ में लिखा है, बाप्पा ने चरम काल में सन्यास आश्रम अवलम्ब कर के सुमेरु शिखर † मूल में अवस्थिति किया था, उन का प्राण त्याग नहीं हुआ है जीवदृशा में ही इस स्थान में उन की समाधि क्रिया सम्पन्न हुई थी। अन्यान्य प्रवाद में कथित है कि बाप्पा की

---

† कोई कोई कहते हैं हिंदू ग्रन्थानुसार से पृथ्वी के उत्तर केन्द्र का नाम सुमेरु। किसी किसी ग्रन्थ में सुमेरु तद्रूप अर्थ में व्यवहृत हुआ है परन्तु पुराण के वर्णन से अनुमान होता है कि किसी विशेष पर्व्वत का नाम सुमेरु है। जम्बू द्वीप के मध्य इलावृत्त वर्ष में "कनकाचल सुमेरु विराजमान है इस के दक्षिण में हिमवान हेमकूट और निषध पर्व्वत, उत्तर नील और श्वेत पर्व्वत।" चन्द्रवंश की आदि पुरुष इला स्त्री रूप में जहां "आवृत्ति" हुए थे, उसका नाम इलावृति वर्ष। "सुमेरु के दक्षिण में प्रथमतः भारतवर्ष" इस से अनुमान होता है कि मध्य एशिया का नाम इलावृत वर्ष। अनुसन्धान करने से सुमेरु आविष्कृत हो कर पौराणिक भूगोल वृत्तान्त का अधिकांश परिष्कृत हो सक्ता है। केवल नाम परिवर्त्तित हो कर इतना गवड़ा हुआ कोई कोई कहते हैं कि पेशावर और जलालाबाद के मध्यस्थल में प्रायः चौदह सौ हस्त उच्च मारकोह नाम अति अनुर्व्वर जो एक पर्व्वत है वही हिन्दू पुराण का सुमेरु है।

अंत्येष्टि क्रिया सम्बन्ध में उन के हिन्दू और म्लेच्छ प्रजागण के मध्य तुमुल कलह उपस्थित हुआ था, हिन्दू लोग उन का शरीर अग्निदग्ध और म्लेच्छ लोग मिट्टी में प्रोथित करने को कहते थे। उभय दल ने इस विषय का विवाद करते करते शव का आवरण खोल कर देखा शव नहीं है तत् परिवर्त्त में कतिपय प्रफुल्ल शतदल विराजमान हैं। उन लोगों ने वह सब कमल लेकर ह्रद में रोपन कर दिया था। पारस्य देश के नौशेरवां की और काशी के प्रसिद्ध भगवद्भक्त कबीर की अंत्येष्टि क्रिया का प्रवाद भी ठीक ऐसा ही है।

मिवाड़ के राज वंश के प्रधान पुरुष बाप्पा का यह संक्षेपक इतिहास प्रकटित किया गया। प्राचीन कालीन अन्यान्य राज पुरुष की भांति बाप्पा की कहानी भी सत्य मिथ्या से मिलित है किन्तु इस विचार को छोड़ कर चितोर के सिंहासन में सूर्य्यवंशी राजगण ने दीर्घ कालावधि जो आधिपत्य किया था, उस आधिपत्य का बाप्पा ही से प्रारम्भ है इस कारण गिहलोट गण का चितोर का राजत्व कितने दिन का है यह निरूपण करने को बाप्पा का जनम काल का निरूपण करना अत्यन्त आवश्यक है। बल्लभी पुर २०५ संवत् में शिलादित्य के समय में विनष्ट हुआ था। शिलादित्य से बाप्पा दशम पुरुष, परन्तु आश्चर्य्य का विषय यह है कि उदयपूर के राज भवन की वंश पत्रिका में बाप्पा का जनम काल १९१ संवत में लिखा है। विशेषत: चितोर की एक खोदित लिपि से प्रकाश हुआ था कि ७७० संवत् में चितोर नगर मोरी वंशीय मान राजा के अधिकार में था। इसी मान राजा के समय में असभ्य गण ने चितोर नगर आक्रमण किया था। उनलोगों के पराभव करके उसके पश्चात बाप्पा ने पञ्चदश वर्ष की अवस्था में चितोर का सिंहासन प्राप्त किया था। इस कारण ईदृश विवरण से बाप्पा का जनम काल १९१ संवत् किसी प्रकार स्वीकृत नहीं हो सक्ता? परन्तु उदयपूर के राजवंश के कुलाचार्य्य भट्ट गण पूर्व्वोक्त समुदय घटना स्वीकार करके भी कहते हैं कि बाप्पा ने १९१ संवत् में जन्म ग्रहण किया था। टाड साहब ने अनेक अनुसन्धान करके अवशेष में सौराष्ट्र देश में सोमनाथ के मन्दिर की एक खोदित लिपि से जाना था कि बल्लभी संवत् नाम का एक और भी संवत् प्रचलित था। वह संवत् विक्रमादित्य की संवत् से ३७५ बरस के पश्चात् प्रारम्भ हुआ था, २०५ बल्लभी सम्वत् में बल्लभीपुर विनष्ट हुआ था, सुतरां विक्रमादित्य के संवतानुसार उस के विनाश का काल ५८० हुआ जिस

प्रणाली से टाड साहब ने चितौर के मान राजा का राजत्व, बल्लभीपुर का विनाश, और कुलाचार्य्य गण लिखित बाप्पा के जनम समय का परस्पर समन्वय साधन किया है वह विलक्षण बुद्धि व्यञ्जक है परंतु जटिल और नीरस है इस कारण सविस्तर से इस स्थान में प्रकटित नहीं किया। उसकी मीमांसा का स्थूल तात्पर्य्य यह कि बल्लभीपुर विनाश के १८० बरस पश्चात् विक्रमादित्य के ७६८ संवत् में बाप्पा ने जन्म ग्रहण किया था। कुलाचार्य्य गण ने भ्रम वशतः इस १८० संख्या को विक्रमादित्य का संवत् करके लिखा है। तत् पश्चात् पञ्चदश वर्ष की अवस्था में बाप्पा चितौर राज्य में अभिषिक्त हुए थे। सुतरां ७८४ संवत् उनका चितौर प्राप्तकाल निरूपित हुआ। उस समय से सार्द्ध एकादश बत्सरावधि बाप्पा के वंशीय ६० राजा गण ने क्रमान्वय से चितौर के सिंहासन पर उपवेशन किया है।

यद्यपि भट्ट गण के ग्रन्थानुयायी बाप्पा के जन्म काल की प्रचीनत्व रक्षा नहीं हुई परन्तु जो समय टाड साहब ने निरूपित किया है वह भी नितान्त आधुनिक नहीं है तदनुसार प्रकाश होता है कि बाप्पा फरासी राजा के करोली भिञ्जिया वंशीय राजगण के और मुसलमान सम्राज्य के वलीद खलीफा के समकाल वर्ती थे।

आइतपुर * नगर से मिवाड़ वंशीय और एक खोदित लिपि संग्रहीत हुई थी। वह लिपि १०२४ संवत् समय की है तत्कालीन चितौर के सिंहासन में बाप्पा के वंशीय शक्ति कुमार राजा प्रतिष्ठित थे। उस लिपि में शक्ति कुमार के चतुर्द्दश पुरुष के मध्य एक जन शील नाम से अभिहित हुए हैं। राजभवन की वंशावली अपेक्षा तल्लिपि में यही एक मात्र अतिरिक्त नाम लक्षित होता है, तद्भिन्न और सब विषय में समता है। इङ्गलैंड के प्रसिद्ध कवि ह्यूम ने कहा है "यद्यपि कविगण सूक्ष्म सत्य के तादृश अनुरागी नहीं, और यदिच वह इतिवृत्त का रूपान्तर कर देते हैं, तो भी उन लोगों की अत्युक्ति के मूल में सत्य की सत्वालक्षित होती है" इस वर्णित विषय में ह्यूम की एतदुक्ति का सारत्व प्रतीयमान होता है। जन समागम शून्य स्वापद पूर्ण आइतपुर के कानन में जो सब नाम विलुप्त हो जाते और उन

---

* आइतपुर—सूर्य्यपुर। आदित्य शब्द का अपभ्रंश आइत। आइत शब्द का संकीर्ण रूप एत, यथा एतवार आदित्यवार।

सब नामों के कभी किसी के कर्णगोचर होने की संभावना नहीं थी किन्तु भट्ट कविगण की वर्णना प्रभा में मिवार राजवंश के प्राचीन काल के वह सब नाम चिरस्मरणीय हो रहे हैं।

इस १०२४ संवत् समय में वलीदखलीफा के सेनापति महम्मद बिन्कासिम ने भारतवर्ष में आकर सिन्धु देश जय किया था। इस के पहिले मोरी वंशीय मानराजा के समय जिस असभ्य राजा ने चितोरनगर आक्रमण किया था और बाप्पा कर्त्तृक जो पराजित हुआ था, वह अनुमान होता है कि यही बिन कासिम है।

बाप्पा और शक्ति कुमार के मध्यवर्ती ९ राजा ने चितोर में राजत्व किया था। उस समय से दो शत वर्ष के मध्य में ९ जन राजा का राजत्व असम्भव नहीं। तदनुसार मिवार के इतिवृत्त का निम्नोक्त चार प्रधान काल निरूपित हुआ। प्रथम, कनकसेन का काल १४४ द्वितीय, शिलादित्य और बल्लभीपुर विनाश का काल ५२४। तृतीय बाप्पा के चितोर प्राप्ति का काल खृष्टाब्द ७२८। चतुर्थ शक्तिकुमार का राजत्व काल खृष्टाब्द १०६८।

तृतीय अध्याय ।

बाप्पा और समर सिंह के मध्यवर्ती राजगण, बाप्पा का वंश, अरब जाति के भारतवर्ष आक्रमण का विवरण, मुसलमानगण से जिन सब राजाओं ने चितोर नगर रक्षा किया था उन लोगों की तालिका।

७८४ संवत् में बाप्पा को चितोर सिंहासन प्राप्त हुआ था। मिवार के इतिवृत्त में तत्परवर्ती प्रधान समय समर सिंह का राजत्व काल—संवत् १२४९। अतएव बाप्पा के ईरान राज्य गमन के समय ८२० संवत् से समर सिंह के समय पर्य्यन्त भट्टगण के ग्रन्थानुसार मिवार राज्य का वृत्तान्त संपूर्ति प्रकटित होता है। समर सिंह का राजत्व काल केवल मिवार के इतिवृत्ति का प्रधान काल नहीं, स्वरूपतः समुदय हिन्दू जाति के पक्ष में एक प्रधान समय है। उन के राजत्व समय में भारतवर्ष का राज किरीट हिंदू के सिर से अपनीत हो कर तातारी मुसलमान के सिर में आरोपित हुआ था। बाप्पा से समर सिंह के मध्य चार शताब्दी काल का व्यवधान है। इस काल के मध्य में चितोर के सिंहासन पर अष्टादश राजाओं ने उपवेशन किया था। यदिच उन लोगों का राजत्व का विशेष विवरण प्राप्त नहीं होता, तौ भी नितान्त नीरव में तत्तावत् काल उल्लङ्घन करना उचित नहीं। उन सब राजा

की लोहितवर्ण पात का सुवर्ण मयी प्रतिमा से शोभमान चितौर के सौध शिखर पर उड्डीयमान थी और तन्मध्य में अनेक का नाम उन लोगों के राज्यस्थ शैल शरीर में लौह लेखनीकी लिपि योगसे अद्यावधि विद्यमान है।

इस के पहिले आइतपुर की जिस खोदित लिपि का उल्लेख किया है, उस से बाप्पा और समर सिंह के मध्य वर्ती शक्तिकुमार राजा का राजत्व काल संवत् १०२४ निरूपित हुआ। जैन ग्रन्थ से ज्ञात होता है कि शक्तिकुमार के चार पुरुष पूर्व्ववर्ती उल्लत नाम राजा ६२२ संवत् में चितौर के सिंहासनारूढ़ हुए थे। ७६४ खीष्टाब्द में बाप्पा ने ईरान देश में गमन किया। ११६३ खीष्टाब्द में समर सिंह के समय में हिंदू राजत्व का अवसान हुआ। इस उभय घटना के मध्यवर्ती समय में मिवार राज्य और एक बार मुसलमान गण से आक्रान्त हो का विवरण राजवंश के ग्रन्थ में प्राप्त होता है। तत्काल में खोमान नामक एक राजा चितौर के सिंहासनस्थ थे। उनके राजत्व काल में ८१२ से ८३६ खीष्टाब्द के अन्तर्गत किसी समय में मुसलमानों ने चितौर नगर-आक्रमण किया था। खोमान रास नामक ग्रन्थ में तत् आक्रमण संक्रान्त वृत्तान्त सविस्तर निवृत हुआ है। मिवार राज्य के पद्य विरचित इतिहास ग्रन्थ समूह के मध्य खोमानरास सर्व्वापेक्षा पुरातन है।

टाड साहब कहते है भारतवर्ष का एतत् समय का इतिवृत्त नितान्त तमसाच्छन्न है। इस कारण खोमानरासा प्रभृति हिंदू ग्रन्थ से तत् संबंध में जो कुछ आलोक लाभ हो सक्ता है वह परित्याग करना उचित नहीं। भारतवर्ष में एतत् काल में जो सब ऐतिहासिक बिवरण सत्य कह कर प्रसिद्ध है सो हिंदू ग्रन्थ में लिखित विवरण अपेक्षा अधिक असङ्गता वा परिच्छन्न नहीं। जो तदुभय एकत्रित रहने से भावि कालीन इतिवृत्त प्रणेता उसमें से अनेक उपकरण लाभ कर सकेंगे। इस कारण (मुसलमान सम्राज्य के आरम्भ से गजनगर राज्य संस्थापन पर्य्यन्त) भारतवर्ष मे अरब जाति के समागम का संक्षिप्त बिवरण इस अध्याय में सन्निविष्ट किया जायगा। परन्तु अरब समागम का सविस्तार बिवरण विशिष्ट कोई ग्रन्थ नहीं मिलता यह बडे शोच को बात है अलमकीन नामक ग्रन्थकार ने खलीफा गण के इतिवृत्त में भारतवर्ष का प्रायः उल्लेख नहीं किया है अबुलफजल के ग्रन्थ में अनेक विषय का सविशेष विवरण प्राप्त होता है और वह ग्रन्थ भी विश्वास के योग्य है। फरिश्ता ग्रन्थ में इस विषय का एक पृथक अध्याय है

परंतु उ का अनुवाद यथोचित मत से निष्पन्न नहीं हुआ है * अब पहिले बाप्पा के वंशीय राजगण का वृत्तान्त विवरित किया जाता है, पश्चात यथा-योग्य स्थान में मुसलमान गण का भारतवर्ष संक्रान्त इतिवृत्त प्रकाशित होगा।

गिह्लोट वंश की चतुर्विंशति शाखा। तन्मध्य अनेक शाखा बाप्पा से समुत्पन्न। चितौर अधिकार के पश्चात बाप्पा ने सौराष्ट्र देश में गमन कर के बन्दर द्वीप के यूसुफगुल ‡ नाम राजा की कन्या से विवाह किया। बन्दर

---

* टाड साहब ने फ़िरिश्ता के अनुवाद में जो सब विषय परित्याग किया है तन्मध्य में अफ़गान जाति की उत्पत्ति का विवरण अतीव प्रयोजनीय। मुसलमान गण के साथ हिजरी ६२ अब्द में जिस काल में अफ़गान जाति का प्रथम आगमन हुआ तब वे लोग सुलेमान पर्व्वत के निकटस्थ प्रदेश में वास करते थे। फ़िरिश्ता ने जिस ग्रन्थ के ऊपर निर्भर कर के अफ़गान का विवरण लिखा है वह यह है "अफ़गान लोग कायर जाति के लोग फिर उस उपाधिकारी राजगण के आधीन वास करते थे। उनलोगों में बहुतों ने मूसा को प्रतिष्ठित नूतन धर्म्म व्यवस्था अवलंबन किया था। जिन लोगों ने पूर्व्व की पौत्तलिकता त्याग नहीं किया वे लोग हिन्दुस्तान से भाग कर कोह—सुलेमान के निकटवर्त्ती देश में वास करते थे. सिन्धु देश से आगत बिनकासिम के साथ उन लोगों का समागम हुआ था। हिजरी १४३ अब्द में उन लोगों ने किरमान और पेशावर प्रदेश और तत् सीमा वर्त्ती समुदय स्थान अधिकार किया था।" कोहिस्थान का भूगोल वृतान्त, रोहिला शब्द की व्युतिपत्ति, और अन्यान्य प्रयोजनीय विषय टाड साहब ने स्वीय अनु-वाद में परित्याग किया है।

‡ कथित है, समुद्र में बन्दर द्वीप और स्थल में चोयाल नामक स्थान यूसफ़गुल राजा के अधिकार में था, यूसफगुल चौर वंशीय राजपूत, अनल पत्तन का संस्थापन कर्त्ता रेणु राज अनुमान होता है इसी यूसफगुल का वृत्तान्त कुमार पालचरित नामक ग्रन्थ में लिखा है, रेणुराज के पूर्व्व पुरु-ष बन्दर द्वीप के अधिपति थे। बन्दर द्वीप आज काल पोर्त्तगीस जाति के अधिकार में है। इसका आधुनिक नाम दिउ है। यह नाम पोर्त्तुगीय जान पड़ता है।

द्वीप निवासी व्यानमाता नामक एक देवी की उपासना करते थे। बाप्पा ने इस देवी की प्रतिमा और स्वीय वनिता के सह चितौर में प्रत्यागमन किया था। गिहलोट वंशीय अद्यावधि व्यानमाता की उपासना करते हैं। बाप्पा ने इस देवी को जिस मन्दिर में प्रतिष्ठित किया था, वह आज तक चितौर में विद्यमान हैं तद्भिन्न तत्रत्य अन्यान्य अनेक अट्टालिका बाप्पा कर्तृक विनिर्म्मित हैं यह भी प्रवाद प्रचलित है। यूसुफगुल के कन्या के गर्भ में बाप्पा को एक पुत्र जन्मा था, उस का नाम अपराजित। द्वारका नगरी के निकट वर्त्ती कालिवायी नगर के प्रमारा वंशीय जनैक राजा की कन्या से भी बाप्पा ने बिवाह किया था। उस रमणी के गर्भ में इस के पहिले बाप्पा को और एक आसिल नामक पुत्र जन्मा था, यद्दिच आसिल ज्येष्ठ तथापि अपराजित चितौर में जन्मे थे, इस कारण उन्हीं ने वहां का राज प्राप्त किया। आसिल सौराष्ट्र देश के किसी एक राज्य में राजा हुए थे ९ उनकी सन्तान परम्परा से वहां विपुल वंश विस्तार हुआ था। इस वंश को उपाधि आसिला गिहलोट है।

---

९ आसिला के नामानुसार एक किला का आसिला नाम रक्खा था, यह वंश पत्रिका से ज्ञात होता है। संग्रामदेव नामक जनैक राजा के निकट से कुंवायत [कांवे] नगर अधिकार करने के अभिलाष में आसिल के पुत्र विजयपाल समर में निहत हुए थे। विजय की इसी आकस्मिक मृत्यु घटना के पहिले तद गर्भस्थ पुत्र अकाल में भूमिष्ठ हुआ था, उस पुत्र का नाम सेतु टाड साहब कहते हैं अस्वभाविक मृत्यु प्राप्त व्यक्तिगण भूतयोनि प्राप्त होते हैं। हिंदूगण का यह संस्कार है और स्त्री भूत का हिंदुस्थानी नाम चुरइल, सेतुकी माता के अस्वाभाविक मृत्यु वशतः सेतु का वंश काचोराइल नाम से प्रसिद्ध हुआ। आसिल से द्वादशतम अधस्तन पुरुष बीजा गिरनार के राजा शृङ्गार देव के भांजे थे, और मातुल के निकट से इन्हीं ने सालन स्थान प्राप्त किया था। सुराट का राजा जयसिंह देव के साथ समर में बिजा निहत हुए थे। फिरिस्ता ग्रन्थ में जो देवी सालिमा वंश का उल्लेख है, अनुमान होता रहा है देवी और चोरइल, इन दो नाम के समता से तन्नाम की उत्पत्ति हुई है॥

पुरावृत्त-संग्रह

अर्थात्

इतिहास संबंधिबात ।
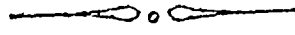
पुरावृत्त-संग्रह ।

[इस प्रबन्ध में प्राचीन पुस्तक तथा राजा बादशाह आदि के वृत्त और आरम्भ मे सर्कारी अमलदारी की दशा जो कुछ हाथ लगैगी प्रकाशित होगी]

॥ अकबर और औरंगजेब ॥

काशी में राजा पटनीमल्ल बहादुर अग्रवाल कुल के भूषण हो गए हैं। इन के उद्योग, अध्यवसाय, साहस धर्मनिष्ठा, गभीर गवेपणा, बुद्धि और अपूर्व-औदार्य सभी गुणप्रशंसा के योग्य हैं। कई बेर राज विप्लव में ऐसे लुट गए कि कुछ भी पास न रहा किन्तु अपने उद्योग से फिर करोड़ों की सम्पत्ति पैदा किया। गया काशी मथुरा वैतरणी किस तीर्थ में इन के बनाए मंदिर घाट तलाव आदि नहीं हैं। कर्मनाशा का पक्का पुल अद्यापि इन की अतुल कीर्ति का चिन्ह वर्त्तमान है। फारसी विद्या के ये पारङ्गत थे। काशीखण्ड का सम्पूर्ण फारसी में इन्हों ने स्वयं अनुवाद किया है। और भी कई ग्रन्थों को हिन्दी और फारसी में इन्हों ने अनुबाद कराया था। वेद स्मृति पुराण काव्य कोष आदि विपय मात्र की पुस्तकें इन्हों ने संग्रह की थीं। फारसी पुस्तकों के संग्रह की तो कोई वात ही नहीं। अंगरेजी यद्यपि स्वयं नहीं जानते थे किन्तु दस पंदरह हजार की पुस्तकें अंगरेजी भाषा की संग्रह की थी और सब के ऊपर फारसी मे उस का नाम विषय कवि मूल्य आदि का वृत्तांत उन के हाथ का लिखा हुआ था। उन का सरस्वती भंडार और औषधालय तीन लाख रुपये का समझा जाता था। किन्तु हाय! वह अमूल्य भंडार नष्ट हो गया। कीट दीमक छुईमुई चूहे आदि उन अमूल्य ग्रंथो को खा गए। उनके स्वकार्य निपुण छ पौत्र और अनेक प्रपौत्रों के होते भी यह अमूल्य संग्रह भस्मावशेष हो गया। मैंने दो बेर इस भंडार का दर्शन किया था। रुपये का चार आना तो पहली ही बेर देखा था दूसरी बेर एक आना मात्र बचा पाया। सो भी खंडित छिन्न भिन्न। उस पुण्य कीर्त्ति उदार मनुष्य की उदारता और अध्यवसाय और उस के संगृहीत वस्तु की यह दुर्दशा देख कर मेरी छाती फट गई। इस्कन्दरिया का पुस्तकालय मानो

अपनी आखों से जला हुआ देख लिया । अस्तु ! ईश्वर की यही गति है ! ! नाशान्ताः संचयः सर्वे !!!

उन के प्रपौत्र और अपने फुफेरे भाई राय प्रह्लाद दास से कह कर उस संग्रह की भस्मावशिष्ट हड्डियों में से मैं टूटे फूटे दस पांच ग्रंथ ले आया हूं। इन में कुछ सर्कारी पुराने छपे हुए कागज और कुछ खंडित पुस्तकै है । इस प्रबंध मे बहुत सी बात उन्ही सबों में से चुन कर लिखी जायगी इस हेतु उस सुगृहीतनामा महापुरुष का भी थोड़ा वृत्तांत लिखे बिना जी न माना ।

प्रकृति मनुसरामः

मैंने बादशाहदर्पण नामक अपने छोटे इतिहास मे अकबर और औरंगज़ेब की बुद्धि और स्वभाव का तारतम्य दिखलाया है। अब पूर्वोक्त राजा साहब की अंगरेजी किताबो मे सन् १७८२ से लेकर १८०२ तक के जो पुराने एशियाटिक रिसर्चेज के नम्बर मिले है उन मे जोधपुर के राजा जशवंत सिह का वह पत्र भी मिला है जो उन्हो ने औरंगज़ेब को लिखा था और श्री युक्त राजा शिवप्रसाद सी० एस० आई० ने भी अपने इतिहास में जिस का कुछ वर्णन किया है । तथा मेरे मित्र पंडित गणेश रामजी व्यास ने मुझको कुछ पुस्तकै प्राचीन दी है उन में महा कवि कालिदास के बनाए सेतुबन्ध काव्य की टीका मिली है जिस मे कुछ अकबर का वर्णन है । इन दोनो को हम यहां प्रकाश करते जिस से पूर्वोक्त दोनों बादशाहो का स्पष्ट चित्त और विचार Policy प्रकट हो जायगी।

यह टीका राजा रामदास कछवाहे की बनाई है । अपना वंश उस ने यों लिखा है । कुलदेव को क्षेमराज उन के पुत्र माणिक्यराय फिर क्रम से मोकलराय धीरराय, नापाराय, (उन के पौत्र) पातलराय, खानाराय, चन्दाराय और उदयराज हुए । उन्ही उदयराज का पुत्र रामदास हुआ जो सर्व भाव से अकबर का सेवक है । अकबर के विषय मे वह लिखता है ।

श्लोक ।

आमेरोरासमुद्रादवति वसुमतीं यः प्रतापेन तावत्, ।
दूरं गाःपाति स्वतोरपि करमसुचत्तीर्थवाणिज्य वृत्तोः ।
अप्यश्रौषीत् पुराणं जपति च दिनकृन्नाम योगं विधत्ते ।

गङ्गाम्भोभिन्नमम्भो न च पिबति जयत्येषजल्लालुद्दीन्द्रः ॥ ३ ॥
अङ्ग-वङ्ग-कलिङ्ग-सिलिहट्ट-तिपुरा-कामता-कामरूपा
नान्ध्रं कर्णाट-लाट-द्राविड़-मरहट्ट-द्वारका-चोल-पाण्ड्यान् ।
भोटान्नं मारुवारोत्कलमलयखुरासानखान्धारजाम्बू ॥
काशी-काश्मीर ढक्का बलक-बदखशा-काबिलान् यः प्रशास्ति ४
कलियुगमहिमाऽपचीयमानश्रुतिसुरभिद्विजधर्मरक्षणाच ।
धृतसगुणतनुं तमप्रमेयं पुरुषमकब्बरशाहमानतोऽस्मि ॥५॥

अर्थ----जो समुद्र से मेरू तक पृथ्वी को पालता है, जो मृत्यु से गउओं की रक्षा करता है, जिसने तीर्थ और ब्यापार के कर छुड़ा दिए, जिसने पुराण सुने जो सूर्य का नाम जपता, जो योग्य धारण करता है और और गंगा जल छोड़ कर और पानी नहीं पीता उस जलालुद्दीन की जय ॥ ३ ॥

अंग वंग कलिंग सिलहट तिपुरा कामता (कामटी ?) कामरूप, अंध कर्णाटक लाट द्रविड़ महाराष्ट्र द्वारका चोल पांड्य भोट मारवाड़ उड़ीसा मलय खुरासान कंदहार जम्बू काशी ढाका बलख बदखशा और काबुल को जो शासन करता है ॥ ४ ॥

कलियुग की महिमा से घटते हुए वेद गऊ द्विज और धर्म की रक्षा को सगुन शरीर जिसने धारण किया है उस अप्रमेय पुरुष अक़बर शाह को हम नमस्कार करते हैं ॥ ५ ॥

पाठक गण ! अकबर की महिमा सुनी, यह किसी भाट की बनाई नहीं है एक कट्टर कछवाहे क्षत्रिय महाराज की वर्नाई है इसी से इस पर कौन न विश्वास करैगा । उसने गोबध बंद कर दिया था यह कवि परम्परा द्वारा तो श्रुत था अब प्रमाण भी मिल गया । हिन्दू शास्त्रों को वह सुना करता था । यह तो और इतिहासों में लिखा है कि वह आदित्यवार को पवित्र समझता है। देखिए उस के इस कार्य से गायत्री के देवता सूर्य के आदर से हिन्दूमात्र उस से कैसे प्रसन्न हुए होंगे । मैं समझता हूं कि उस समय सूर्यवंशी राजा बहुत थे और सूर्य को यह सम्मान दिखा कर अकबर ने सहज उन लोगों का चित्त वश कर लिया था । योग साधने से हिन्दुओं की प्रसन्नता और शरीर की रक्षा दोनों काम हुए।

बिशेष यह बात जानी गई कि वह गंगा जल छोड़ कर और पानी नहीं पीत था । यह उसकी सब क्रिया हिंदुओं के बश करने को एक महामोहनास्त्र थीं । इसी से उस को परमेश्वर का अवतार तक कहने में हिंदुओं ने संकोच न किया। उस को लोग जगद्गुरु पुकारते थे यह आगे वाले महाराज जसवन्त सिंह के से प्रकट होगा । इस के विरुद्ध औरंगज़ेब से हिंदुओं का जी कैसा दुःखी था उस समय राज्य की भी कैसी अवनति थी यह भी इस पत्र ही से प्रकट हो जा यगा हम विशेष क्या लिखैं ।

विदित हो कि इस पत्र के लेखक महाराज जसवन्त सिंह जोधपुर के महारा गज सिंह के द्वितीय पुत्र थे । सन् १६३८ में गज सिंह युद्ध में मारे गए अपने बड़े पुत्र अमर सिंह को अति क्रूर और प्रजापीडक समझ कर गज सिं ने त्याग कर दिया । यही अमर सिंह फिर शाहजहान के दर्बार में रहा और व भी अपनी उद्धतता से एक दिन काम पर हाजिर नहीं हुआ । इस पर शाह ने उस पर जुर्माना किया । जुर्माना अदा करने को सलाबत खां खजानची भेजा । उस का भी अमर सिंह ने निरादर किया। इस पर बादशाह ने उस दरबार में बुला भेजा । यह अति क्रोधावेश में एक कटार लिए हुए दर्बार निर्भय चला गया । बादशाह को क्रोधित देख कर रोषानल और भी भड़का पहले सलावत का प्राण संहार किया फिर वही शस्त्र बादशाह पर चलाया खम्भे में लग कर कटार गिर पड़ी किंतु उस आघात में बल इतना था कि ख का दो अंगुल पत्थर टूट गया* दरबार में चारों ओर हाहाकार हो गया । पांच ब बड़े मोगल सर्दारों को अमर ने और मारा अंत में उस को उसका साला अर्जु गोरा (बूंदी का राजकुमार) पकड़ने चला तो उस से भी लड़ा और उसी तलवार से गिरा भी । अब तक तख्त पर लहू की छींट और टूटा हुआ खम् उस के इस बीर दर्प का चिन्ह आगरे के क़िले में बिद्यमान है । लाल क़िले दरवाजा जिस से अमरसिंह आया था बुखारा दरवाज़ा कहलाता था उस दि

---

*आनि के सलावत खां जोर कै जनाई बात तोरि धर पंजर करेजे जाय करकी दिल्ली पति नाह के चलन चलबे को भए गाज्यो राज सिंह को सुनी है बात बर की कहै बनवारी बादशाह के तखत पास फरकि फरकि लोथ लोथन सी अरकी हिन्दुन की हद्द सह राखी तैं अमर सिंह करकी बड़ाई कै बड़ाई जमधर की

से अमर फाटक कहलाता है। उस के सरदार चंपावत गोती और कंपावत गोती भी दरबार मे अपनी निज सैन्य लेकर घुस आए और बहुत से मुगलो को मारकर मारे गए। अमर सिह की स्त्री बूंदी की राज कुमारी पति का देह लेने को उनी हल्ले में अपने योद्धाओं को लिये किले मे चली आई और देह ले गई और डेरे मे जा कर सती हो गई। इस घटना के वर्णन मे राजपुता मे कई ग्रन्थ ख्याल आदि बने है और अब तक इस लीला को नट सुथरेसाही जोगी भवैये गवैये गाया करते है।

अथ पत्र।

" सब प्रकार की स्तुति सर्व शक्तिमान जगदीश्वर को उचित है और आप की महिमा भी स्तुति करने के योग्य है जो चन्द्र और सूर्य की भाति चमकती है। यद्यपि मैंने आज कल अपने को आप के हाथ से अलग कर लिया है किन्तु आप की जो सेवा हो उस को मै सदा चित्त से करने को उद्यत हू मेरी सदा इच्छा रहती है कि हिन्दुस्तान के बादशाह रईस मिर्जा राजे और राय लोग तथा ईरान तूरान रूम और शाम के सरदार लों और सातो बादशाहत के निवासी और वे सब यात्री जो जल या थल के मार्ग से यात्रा करते है मेरी सेवा से उपकार लाभ करें।

यह इच्छा मेरी ऐसी उत्तम है कि जिस मे आप कोई दोष नही देख सकते। मैंने पूर्व काल मे जो कुछ आप की सेवा की है उसपर ध्यान कर के मुझ को अति उचित जान पड़ता है कि मै नीचे लिखी हुई बातो पर आप का ध्यान दिलाऊं जिसमे राजा और प्रजा दोनो की भलाई है। मुझको यह समाचार मिला है कि आपने मुझ सुभचिन्तक के बिरुद्ध एक सैना नियत की है और मैंने यह भी सुना है कि ऐसी सैनाओ के नियत होने से आपका खजाना जो खाली हो गया है उसको पूरा करने को आपने नाना प्रकार के कर भी लगाए है।

आप के परदादा महम्मद जलालउद्दीन अकबर ने जिनका सिहासन अब स्वर्ग में इस बड़े राज्य को ५२ बरस तक ऐसी सावधानी और उत्तमता से चलाया कि सब जाति के लोगो ने उस्से सुख और आनंन्द उठाया। क्या ईसाई क्या मसाई क्या दाऊदी क्या मुसल्मान क्या ब्राह्मण क्या नास्तिक सबने उनके राज्य म समान भाग से राजा का न्याय और राज्य का सुख भोग किया। और यही कारण है कि सब लोगो ने एक मुह होकर उन को जगत गुरु की पदवी दिया था।

शहनशाह मुहम्मदनूरुद्दिन जहांगीर ने जो अब नन्दन बन में बिहार करते हैं उसी प्रकार २२ बरस राज्य किया और अपनी रक्षा की छाया से सब प्रजा को शीतल रक्खा । और अपने आश्रित या सीमास्थित राज वर्ग को भी प्रसन्न रक्खा और अपने बाहु बल से शत्रुओं का दमन किया ।

वैसे हीं परम प्रतापी शाहजहां ने बत्तीस बरस राज्य करके अपना शुभ नाम अपने गुनो से विख्यात किया ।

आप के पूर्व पुरुषों की यह कीर्ति है । उनके विचार ऐसे उदार और महत थे कि जहां उनोन चरन रक्खा विजय लक्ष्मी को हाथ जोड़े अपने सामने पाया और बहुत से देस और द्रव्य को अपने अधिकार में किया । किन्तु आप के राज्य मे वे देश अब अधिकार से बाहर होते जाते हैं और जो लक्षण दिखलाई पड़ते हैं उससे निश्चय होता है कि दिन दिन राज्य का क्षय ही होगा । आप की प्रजा अति दुःखी है और सब देश दुर्बल पड़ गये हैं । चारो ओर से बस्तियों के उजड़ जाने की और अनेक प्रकार की दुःख ही की बातें सुनने में आती हैं । जब बादशाह और शहजादों के देश की यह दशा है तब और रईसों की कौन कहै । शूरता तो केवल जिह्वा में आरही है । ब्यापारी लोग चारो ओर रोते हैं । मुसलमान अव्यवस्थित हो रहे हैं । हिन्द महा दुःखी हैं यहां तक कि प्रजा को संध्या को खाने को भी नहीं मिलता और दिन को सब मारे दुःख के अपना सिर पीटा करते हैं ।

ऐसे बादशाह का राज्य कै दिन स्थिर रह सकता है जिसने भारी कर अपने प्रजा की ऐसी दुर्दशा कर डाली है । पूरब से पच्छिम तक सब लोग य कहते हैं कि हिन्दुस्तान का बादशाह हिन्दुओं का ऐसा द्वेषी है कि वह ब्राह्म सेवड़ा योगी वैरागी और सन्यासी पर भी कर लगाता है और अपने उत्तम तै मूरी वंश को इन धन हीन उदासीन लोगों को दुःख देकर कलंकित करता है अगर आपको उस किताब पर विश्वास है जिसको आप ईश्वर का वाक्य कह हैं तो उसमें देखिए कि ईश्वर को मनुष्य मात्र का स्वामी लिखा है केवल मुसल्म का नहीं । उसके सामने गबर और मुसल्मान दोनो समान हैं । नानारंग के नुष्य उसी ने अपने इच्छा से उत्पन्न किये हैं । आपके मसजिदों में उस का ना लेकर चिल्लाते हैं और हिन्दुओं के यहां देव मन्दिरों में घंटा बजाते हैं किन सब उसीको स्मरण करते हैं । इससे किसी जात को दुःख देना परमेश्वर

अप्रसन्न करना है । हमलोग जब कोइ चित्र देखते हैं उसके चितेरे को स्मरण करते हैं और कवि की उक्ति के अनुसार जब कोई फूल सूंघते हैं उसके बनानेवाले को ध्यान करते हैं ।

सिद्धान्त यह कि हिन्दुओंपर जो आपने कर लगाना चाहा है वह न्याय के परम विरुद्ध है । राज्य के प्रबन्ध को नाश करनेवाला है और बल को शिथिल करने वाला है तथा हिन्दुस्तान के नीत रीत के अति विरुद्ध है । यदि आपको अपने मत का ऐसा आग्रह हो कि आप इस बात से बाज न आवैं तो पहिले राम सिंह से जो हिन्दुओं में मुख्य है यह कर लीजिए और फिर अपने इस शुभ चिन्तक को बुलाइए किन्तु यों प्रजा पीड़न वा रण भङ्ग बीर धर्म्म और उदारचित्त के विरुद्ध है । बड़े आश्चर्य की बात है कि आपके मंत्रियो में आपको ऐसे हानिकर विषय में कोई उत्तम मन्त्र नहीं दिया । ”

महात्मा कर्नैल टाड साहब लिखते हैं कि यह पत्र महाराज जसवंत सिंह ने नहीं लिखा था महाराणा राज सिंह ने लिखा था ।

यह प्रसिद्ध दानी कन्नौज के राजा गोबिन्दचन्द के अन्यतर दान पत्र की प्रति है। यह राजा बड़ा ही दानी था।

ताम्रपत्र ।

स्वस्ति । अकुंठोत्कुण्ठवैकुंठ ाठपीठलुठत्करः । संरम्भः सुरतारंभे सश्रियःश्रेयसेऽस्तुवः ॥ १ ॥ आसीदशीतद्युति वंशजातक्ष्मापालमालासुदिवंगतासु । साक्षाद्विवस्वानिवभूरिधाम्ना नाम्ना यशोविग्रहइत्युदारः ॥ २ ॥ तत्सुतोभून्महीचंद्रश्चन्द्रधामनिभंनिजं । येनायारमकूपार पारेव्यापारितयशः ॥ ३ ॥ तस्याऽभूत्तनयोनयैकरसिकः क्रांतद्विपन्मंडलो विध्वस्तोद्धुतवीरयोध विजितः श्रीचन्द्रदेवोनृपः । येनोदारतरप्रतापशमिताशेषप्रजोपद्रवं । श्रीमङ्गाधिपुराधिराज्यसममं दोर्विक्रमेनोर्जितं ॥४॥ तीर्थाणि काशिकुशिकोत्तरकोसलेन्द्रस्थानीयकानि परिपायताभिगम्य ॥ हेमात्मतुल्यमनिशंददता द्विजेभ्यो येनांकिता वसुमती शतशस्तुलाभिः ॥ ५ ॥ तस्यात्मजोमदनपालइतिक्षितीद्रचूड़ामणिर्विजययेनिजगोत्रचंद्रः । यस्याभिषेककलशोल्लसितैःपयोभिः प्रक्षालितंकालिरजःपटलंधरित्रयाः ॥ ६ ॥ यस्यासी द्विजयःप्रयाणसमये तुंगाचलौच्चश्चलन्माद्यत्कुंभिपदक्रमात्समसरत्त्रंत्रस्यन्ममहीमंडले । चूड़ारत्न विभिन्नतालुगलितस्था-

ना टगुद्धासितः शेप'पेशवशादित क्षणममौक्रोडेनिलीनानन' ।। ७ ।। तस्मादजायत निजायत वाहुवह्लिवध्धावरुध्धनवरराष्ट्र गजोनरेद्रः । सांद्रामृतद्रवसुधा प्रभवी गवां यो गोविंदचंद्रदाति चद्रइवाबुराशेः ।। ८ ।। नकथमप्यलभन्तरण'नमां स्तिस्टपुढिक्षुगजानथतक्षिण । वाकुभिबभ्रमुरभ्रमुवल्लभ प्रतिभटा'न्वयरयघटागजाः ।।८।।

सोयं समस्तराजचक्रसंसेवितचरणः परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परममाहेश्वर निज भुजोपार्जित श्रीकान्यकुब्जाधिपत्य श्रीचंद्रदेवपादानुध्यात परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परम माहेश्वर श्री मदनपाल देव पदानुध्यात परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परम माहेश्वराश्वपति गजपति नरपति राजत्रया वेपति विविध विद्याविचारवाचस्पति श्रीमद्गोविन्दचं देवो विजयी खरकापत्तलायां मधुवाग्राम निवासिनो निखिलजन पदानुपगतानापि राजाराज्ञी युवराज मन्त्रिपुराहित प्रतीहार सेनापति भांडागारिकाऽक्षपट लिकभिषग्नि मित्तिकान्तःपुरिकदूत करितुरगपत् तनाकरस्थानाऽऽगोकुलाधिकारि पुरुषान्समाज्ञापयति बोधयत्यादिशातिच यथा विदितमस्तुभ्वतां यथोपरिलिखितग्रामः सजलस्थलः सलोहलवणाकरः समत्स्यकारः सगर्तोखरः समधूकाम्रवनबाटिका विटपतृणप्रतिगोचरपर्यन्तश्रतुरावाटशुद्धस्वसीमापर्यन्त' सोद्गाध' संवत् ११९९ माघ वदि ९ सोमदिने प्रयागे वेण्या स्नात्वा विधिवन्मंत्राद्देव मुनिमनुजभूत पितृणां स्तर्पयित्वा तिमिर पटल पाटन पटुसहस्रमुग्णरोचिषमुपस्थायौगाधिपतिसकलसत्तमंस मभ्यर्च्य त्रिभुवनत्रातवामुदेवस्य पूजां विधायप्रचुरपायसेनहविषा हविर्भुजंहुत्वा मातापित्रो रात्मनश्च पुण्ययशोभिवृद्धये कौशिकगोत्राय कौशिकावदल्य विश्वामित्र देवरातात्रिप्रवराय पंडित श्रीकैकप्रपौत्राय पंडित श्रीनहादि पौत्राय पंडितश्रीसाक्षतपुत्रायपंडित श्री विद्याकचसंभाराय ब्राह्मणाय अस्मा भिर्गोक 'कुशलतापूतकरतलोदकपूर्वमाचंद्रार्कं यावदाशासनी कृत्यप्रदत्तोमत्तारायदीयमानभा भोग कर प्रवणिकर प्रभृति समस्तादायानांविधियाम्रयदास्यन्निति भवन्तिचात्र । श्लोकाः ।

भूमिय'प्रातगृह्णाति यश्चभूमिप्रयच्छति । उभौ तौपुण्यकर्माणौ नियतंस्वर्ग- ।। शंखभद्रासनछत्र वराश्वावरवारणाः । भूमिदानस्य चिह्नानि फलमेतत्- ।। सर्वानेतान्भाविनःपार्थिवेंद्रान्भूयोभूयो याचतेरामभद्रः । सामान्योयंधर्मसेतुर्नृपाणा कालेकालेपालनीयोभवद्भिः ।। बहुभिर्वसुधाभुक्ता राजभिःसगरादिभिः ।। यस्ययस्ययदा भूमि स्तस्यतस्यतदाफलं । स्थलमेकग्रा कं भूमेरप्येकमगुलं । हरन्नरकमाप्नोति यावदाभूतसप्लवं । ठक्कुर श्री वाल्किेन लिखित मिदम् ।

काशी क्वीन्स कालिज (Queen's College Benares) के फाटक पर यह लेख है—

तालुकादार दाउदपुर के राय पृथ्वीपाल सिंहं ने
अपने कीर्त्ति के लिये दोद्वार रचवाये

१

रामदास बाबू सुघर वैश्यवंश औतार ।
हर्षचन्द्र तिन के तनय रचवाये दुइद्वार ॥

२

राजा पटनीमल्ल के पुत्र नारायण दास ।
रचवावे दुइद्वार यह अचल कीर्त्ति की आस ॥

३

श्री देवकीनन्दन सूनुरासीघो जनकी पूर्वपद प्रसाद ।
तदङ्गजो द्वारमिदं द्रव्य धत राम प्रसन्नोपमहीसरीये ॥

४

श्री सत् बाबू देवकीनन्दन पोत्र उदार ।
बाबू राम प्रसन्नो सिंह रचवाये यह द्वार ॥ संवत १८०७ ॥

५

श्री बाबू भगवानदास बड़े दानि विदित,
सुजापुर बिच धाम तिन रचवाए द्वार दुइ ॥

६

सुनय जानकिदास के श्री बिश्वेश्वरदास ।
रचवाए दुइ दुवार बर मुक्ति सुजस की आस ॥

७

राजा दर्शन सिंह के सुत कुल अति उजियार ।
राजा रघुबरदयाल जस चाहि किन दुइ दुयार ॥

८

इण्डियन म्यूज़ियम (Indian Musium) में एक पत्थर के मुंडेरे के एक टुकड़े पर नीचे की ओर निम्न लिखित लेख लिखा है । वह पत्थर अशोक के

चार दिवाली का है परंतु यह लेख सन् ईसवी दो सौ बरस पहले का नहीं हो सकता। यह गुप्ताक्षर में पुराचीन रीति से लिखा है—

दीपठंका कता येषां दान × × मग्रमनिनाचार्य्य।

अशोक के चार दिवाली के मुंडेरे के पत्थर पर निचली ओर निम्न लिखित लेख लिखा है। यह दो लाइन (पंक्ति) में है और प्रतेयक लाइन ६ फिट लंबा है।

। कारितो यन्त्रवज्रासन बृहद्गन्धकुटी प्रं साद्मर्द्दलिकोभ्यां
भस्मतैर्म्मधुलेपकस्थपुन लटिकः गिक्त रेद्गतुट
साद्न्याक्र्ं तारकं भगवते बुद्धाय × × रद्दानेन
घृतप्रदीपः × रारिध दिए प्रती समधने
रद्नो मायां च प्रद्हं घृतप्रदीपैः गुणे शतद्दानेनापरेण
कारितः विहारेपि भगवते रैत्यपद्ध

२ । घृग्रटां पात्तय नः धिकरो धमशत तं दं
वं ग प्रदेश च च नं पं × × ×
× प × मनोन् माधुरं लातीतं तद्मं सव्वं चा प्रहतत
× जलुमत्यादितं तदेतत् सर्व्वं यन्मया बुद्धो प्रचेतमभारंत

मेजर (Major Mead) ने बोध गया के बड़े मंदिर की एक कोठरी से एक मूर्ती निकाली थी उस के पांव के समीप निम्न लिखित लिपि थी—

इदमनितरचित्रं सर्व्वसत्वानुकम्पिने।
भवनवरसद्दारजितमाराय पतये॥
सु (शु) द्धात्मा कारयामास बोधिमार्गरतोयतिः।
बोधि षे (से) णो (नो) तिविख्यातो दत्तगल्लनिवासकः॥
भवबन्धविमु ार्थं पित्रोर्बन्धुजनस्य च।
तथोपाध्यायपूर्वाणामाहवाग्रनिवासिनां॥ ली॥

ए० ग्रोट साहिब (A. Grote Esqr.) प्रेसिडेन्ट बंगाल एशियाटिक सोसाइटी ने निम्न लिखित लिपि, जो एक सांढ (नंदी) की मूर्ति के पीठ पर लिखो हुई है, एशियाटिक सोसाइटी में भेज दी थी। यह लेख कुटिलाचर (Kutila Character) में लिखा हुआ है। भीमकडल्ला के पुत्र श्री सुफंदी भट्टारक ने यह मूर्ति संवत् ७८१ में संतति के लिये चढायी थी।

ए सम्ब ७८१ वैशाख बदि ८ वदध्य ग्रासव × × × त्तम भिमक डल्लासुते श्री सुफन्दिभट्टारक ग (?) ग्र (?) त्त सतया × × । त्मनापत्यहेतो: वृषभट्टारकप्रतिष्ठितेति।

जनरल कनिंगहम (General Cunningham] ने बोध गया के मंदिर के फाटक के चर के नीचे एक पत्थर देखा था जिस पर निम्न लिखित लिपि खुदी हुई है। यह लेख २० लाइन में है और कुटिलाचर में लिखा हुआ है।

(१) नमोबुद्धाय ॥ आसीद्दृप्तनरेन्द्रहेन्दविजयी श्रीराष्ट्रकूटान्वयो श्रीमान्नन्ट इति त्रिलोकविदितस्तेजस्विनामग्रणी: सत्येन प्रयतेन शौचविधिना श्लाघ्येन विख्यापितस्त्यागै: कस्य सहं ह्व: प्रणयिषु प्राज्ञो नरेन्द्रात्मज: ॥

(२) यो मत्तमातङ्गमभिद्रवन्तन्नरेन्द्रवीथ्यांऽतुरगेन्द्रगामी। कशाभिघातेन विजित्य वीर: प्रख्यातवान्हस्तितलप्रहार: ॥

(३) दुर्गं दुर्जयमूर्जितक्षितिभुजामत्युत्तमैर्विक्रमै: श्रीमद्दास कृपाणपुण्यविभवैरुच्चैर्विजिग्ये च य:। येनाद्यापि नरेन्द्रसंसदि सदा सम्भूतरोमोद्गमैर्व्वर्णाज्जैर्मणिपूरदुर्गधवल: संवर्ण्यते सूरिभि: ॥

(४) य: शौर्यातिशयादनल्पमहशात्ख्यातो महीभ्रद्रक: (?) सन्मार्गेण गुणावलोक इति च श्लाघ्यामभिख्यान्दधौ । गेयैर्बुद्धगुणाह्वयैरभिनवस्वाक्तर्व्विशोषोद्गतैर्यश्चान्ते तनुसुत्ससर्ज्ज विधिरद्योगीव तीर्थाश्रय: ॥

(५) तस्याभि सूनुर्विजितारिवर्गः प्रतापसंतापितदिग्-विभागः। प्रहर्षितार्थिव्रजपद्मषण्डः पूषेव पादाश्रितसर्व्वलोकः॥

(६) धर्म्मार्थकामेषु गृहीतसारः श्रिया सदाराधितपाद-पद्मः। अरातिमातङ्गकुलैकसिंहस्त्रिलोकविख्यातयशः पताकः॥

(७) कोपि यमः कल्पतरुः प्रसादे प्रयोगमार्गप्रणयी कला-नां। अगण्यविक्रान्तविलासभूमिः प्रभूतसद्वर्णशशाङ्ककीर्त्तिः॥ रूपोदयैरर्पितचित्तयोनिर्मतङ्गजारोहणलब्धशब्दः। तुरङ्गमा-ध्यासनकौशलाप्तः प्रभासते राजसु कीर्त्तिराजः।

(८) तस्यात्मजः शुभशतोदितपुण्यमूर्त्तिः साक्षान्मनोभव इव प्रयतात्मभावः। दृप्तद्विषद्विपिनवन्हिरुदीर्णदीप्तिरस्तीह तुङ्ग इतिसान्वयनामधेयः॥

(९) कामिनीवदनपङ्कजतिग्मभानुर्विद्वन्मनः कुमुदकानन-कान्तरश्मिः। शास्त्रप्रयोगकुशलः कुशलानुवर्त्ती धर्म्मावलोक-इति च प्रथितः पृथिव्याम्॥

(१०) शैलेन्द्रस्य हिमूर्त्तीननवरतगलद्दानमत्तद्विरेफश्रेणी-सङ्कीर्णनादप्रतिगजविजयोद्गारिभेरीविरावान्। दृष्ट्वा यो दन्तिशास्त्रेषु गुरुरिव गुरुः प्रो गु × × × × लोलः कालज्ञः पुण्यपूतः कलयति मृगवद्दन्यकान्वारणेन्द्रान्॥

(११) येनागाधतया जितो जलनिधिः शान्त्या मुनिस्ते जसा भानुः कान्ततया शशी मृगपतिः शौर्य्येण नीत्या गुरुः। कर्णस्त्यागितया विलासविधिना दैत्यद्विषामीश्वरः वाचालापितया यथार्थपदया नैवास्ति यस्योपमा॥

(१२) धत्ते यः श्रीनिधानं हतकलिचलितं धर्म्ममामूल-

उच्चैस्तुङ्गैः स्वर्गमार्गप्रणयिभिरतुलैः कीर्त्तनैः शुद्धकीर्त्तिः कुर्वंतसेवास्मिन्द्रामनुदिनममलैरन्नपानैर्यतीनां शिष्टैस्सत्कारयत्नैर्भव इव चलितं रावणेनाचलेन्द्रम् ॥

(१३) तेन प्रसन्नमनसा जितमारशत्रोरुत्तीर्णजन्मजलधेरस्य × × भवैकवन्धोः। श्रीमहिशुद्धगुणरत्न—विप्रेन्द्रचरितपादसरोजरेणोः ॥

(१४) मोहान्धकारनिधनोद्गतभास्करस्य संग्रामरेणुशमनैकघनाघनस्य। द्वेषोरगोद्धरणकर्म्मणि तार्क्ष्यस्य गिरिदारणवज्रधाम्नः ॥

(१५) स्फुर्ज्जत्प्रवादिकरियूथमृगाधिपस्य नैरात्म्यसिंहनिनदप्रविभावितस्य। धर्म्माभिषेकपरिपूतजगत्त्रयस्य—गुणरत्नमहार्णवस्य ॥

(१६) निर्म्मापिता गन्धकुटीयमुच्चैः सोपानमालेव दिवो दिदेश। गृहं तसारेण धनोदयानामनित्यताभावितमा—॥

(१७) तरामर्शविचक्षणेन शरत्प्रसन्नेन्दुमनोहरेण। सदानभिज्ञेन गुणाभिरामैरावर्जिताजय्यसमागमेन ॥

(१८) मुनिरिह गुणरत्न—प्रजानामभयपथविदर्शी सन्निधत्तां सदैव। विदधदभिमतानां सिद्धिमभ्युन्नतीनामनयविमुखबुद्धेर्दायकस्यास्य भूयः ॥ त देवराज सम्वत् १५ श्रावणदिनपञ्चम्यां। सिंहलद्वीपजन्मना पण्डितरत्नश्रीज्ञानभिक्षुणा

एक मूर्त्ति पर बोध गया में यह लेख लिखा है। यह दो पंक्ति में है जो प्रत्येक ६ फिट लंबी है। पूर्णभद्र सुमंतस के पुत्र ने इस [मूर्ति] को बनवाया था। इस से उस का और उस के वंश का कुछ हृत्तांत मालूम होता है।

१। वावस्तस्यैव स्वसङ्कृत: सङ्ग: ।—

२। सिध्धा, पर: श्रीभान् तस्य सुत: श्रीधर्म्म: ।—

३। थ्र्थिय जगती कृत्तिक प्रतापसेग्रतां यात: ॥ तेनयश:

१। सिर्म्मौ द्वाट × गजो गजभूमज :—

नरवर सिद्ध ग

२। नुसपुरन्धी सदुद्दयकाश × पुन: पूत: श्री

दुर्गन्नयसेन: कुमा कु

तर सयू शुभ स्वोधिकासुकृत ग

१। ये धर्म्मा हेतुप्रभवा हेतुस्तेषां तथागत: ह्यवद्त् तेषा-

ञ्चयो निरोध स्वंवादी महा—

२। श्रमण: ।

३। श्रीसामन्तस्तदात्मजस्तस्य । श्रीपुनुभद्रनामा प्रतापेन

चन्द्रम: कीर्त्ति: । द्राच

१। सु × यिष्ठो × × श्रीमान्

२। सैनोसन द्योत: । श्रीमति उद्दण्डपूरे येन

३। तिलरत्नकता × सिंव चन्द्रलमहत: सुधिय: ॥

महाबोधी मंदिर के समीप एक पत्थर के टुकड़े पर खोदी हु निम्न लिखित लिपि डवल्यू हाथोर्न (W. Hawthorne Esqr.) ने पायी थी, उस पत्थर को बचनन हमिलटन (Mr. Buchanan Hamilton) ने ईस्ट इंडिया कंपनी के म्यूजियम (Musium) में रख दिया था।

नमोबुद्धाय संकल्योयं प्रवरमहावीरस्वामिन: परमोपास-कस्य देवश्चरणारविन्दमकरन्दमधुकरद्दलकारभूपालवेश्मो त्पन्नाऽक्षलन्दपति गुरूह नारायण रिपुराज मत्तगज सिंहलि रिवन महीपाल जनकेत्यादिनिजनिरखेल प्रशस्ति समलंकृतं

नपादृत्तस्य शिखरिख समेथ राज्ञाधिराज श्रीमदशोकचन्द्रदे- वकनिष्ठभ्रातश्रीदशरथनामधेयकुमारपादपद्मोपजीवि आरादा- गारिक सत्यव्रतपरायणाविनिवर्त्तनीयबोधिसत्वचरितस्याब्धि- स्वजुलद्वीप श्रीसहस्रपात् नामधेयस्य सहातक श्रीचाट ब्रह्म- सुतस्य महामहाल्लक श्रीऋषिब्रह्मपौत्रस्य यदत्रपुरायं तद्व भट्टाचार्य्योपाऽध्याय मातापि— शर्वाङ्ग सङ्कृता सकल पुण्यरा- शिरनन्तविज्ञानफलावाप्तव इति श्रीमल्लच्चणसेनदेवपादाना- मतीतराज्ये सं० ७८ वैशाख वदि १२ गुरौ ।

बोध गया के बड़े मंदिर के बारहदरी के सामने एक छोटे मंदिर में एक संगमरमरके तख़्ते पर तीन लिपि खोदी हुई है। यह तख़्ता कुछ नीले रंग का चार फिट लंबा और दो फिट तीन इंच चौड़ा है। इस के आगे की ओर दो लिपि है, पहली अपभ्रंश पाली भाषा में और दूसरी ब्रह्मा देश की भाषा मे है। और तख़्ते की पिछली ओर ३० पंक्ति ब्रह्मा देश की भाषा में है परंतु यह संस्कृत नहीं है। इन में से केवल पाली लिपी को यहां नागरी अच्चर में प्रकाश किया —

१। नमस्तस्मै भगवते अरहते सम्यक् सम्बुद्धाय ॥ श्री तु ॥ बोधिमूले जिनाः सर्व्वे सर्व्वंजुतो तथा अयं। जयतं धर्म्मंगतापि बोधिप्रसादेन सा। पथ्यावर्त्तश्लोक। अयं महाधर्म्मराजा अनेकशेनिभप्रतिच्छद्दन्तगजराजस्वामि अनेकशतानं आदित्यकुलसम्मतानं। पौतुपौतामहश्र- ष्यकपाय्यकादिमहाधर्म्मराजनं सम्यकदि

२। ष्ठिकानं धर्म्मिकानं प्रवरराजवंशानुक्रमेण असमृमित- चेत्रियवंशजो। सम्ध्याशीलाद्यनेकगुनाधिवासो। दान- रागेण सन्तोषमानसो। धर्म्मिको धर्म्मगुरुधर्म्मकेतु- धर्म्मध्वजो। बुद्धादिरतनत्रये सततं समितं निम्नपोण

प × रहूद्यो । नानाविधानि । शारिरिक, परिभोग उद्देश्यक चैत्यानि नानाप्रकारेण नन्दति माने

३ । ति पूजेति संस्करोति । मारजयनक्लेशविध्वंसनसर्व्वधर्म्मविघातनवीरभूतं महाबोधिम्बि । अभिप्रसादेन पुनप्पुनं मनसि × × × × । संसति परिवन्दति कालेरारम्भने गन्त्य । सप्तपञ्चह्विके गते । वधूरतवभूवर्व्वं ? । धर्म्मविहगे नसारवन्ध: । पुराकपित्त व × × ॥ माया देव्यो सुद्धो दनी । निचमित्वा × स्तनूलि अनु × अ × ।

४ । तं पदं तेन सुदेसिनो धर्म्मो संघो चारस्यानुशासितो । दिश्यते टानिलोक । मू बोधिलस्य न दिश्यते । इति हि पूराणतन्त्रागतानुरूपं । अयं महाधर्म्मरागमनसि करोनो विमसन्तो । परिपृच्छन्तो पीतामहच्छद्दन्त गजराजस्वामि महाधर्म्मराजकाले । मध्यपदेरागतेहि वाणिरेहि बाह्मणेहि × णेहि च ।

५ । मगधराष्ट्रे । गयाशीषपदे च नद्यानेरञ्जनाग्रतीरे सुसमे भूमिभागे, वनप्रतिभूत्वा प्रतिष्ठितभावं । अर्धखण्डसाखाप्रमाणेन हस्तशतविस्ताराद्ये धर्म्मभावं, × काटी पाति हराय्ये गृहणाक । लेयय, षिद्धानं दक्षिण महासाखाय स्वयमेवच्छिन्नाकारदषा मानभावं । बोधिमण्डसंस्थानवज्रासनयानसिरिधम्माशोके ।

६ । न नाम सकल जम्बुद्वीपेश्वरमहाराज्ञा कृतचेतियस्य विद्यमानभावं । पूर्व्वे षड्शतसप्तपन्नाषसकराजे श्वेतगजेन्द्रमहाराजेन तं चैत्यमतिसंखरित्वा धर्म्मभासाय सेनञ्च स्वामिनभावं च श्रुत्वा तदेतत् वचनं अनेकतन्त्रागतव-

चनेन मं सन्दति ससेति। यथातं गङ्गोदकेन यमुनोद-
कम्हि। युत्तायुत्तं विदि

७। त्वा। चवश्यमेवेट भगवता सह जातो महाबोधीसि निसं-
सयं। सन्निधानसक्कासि। यथावत् कठोन विशेष निय-
मि हि मनुरपानं चेचवसत्वादिकक्कम्म करण × ततो
यथानुक्कमसमुन्नतुन्नतभावेन षदवी युगेधे। चष्टराजकगोष
मात्तविस्तारोकेष मस्रु प्रमाणानम्यिति गानमधिपल्लि।
समन्तातिनमना।

८। गन्धं गुम्बवनप्रतीनं प्रदक्षिणावद्याभिमुखपरिवारितो
रजतवण्णवालुकाविप्पकिण्णे। भेरितलमिव समे भूमिभागे।
बोधिसण्डसंघायस्स वज्रासनपल्लङ्कस्स अपस्सयफलकमिव
सम्भुत्तुत्वा। साखा पण्णे × मणिपचमिव पटिच्छादेत्वा
महाबोधिवृच्च: प्रतिष्ठाति तस्मिन् पनवज्रासनपल्लङ्के
न्तत (न)।

९। न (त) ग्रेपि काले सव्वेपि असंख्येया सम्यक् सम्बुद्धा
आणाप्राणवस्तुज्ञानपादकम्धचिराकोटिषतसहस्सविपम्-
सता ज्ञानसंघातं महापज्ञानं भावेत्वा च।

९। मार्गपदष्ठान सब्बञ्ञान ञानपति रभिसु। न याहिसे।
सण्वहन्ते कप्पे पयसं सण्वहितो। विनाश्यन्तेपि प ×
विनश्यन्तो अचलपदेसो पृथुद्दीप × बो।

१०। धिमण्डो नाम होति। एवं अतिच्छरिय मन्वच्चरिय
महाबोधिवृच्च एकसत विद्दित्वा अभिप्रसादमानसो।
यथा कापि × चक्कवत्तिसिरिधम्मासोको प ×
महिकोसलो। महोर्घ्य यतिंवा महाबोधिमभिपूजेसु।

तथा पूजेतुकामो। सिरिपवरसुधम्ममहाराजाधिराजाति। मूलमामाय श्रीपवरधम्मिक राजा × × × मल

११। —तो अनेकरश्मि ति× प्रतिसरदकुसुदकुन्दवृन्द प्रभाससमानवर्णच्छद्दन्तगजराजस्वामिमहाधम्मराजा। पुरोहित महाराजिन्द अगग महाधम्मराज गुरूभि × नं भूमिनन्द आरिकामत् पञ्चमहाराजाधिराप सागरस्सनाभकं। अनेकशतपरिजनेहि सह। द्विसहस्सतिशतपञ्चषष्ठिसासनवर्षे। एकसहस्से

१२। क शतत्याशीतिसकराजे कार्त्तिकमासरुन्दकलुपं। सञ्जितरत्नाङ्कटेन नु सार जलजस्थलजमार्गेण पेसित्वा सिरिसुर महाराजिन्दाररता देवी नामिकाय अग्गमहेसिया सार्द्धं। महाबोधिमूले बुद्धत प्राप्तं भगवन्तमुद्दिश्य। दक्खिणोदकं पातन्तो। इमं महापृथुविं साक्षिं कत्वा महार्घ्य

१३। हि सोवर्ण रोप्य माणिक्य विचित्रेहि। ल। ×। छत्र। ध्वज। पदीप। कलश। सालाङ्कोहि महाबोधिमभिपूजेमि। संसारौघनिस्मुग्ग सत्वगणतारणर्त्थं पि बुद्धत प्रयत मकासि। मातापीतुपीतामहआय्यक पाय्यकादिनं पि सत्वानं पुण्यभागमदासि॥ यथानेह रविसस्मि। यावत् चयावतिष्ठति।

१४। तथापि दरिणचरं। तिष्ठतं चनुमोदयति। इदमनेकरश्मितभप्रतिच्छद्दन्तगजराजस्वामिमहाधम्मराजोत्तरं पुण्यसेलचारं।-महाजेयसहस्सनामेन पण्डितामच्चेन बन्धितं॥ इदं सेलचरं सिरिराजिन्दमहाधम्मराजगुरूनामिकेन पुरोहितेन नागरीलेखाय लिखितं।:॥:॥

राजा जन्मेजय का दानपत्र।

यह दानपत्र युधिष्ठिर के संवत् १११ का है जो मौज अगराहर तालुका अनन्तपूर जिला सहारनपुर नगर इलाका मैसूर में मिला है। इसमें सर्वयोग और सूर्यपर्व्व का वर्णन है। कर्नल एलिस् साहिब सोचते हैं कि यह उस जन्मेजय का नहीं है विजय नगर के राजाओं में से किसी का है। वह कहते हैं कि जैसा सूर्यग्रहण इसमें लिखा है वैसा सं० १५२१ ई० में हुआ था। कोलब्रुक साहिब कहते हैं कि यह प्राचीन काल में ब्राह्मणों ने जाल करके बनाया होगा। परन्तु उन दोनों साहिबों की बात का कोई दृढ़ प्रमाण नहीं। इस की लिपि प्राचीन बालवन्द अथवा नन्दिनागर अक्षरों में है। इसके पीछे का भाग बहुतसा टूट गया है और यहां हम भी इस का वह भाग नहीं लिखते जिसमें उन दक्षिणी ग्रामों के और उनकी चारो सीमाओं के वर्णन में बड़े कठिन कठिन कर्णाटकी शब्द लिखे हैं।

" जयत्याविष्कृतं विष्णोर्वाराहं क्षोभितार्णवम्।
दक्षिणोन्नतदंष्ट्राग्रे विश्रान्तभुवनं वपुः ॥

स्वस्ति समस्तभुवनाश्रय श्री पृथ्वी वल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वर परमभट्टारक हस्तिनापुरवराधीश्वर आरोहभगदत्त-रिपुराय कान्तादत्तवैरिवैभव्यपाण्डव कुलकमल मार्त्तण्डकन्दन प्रचण्ड कलिङ्ग कोदण्ड मार्त्तण्ड एकाङ्गवीररणरङ्गधीर अश्व-पतिराय दिशापति गजपतिराय संहार कनरपतिराय मस्तक तलप्रहारिहयारूढ़ाप्रौढ़रेखरेवन्त सामन्त भगचामर कोङ्कण-तुरुष्क भयङ्करनिलकार पराङ्गनापुत्र सुवर्णवराहलाञ्छनध्वज-समस्त राजावलिविराजित समालिङ्गित श्री सोमवंशोद्भव श्री परीक्षित चक्रवर्त्ती। तस्यपुत्रो जन्मे जयचक्रवर्त्ती हस्ति-नापुरे सुखसंकथाविनोदेन राज्यङ्करोति। दक्षिणदिशावरे दिग्विजययात्रै र्वविजयङ्करोमि। तुङ्गभद्राहरिद्रासङ्गमे श्री ह-

रिहरेश्वरसन्निधौ कटक सुख्क सितचैत्रमासे कृष्णपचेदर्शके रवि वासरे ववकरणे उत्तरायण संक्रान्तौ व्यतीपातनिमित्त सूर्यपर्व्वणि अर्द्धग्रासग्रसित समये सपर्याग्रहरोमि ॥

इसके पीछे ३२००० ब्राह्मण जो वनवासे शान्तलिको गौतम ग्राम और दूसरे गाओं से आए थे जिनमें मुख्य गौतमगोत्री कण्वशाखीय गोविन्द पट्टवर्धन कर्णाट ब्राह्मण काण्वशाखीय वशिष्ठगोत्री वामनपट्टवर्द्धन कर्णाट ब्राह्मण काण्वशाखीय भारद्वाज गोत्रीकेशव यज्ञ दीचित कर्णाटक ब्राह्मण काण्वशाखीय श्रीवत्सगोत्री नारायण दीचित कर्णाटक ब्राह्मण थे । उनको गौतम ग्राम के बारहो गांव नाद बल्लि वृदवल्लि चिक्कहार कतरलगेरे सुरलगोडु ताग कङ्कुजिंमलूर वाचेन हर्चलितं पगोडु और किरूसम्य गोडु सब सपर्य्या अष्टभोग समेत पूजन करके दिया । इसके नीचे इन गाओं की सीमा लिखी है । उसके पीछे ‘ सर्व्वानेतान् भाविना पार्थिवेन्द्रान् ’ यह और ‘ दानं वा पालनं वापि ’ ये दो प्राचीन श्लोक हैं ।

संगलीश्वर का दान पत्र ।

यह दान पत्र संगलीश्वर का कलादगी जिले में बदामी में हिन्दू मत की बड़ी गुहाओं के पास खुदा है, इस्की लंबाई चौड़ाई २५ × ४३ इञ्च है. यह मंगलीश्वर कीर्ति वर्म्मा का भाई पुलकेशी का पुत्र था. जो शक ४०७ में राज्य करता था. यह दान पत्र श. ५०० (ई. ५७८) में लिखा गया है जिस्के १२ वर्ष पूर्व्व अर्थात् शक ४८८ (ई. ५६६) में यह राज्य पर बैठा था. इस दान पत्र में मंगलीश्वर ने एक विष्णुमन्दिर बनाया और अपने बड़े भाई की स्मरणार्थ जो निपिम्मलिंगेश्वर ग्राम दिया है उसका वर्णन है ।

स्वस्ति । श्रीस्वामिपादानुध्यातानांमण्डव्यसगोत्राणाम् हारीतिपुत्राणाम् अग्निष्टोमाग्निचयनवाजपेयपौंडरीक बहुसुवर्णाश्वमेधावभृथस्नान पवित्री कृतशिर. साम् चाल्क्यानांवंशेसंभूतः शक्तित्रयसंपन्नः चाल्क्यवशाम्बर पूर्णचन्द्रः अनेकगुणगणालंकृतशरीरः सर्वशास्त्रार्थतत्वनिविष्टवुद्धिः अतिबलपराक्रमोत्साहसंपन्नः श्रीमंगालेश्वरोरणविक्रान्तः प्रवर्द्धमानराज्ण१२संवत्सरे द्वादशेशकनृपतिराज्याभिषेक संवत्सरे ष्वतिक्रान्तेपु पंचसुशतेषु निजभुजावसम्बितखड्गधारानमितनृपशिरो मकुटमणिप्रभारंजिपादयुगलः चतुःसागरपर्य्यन्तावनिविजयः माङ्गलिकागारः परमभागवतो-

लयने मयाविष्णुगृहअतिदैव मानुष्यकाम अत्यद्भुतकर्म विरचितभूमि भागोपभागो परिपर्य्यन्तातिशय दर्शनीय तमकृत्वातस्मिन् महाकार्तिक्यांपौर्णमास्यांब्राह्मणेभ्यो महाप्रदानंत्वाभगवतः प्रलयोदितार्क मण्डलाकारचक्षपितापकारिपक्षस्य विष्णोः प्रति-माप्रतिष्ठापना भ्युदये निर्पिमलिङ्गेश्वरम् नामग्रामंनारायणावल्युपहारार्थं षोडशमृङ्ल्ये-भ्योब्राह्मणेभ्यश्च सत्रनिबन्धं प्रतिदिनंअनुविधानं कृत्वाशेषं च परिव्राजकभोज्यंदत्वा सकलजगन्मंडलावनसमर्थारथहस्त्यश्च पदातसकुलानेकयुद्धलब्धजय पताकालम्बित-चतुस्समुद्रोर्म्मिनिवारितयशः प्रतापनोपशोभिताय देवद्विजगुरुपूजिताय. ज्येष्ठायसमद्भ्रा-ते कीर्तिवर्मणेपराक्रमेश्वरायतत् पुण्योपचयफलम् आदित्याग्निमहाजन समुक्षमुदक पूर्वविश्राणितमस्मद्भ्रातृशुश्रूषणे यत्फलंतन्मह्यंस्यादितिनकैश्चित्परि हापितव्यः । बहुभिर्वसुधादत्ता बहुभिश्चानुपालिता यस्ययस्ययदाभूमिस्तस्यंतस्यतदाफलम् स्वदत्तां-परदत्तांवायत्नाद्रक्षयुधिष्ठिर । महीमहीं क्षितांश्रेष्ठंदानाच्छ्रेयोनुपालनं । स्वदत्तांपरदत्तां-वायोहरेतवंसुधराम् । श्वविष्ठायांकृमिर्भूत्वापितृभिस्सहमज्जति । व्यासगीताःश्लोकाः ।

मणिकर्णिका ।

अहा ! संसार का भी कैसा स्वरूप है और नित्य यह कुछ से कुछ हुआ जाता है पर लोग इसको नहीं समझते और इसी में मग्न रहते हैं जहां लाखों रुपये के बड़े बड़े और दृढ़ मन्दिर बने थे वहां अब कुछ भी नहीं है और जो लाखों रुपये अपने हाथ से उपार्जन और व्यय करते थे उनके वंश-वाले भीख मांगते फिरते हैं नित्य नित्य नए नए ग्राम बनते जाते हैं वैसेही नए नए लोग होते जाते हैं ।

यह मणिकर्णिका तीर्थ सब स्थानों में प्रसिद्ध है और हिन्दू धर्म्मवालों को इसका आग्रह सर्व्वदा से रहा है इसी कारण जो बड़े बड़े राजा हुए उन सबों ने इस स्थान पर कीर्ति करनी चाही और एक के नाम को मिटा कर दूसरा अपना नाम करता रहा । इस स्थान पर तीर्थ दो हैं एक तो गं-गाजी दूसरा चक्रपुष्करिणी तीर्थ और इन दोनों पर लोगों की सदा दृष्टि रही । घाट के नीचे ब्रह्मनाल और नीलकंठ तक अनेक घाटों के बनने के चिन्ह मिलते हैं । थोड़े दिन हुए कि मणिकर्णिका पर एक पुराना छत्ता था जिसको लोग राजा कीचक का छत्ता कहते थे पर न जाने यह कीचक

किस वंश में और किस समय में उत्पन्न हुआ था। ऐसा ही राजा मान का एक जनाना घाट है जो गली की भांति ऊपर से पटा है पर अब इसके ऊपर ब्रह्मनाल की सडक चलती है निश्चय है कि योंही घाटों के नीचे अनेक राजाओं के बनाए घाटों के चिन्ह मिलेंगे। हम आजकल में मणिकर्णिका पर से एक प्राचीन पत्थर उठा लाए हैं जिस्से उस समय का कुछ वृत्तान्त मिलता है। यह पत्थर संवत् १३५९ तेरह सै उनसठ का लिखा है जो ईसवी सन् १३०२ के समय का होता है। इसके अक्षर प्राचीन काल के हैं और साफ़ा पढ़ हैं पर शोच का विषय है कि पूरा नहीं है कुछ भाग इस का टूट गया है इस्से नाम का पता नहीं लगता कि किस राजा का है जो कुछ वृत्त उस्से जाना गया वह यह है। "उक्त समय में क्षत्रिय राजा दो भाई बड़े विष्णुभक्त और ज्ञानवान हुए और इनकी कीर्ति परम प्रगट थी उन लोगों ने मणिकर्णिका घाट बनवाया उस घाट के निर्म्माण का विस्तार वीरेश्वर से विश्वेश्वर तक था और मध्य में मणिकर्णिकेश्वर का बड़ा लम्बा चौड़ा और ऊंचा मंदिर बनाया और बीच में बड़ी बड़ी वेदिका बनाईं (वेदिका चबूतरे को कहते) यह राजा बड़ा गुणज्ञ था" इत्यादि। इस्से निश्चय है कि उसकी बनाई कोई वस्तु शेष नहीं रही। अब जो मणिकर्णिकेश्वर हैं वह एक गढ़हे नीचे संकीर्ण स्थान में है और विश्वेश्वर और वीरेश्वर भी नए नए स्थानों में हैं। ऐसा अनुमान होता है कि गंगाजी आगे ब्रह्मनाल की ओर बहुत दूर के बहती थीं क्योंकि अद्यापि वहां नीचे घाट मिलते हैं। निश्चय है कि इस राजा के पीछे भी अनेक बार घाट बने होंगे परन्तु अब जो कुछ टूटा फूटा घाट बचा है वह अहल्याबाई साहब का बनाया है।

मणिकर्णिका कुंड की सिढ़ियां जो वर्त्तमान हैं वह दो से उनचास २४९ वर्ष की बनी हुई है और इनको नारायणदास नामक वैश्य ने (जिसका पुकारने का नाम नरैन था) बनवाई हैं यह सोमवंशी राज वासुदेव का मंत्री था और रावत इसके पिता का नाम था यह बात इन श्लोकों से प्रगट होती है जो वहां एक पत्थर पर खुदे मिले हैं।

व्योमाष्टषट् चन्द्रमिते शुभेब्दौ मासे शुचौ विष्णुतिथौ शिवायां।
चकार नारायणदासगुप्तः सोपानमेतन्मणिकर्णिकायाः ॥ १ ॥
जातः क्षितौ वासवतुल्यतेजाः सोमान्वये भूपति वासुदेवः

तस्यानुवर्त्ती मणिकर्णिकायास्तथा सोपान ततिर्नरेशः। २।
वासुदेवाग्रसचिवो नरेशराघतात्मजः।
चक्रपुष्करणीतीर्थं जीर्णोद्धारमचीकरत्। ३।

॥ काशी ॥

मैं इस में काशी के तीन भाग का वर्णन करूंगा यथा प्रथम भाग में पंचक्रोश का दूसरे में गोसाइयों के काल का तीसरे कुछ अन्य स्फुट वर्णन। मैं पंचक्रोशी का वर्णन ऐसा नहीं करना चाहता कि जिसे देख कर लोग पंचक्रोशी की यात्रा करने चले जायं वरंच मैं भगवान काल के उस परम प्रबल फेर फार रूपी शक्ति को दिखाता हूं जिस से धैर्य्यमानों का धैर्य्य और अज्ञानों का मोह बढ़ता है। आहा! उस की क्या महिमा है और कैसी अचिंत्य शक्ति है? अतएव मैं मुक्तकंठ से कह सकता हूं कि ईश्वर भी काल का एक नामान्तर है क्योंकि इस संसार की उत्पत्ति प्रलय केवल इसी पर अटकी है। जिस विजयी और विख्यात सिकन्दर ने संसार को जीता उस्की अस्थि कहां गड़ी हैं और जिस कालिदास की कविता संसार पढ़ता है वह किस काल में और किस स्थान पर हुआ? यह किस्का प्रभाव है कि अब उस का खोज भी नहीं मिलता? काल का अतएव यदि हम प्राचीनों से प्राचीन, नवीनों से नवीन, बलवानों से बलवान, उत्पत्ति पालन नाश कर्त्ता और सर्व्व तन्त्र स्वतन्त्रादि विशेषणों से विशिष्ट ईश्वर को काल ही का एक नामान्तर कहैं तो क्या दोष है।

इस पंचक्रोशी के मार्ग और मन्दिर और सरोवरों में से दो सौ वा तीन सौ वर्ष से प्राचीन कोई चिन्ह नहीं है और इस बात का कोई निश्चायक नहीं कि पंचक्रोश का मार्ग यही है केवल एक कर्दमेश्वर का मन्दिर मात्र बहुत प्राचीन है और इस के बौद्धों के काल का वा इस के पीछे के काल का कहैं तो अयोग्य न होगा। इस मन्दिर के अतिरिक्त और कोई प्राचीन चिन्ह नहीं पर हां पद पद पर पुराने बौद्ध वा जैन मूर्त्तिखंड, पुराने जैन मन्दिरों के शिखर, दासे, खंभे और चौखटें टूटी फूटी पड़ी हैं। क्यों भाई हिन्दुओं! काशी तो तुम्हारा तीर्थ न है? और तुम्हारा वेद मत तो परम प्राचीन है? तो अब क्यों नहीं कोई चिन्ह दिखाते जिस से निश्चय हो कि काशी के मुख्य देव विश्वेश्वर और बिंदुमाधव यहां पर थे और यह उन का चिन्ह

शेष है और इतना बड़ा काशी का चेत्र है और यह उस की सीमा और यह मार्ग है और यह पंचक्रोश के देवता हैं। बस इतनाही कहो भगवते कालाय नमः। हमारे गुरु राजा शिवप्रसाद तो लिखते हैं कि "केवल काशी और कन्नौज में वेद धर्म्म बंच गया था" पर मैं यह कैसे कहूं वरंच यह कह सकता हूं कि काशी में सब नगरों से विशेष जैन मत था और यहीं के लोग दृढ़ जैनी थे भवतु काल जो न करे सब आश्चर्य्य है। क्या यह संभावना नहीं हो सकती कि प्राचीन काल में जो हिन्दुओं की मूर्त्तियां और मन्दिर थे उन्ही में जैनों ने अपने काल में अपनी मूर्त्तियां बिठा दीं? क्यों नहीं। केवल कुछ चण दिल्ली के सिंहासन पर एक हिन्दू बनियां बैठ गया था उतनेही समय में मसजिदों में हिन्दुओं ने सिन्दूर के भैरव बना दिये और कुरान पढ़ने की चौकियों पर व्यासों ने कथा बांची तो यह क्या असम्भावित है।

कर्दमेश्वर का मन्दिर बहुत ही प्राचीन है और उस्के शिखर पर बहुत से चित्र बने हैं जिन में कई एक तो हिन्दुओं के देवताओं के हैं पर अनेक ऐसे विचित्र देव और देवी बनी हैं जिनका ध्यान हिन्दू शास्त्र में कहीं नहीं मिलता अतएव कर्दमेश्वर महादेव जी का राज्य उस मन्दिर पर कब से हुआ यह निश्चय नहीं और पत्थरों मारे हुए जो कर्दम जी की श्रीमूर्त्ति है वह तो निस्सन्देह * * * * कुछ और ही है और इस के निश्चय के हेतु उस मन्दिर के आस पास के जैन खंड प्रमाण हैं और उसी गांव में आगे कूप के पास दहिने हाथ एक चौतरा है उस पर वैसी ही ठीक किसी जैनाचार्य्य की मूर्त्ति पत्थरों मारे खंडित रक्खी हैं देख लीजिए और उस के लम्बे कान उस का जैनत्व प्रमाण करते हैं अब कहिए वह तो कर्दम ऋषि हैं ये कौन हैं कपिलदेव जी हैं? ऐसेही पंचक्रोशी के सारे मार्ग में वरंच काशी के आस पास के अनेक गांव में सुन्दर सुन्दर शिल्प विद्या से विरचित जैन खंड पृथ्वी के नीचे और ऊपर पड़े हैं। कर्दमेश्वर का सरोवर श्रीमती रानी भवानी का बनाया है और उस पर यह श्लोक लिखा है।

"शाके गोचतुरंभूपतिमिते श्रीमत्भवानीन्टपा
गौड़ाख्यानमहीमहेन्द्रवनिता निष्कर्दमं कार्दमं ।
कुंडं ग्रावसुखंडमंडिततटं काश्यां व्यधादादरात्
श्रीतारातनया पुरांतकपुर प्रीत्यै विमुक्तै त्टणां" ॥

अर्थ—शाके १६७७ में अपनी कन्या श्रीतारा देवी के स्मर्णार्थ यह कर्दम

कुंड बंगाले की महारानी श्रीभवानी ने बनाया इन महारानी की कीर्त्ति ऐसीही सब स्थानों में उज्ज्वल और प्रसिद्ध है और राजा चन्द्रनाथ राय (उन के प्रपौत्र) मानो उस पुन्य के फल हैं। भीमचंडी के मार्ग में भी ऐसे ही अनेक चिन्ह हैं और भद्राची नामक ग्राम में एक बड़ा पुराना कोट उलटा हुआ पड़ा है और पंचक्रोशी करनेवाले उस के नीचे उसी के ईंटों से छोटे छोटे घर बनाते हैं और इस में पुन्य समझते हैं सम्भावना है कि यहां कोई छोटी राजसी रही हो क्योंकि काशी के चारो ओर ऐसी छोटी छोटी कई राजसियां थीं जैसा आसापूर। काशी खंड में आशापूर को एक बडा नगर करके लिखा है पर अब तो गांव मात्र बच गया है। भीमचंडी का कुंड भी श्रीमतीरानी भवानी का बनाया है और उस में यह श्लोक लिखा हुआ है।

शाके कालाद्रिभूपे गतविलकमलं गौड़राजेन्द्रपत्नी
गन्धर्व्वाम्भोधिमम्भोनिधिसमखननं स्वर्गसोपानजुष्टं ।
चक्रे राज्ञी भवानी सुकृतिमतिकृतिर्भीमचंडीसकाशे
काश्यामस्यास्तु कीर्त्तिस्सुरपतिसमितौगीयतेनारदाद्यैः ।

अर्थात् शाके १६७६ में रानी भवानी ने यह सरोवर बनाया तो इस लेख से ११८ का प्राचीन यह सरोवर है। इस से प्राचीन भी कुछ चिन्ह हैं पर अत्यन्त प्राचीन नहीं, देहली विनायक जो मुख्य काशी की सीमा हैं वही ठीक नहीं हैं क्योंकि वहां कोई भी प्राचीन चिन्ह शेष नहीं है वहां के मन्दिर और सरोवर सब एक नागर के बनाये हुए हैं जिसे अभी केवल सत्तर अस्सी बरस हुए पर इतने ही समय में वह बहुत टूट गए हैं काशी के कतिपय पंडित कहते हैं कि प्राचीन देहली विनायक वहां से कोसों दूर हैं अतएव पंचक्रोशी का प्रचलित मार्ग ही अशुद्ध है और यह सम्भावना भी है क्योंकि सिन्धुसागर तीर्थ का बहुत सा भाग इस मार्ग में बाम भाग पडता है पर प्राचीन मार्ग की सडक खेतवालों ने सम्पूर्ण नष्ट कर डाली। रामेश्वर में श्रीरानी भवानी की धर्मशाला और उद्यान है परन्तु रामेश्वर के कोस भर उधर बीच मार्ग ही में एक बड़ा प्राचीन मन्दिर खंड पड़ा है। बीच में शिवपुर एक विश्राम है और वहां पांचोपांडव हैं परन्तु यह विश्राम इत्यादि कोई काशीखंड लिखित नहीं है सब साहो गोपाल दास के भाई भवानी दास साहो के बनाए हुए हैं और अब वह एक ऐसा विश्राम हो गया है कि सब काशी के बन्धु यहीं पंचक्रोशी वालों से मिलने जाते हैं। कपिल-

धारा तो मानों जैनों की राजधानी है कारण ऐसा अनुमान होता है कि प्राचीन काल में काशी उधरही बसती थी क्योंकि सा-नाथ वहां से पास ही और मैं वहां से क' जैन मूर्त्ति के सिर उठा लाया हूं। ऐसी भी जनश्रुति है कि महादेवभट्ट नामक कोई ब्राह्मण था उसी ने पंचक्रोशी का उद्धार किया है॥

मुझे शिव मूर्त्ति अनेक प्रकार की मिली हैं १ पंचमुख दशभुज २ एक मुख द्विभुज ३ एक मुख चतुर्भुज ४ पद्मपर से पैर लटकाए हुए बैठे और पार्व्वती गोद में बैठीं ५ पालथी मारे ६ पार्व्वती को अलिंगन किए हुए इत्यादि तो इस अनेक प्रकार की शिव मूर्त्तियों की प्राप्ति से शंका होती है कि आगे लिंग पूजन का आग्रह नहीं था।

काशी में किसी समय में दश नामी गोसाइयों का बड़ा प्राबल्य था और इन महात्माओं ने अनेक कोटि मुद्रा पृथ्वी के नीचे दबा रक्खी है अतएव अनेक ताम्र पत्र पर बीजक लिखे हुए मिलते है पर वे द्रव्य कहां हैं इस्का पता नहीं। इन गोसाइयों ने अनेक बड़े बड़े मठ बनवाए थे और वे सब ऐसे दृढ़ बने हैं कि कभी हिल भी नहीं सकते। इन गोसाइयों में पीछे मद्यपान की चाल फैली और इसी से इन का तेजोनाश हुआ और परस्पर की उन्मत्तता और अदालत की कृपा से इनका सब धन नाश हो गया पर अद्यापि वे बड़े बड़े मठ खड़े हैं। इन गोसाइयों के समय में भैरव की पूजा विशेष फैली थी। कालिंजर में एक विस्तीर्ण पत्थर पड़ा है उस पर एक गोसाइयों के बनाए मठ और शिवाले और उस्की विभूति का सविस्तर वर्णन है मैं उस्को ज्यों का त्यों आगे प्रकाश करूंगा जिस्से वह समय स्पष्ट हो जायगा।

यहां जिस मुहल्ले में मैं रहता हूं उस के एक भाग का नाम चौखम्भा है इसका कारण यह है कि वहां एक मसजिद कई सै बरस की परम प्राचीन है उसका कुतबा काल बल से नाश होगया है पर लोग अनुमान करते हैं कि ६६४ बरस की बनी है और, मसजिदे चिहल सुतन, यही उसकी 'तारीख' है पर यह दृढ़ प्रमाणी भूत नहीं है। इस मसजिद में गोल गोल एक पंक्ति में पुराने चाल के चार खंभे बने हैं अतएव यह नाम प्रसिद्ध हो गया है। यही व्यवस्था ढाई कनगूरे के मसजिद की है, यह मसजिद भी बड़ी पुरानी है अनुमान होता है कि मुगलों के काल के पूर्व्व की है इसकी निर्म्मिति का काल मैं १०५८ ई० बतलाते हैं। इससे निश्चय होता है कि इस

मुहल्ले में आगे अब सा हिन्दुओं का प्राबल्य नहीं था पर यह मुहल्ला प्राचीन समय से बसा है।

मैंने जो अनेक स्थलों पर लिखा है कि जैन मूर्त्ति बहुत मिलती हैं इससे यह निश्चय नहीं कि काशी में जैन के पूर्व्व हिन्दूधर्म्म नहीं था क्योंकि जैन काल के पूर्व्व की और सम काल की हिन्दुओं की अनेक मूर्त्ति अद्यापि उपलब्ध होती हैं। कालिज में एक प्रस्थर खंड पड़ा है और उसकी लिपि परम प्राचीन है। पंडित शीतलाप्रसाद जी का अनुमान है कि यह लिपि पाली के भी पूर्व्व की है। इस पत्थर पर एक काली के मन्दिर की प्रतिष्ठा का समाचार है और इसका काल अनेक सहस्र वर्ष पूर्व्व है और उसमें ये श्लोक लिखे हैं।

१

ख्याता वाराणसीय त्रिभुवनभवने भोगचौरीति दूरात्।
सेवन्ते यां विरक्ताः जननमरणयो मोक्षमक्षैकरक्ता ॥

२

यत्र देवोऽविमुक्तः यो दृष्ट्वा ब्रह्महाऽपि च्युतकलिकलुषो जायते शुद्धभावः।
अस्यामुत्तुङ्गशृङ्गस्फुटगशि किरिणा ॥

३

प्रतुलिविविधजनपदस्त्रीविलासाऽभिरामं विद्या वेदान्ततत्वव्रतजपनियमव्यग्रच-च्द्राभिजुष्टं ॥ श्रीमत्स्थान सुसेव्य ॥

४

तत्राऽभूत् सार्थनामा शिशुरपि विनयव्यापदो भद्रमूर्ति : त्यागी धीरः कृतज्ञः परिलघुविभवोप्यात्मवृत्याभिजीवी।

५

वर्णा चंडनरोत्तमांगराचितव्यालाबिमालोत्कटा।
सर्प्पत्सर्प्पविवेष्टिताङ्गपरशुव्याविद्धंशुष्कामिषा लीला नृत्यरुचिर्पिलोत्प ॥

६

यस्यापि न तस्य तुष्टिरभवत् यावत् भवानीग्रहं शुशिलष्टाऽमलसन्धिबन्धघटितं घंटानिनादोज्ज्वलं ॥ रम्य दृष्टिहरं शिलोच्चयाय ॥
ध्वज चामरं सुकृति नाश्रेयोऽर्थिना कारितं

७

इस लेख के उपसंहार काल में मणिकर्णिका घाट का अवशिष्ट वर्णन

करता हूं। अब जो सांप्रत घाट वर्त्तमान है वह अहल्याबाई का बनवाया हुआ है और दो बड़े बड़े शिवालय भी घाट की सीमा पर उन्हीं के बनाए हैं और उन पर ये श्लोक लिखे हैं।

श्रीमान् होलकरोपाख्यख्यातो राजन्यदर्प्पहा ।
मल्लारिरावनामाऽभूत् खंडेरावस्तु तत्सुतः ॥ १ ॥
विलासी गुणकल्पद्रुः शूरो वीराभिसम्मतः ।
तत्पत्नी पुण्यचरिता कुलद्वयाविभूषणं ॥ २ ॥
अहल्याख्या तया ख्याता नृषु लोकेषु कीर्तये ।
वद्धोघट्टस्सुसोपानो मणिकर्ण्यास्सुविस्तृतः ॥ ३ ॥
तत्पार्श्वयोर्विधाये मौ प्रासादावुन्नतौ पृथक् ।
तयोः पश्चिमादिकसंस्थे स्थापितो गौतमेश्वरः ॥ ४ ॥
प्राक् संस्थे तारकेशांक अहल्योद्वारकेश्वरः ।
स्थापितो वसुवेदेह विधुसम्मतवैक्रमे ॥ ५ ॥
रामेन्दूदधि भूयुक्ते शालिवाहनजेशके ।
राधशुक्लद्वितीयायां गुरौ दुंदुभिवत्सरे ॥ ६ ॥
घट्टोत्सर्गः सुसम्पन्नः यजमान्यभ्यनुज्ञयया ।
स्वामिकार्यहितेकेच्छु जीवाजीशर्म्म हस्ततः ॥ ७ ॥
(शाके १७१३)

काशी में विन्दुमाधव घाट सम्वत १७९२ में श्री छत्रपति महाराज के पन्त प्रतिनिधि परशुराम के पुत्र श्री श्री निवास की स्त्री श्रीमती राधाबाई ने बनवाया है और ऐसा अनुमान होता है जब यह घाट नहीं बना था तभी से इस का नाम नरसिंह दाढ़ा था क्योंकि नरसिंह दाढ़े का नाम उस श्लोक में पड़ा है जो बाई साहब के काल का बना है। निश्चय है कि नरसिंह दाढ़ा के नाम से लोग सोचेंगे कि यह कौन वस्तु है परन्तु मैं इतना ही कह सकता हूं कि वह नरसिंह दाढ़ा एक पत्थल का केवल मुख का आकार है जो रामानन्द की मढ़ी में हनुमान जी की बांई ओर दीवार में लगा है और जब वहां तक पानी चढ़ता है तब इन्द्रदमन का नहान लगता है ऐसा अनुमान होता है कि यह इसी नाप के हेतु बनाया हो वा यह किसी पुरानी

मूर्ति का मुंह है जो नरसिंह जी के मुंह के नाम से पुजता है पर कोई कहते है कि वह रामानन्द गोसाईं का मुंह है जो हो मुंह तो गोल पुराना मुछ-मुंडा सा है।

यही श्लोक वहां खुदा है।

स्वस्तिश्रीविक्रमार्केद्विवननगधरासंमिते १७६२ क्रोधनाद्वे ।
मासीषे शुक्लके दिक्तिथिहरिभयुतेचन्द्रिविश्वेशतुष्ट्यै ॥
श्रीशाहोः श्रीनिवासः प्रतिनिधिपदगः पशुरामात्मजस्त ।
ज्ञायाराधाकृतीयं जयतिनृहरिदंष्ट्राख्यघट्टः सुबद्धः ॥ १ ॥
प्रत्यंतरमिदं ऊर्ध्वं श्लोकस्यद्वारिदीपवत् ।
अकारिबालकृष्णेन स्वामिकार्यनिरूपकं ॥ २ ॥

तथा काशी में जो वृद्धकाल महादेव का मन्दिर है वह भी किसी छत्रपति के आश्रित में मेघश्याम के पुत्र चाबिक उपनामक देवराज ने बनाया है और एक तो कालेश्वर के लिंग का जीर्णोद्धार किया और अपने नाम देवराजेश्वर एक शिव और बैठाया है जो इस श्लोकों से प्रगट है।

अब्देत्वीश्वरसंज्ञके शुभदिने संस्थाप्य कालेश्वरं ।
प्राचीनं प्रणतार्तिभंजनपरं श्रीदेवराजेश्वरं ॥
शाहूछत्रपतेः कृपालुवशगः श्रीदेवरायः स्वयं ।
मेघश्यामसुतः शिवालयमहो काश्यामबध्नात्ध्रुवं ॥ १ ॥
श्रीमत्प्रौढप्रतापप्रकटितयशसः शाहुभूपालकस्य ।
प्राज्ञस्याज्ञानुकारिद्विजहितविहितश्चाविकोदेवरायः ।
प्राचब्देमोरभट्टोनुमितमुपवनं गेहशालाविशालं ।
काश्यांविश्वेश्वरस्यत्रिजगदघनुषःप्रीतयेनिर्ममाय ॥ २ ॥

पापभक्षेश्वर भैरव का मन्दिर भी बाजीराव का बनाया है जो हो अब काशी में जितने मन्दिर वा घाट हैं उन में ष धे से विशेष इन महाराष्ट्रों के बनाए हुए हैं।

शिवपुर का द्रौपदीकुण्ड ।

यह बात प्रसिद्ध है कि शिवपुर काशी की पंचकोशी में कोई तीर्थ नहीं केवल लोगों के वहां टिकते २ वह टिकान होगई है और देवता बिठा दिये गये हैं पर अबकी द्रौपदी कुण्ड में एक पत्थर के देखने से ज्ञात हुआ कि यह प्राचीन तीर्थ है और तीन सौ बरस पहिले भी यहां पाण्डवों का मन्दिर था। वरंच " सुकृति कृति हितैषी " पद जो उस में राजा टोडरमल का विशेषण दिया है उससे ज्ञात होता है कि उन्हीं ने भी किसी के बनाये हुए कुण्ड का जीर्णोद्धार किया है इससे उसकी और भी प्राचीनता सिद्ध होती है। यह बावली राजा टोडरमल ने सं० १६४६ में बनवाई थी और " पांडव मंडपे " इस पद से स्पष्ट है कि वहां उस काल में पांडवों का मन्दिर था। इस का पहिला श्लोक नहीं पढ़ा गया बाकी के तीन श्लोक पाठकों के विनोदार्थ यहां प्रकाशित होते हैं ।

प्रत्यर्थिक्षितिपालकाननसु*****ने दूतिका ।
मुद्राङ्क प्रकटप्रतापतपनप्रोद्भासिताशामुखे ॥ १ ॥
क्षोणीशैकवरे प्रशासति महीं तस्मिन् नृपालावलि-
स्फूर्जन्मौलिमरीचिवीचिरुचिरोदञ्चत्पादाम्भोरुहे ॥ २ ॥
तद्राज्यैकधुरन्धरस्य वसुधा साम्राज्यदीक्षागुरोः ।
श्रीमट्टण्डनवंशमण्डनमणेः श्रीटोडरक्ष्मापतेः ।
धर्मौघैकविधौ समाहितमतेरादेशतोऽचीकर-
द्वापीं पाण्डवमण्डपे**वनो गोविन्ददासः सुधीः ॥ ३ ॥
ऋतुनिगमरसात्मासम्मिते १६४६ वत्सरेशे
सुकृतिकृतिहितैषी टोडरक्षोणिपालः ।
विहितविविधपूर्त्तोऽचीकरच्चारु वापीम्
विमलसलिलसारां बद्धसोपानपंक्तिम् ॥ ४ ॥

पंपासर का दानपत्र ।

यह दानपत्र गोदावरी के तीर पर एक खेतवाले को मिला है यह पांच टुकड़ों में अच्छा गहिरा खुदा हुआ कपाली लिपि में पांचो टुकड़े एक तामे की सिकडी में बंधे हुए एक तामे के डब्बे में बन्द और उसी डब्बे में शीसे की भांति किसी वस्तु के आठ टुकड़े और एक चोंगा जिस में सील लगी हु थी निकला है। अनुमान होता है कि इस चोंगे में कागज़ रहा होगा जो काल पाकर भीतर ही भीतर गल गया है यह पत्र चन्द्रवंशी क्षत्री दो राजाओं के दिये सं० १६७ के हैं और इन के पढ़ने से उस काल की बहुत सी चाल व्यवहार और उन के राज्य करने की नीति इत्यादि प्रगट होती है इस से इनका यथास्थित संस्कृत का भाषानुबाद यहां प्रकाश होता है । इस वंश का और कहीं पता नहीं लगा केवल उन दोनों ताम्रपत्रों से जो कालेपानी से सं० १८५७ में एशियाटिकसोसाइटी में आए थे इन का संबन्ध ज्ञात होता है क्योंकि उन में यही लिपि और इन्ही दोनों वंशों का वर्णन है पर नाम अलग अलग है, और उन दोनों में सम्बन्ध भी नहीं है।

विजनजवन नामक क्षत्रियों के दो प्राचीन कुल थे जिनकी संज्ञा ढढ़िया और पुछड़िया थी ॥ १ ॥

अपने वैरियों का सर्व्वस्व धन और धर्म्म नाश करके और भोग कर के ढढ़िया वंश समाप्त हुआ ॥ २ ॥

पुछड़िया कुल के राजा जब दोनों कुलों के स्वामी हुए तब इन्ह लोगों ने प्रजा का बड़ा आडम्बर से सत्कार किया और चक्रवर्त्ती हो गए ॥ ३ ॥

विद्या में बड़े बड़े पद और सभाओं में बड़ी बड़ी बक्तृता और आदर के अनेक आकाशी चिन्हों से इन के अनुयायी सदैव शोभित रहते थे ॥ ४ ॥

उदार ऐसे कि समाधि में भी रु० नहीं बचने पाता था चारो ओर केवल जाचक ही जाचक दिखाई देते थे ॥ ५ ॥

कला निपुण ऐसे थे कि इनके सिवा और कोई ग्राही नहीं और राजनीति के छल बल के तो एकमात्र वृहस्पति थे ॥ ६ ॥

कहते हैं कि शौरसेन यादव वंश में बलदेव जी से इस वंश की साक्षात. सम्बन्ध है क्योंकि अब तक ये जैसे हली मद प्रिय भी है ॥ ७ ।

ये इतने चतुर थे कि और सब जातिके लोग इनके सामने मूर्ख ज्ञात होते थे और प्रबल भी इतने कि इनकी बात कभी दोहराई नहीं जाती थी ॥ ८ ॥

इन में वेणु के पुत्र सगर के पौत्र दीपसिंह के प्रपौत्र नाभाग और त्रिशंकु नामक दो राजा हुए ॥ ९ ॥

नाभाग को भोज मदमन्न और भगवान तीन पुत्र और त्रिशंकु को वावन नामक एक पुत्र था ॥ १० ॥

वावन को गौरचन्द्र और हनूमान दो पुत्र हुए जो अब तमसा से कृष्णा तक नीलगिरि से हिमगिरि के प्रान्त तक राज्य करते हैं ॥ ११ ॥

इन के अभिषेक के जल कण से और हाथियों के मद से तथा शूरों के परिश्रम और रति शूरों के स्वेद जल और इन के शत्रुओं की स्त्री के नेत्र जल से मिल कर इनकी दान जलधारा नगर के चारो ओर खाई सी वन-रही है ॥ १२ ॥

जिन लोगों को ये जीतते थे उनको ऐसी दुर्गति होती थी कि वे अन्न वस्त्र को भी दीन हो जाते थे तथापि ये ऐसे दयालु थे कि यही मात्र उन के शरण होते थे ॥ १३ ॥

प्राचीन कर सब इन लोगों ने चमा कर दिए इन के काल में केवल आठ दस कर बच गए उस पर भी प्रजा को दुःखी देख कर ये उन का बड़ा प्रति-पालन करते थे ॥ १४ ॥

वरंच ये ऐसे दयालु थे कि और राजाओं की भांति आप कर लेने में ये ऐसे लज्जित होते थे जिसका वर्णन नहीं इसी से पाठशाला धर्म्मशाला इत्यादि धर्म्म कार्य्य के हेतु कर संग्रहीत होकर उन्ही कामों में व्यय होता था ॥ १५ ॥

शुक्लानधान उसी को समझते थे जो इन के जातिवालों की नौकरी वा वनज के मिस आवे ॥ १६ ॥

लक्ष्मी के ऐक मात्र आश्रय सरस्वती के पूरे दुर्गा के वर्ग तीनों शक्ति से ये सम्पन्न और त्रिदेव पूजन के बड़े आग्रही थे ॥ १७ ॥

इन धर्म्मावतारों ने पंपासर तीर्थ पर चन्द्रमा के पूर्ण ग्रास पर फाल्गुनी पौर्णिमा संवत् १८७ पूर्व्वा फाल्गुनी नक्षत्र व्यतीपात योग वैद्रथ करण शनिवार कन्या पर गुरु मेष पर शुक्र मीन पर सूर्य्य कुम्भ चन्द्रमा मिथुन में बुध करकट में मंगल और शनि में पंपासर तीर्थ में स्नान कर परम धार्म्मिक परमेश्वर परम माहेश्वर भट्टारक महाराज गौरचन्द्र तथा हनुमच्चन्द्र मुड़ालगोत्र गर्गाङ्गिरस मुड़ाल द्विजवर ठक्कुरनासी के पौत्र ठक्कुर उब्बट के

पुत्र ठक्कुर चुम्पठ शर्म्मा को कलिंगदेशान्तर्गत खातावी परगने के कोकल परगने का पसेमरी और कारंम नामक दो ग्राम दे कर इसके सीर सायर आकास पाताल खेत खर्व्वट वाटी तिवारी जल थल सब पर इनका अधिकार करते हैं इन के वंश का जो होय वह उस को माने कोई कर नहीं लगेगा।

मि॰ चैत्र शुद्ध १ सं॰ १९८ विक्रम के लिख सूत्रधार प्रवासी राय और ब्राह्मण ब्राह्मय ने शुभ।

(इस के आगे ये श्लोक लिखे हैं)

ये सर्व्वस्युर्भाविनः पार्थिवेन्द्रान् तेभ्यो भूयोयाचते रामचन्द्रः।
सामान्योऽयं धर्म्मसेतुर्न्टपाणां काले काले रक्षणीयो भवद्भिः
स्वदत्तां परदत्तां वा ब्रह्मवृत्ति हरेत्तुयः।
षष्ठि वर्ष सहस्राणि विष्ठायां जायते क्रिमिः।
शुभम् श्रीः॥

कनौज का दानपत्र।

यह दानपत्र राजा गोविन्द चन्द्र कन्नौज के राजा का है जो दिल्ली के बादशाही खज़ाने से सिखलोग लाहोर लूट कर ले गए थे और अब श्री पंडित राधाकृष्ण चीफ पण्डित लाहोर ने उसकी एक प्रति हमारे पास भेजी है, इस राजवंश का पूर्व स्थापक गाहरवाल राजा था और करक्ष इसका अन्तिम राजकुमार हुआ। उसी वंश की एक शाखा महिश्राल में (वा महिश्राल का पुत्र) भोज हुआ। जिसका काल ८८५ स्त्री है। इन भोज और करक्ष की कीर्त्ति समाप्त होने के पीछे उसी वंश की शाखा में यशोविग्रह राजा हुआ उसका पुत्र महीचन्द्र उस का पुत्र चन्द्रदेव उसका पुत्र मदनपाल और उस मदनपाल का पुत्र गोविंदचन्द्र था जिसने यह दान किया है। यह राजा ऐसा दानी था कि इसके दिये हुये गावों के शतावधि दानपत्र मिले हैं ये लोग वैष्णव वा वैष्णवों के अनुयायी थे क्योंकि इन के दानपत्रों पर गरुड़ का चिन्ह है और गोविंदचन्द्र की मोहर पांचजन्य शंख है। 'अकुण्ठोत्कण्ठ' यह श्लोक प्राय: दानपत्रों पर है। यह दानपत्र संवत् ११८२ में माघ बदी ६ शुक्रवार को यौवमती (?) तीर्थ में गंगा में स्नान करके राजा गोविंदचन्द्र

ने गौतम गोत्र के गोतमाङ्गिरस सुद्गल त्रिप्रवर के ब्राह्मण ठक्कुर अल्हन के पुत्र कं भ्भठ वाभ्भट दोनों भाइयों को इकद तालुके का गोंडली नाम गांव दिया है।

स्वस्ति---'अकुण्ठोत्कुण्ठवैकुण्ठकण्ठलुठत्करः। संरम्भः सुरतारम्भे सश्रियःश्रेयसेऽस्तुवः॥ १ ॥ आसीदशीतद्युति वंशजातक्ष्मापालमालासुदिवङ्गतासु। साक्षाद्विवस्वानिवभूरिधाम्ना नाम्ना यशोविग्रहइत्युदारः॥२॥ तत्सुतोऽभून्महीचन्द्रश्चन्द्रधामनिभंनिजम्। येनापारमकूपार पारेव्यापारितंयशः॥ ३ ॥ तस्याभूत्तनयोनयैकरसिकः क्रांतद्विषन्मण्डलो विध्वस्तोद्धतवीरयोतिमिरः श्रीचन्द्रदेवोनृपः। येनोदारतरप्रतापशमिताशेषप्रजोपद्रवम्। श्रीमद्गाधिपुराधिराज्यमसमं दोर्विक्रमेणार्जितम्॥४॥ तीर्थानि काशिकुशिकोत्तरकौशलेन्द्रस्थानीयकानि परिपालयताभिगम्य॥ हेमात्मतुल्यमनिशंददता द्विजेभ्यो येनाङ्किता वसुमती शतशस्तुलाभिः॥ ५ ॥ तस्यात्मजोविजयपालइतिक्षितीन्द्रचूडामणिर्विजयतेनिजगोत्रचन्द्रः। यस्याभिषेककलशोल्लसितैःपयोभिः प्रक्षालितकलिरजःपटलंधरित्र्याः॥ ६ ॥ यस्यासी द्विजयप्रयाणसमये तुङ्गाचलोच्चैश्चलन्माद्यत्कुम्भिपदक्रमायमभरत्रस्यन्महीमण्डलम्। चूडारत्न विभिन्नतालुगलितसत्नास्टगुद्भासितः शेष.पेषवशादिवक्षणमसौक्रोडेनिलीनाननः॥ ७ ॥ तस्मादजायत निजायत वाहुवल्लिवद्धावरुद्धनवराज्य गजोनरेन्द्रः। सान्द्रामृतद्रवमुचा प्रभवो गवां यो गोविन्दचन्द्रइति चन्द्रइवाम्बुराशेः॥८॥ नकथमप्यलभत्तरणक्षमास्तिस्टषुदिक्षुगजानथवज्रिण'। ककुभिवभ्रमुरभ्रमुवल्लभ प्रतिभटाइवयस्यघटागजाः॥ ९ ॥

सोयं समस्तराजचक्रसंसेवितचरणाः परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परममाहेश्वर निज भुजोपार्ज्जित श्रीकान्यकुब्जाधिपत्य श्रीचन्द्रदेवपदानुयात परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परम माहेश्वराश्वपति गजपति नरपति राज्यत्रयाधि विविध विद्या विचारवाचस्पतिः श्रीमद्गोविन्दचन्द्रदेवो विजयी हल्दोपपत्तनायामगोंडलीग्राम निवासिनो निखिलजन पदानुपगत नपि च राजाराज्ञी युवराज मान्त्रिपुरोहित--प्रतिहार--सेनापति-भाण्डारिकाक्षपटलिकभिकनैमिमित्तिकान्तःपुरिक--दूत--करि--तुरगपत्तनाकरस्थानागोकुलाधि पुरुषानाज्ञापयति बोधयत्यादिशतिच यथा विदितमस्तुभवतां मयोपारिलिखितग्रामः सजलस्थलः सहोहलवणाकरः समत्स्याकरः सगर्तोखरः समधूकाम्रवनवाटिकः विटपतृणयुतोगोचरपर्य्यन्तः सोर्ध्वाधश्चतुराघटविशुद्धःस्वसीमापर्य्यन्तः द्व्यशीत्यधिकैका दशशत संवत्सरे

११८२ माघेमासि कृष्णपक्षे पञ्चम्यांतिथौ भृगावापितेः श्रीवमतीस्थलेगङ्गायां स्नात्वा विधिवन्मन्त्वदेव मुनिमनुजभूत पितृगणां स्तर्पयित्वा तिमिर पटल पाटन पटुमहसमुद्धतार्चिपमुपस्थायौपाधिपातिसकलशेखर सम यर्च्य त्रिभूवनत्रातुर्वासुदेवस्य पूजां विधायप्रचुरपायसेनहविषा हविर्भुजंहुत्वा मातापित्रो रात्मनश्च पुण्ययशोभिवृद्धयेऽस्माभिरग्रे करणकुशलतायुतकमतुलोदक. पूर्वगौतमगौत्राम्यांगौतमाङ्गिर समुद्भलात्रिः प्रवराम्यांठक्कुर श्रीआल्हनपुत्राभ्यां श्रीछींछट श्रीवाछट शर्म्मभ्यां आचन्द्रार्कं यावच्छासती कृत्यप्रदत्तामत्वा यथा दीयमानभागभोगकर प्रवणिकरतुरुष्कदण्ड सर्वादायानाज्ञां विवेकीभूयक्षान्तव्योति । भवान्तिचात्र श्लोकाः ।

भूमियःप्रतिगृह्णाति यश्चंभूमिप्रयच्छति । उभौ तौपुण्यकर्माणौ नियतंस्वर्गगामिनौ ॥१॥ सम्वन्धमासनंछत्रं वराश्वाबरवारणाः। भूमिदानस्यचिन्हानि फलमेतत्पुरंदर॥२॥ सर्व्वानेतान्भाविन.पार्थि वेन्द्रान्भूयोभूयो याचतेरामचन्द्रः। सामान्योऽयंधर्मसेतुर्नृपाणां कालेकालेप.लनीयो द्भिः॥३॥ वहुभिर्वसुधाभुक्ता राजभिःसगरादिभिः॥ यस्ययस्ययदाभूमिर तरयस्तस्यतदाफलम्॥४॥ गामेकां स्वर्णमेकञ्च भूमेरप्येकमङ्गुलम्। हरन्नरकमाप्नोति यावदाहूत संपप्लवम् ॥५॥ तडागानां सहस्रेणाप्यश्व मेधशतेनच। गवांकोटिप्रदोनेन भूमिहर्त्ता न शुद्ध्यति" ॥ ६ ॥ इति ।

नागमंगला का दानपत्र ।

श्रीरङ्गपट्टन से १५ कोस उत्तर नागमंगल शहर में एक मन्दिर है । वहां पर निम्नलिखित लेख ६ ताम्रपत्रों पर खोदा हुआ मिला है जो कि एक मोटे धातु के कड़े से वेधित हैं ये पत्रे १० इंच लंबे और ५ इंच चौड़े हैं।

इस लेख से ज्ञात होता है कि पृथिवी निगुड राजा की स्त्री कुंदेवी जो पल्लवाधिराज की पोती थी उस ने शके ६९८ में एक जैन मन्दिर स्थापित किया था इसी के सहायता के कारण उसके पति को विजय स्कन्धावार के महाराज पृथ्वी कोंगणि से उसके राज्य प्राप्ति के पचास बरस बाद प्रार्थना करने पर यह दानपत्र मिला था ।

मर्कंए के पत्रों के लेख से मिलता हुआ कुछ कोंगू राजाओं का वृत्तान्त इस लेख के पूर्व में है जो सन् ४६६ से आरंभ होता है इन लेखों में केवल इतना ही अन्तर है कि इस में प्रथम महाराज का नाम कोडगणी वर्म्मा धर्म्म महाधिराज और छठे का कोंगणी महाधिराज लिखा है और केवल

दानकर्त्ता को कोंगणी लिखा है इस शब्द के भिन्न भिन्न प्रकार के लिखे जाने से कुछ प्रयोजन नहीं केवल इस्से यह सूचना होती है कि कुर्ग में जो एक पत्थर पर खुदा लेख निकाला था और जिस्को सत्यवाक्य कंडगिणी वर्म्म धर्म्म महाराजाधिराज ने सन् ८४० में लिखा था उस में भी इसी शब्द कोंगणी ही का अपभ्रंश है और इस्को कभी कभी कोडगू भी लिखते थे जो कि कोडागू से बहुत मिलता है यह कोडागू उस देश का प्रचलित नाम है जिस को अंग्रेज़ लोग कुर्ग लिखते हैं ।

मर्कारा के लेख के सदृश इस से भी ज्ञात होता है कि दूसरे माधव और कदंबराजाओं में सम्बन्ध भया था अर्थात् पूर्वोक्त ने दूसरे की भगिनी से विवाह किया था इस में विष्णु गोप के पुत्र गोद लेने और डिंडिकराराय के राज्य का कुछ भी वर्णन नहीं है इस समय से लेकर भुविक्रम के राज्य तक जिस ने सन् ५३८ में राज्यसिंहासन को सुशोभित किया दानपत्र और राजा इतिहास दोनों में राजाओं की नामावली सम्पूर्ण मिलती है इस के पश्चात् विलंड जिस का शुद्ध नाम राजा श्रीवल्लभाख्य था उस को इतिहास में वर्त्तमान राजा का भाई लिखा है (प्रोफ़ेसर डाउसन् के अनुसार छोटा भाई और टेलर के अनुसार बडा) यथार्थ में वह राजा और राज्यप्रबंध का कार्य सम्पादक दोनों था दानपत्र में छोटे भाई का नाम नवकाम लिखा है । कोंगणी महाराज सोमेश्वर का वृत्तान्त जिस का शुद्ध नाम डाउसन शिवग महाराय टेलर शिवरामराय बताते हैं पीछे लिखा है । इतिहास में तो यों है कि इस का पौत्र पृथिवी कोंगणी महाधिराज था जो सन् ९४६ में राज्यसिंहासन पर था ? यही नाम दानकर्त्ता का है और यदि भीमकोप और राजाकेसरी इसी राजा के नामांतर मान लिये जांय जैसा कि संभव होता है तो इतिहास और-उन पत्र का वृत्तान्त एक मिल जाता है ।

(१०) स्वस्ति जितं भगवता गतघनगगनाभेन पद्मनाभेन श्रीमज्जान्हवेकुलामलव्योमावभासनभास्करः स्वखड्गैकप्रहारखंडितमहाशिलास्तंभलब्धबलपराक्रमोदारारिगणविदारणोपलब्धव्रणविभूषणविभूषितः काण्वायनसगोत्रश् श्रीमत्कोङ्गणिवर्माधर्ममहाधिराजः तस्य पुत्रः पितुरन्वागतगुणयुक्तो विद्याविनयविहितवृत्तः सम्यक्प्रजापालनमात्राधिगतराज्यप्रयोजनो विद्वत्कविकांचननिकषोपलभूतो नीतिशास्त्रस्य वक्तृप्रयोक्तृकुशलो दत्तकसूत्रवृत्तेः प्रणेता श्रीमान्माधवमहाधिराजः तत्पुत्रः

पितृपैतामहगुणयुक्तोअनेकचतुर्दन्तयुद्धावाप्तचतुरदधिसलिलास्वादितयशाः श्रीमद्धरिव-र्मामहाधिराजः, तत्पुत्रो द्विजगुरुदेवतापूजनपरो (२) नारायणचरणानुध्यातः श्रीमान्विष्णुगोपमहाधिराजः तत्पुत्रो त्र्यंबकचरणाम्भोरुहराजपवित्रीकृतोत्तमाङ्गः स्वभुजवलपराक्रमक्रयक्रतराज्यः कलियुगबलपंकावसन्नधर्मवृषोद्धरणनित्यसन्नद्धः श्री-मान्माधवमहाधिराजः तत्पुत्रश् श्रीमत्कदंबकुलगगभक्तिमालिनः कृष्णवर्ममहाधिराजस्य प्रियभागिनेयो विद्याविनयातिशयपरिपूरितांतरात्मा निरवग्रहप्रधानशौर्यो विद्वत्सु प्रथमगण्यः श्रीमान् कोगणिमहाधिराजः अविनतनामा तत्पुत्रो विजृंभमाणशक्तित्रय "अंदरिह" "अलत्तुप" "पौरलाले" पेलंगराज्यानेकसमरमुखमखहुतशूरपुरुषपशूपहार विघसविन्स्तीकृतकृतान्ताग्निमुखः किरातार्जुनीयपंचदशसर्गा (३) दिकोकारो दुर्विनीतनामधेयः तस्य पुत्रोदुर्दान्तविमर्द्दमिमृमितविश्वम्भरादिपंचालिमालामकरन्द-पुंजपिंजरीक्रीयमाणचरणयुगलनालिनोमुष्करनामनामधेयः तस्य पुत्रश्चतुर्दशविद्यास्थाना-धिगतविमलमतिः विशेषतो नवकोशस्य नीतिशास्त्रस्य वक्तृप्रयोक्तृकुशलो रिपुति-मिरनिकरनिराकरणोदयभास्करः श्रीविक्रमप्रार्थितनामधेयः तस्य पुत्रः अनेकसमर-सम्पादितविजृंभितद्विरदरदनकुलिशघातव्रणममरूढस्वास्थ्यद विजयलक्ष्मलक्षी कृत-विशालवक्षस्थलः समधिगतसकलशास्त्राधितत्वः समाराधितत्रिवर्गो निरवद्यचरितप्रति-दिनवर्द्धमानप्रभावो भुविक्रमनामधेयः अपिच ॥

नानाहेतिप्रहारप्रतिहतसुभटारामवाद्योत्थितामृग् ।
भाशास्वादामृताशक्षुधितपरिसरद्भ्रसंरुद्धसीमे ॥
सामन्तान्पल्लवेन्द्रान्नरपतिमजयद्योविलंदाभिधाने ।
राज्याश्रीवल्लभाख्यः समरशतजयावाप्तलक्ष्मीविलासः ॥
तस्यानुजो नतनरेन्द्रकिरीटकोटिरत्नार्कदीधितिविराजितपादपद्मः ।
लक्ष्म्याः स्वयं वृतपतिर्नवकामनामाशिष्टप्रियोरिगणदारणगीतकीर्त्तिः ॥

तस्य कोगणिमहाराजस्य शिवमेश्वरापरनामधेयस्य पौत्रः समवनतसमस्तसामन्त-मुकुटतटघटितबहुलरत्नविलसदमरधनुष्काण्डमण्डितचरणनखमण्डलो नारायणे निहितभक्तिः शरपुरुषतुरगनरवारणघटा संघट्टदारुणसमरशिरसिनिहितात्मकोपो भीमकोपः प्रकटरतिसमयसमनुवर्तनचतुरयुवतिजनलोकधूर्तो लोकधूर्तः सुदुर्धरानेकयुद्धमूर्धन्यलब्धविजयभ्पदहितगजघटां (९) तकेसरीराजकेसरी अपिच ॥

यो गंगान्वयनिर्मलालंरतलब्याभासनप्रोल्लसन् ।
मार्तण्डोरिभयंकरः शुभकरः सन्मार्गरक्षाकरः ।

सौराज्यं समुपेत्यराज्यसविताराजन्यतारोत्तमो ।
राजा श्रीपुरुषेश्वरो विजयते राजन्यचूडामणिः ॥
कामंः रामः सचापे दशरथतनयो विक्रमे जामदग्न्यः ।
प्राज्ये वीर्ये बलारिर्बहुमहसिरविः स्वप्रभुत्वेधनेशः ।
भूयोविख्यातशक्तिः स्फुटतरमखिलप्राणभाजांविधाता ।
धात्राश्लिष्टःप्रजानांपतिरितिकवयोयंप्रशंसांतिनित्यम् ॥

तेन प्रतिदिनप्रवृत्तमहादानजनितपुण्याहघोषमुखरितमन्दिरोदारेण श्रीपुरुषप्रथमनामधेयेन पृथ्वीकोंगणिमहाराजेन, अष्टानवत्युत्तरषट्च्छतेषु शकवर्षेष्वातिते-ष्वात्मनः प्रवर्द्धमानविजयवीर्यसंवत्सरेपंचाशत्तमेवर्द्धमाने मान्यपुरमधिवसाति विजय-स्कंदावारे श्रीमूलमूलशरणाभिनन्दितनन्दिसंगान्वयइक्रगित्तरंनाम्निगने मूलिकल-गच्छे स्वच्छतरगुणाकरकीरप्रततिप्रल्हादितसकललोकः चन्द्रइवापरः चन्द्रनन्दिना-मगुरुरस्ति तस्यशिष्यःसमस्तविबुधलोकपरिरक्षणक्षमात्मशक्तिः परमेश्वरलालनीयम-हिमा कुमारवद्द्वितीयः कुमारनन्दिनामा मुनिपतिरभवत् तस्यांतेवासी समधिगतस-कलतत्वार्थसमर्पितबुधसार्द्धसंपत्संपादितकीर्तिः कीर्तिनन्द्याचार्यो नामा महामुनिः समजनि, तस्य प्रियशिष्यः शिष्यजनकमलाकरप्रबोधजनकः मिथ्याज्ञानसंततस-नुनससन्मानात्मकसद्धर्मव्योमावभासनभास्करोविमलचन्द्राचार्यः समुदपादि, तस्य महर्षेर्धर्मोपदेशनयाश्रीमद्बाणकलकलः सर्वतपोमहानदीप्रवाहः बाहुदण्डम-ण्डलाखण्डितारिमण्डलद्रुमशुण्डो डुण्डुप्रथमनामधेयो निर्गुण्डयुवराजो जज्ञे, तस्य [illegible] त्मजः आत्मजनिननयविपनि शेषीकृत रिपुलोकः लोकहितः मधुरमनोहरचरितः चरितार्नत्रिकर्णप्रवृत्तिः परमगुणप्रथमधेयः श्रीपृथ्वीनिर्गुण्डराजोऽजायत पल्लवाधि-राजः प्रियतमजायां सगरकुलतिलकात् मरुवर्मणो जातांकुण्डाधिनामधेयामुवाह भर्तृभावनाविर्भुवयातयासततप्रवर्तितधर्मकार्ययानिर्मिताय श्री पुरोत्तरादिशामलं कुर्व-तेलोभातिलकधाम्नेजिनभवनाय खण्डस्फुटितनवसंस्क रदेवपूजादानधर्मप्रवर्तनार्थं तस्य एव पृथ्वीनिर्गुण्डराजस्य विज्ञापनया महाराजाधिराजपरमेश्वर श्रीजसहित-देवेन निर्गुण्डविषयांतः पाति पोन्नलिनामाग्रामः सर्वपरिहारोपेतोदत्तः तस्य सीमां तराणि पूर्वस्यादिशि नोलिवेलदा वेगलेमालादि, पूर्वदाक्षिणस्यांदिशिपाण्यंगेरि, दाक्षी णस्यांदिशि वेडगली गेरयादिल गेरयापल्लादकुढल, दक्षिणपश्चिमायांदिशिजयद

शकेय्यविडगलमोलादुत्तरपश्चिमायांदिशि हेनके वितालतुवाजराकोलि, पश्चिमोत्तरे-स्यांदिग्गि पुणुसेयगोट्टगालाकालकुप्ये, उत्तरस्यांदिशि सामगेडेयपल्लदाह पेरमुडिके. उत्तरपूर्वस्यांदिशि कलाम्बेत्यगद्द, ईशान्यामन्यानिक्षेत्राणि द‍ानि डुण्डुसमुद्रदावय-लुलकिलुदाडामेगेपदिरकंडुगंमणामपालेयरेनलुराजारपार्कट्टकण्डुगं श्रीवरदडुण्ड-गामण्डराताण्डडापडुवयाण्डुताण्डु श्रीवरदावयलुल्लकम्मरगत्तिनह्लिरिकण्डुगं काला-निपेरगिलयकेडगेआरगण्डुगं रेपूलिगिलेयाकोयेलगोदायदद्दं इरुपत्तुगुण्डुगं भेद्य अ-दुब्रुश्रीवरवा बडगणापदुवणाकोनुणन् देवंगेशीमदपं एद्दिदं मूवन्ताद्विन्दुमनेयमने-तानं अस्य दानस्य साक्षिणः अष्टादशप्रकृतयः अस्य दानस्य साक्षिणः षराणवति सहस्त्रविषयप्रकृतयः योऽस्यापहर्ता लोभान्मोहात्प्रमादेन वा सपंचभिर्महद्भिः पातकैः संयुक्तो भवति यो रक्षति सपुण्यभाग् भवति अपि चात्रमनुगीताः श्लोकाः ।

स्वदातुं सुमहच्छक्यं दुःखमन्न्यस्य पालनं ।
दानं वा पालनं वेति दानाच्छ्रेयो ऽनुपालनं ॥
देवस्वं तु विषं घोरं न विषं विषमुच्यते ।
विषमेकाकिनं हन्ति देवस्वं पुत्रपौत्रकौ ॥

सर्वकलाधारभूताचित्रकलाभिज्ञेन विश्वकर्माचार्येणेदं शासनं लिखितं चतुष्क-ण्डुकश्री हिवीजमात्रं द्विकण्डुककंगुक्षेत्रं तदपि ब्रह्मदेयमिव रक्षणीयं ।

चित्रकूट [चित्तौड] स्थ रमा कुंड प्रशस्तिः

ॐनमः श्रीगणेशप्रसादात् सरस्वत्यै नमः ॥ श्रीचित्रकोटाधिपति श्रीमहा-राजाधिराज माहाराणा श्रीकुंभकर्ण पुत्री श्रीजीर्ण प्रकारे सोरठ पति महाराया राय श्रीमंडलीक भार्या श्रीरमाबाई ए प्रासाद रामस्वामि रु रामकुंड कारायिता संवत् १५५४ वर्षे चैत्र शुदि ७ रवौ मुहूर्त कृताः । शुभं भवतु ।

श्रीमत्कुंभ नृपस्य दिग्गज रदातिक्रांत कीर्त्यं बुधेः । कन्या यादव वंश मंडन मसि श्रीमंडलीक प्रिया । संगीतागम दुग्ध सिंधुजमुधा स्वादे परा देवता । प्राद्यु-म्नं कुरुते वनीपक जनं कं न स्मरंतं रमा ॥ १ ॥ श्रीमत्कुंभल मेर दुर्ग शिखरे दामोदरं मंदिरं । श्रीकुंडेश्वर दक्षणा श्रित गिरे स्तीरे संरः सुंदरं। श्रीमद्भूरि महा-ब्धि सिधु भुवने श्रीयोगिनी पत्तने भूयः कुंड मचीकर त्किल रमा लोक त्रये कीर्त्तय ॥ २ ॥ श्रीकुंभोद्भवयां बुधि नियमितः किं वा सुधा दीधिते र्निक्षेप स्त्रिदशै-रशोपण भिया किंवाप्सरः सुंन्दरं । प्राप्तुं पौर पुरंध्रि वृंद मभुजद्भूमी तलं मानसं

चित्र रामशर अहार भयतो ष्वि वेह कुडायते ॥ ३ ॥ यस्मिन्नीर विहारि कोक मिथुनं क्रीडाममुन्मीलिने शीतांशा वितरेतरेण नितरां विश्लेष मासाद्य वा । तापे नैव तनौ विभर्त्य विरतं सोपान भित्ति स्फुरत् स्वीयांगे प्रति विंव स्गम वशा दूरे पि तीरे चरत् ॥ ४ ॥ पानीय हार विहार सुंदर सुंदरी वदनं निजं प्रतिविंव भूत मितीह निर्मल धीर नीरग मंबुजं । आदातु मुद्यत पाणिना जलदोलनेन गत श्रमा वितनोति कानन कुंभ पूरण मत्र विस्मय विभ्रमा ॥ ५ ॥ रसाल तरु मंजुलं पिक विनोद नादो त्कलं क्वचित् कनक् केतकोद्गत पराग पिगांचलं । सशीकर सुशीतलं सुरभि वृंद मंदा निलं यदीय मति निर्मलं जयति वीर भूमी तलं ॥ ६ ॥ यदिय तट भूतलं हसित कुंद पुष्पोज्वलं क्वचिद्विकच मालती कुसुम लोल भृंग ष्कुल । क्वचित् शरलसारणी तरल नीरता पेशलं स्तुवंति सुरयोपितः किमुत नदना दप्यलं ॥ ७ ॥ एतद्भित्ति तटालयेपु रुचिरो त्कीर्णैः सुरीणां गणैः क्रीडो पागत पौरयौवत युतोपांतै रबंतै रपि । तत्तादृक्प्रतिविंवितै रुपलसन्ना गागना संगिभि र्मन्ये कुं मिदं रमा विरचित लोकत्रया दद्भुतं ॥ ८ ॥ यद्वारुण प्रतिष्ठा समये समुपेन विवुध वृंदस्य । कनकदुकूल विवरणं विदधाति रम्येति लोलुपति सुराः ॥ ९ ॥ यावच्छेग शिरःसु शेरर पदं भूभृतधात्र्या मयं मेरु र्मेरु गिरे रुपर्युपरितो ब्रह्मादि लोकत्रयं । धत्ते यावदमुत्र वा दिनमणि र्माणिक्य नैराजनं तावच्चारुतरं रमा विरचिन कुंडं चिरं नंदतु ॥ १० ॥

श्री रमा वर्णनं ।

उन्मीलद्गण रत्नगेहण मही प्रौढप्रभालंकृता सौदर्यामृत वाहिनी मधुसुहृत्साम्राज्य सर्वस्वभूः । सौराष्ट्रेश्वर यादवान्वयमणे. श्रीमंटलीक प्रभो राज्ञी चारु रमावती वितनुते संगीत मानंददं ॥ १ ॥ कुंभब्रह्म सुमीरित क्रममगा दुच्छिन्नता यत्क्षितौ तत्प्रोद्धृत्य गिरीश भक्ति परमा रम्या रमा भारती । संगं तं भरतादि गोत्र विधिना ब्रह्मैक तानोपमा मंदानंद विधायकं विलसति प्रोल्हासयंति परम् ॥ २ ॥ नादा नंद मयी वरोन्नतकरा लोलो ल्लसद्वल्लकी रागा रक्त गिरीश्वर स्वरकला शर्मोर्मिरम्यो ज्वला । लीलां दोलित राजहंस गमना सद्भोगि भर्त्तुः सुता पद्मा मोदित मानसा विजयते वागीश्वरी श्रीरमा ॥ ३ ॥ संजाता जलधे र्विवेक विधुरा धीरे प्त्ववद्धादरा चापल्या ऽभिरना प्रमोद मयते या पंकजातस्थितेः । विद्वत् कुंभ नृपोद्भवा गुण गणा पूर्णा प्रवीणा नदी धैर्य प्रीति मतीति तां विजयते श्रेयो चित

श्रीरमा ॥ ४ ॥ राज द्रैवत भूधरां तररतं श्रीकांत माराधयन् कांतानदित मानसा यदनिशं राधेव चावत्सतः । मेरो कुंभकृते महीप तनय श्रीमंडलीक प्रिया श्रीदामोदर मंदिरं व्यरचयत् कैलास शैलोज्वलं ॥ ५ ॥ श्रीरस्तु सूत्रधार रामा । अथ श्रीमहाराज श्रीमंडलीक प्रबंधः । इंदोर निदित कुलं बहुवाहुजात वंशेषु यस्य वसते रतुलं बभूव । श्रीमंडलेंद्र गिरि रेवतका धिवासो दामोदरो भवतु वः सुचिरं विभूत्ये ॥ १ ॥ श्रीमंडलीक दर्शन परितुष्ट मना महेश्वरः- सुकविः । श्रीमेदपाट वसतिं गुण निधि मेनं यथा मानि स्तौति ॥ २ ॥ आश्लिष्टः सुर विटपी संप्रति चिंता मणि र्मया कलितः । लब्धः सुवर्ण शिखरा मिलिते त्वयि मंडलाधीश ॥३॥ सुर विटपि विटप विशाल भुजदलकलित विपुल महाफलं । कलि चित्त चिंता मणि महागुण जाल जन्म महीतलं । अनवरत सुर सरिदमलतमजल ललित सुर शिखरि प्रभं कलयामि मंडल राज महमिह तोष मेमि हिम प्रभं ॥ ४ ॥ परि कलितः पुरुहूतो धन नाथो नयन गोचरो रचितः । साक्षात् कृतो रतीश स्त्वयि मिलिते मंडलाधीश ॥ ५ ॥ पुरुहूत मिव गुरु मंत्र यंत्रित मतुल मंगल मंडितं । धननाथ मिव धन दानं तोषित चंद्र मौलि मखंडितं । रति रमण मिव वर युवति कृतनुति महत विषम शरै र्युतं परिचित्य मंडल राज मह मिह मोद मगम मनुव्रतं ॥ ६ ॥ अंकुरिता शर्मलता कोरकिता चित्त चंपक व्रततिः । उल्लसिता तनु नलिनी मिलिते त्वयिं मंडलाधीश ॥ ७ ॥ कलधौत वितरण तरल करजल जनितं शर्म सदंकुरं जन चित्त चंपक कुसुम सभव मधुर तर मधु बंधुरं । गणनैक मणि विस्फुरण पुलकित विपुल तनु नलिनी दलं अनुभूय मंडल राज मिद मपि भवति हृदय मनाकुलं ॥ ८ ॥ कर्पूरं नयन युगे वपुषि सुधा रश्मि परिषेकः । हृदये परमानंद स्त्वयि मिलिते मंडलाधीश ॥ ९ ॥ वन सार सारसभाभि मार्दवलोचनं हिमनिर्भरे सकलं प्लुतं वपु रद्य हिमहिम धाम धामनि निर्झरे । मम मनसि परमा नंद संपदुदारतर मभि वर्द्धते नरनाथ भवति विलोकिते सति मंडलेश शुचिस्मिते ॥ १० ॥ सुर तरु रद्य नरेश गेहदर्श मम कलयति । सुरगिरि रितिं यदुराज राजमान संकलयाति । सुरपति र्यमिति मति रुदेति । संप्रति नर नायक पतिरिति नयना नुरक्ति रुदयाति । दृढसायक अनुपमतम महिम महीप सुसमंडल सकल कला । अष्ट भूति भवमवधि नवनिधि सांनिधि रधिकमला ॥ *

---

* अत्र अंतिमा पंक्तिः पठना शक्यत्वा त्परित्यक्ता.

गोविंद देवजी के मंदिर की प्रशस्ति।

" सम्वत ३४ श्री शकवन्ध अकबरशाह राज्ये श्रीकुर्मकुल श्रीपृथीराजाधि। राजवंश महाराजश्रीभगवन्तदास सुत श्रीमहाराजाधिराज श्रीमानसिंहदेव श्रीवृन्दावन जोग पीठस्थानकरा श्रीगोविन्ददेव को।"

इसके पारम्भ होने का यह संवत जानना चाहिए।

" श्रीवृन्दाविपिने शिवादिदिविषद्वृन्दावलीबन्दिते........श्रीगोबिन्द........ ष्णकृसदाराजते ॥ १ ॥ श्रीमानर्कवरोयदा भुवमयात्सर्वीतदैवाधुनासर्वः सौख्यम.... गणैः स्वधर्ममुच्चैर्भजन्। श्रीगोविन्द पदंतदेतदयिते वासायसद्वैष्णवालम्भेल....तस्मै सदेवा० पः ॥ २ ॥ तस्मिंस्तस्यसदान्वितक्षितिपतिः श्रीमानसिंहाभिधः पृथ्वीराज विराजः.... धे श्चन्द्रमाः। भूभृद्भारहमल्लजात भगवद्दासात्मजोमन्दिरं कुर्वन्निन्दिरयाबलादचलया ॥ ३ ॥ .... स्तथाविधमहाराजाधिराजोप्यसौ येनैवारि दिगतेन विजयीध्वस्त भ्रमः क्रीड़ति सश्रीमान ० सिंह....नवायुद्धेयस्य नियत्यं दिव्य पितृयाः कीर्त्तिध्वजत्वंगताः ॥ ४ ॥ यः क० भिपजांतिरेप विजयीश्रीमानसिंहोनृपः.... सदा विजत....दास सुधीः। श्रीगोविन्दपदारविन्द....रतनमन्दिरं संमदान् कुर्वन्नुद्यममत्रतूर्ण....पू.... ॥ ५ ॥ ....श्रीमानसिंहाद्भुतम् ॥ ६ ॥....इन्द्रप्रस्थनिवासि....पुगुरुर्गोविन्ददासाभिधः। ....भवदा विष्य दखिलं श्रीवैष्णवानांसुखं श्रीकर्ता हरिणासदानि जदयाया० याविनि.... ॥ ७ ॥ श्रीग्रसेनःकृती, तौद्वौश्रीयुतभानसिंहनृपति प्रस्थायितौनन्द ताम्। किम्वाग्म्नद्ववनीय....प्रतिपदंसौख्यंगम हृद्विन्दतु- ॥ ८ ॥ मुनिवेदर्तुचन्द्राहू १६४७ सम्व न्मन्दिर सम्भवे.... ॥ ९ ॥ कलिलुप्तातत० तौश्री युतवृन्दावनेशितुःसेवाम्। श्रीमद्रूयसनातननामानौतौभजेतज ॥१०॥"

इस पद्यों का अविकल न होने से अर्थ लिखना हम उचित नहीं समझते। केवल एक दो बात स्मरण रखने के योग्य हैं॥ १ ॥ म, अकबर का संस्कृत नाम " अर्कबर " है प्रायः भाषा रसिक और संस्कृत रसिक लोगों के उपयोगी है २ य मानसिंह की वंश परम्परा यह है, राजा भारहमल्ल (वा भारामल्ल) राजा भागवद्दास वा भगवन्तदास राजा मानसिंह। ३ य श्रीरूपगोस्वामी और श्री सनातन गोस्वामी की प्रशंसा जैसी आज काल है वैसी तीन सौ बरस पहिले भी थी लोग आधुनिक कीर्त्ति कल्पनान समझें।

इस लिपि के निकटही जगमोहन के द्वार के ठीक सामने भूमि पर एक

पत्थर की चटान में यह सफल सम्बन्धी लिपि है "राणा श्री अमर सिंह जी सुतश्री वागजीसुतश्री सबलसींहजी की आज्ञा सफल संवत सतरे से अगरोत-रामंगसेर सुद ७ सो मे लखन्त प्रोहित जी जवारादास पधारी संवत १७९८।

५. छोटे २ शिखर के दक्षिण, उत्तर में दो मन्दिर, दक्षिण मन्दिर की शिखर कुछ फूटी है और मन्दिर का द्वार दो किष्कु ऊंचा है सीढ़ी के योग से चढ़ते हैं। भीतर एक तल घर में वृन्दादेवी (श्रीपातालदेवी) विराजती है। घुमाव की बारह पक्की सिढ़ी उतर कर नीचे दर्शन करना होता है। देवी की मूर्त्ति श्वेतवर (संगमरमर) पाषाण की अष्टभुजी एवं सिंह वाहिनी ११ इंच ऊंची और ८ इंच चौड़ी है पासही एक श्वेतवर की छोटीसी चौकी पर श्रीराधिका जी के चरण चिन्ह हैं चौकी के तट पर यह पद्य लिखा है।

तप्तकाञ्चनगौराङ्गि राधेवृन्दावनेश्वरि ।
वृषभानुसुतेदेवि प्रणमामिहरिप्रिये ॥

एक मोरी जिसका निकास बाहर की ओर उत्तर दिशा में है उसके ऊपर यह प्रशस्ति है।

"संवत ३४ श्रीशकवन्ध अकबर महाराज श्री कर्म कुल श्री पृथीराजधि-राज वंश श्री महाराज श्रीभगवन्तदास सुत श्रीमहाराजाधिराज श्रीमानसिंहदेव श्रीवृन्दावन जोग पीठ स्थान मन्दिर कराजो श्रीगोविन्ददेव को काम उपरि श्री-कल्याणदास आज्ञा कारि माणिकचन्द चोपड़० शिल्पकारि गोविन्ददास दीलव-रिकारिगरद: गोरषदासवोभवलु ॥"

मन्दिर के चारो ओर सङ्कीर्ण कच्चे चौक में कोई उत्तम स्थान नहीं है, केवल पूर्व द्वार की बांई ओर कुछ थोडी फुलवारी है और पश्चिम द्वार की ओर अति निकट एक छत्री हैं यह छत्री प्रथम नाट्य मन्दिर के सामने थी परन्तु अब कि जीर्णोद्धार में परिष्कार एवं संस्कार कर के पश्चिम प्रान्त में एक चौतरे पर स्थापित कर दी गई। इसमे चरण चिन्ह श्वेतवर के बने हैं और एक स्तम्भपर लिपि है ज्ञात होता है कि इसमे किसी के अस्थि समूह सञ्चित थे क्योंकि चरण चिन्ह का व्यवहार प्राय: ऐसेही स्थान में होता है दूसरे राजाओं में ऐसी रीति भी प्रचलित है पुण्य स्थान में अस्थि सञ्चय कियाजाय॥

"संवत १६९३ वर कातिक वादि ९ सुभदिने हजरत श्री३ शाहजहां राज्ये राणा श्रीअमरसिंह जी को वेटो राजाश्रीभीम जी राणी श्रीरम्भावती चौख-ण्डी सौराई छैजी।"

बौधमत का श्लोक जो सारनाथ को धमेख में मिला था ।

७ ये धर्म्महेतु प्रभवाहेतुतेषां तथा गता ह्यवदत् तेषांचयो निरोध
एवंवादी महाश्रमण: ।

बिहार के ज़िले में बहुतेरी प्राचीन बौध मूरतों पर यह श्लोक खुदा हुआ है, बरन राज ग्रह के प्रसिद्ध जैन मन्दिर में भी जो बस्ती में है एक मूर्त्ति पर यही श्लोक खुदा है, और इसी कारण हम उस को प्राचीन बौध-मती अनुमान करते हैं ।

जेनरल कनिंगहाम साहिब ने जो दो हज़ार बरस के लगभग पुराने राजा वासुदेव की अथवा राजा वासुदेव के संवत् नव्वे में बनवाई महावीर स्वामी की मूर्ति मथुरा में पायी है उस पर ९० का अंक लिखा है जेनरल साहिब ने जो उस मूर्ति पर से हर्फों का छापा लिया है उस के एक (पहले) टुकड़े में (सिद्ध ओं नमो अरहत महाबीरस्य ··· ... राजा वासुदेवस्य संवत्सरे ९०) लिखी है अफ़सोस है कि हर्फों के घिस जाने के सबब इस से अधिक उस की इबारत पढ़ी ही नहीं जासकती है ।

जिला गया के प्रसिद्ध स्थान देवमूंगा में एक सूर्य्य का मन्दिर है उस पर यह श्लोक खुदा है इस लेख से अत्यन्त आश्चर्य होता है कि इतने दिनों का लेख वर्त्तमान हो ।

शून्यव्योमनभोरसेंदुकरभेहीने द्वितीयेयुगे ।
माघेवाणतिथौ शिते गुरुदिने, देवोदिनेशालयं ॥
प्रारंभेद्दषदांचयैरचयितुं सौम्यादिलायांभवो ।
यस्या सौत्सनराधिप: प्रभुतया लोकोविशोकोभुवि ॥

अर्थ—दूसरे युग अर्थात् त्रेता युग के १२१६००० वर्ष बितने पर माघ शुक्ल पंचमी गुरुवार के दिन ऐलपुरुरवा जो बुध से इला में उत्पन्न हुआ था उसने पाषाणादिकों से दिनेश अर्थात् सूर्य्यका मंदिर बनाना प्रारंभ किया था जब यह राज्य करता था तब इसको प्रभुता से सब प्रजा भूमि में सुखी थी ।

प्राचीन काल का संवत निर्णय।

माधवाचार्य्य लिखित किसी की टीका से राजावली ग्रन्थ से उद्धृत।

यह राजावली ग्रन्थ किसी ज्योतिषी ने सं० १८१६ में बनाया है इस में संवत्सर प्रतिपदा के विधान और कालादिक का अनेक निर्णय किया है और फिर कलियुग के राजाओं का और अन्ययुग के राजाओं का नाम 'राजाधिराज माधवाचार्य्य टीकाया मुक्त' कह के उसने माधवाचार्य्य के किसी ग्रन्थ की टीका से उद्धृत किया है यह संवत और नामादिक प्राचीन इतिहास के उपयोग जान कर यहां प्रकाश किये जाते हैं।

सत्ययुग में—कृष्णातीर में अमरेश्वरलिङ्ग। पुष्करतीर्थ बौद्धपत्तनपीठ। राजकृतमंत्र कृतपुत्र कृतवेद त्यागी मेन मुचकुन्द भैरव नन्द अन्धक हिरण्यकशिपु प्रह्लादविरोचन बलि, बाणासुर गयासुर कपिलभद्र निर्घोषा मान्धाता वेणु। कश्यप सूर्य्य मनु महामनु तक्षक अनुरञ्जन विश्वावसु विमना प्रद्युम्न धनञ्जय महोदास यौवनाश्व मान्धाता मुचकुन्द पुरूरवा बलि सुकान्ति वीर।

त्रेता में—नैमिषारण्य तीर्थ। सोमेश्वर लिङ्ग। जालन्धर पीठ। राजा कद्रू पुरूरवा प्रोषध वेण्य नैषध त्रिशङ्कु मरीचि इक्षु मनु दिलीप रघु त्रिशङ्कु, हरिश्चन्द्र रोहिताश्व धुन्धुमार जन्हु सगर भगीरथ वेणुवत्स भूपाल अज अतिथि नल नील नाभ पुण्डरीक क्षेमक शतधन्वा शतानीक परिजातक दलनाभ पुष्पसेन अजपाल दशरथ श्रीराम लवकुश अङ्गस्वामी अग्निवर्ण।

द्वापर में—कुरुक्षेत्र तीर्थ। केदारेश्व लिङ्ग। अवन्ती पत्तन। राजा—भर्तृहरि पृथु अनुविरक्त अव्यक्त फेन इन्द्र ब्रह्मा अत्रि सोम बुध धनुर्जय शतनु गव्य गवाक्ष असमञ्जस निर्घोष प्रजापति अक्रूरउपवीर अनुमन्धि ज्येष्टभरत कनिष्ठभरत धर्म्मध्वज सान्तनु पाण्डु नरवाहन क्षेमक ययाति क्षान्त चित्त पार्थ अर्जुन अभिमन्यु परक्षित जन्मेजय।

कलियुग में—गङ्गा तीर्थ। कालीदेवता प्रतिष्ठान पुरनगर। कल्किअवतार इसने अलग अलग तीन चाल पर यहां लिखा है और उन के परस्पर जन्म दिन पिता माता के नामादिक सब अलग २ हैं। कलियुग के आरम्भ से ३०४४ वर्ष के भीतर युधिष्ठिर परीक्षित जन्मेजय वत्सराज क्षेमसिंह सोमसिंह राणकण्ठ अंशुमेन रामभद्र भरत सिंह पठाण सिंह विक्रम सिंह नरसिंह आदित्य सिंह ब्रह्म सिंह बसुधा सिंह हर्षसेन भर्तृहरि। ३०४४ में विक्रम

का राज्य ३१७८ में शालिवाहन का राज्य फिर सूर्य्यसेन शक्ति सिंह खड्गसेन-सुखसिंह मम्मनसेन मुञ्ज भरत श्रीपाल जयानन्द रामचन्द्र छत्रचन्द्र अनूप सिंह तुम्बरपाल ननशहाग रणवादी शालपाल कीर्त्तिपाल अनङ्गपाल विशालाक्ष सोमदेव वन`व नामदेव कीर्त्तिदेव पृथ्वीपति इतने प्रसिद्ध राजा हुए। फिर म्लेच्छों का राज्य आरम्भ हुआ। सिकन्दरशाह ने विश्वेश्वर का अपराध किया। इस के पीछे मुसलमानों का वर्णन है।

फिर कालनिर्णय यों किया है—व्यासादिक का काल ५१५४ वर्ष कलियुग लगने के पूर्व। श्री कृष्णावतार द्वापर की सन्ध्या प्रारम्भ कलियुग के पूर्व क्योंकि कलि का काल होते भी उसने प्राबल्य नहीं पाया था। क्षेमक तक युधिष्ठिर का वंश सुमित्र तक इक्ष्वाकु का वंश और रिपुञ्जय तक जरासंध का वंश एक सहस्र वर्ष कलियुग बीते समाप्त हो चुका था। फिर १३८ वर्ष प्रद्योतनो का राज्य गत कलि ११३८ वर्ष। शिशु नाग वंश का राज्य ३६२ वर्ष ग० क० १५०० वर्ष। फिर शुद्ध क्षत्रियों का राज्य छूटकर नन्दादिकों का राज्य हुआ नन्दों का राज्य १३७ वर्ष ग० क० १६३७ वर्ष। फिर कण्ववंश के राजा उन का राज्य ५५७ वर्ष ग० क० २१९४ वर्ष। फि र आन्ध्रराजा का राज्य ४५६ वर्ष ग० क० २६५० वर्ष। फिर सात आभीर और दस गर्दभिल्ल राजों का राज्य ३९४ वर्ष ग० क० ३०४४ वर्ष। फिर विक्रमों का राज्य १३५ वर्ष ग० क० ३१२९ वर्ष। अन्त के विक्रम को शालिवाहन ने मारा फिर शालिवाहन वंश ने १५५ वर्ष राज्य किया। शेष पुत्र के वंश ने १३९ शक्ति कुमार के वंश ने ११४ शूद्रक ने ९५ और इन्दुकिरीटी ने ४८ सब ४३७ वर्ष हुए। फिर ३३ वर्ष तोमर, ३४ वर्ष चिन्तामणि, ३० वर्ष राम, और ३६ वर्ष हेमाद्रि राजा ने राज्य किया·सब १३३ वर्ष हुए। तब शक ५७० था उसी के पीछे तुरुष्कलोगों का प्रवेश होने लगा। फिर भारतवंश के खण्डराज हुए। फिर चालेक्य वंश ने ४४४ वर्ष, पद्मोमदत्त ५५ वर्ष गौडराज २०, भिल्लराज ५० वर्ष राज्य तब शाके १००६ वर्ष कलि ४१८५, फिर यादवराजे २२७ वर्ष तब शक १२३३ वर्ष। इस वंश के देवगिरि के अन्तिम राजा रामदेव को शक १२१७ में अलाउद्दीन ने जीतकर राज्य फेर दिया, रामदेव ने ५६ वर्ष और राज्य किया फिर तुरकों का राज्य २३४ वर्ष हुआ।

चरितावली

अर्थात्

अनेक प्रसिद्ध पुरुषों का जीवनचरित्र ।

—ितावली ।

विक्रम चरित्र ।

इस के पूर्व कि हम विक्रमादित्य का कुछ चरित्र लिखें हम को श्री मद् बुहलर साहब का धन्यवाद करना चाहिए जिन्हों ने विक्रमांक चरित्र नाम ग्रन्थ खोज कर प्रकाश किया । यह श्रीहर्षचरित्र के चाल का एक दूसरा ग्रन्थ है जो अब प्रकाश हुआ यह ग्रन्थ विल्हणकवि का है और अनेक छन्दों में अठारह सर्ग में लिखा हुआ है इस के सत्रह सर्गों में विक्रमादित्य का चरित्र और अठारहवें सर्ग में कवि ने अपना वर्णन किया है। प्रसिद्ध है कि चौरपंचासिका इसी विल्हण की बनाई हुई है कहते हैं कि गुजरात के राजा वैरोसिंह की बेटी चन्द्रलेखा वा शशिकला को विल्हण पढ़ाता था और उस ने उस्से गन्धर्व विवाह भी किया था जब राजा ने इस बात से क्रुद्ध होकर विल्हण   फांसी की आज्ञा दिया रस्ते में इस ने चौरपंचाशिका बनाई जिस्से प्रसन्न होकर राजा ने फांसी के बदले अपनी कन्या को बांह उस्के गले में डाली इन कथाओं पर हमारा कुछ ऐसा विश्वास नहीं क्योंकि इस ग्रन्थ में विल्हण ने इन बातों की कहीं चरचा भी नहीं की है। विल्हण अपना हाल यों लिखता है काश्मीर के देश में जिहलम और सिन्ध के मुहाने पर प्रवरपुर नाम का बडा सुन्दर नगर था अनन्त देव वहां का बडा प्रतापी और धार्मिक राजा था जिस की रानी का नाम सुभटा था उस रानी का भाई चितिपति भोज के समान कवियों का गुण ग्राहक और बड़ा विष्णुभक्त था। अनन्त का बेटा कलश हुआ और कलश के पुत्र हर्षदेव और विजयमल्ल थे प्रवरपुर के पास ही विजयवन में खोनमुख नाम का एक गांव था जहां कुशिक गोत्र के ब्राह्मण बसते थे जिन को गोपादित्य मध्य ेश से बड़े आदर से लाया था उन ब्राह्मणों में मुक्तिकलश सब से मुख्य था और उस को राज्य कलश और राज्य कलश को ज्येष्ठ कलश पुत्र हुआ ज्येष्ठ कलश को इष्टराम, विल्हण, आनन्द तीन पुत्र थे विल्हण व्याकरण और काव्य अच्छी तरह पढ़ा था और श्री वृन्दावन में बहुत दिन तक बस-ने काल बिताया और फिर कन्नौज, प्रयाग, बनारस और अयोध्या में फिरता रहा और फिर कुछ दिन डाहाल के राज्य में कुछ दिन धार में और कुछ

दिन गुजरात में रहकर अपनी कविता से लोगों को प्रसन्न करता रहा अब यह दक्षिण में चोल देश में गया तो वहां के राजा से इसको विद्यापति की पदवी मिली उस की माता का नाम नागादेवी था करण के दरबार में गंगाधर कवि के मुकाबिले में राम जी के चरित्र में काव्य बनाया यह अपने ग्रन्थ में लिखता है कि किसी कारण से वह राजा भोज से न मिल सका विक्रमांक चरित्र उस ने अपने बुढ़ापे में बनाया विदित रहे कि विल्हण ईसवी ग्यारवें शतक के मध्य और अन्त भाग में हुआ है क्योंकि विक्रमादित्य ने (जिसके दरबार का यह पंडित था) सन १०७६ से ११२७ तक राज्य किया था। विल्हण की कविता में कई बातें विशेष जानने के योग्य हैं जैसा उस ने कादम्बरी का अपने ग्रन्थ में वर्णन किया है जिस्से स्पष्ट जाना जाता है कि बाण कवि विल्हण के पहिले हुआ है और उस के समय में भी बाण की कविता का माधुर्य्य भारतवर्ष में फैला हुआ था फारसी (शिकस्त) के चाल के कोई अक्षर विल्हण के समय में काश्मीर में लिखे जाते थे क्योंकि उस ने काश्मीर के वर्णन में लिखा है कि जहां कायस्थ लोग अपने लिखावट की जाल से किसी को ठग नहीं सक्ते थे विल्हण गुजरातियों से बहुत नाराज था क्योंकि वह लिखता है कि गुजराती राक्षसी बोली बोलते हैं और लांग नहीं बांधते और मैले होते हैं, विल्हण के बाप ने महाभाष्य पर कोई तिलक किया था परन्तु अब वह नहीं मिलता विल्हण की कविता वैदर्भी और ओज और प्रसाद गुण से पूर्ण है। कविता से जहां कवि के और गुण प्रगट होते हैं वहां साथ ही उस का अभिमान उद्दण्डता और परिहास का स्वभाव भी पाया जाता है। *

इसी कवि ने विक्रमादित्य का चरित्र अठारह सर्गों में कहा है इस समय हम इस बात का झगड़ा नहीं ले बैठते कि विक्रम कितने भए और किस २ समए में भय यहां पर हम केवल उस विक्रम का चरित्र वर्णन

---

* विल्हण का यह स्फुट श्लोक मिला है जिस्से उस का अभिमान स्पष्ट प्रगट होता है।

वासः शुभ्रमृतुर्वसन्तसमयः पुष्पं शरन्मल्लिका ।
धानुष्कः कुसुमायुधः परिमलः कस्तूरिका ऽस्त्रं वनुः ॥
वाणीतर्वरसोज्वला प्रियतमा श्यामावयो यौवनं ।
देवोमाधवएवपंचमलया गीतिर्कविर्विल्हणः ॥ १ ॥

करते हैं जो दक्षिण देश में राज्य करता था कल्याण जिस की राजधानी थी और विक्रमादित्य जिस का नाम था। हमारे पाठक लोगों को यह जान कर बड़ा आश्चर्य होगा कि यह वह विक्रम नहीं है जिस का संवत चलता है। और न इस विक्रमादित्य के हुए १८४१ वर्ष हुए।

इस विक्रमादित्य का जन्म चालुक्य * नामक क्षत्रीवंश में हुआ था। बिल्हण लिखता है कि ब्रह्मा एक बेर अंजुली में जल लेकर अर्घ देना चाहते थे कि इंद्र अपनी विपति कहने लगा जिस्से ब्रह्मा ने अपनी अंजुली का जल गिरा दिया और उसी से चालुक्य नामक क्षत्रियों का कुल उत्पन्न हुआ। हारीत और मानव्य इस बंस के पूर्व पुरुष थे और पहले से ये लोग अयोध्या के राजाओं को अधिकार में अयोध्याजी में बसते थे श्री रामचन्द्र के समय में भी ये लोग उन की सेवा में उपस्थित थे फिर इन लोगों ने दक्षिण में अधिकार आरम्भ किया और धीरे २ वहां के राजा हो गए काल पाकर श्री तैलप नामक इस बंस में एक राजा हुआ इस ने सन् ९७३ से ९९७ तक राज्य किया इस ने हिन्दुस्तान के बहुत से राजाओं को मार कर अपना अधिकार बढ़ाया श्री युत बूलर साहब लिखते हैं मुंज को इसी ने मारा था और मालवा पर इसने बड़े धूमधाम से चढ़ाव किया था उस के पीछे सत्याश्रय राजा हुआ जिस ने ग्यारह वर्ष अर्थात् सन् १००८ तक राज्य किया इसी का नामान्तर सत्यश्री था इस के पीछे जै सिंह राजा हुआ। जिस ने सन् १०४० तक राज्य किया। इस के पीछे आहव मल्लदेव राजा हुआ इसी का नामान्तर त्रिभुवनमल्ल और त्रैलोक्यमल्ल था। इस ने पवांरों ‡ के देश मालव की राजधानी धारानगरी पर चढ़ाई किया। करनाटक कुंतल और डाहल देश में इस का निज्यराज था पर चोल केरल और द्रविड़ देश इस जीत के अपने राज्य में मिलालिया था बिल्हण लिखता है कि अद्भुत कथा और दश रूप काव्य में इस राजा का बहुत सा वर्णन है इस को पुत्र नहीं होता था इस से इसने महादेव जी को घर हीं में बड़ी आराधना की और काल पाकर सोमदेव विक्रमादित्य और जय सिंह तीन पुत्र

* "बुन्दी राजवंश वर्णन" में देखिये।

‡ "बुन्दी राजवंशवर्णन," और बाबू रामचरित्र सिंह संग्रहीत "नृपवंशावली" और "राजस्थान"। में देखिये।

हुए विक्रम के शरीर में छोटेपन ही से शूरता इत्यादिक उत्तम गुण झलकते थे जब यह जवान हुआ तो पहिले इस ने बंगाले पर चढ़ाव किया और कामरूप जीता समुद्रपार होकर सिंहल पर † इस ने चढ़ाव किया और द्राविड़ और चोलों की राजधानी कांची तीन बेर लूटा जब वह सिंहल जीत कर लौटा तो गोदावरी के पास सुना कि तुंगभद्रा के किनारे पिता ने देह त्याग किया यह उसी समय घर गया और इस का बड़ा भाई सोमदेव राजा हुआ विल्हण लिखता है कि सोमदेव बड़ा मदोन्मत्त होगया था और इन्दुमित्र नामक एक बुरा राजा उस की सहायता को मिल गया इस से विक्रम ने इस का संग छोड़ा इसी को चालुक्य कहते हैं । दिया और कोकण का राजा जयकेश इस से मिल कर दक्षिण में बहुत से देश जीते और अपना अपना अलग राज स्थापन किया उस समय इस का छोटा भाई जयसिंह भी इस के साथ था द्रविड़ देश के राजा ने अपनी कन्या देकर इस से संधी की और जब वह राजा मर गया तो विक्रम ने उस के बेटे अर्थात् अपने साले को बड़े धूमधाम से गद्दी पर बैठाया । और फिर गांगकुंडपुर जीता हुआ तुंगभद्रा के किनारे आकर रहा जब वेंगी के राजा राजिक ने इस के साले को जीत लिया था तब यह बड़ी धूमधाम से उस से लड़ने को

---

† सिंहल के इतिहास में बङ्गाले का पहला हाल इतना लिखा है कि सिंहबाहु नाम एक बङ्गाले का राजा था उस का बडा बेटा बिजयसिंह प्रजाओं को पीड़ा देने के कारण जब देश से निकाला गया तो सात सौ आदमियों के साथ जहाज में चढ़कर निकला अनेक प्रकार के कष्ट सहने के उपरान्त सिंहल में जा पहुंचा और वहां के लोगों को जीत कर उन का राजा बन गया। बिजयसिंह के मरने के बाद उस का भतीजा पांडुवास जो बङ्गाले में रहता था सिंहल द्वीप के सिंहासन पर बैठा, यह सिंहलद्वीप के राजाओं में पहला राजा था। सिंहवंश के राजा होने के कारण इस टापू का नाम सिंहलद्वीप हुआ जिस साल बुद्धदेव का परलोक हुआ था उसी साल बिजयसिंह सिंहल में पहुंचा । यह साफ जान पड़ता है कि ५०० बरस ईसवी सन के पहले बंगाले में आर्यवंश के लोगों का अधिकार बहुत बढ़ा था क्योंकि उन लोगों ने भी समुद्र को राह से जहाज पर चढ़कर दूर २ के देशों को जीता था ।

गया था कहते हैं कि राजिक इस के बड़े भाई सोमदेव का मित्र था इस से राजिक की ओर से सोमदेव भी लड़ने को आया था यह लड़ाई बड़ी तैयारी से हुई और सोमदेव अन्त में पकड़ा गया राजिक भागा और विक्रमादित्य अपनी बाप की गद्दी पर बैठा काहाट के राजा की कन्या ने स्वयम्बर किया था जिस में विक्रमादित्य भी गया था; विल्हण ने यहां पर राजाओं की स्वभाविक अभिमान और काम की चेष्टा के वर्णन में बहुत ही अच्छी स्वभावोक्ति दिखाई है और 'पारसीक तैल' के नाम से आतशबाजी के भांति की किसी वस्तु का वर्णन किया है स्वयम्बर में विल्हण ने नीचे लिखे हुए राजाओं का वर्णन किया है जिस से प्रगट होता है कि इतने राज उस समय अलग २ वर्तमान और अच्छी दशा में थे, यथा अयोध्या, चन्देरी, कान्यकुब्ज। (अर्जुन के कुल का राजा) चम्बल के तट का देश, कालिंजर, गोपाचल, मालव गुजरात, मन्दराचल के समीप का पांड्यदेश और चोल। कन्या ने जयमाल विक्रमादित्य के गले में डाली और बड़ी धूमधाम से इस का विवाह हुआ।

इस राजा के बहुत से ऐश्वर्य्य और विहार वर्णन के पीछे विल्हण लिखता है कि एक दिन विक्रम ने दूत के मुख से सुना कि उस का छोटा भाई बागी होगया है और चेंगी जीतने के पीछे विक्रम ने जो उसे देश और सेना दी थी उस पर सन्तोष न करके बहुत से सिपाही नौकर रख के सारे दक्षिण में लूट मार करता फिरता है और द्रविड़ के राजा [शायद विक्रम का साला] ने उसे बहुत ही बहकाया है और छोटे २ बहुत से उपद्रवी राजा उस से मिल गए हैं। यह सुन कर बहुत पछताया और सेना लेकर बाहर निकला जब भाई की सैना के पास इस का डेरा पहुंचा तो इस ने दूतों के और पत्रों के द्वारा उस को बहुत समझाया पर वह न माना और अन्त में विक्रम से हारकर कहीं दूर जा रहा विक्रम फिर सुख से राज्य करने लगा एक बेर कांची पर फिर चढ़ा था क्योंकि वहां का राजा इस से फिर गया था, कवि ने विक्रम के स्वभाविक बहुत से गुण लिखे हैं जिन में उदारता का बहुत ही सविशेष वर्णन है इस ने ५१ वर्ष राज्य किया था।

ऊपर के लिखे अनुसार लोगों को विक्रम का जीवनवृत्त विदित होगा कवि ने उस में जोजो सद्गुण लिखे हैं वह उस में रहे हों पर अपने दो भाइयों को उस ने जीता और बड़े भाई को क़ैद करके आप गद्दीपर बैठ इस से उस की

चरित्र में हम को थोड़ा सन्देह होता है क्योंकि जब उस के बड़े भाई के जीतने का कवि वर्णन करेगा तो उस दोष के छिपाने के वास्ते उस के भाई को बुरा लिखे इस में क्या सन्देह है। जो कुछ हो विक्रम एक बड़ा राजा और गुणग्राही मनुष्य हो गया है और यह पंडितों के आदर ही का फल है कि उस का संपूर्ण वर्णन आज हम पाठकों को सुनाते हैं ।

कालीदास का जीवनचरित्र ।

यह सब वार्ता केवल बंगदेशियों की है पश्चिम प्रदेशीय पंडित लोग भारतवर्षीय कवियों में कालिदास को सर्वोच्चासन देते हैं बम्बई के प्रसिद्ध पंडित भाऊदाजी ने केवल कालिदास की कविता ही नहीं पढ़ी बरन बहुत परिश्रम करके प्राचीन संस्कृत ग्रन्थ और ताम्र पत्रों से उन का जीवन वृत्तान्त संग्रह को, हम ने भी उन के ग्रन्थ से कई एक बातें ग्रहण किया है ।

कालिदास विख्यात महाराजा विक्रम के नव रत्नों में थे इस के* व्यतिरिक्त उन के जीवन की और कोई प्रमाणिक बात लोग नहीं जानते बंगदेश के कई अभिमानी पंडितों ने कालिदास को लंपट ठहरा कर उन के नाम से हास्य रस की कविताओं का प्रचार किया पाठशाला के युवा ब्राह्मण थोड़ा सा मुग्धबोध व्याकरण पढ़ के इन श्लोकों का अभ्यास करके धनिक लोगों का मनोरंजन करते हैं और इसी प्रकार धनी लोगों से प्रति वर्ष कुछ पाते हैं यथार्थ में तो यह सब कविता कालिदास की नहीं है परन्तु नवीन कवियों की बनाई हुई हैं " प्रफुल्लित ज्ञान नेत्र " नामक पद्यमय पुस्तक बंगभाषा में मुद्रित हुई है इस ग्रन्थ में लोगों ने मिथ्या कल्पना करके कालिदास में ऊपर लिखा हुआ दोष ठहराया है इसी प्रकार से इन दिनों अंगरेजी भूमिका सहित एक रघुवंश की सटीक पोथी मुद्रित हुई है इस में भी लोगों ने

* राजा लक्ष्मण सिंह रघुवंश के उलथा में यों लिखते हैं । "कालिदास नाम के कई कवि हुए हैं उन में दो मुख्य गिने जाते हैं एक वह जो राजा बीर विक्रमाजीत की सभा के नौरत्नों में था दूसरा जो राजा भोज के समय में हुआ इन में भी पण्डित लोग पहले को दूसरे से श्रेष्ठ मानते हैं और उसी के रचे हुए रघुवंश कुमारसम्भव मेघदूत ऋतुसंहार इत्यादि काव्य और शाकुन्तल नाटक विक्रमोर्वसी त्रोटक और और अच्छे अच्छे ग्रन्थ समझे गए हैं ।

मिथ्या कल्पना किया है कालिदास ने कोई भी ग्रन्थ में अपना वृतान्त कुछ भी नहीं लिखा है केवल एतनाही प्रगट किया है।

धन्वन्तरिःक्षपणकोमरसिंहशंकुःवेतालभट्टघटखर्परकालिदासाः।
ख्यातोवराहमिहिरोन्टपतेःसभायांरत्नानिवैवररुचिर्नवविक्रमस्य॥

केवल इतनाही परिचय नवरत्नों का लिखा है अभिज्ञान शंकुतल ग्रन्थकर्ता इतनेहीं परिचय से सन्तुष्ट न रह के और २ संस्कृत ग्रन्थों से इस विषय का अनुसंधान करना उचित है प्राय: ५०० वर्ष का हुए कि कोलाचल मल्लिनाथ सूरि ने कालिदास कृत काव्यों की टीका की है उन्हीं ने यह टीका दक्षिणावर्त्तनाथ की टीका देख कर बनाई परन्तु वह अब दुष्प्राप्य है भाषातत्वावित लासेन साहब ने यह लिखा है कि कालिदास ईस्वी दो संवत में समुद्र गुप्त की सभा में वर्तमान थे लासेन ने एक पत्थर देखा था जिस पर यह लिखा था कि "समुद्र गुप्त कवि बंधु काव्य प्रिय" और इसी से वह अनुमान करते हैं कि कविश्रेष्ठ कालिदास उन के सभासद थे। वेन्टलीने एशियाटिक नामक पत्रिका में भोज प्रबंध का फारसीसी अनुवाद और "आइने अकबरी" को देख कर लिखा है कि भोज राजा के राज्य के ८०० वर्ष पश्चात् विक्रमादित्य के सभा में कालिदास वर्तमान थे परन्तु यह बात कदापि नहीं हो सकता वेल्टी ने स्वीय ग्रन्थों में कई एक ऐसी अशुद्ध बातें लिखी हैं जिस के पढ़ने से बोध होता है कि वह हिन्दुओं का इतिहास कुछ भी नहीं जानते।

कर्नेल उइलफोर्ड, प्रिन्सेप, और एलफिनस्टन ने लिखा है कि कालिदास प्राय: १४०० वर्ष पूर्व वर्त्तमान थे।

भोज प्रबंध के प्रमाणानुसार गुजरात मालव और दक्षिण के पंडित कहते हैं कि कालिदास सन् ११०० ईसवी में भोजराजा के सभासद थे उज्जैन के राजसिंहासन पर कई विक्रमादित्य और भोजराज नामक राजा बैठे परन्तु सब से अंत के भोज राज तो संवत ११०० ईसवी में राज्य करते थे। और इस से बोध होता है कि अंत के विक्रम हो को भोजराज कहते हैं और उन्हीं की नवरत्न की सभा थी हम स्वयं "भोजप्रबध" पाठ कर देखा कि है उस में यह लिखा है कि मालव देशांतर्गत धारानगराधिप भोज सिन्धुल के पुत्र और मुंजर के भ्रातृपुत्र थे भोज के बाल्यावस्था में उन

के पिता का परलोक हुआ तो उन के पितृव्य मुंज राजपद पर अभिषिक्त हुए और भोज ने उन के संली बन कर बहुत विद्या उपार्जन किया और इसी प्रकार भोज दिन प्रति दिन विख्यात होने लगे तो मुंज के मन में यह शंका हुई कि अब लोग हम को पदच्युत करेंगे और यह विचार करने लगे कि किसी प्रकार से भोज का प्राणनाश करूं इसी हेतु मुंज ने वत्सराज राजा को बुला कर अपना दुष्ट विचार प्रकाशित किया और कहा कि भोज को शीघ्रही अरण्य में लेजा कर इस का प्राणनाश करो परन्तु इस राजा ने भोज को तो छिपा रक्खा और पशु के रक्त से भरे हुए खड्ग को राजा मुंज के पास भेज दिया इस को देखकर उन्हों ने सानन्द चित्त से पूछा कि भोज ने मानव लीला समाप्त किया ? यह सुन वत्स राजा ने एक पत्र पर लिख दिया कि—" मान्धाता जो भोज क्या एक समय नृप कुल का शिरोमणि था अब परलोक में है। रावणारि रामचन्द्र जिन्हों ने समुद्र में सेतु बांधा था वह कहां है ? और बहुत से महोदय गण और राजा युधिष्ठिर ने स्वर्गारोहण किया है परन्तु पृथ्वी उन के साथ नहीं गई पर आप के साथ पृथ्वी अवश्य रसातल को जायगी " इस पत्र के पढ़ते ही मुंजर का शरीर रोमांचित हुआ और भोज के लिये अतयन्त व्याकुल हुए परन्तु जब उन्हों ने सुना कि भोज जीता है तो उन को वत्सराज से शीघ्र बुलवा कर धारानगर के राज सिंहासन पर बैठाया और आप ईश्वराराधन के निमित्त अरण्य में प्रवेश किया भोज ने पितृसिंहासन पा के बहुत से पंडितों को अपनी सभा में बुलाया हम को भोजप्रबंध में कालिदास के सहित नीचे लिखे हुए पंडितों के नाम मले हैं। :—

कर्पूर, कलिंग, कामदेव, कोकिल, श्रीदचन्द्र, गोपालदेव,जयदेव. तारेचन्द्र, दामोदर, सोमनाथ, धनपाल, बाण, भवभूति, भास्कर, मयूर, मल्लिनाथ महेश्वर, माघ, मुचकुन्द, रामचन्द्र रामेश्वर, भक्त, हरिवंश विद्याविनोद, विश्ववसु, विष्णुकवि, शंकर, सामदेव, शुक, सीता, सोम, सुबंधु इत्यादि।

सीता अवश्य किसी स्त्री का नाम है और इसी से बोधहोता है कि स्त्री शिक्षा उस समय प्रचलित थी तो हम नहीं समझते कि हमलोगों के स्वदेशीय अब इस को क्यों बुरा समझ के अपने देश की उन्नति नहीं होने देते देखिये अमेरिका में स्त्रीशिक्षा कैसी प्रचलित है और जो लोग एक समय अत्यन्त मूर्ख अवस्था में थे अब यूरप के लोगों को भी दबा लिया चाहते हैं

तो यह देख कर हे हिन्दुस्तानियों क्या तुम को थोड़ी भी लज्जा नहीं आती॥

पण्डित शेषगिरि शास्त्री ने लिखा है कि बल्लालसेन ने १२० ईस्वी में भोजप्रबन्ध बनाया इस से बोध होता है कि वे भोजराज की विद्योत्साही और उनके सन्मान की वृद्धि के हेतु कालिदास भवभूति इत्यादि कवियों को केवल अनुमान ही से भोजराज का सभासद ठहराया है। भोज चरित में इन सब कवियों के नाम मिलते हैं इस लिये भोज प्रबन्ध को कैसे प्रमाणिक ग्रन्थ कहें? इसी भोजराज ने चम्पू रामायण सरस्वती कण्ठाभरण, अमर-टीका, राजवार्तिक पातंजलिटीका और चारुचार्य इत्यादि बहुत से ग्रन्थ बनाये हैं परन्तु कालिदास भवभूति आदि कवियों के नाम इन में से एक भी ग्रन्थ में नहीं लिखे हैं। विश्वगुणादर्शक ग्रन्थकार बेदान्ताचार्य कालिदास श्रीहर्ष और भवभूति एक समय भोजराज की सभा में वर्तमान थे जैसा लिखा भी है।

माघश्चोरो मयूरो मुररिपुरेपरो भारविः सारविद्यः ।
श्रीहर्षःकालिदासः कविरथ भवभूत्यादयो भोजराजः ॥

इस में वे भी भोजप्रबन्ध प्रणेता बल्लाल की न्याय महाभ्रम में पतित हुए हैं क्योंकि श्रीहर्ष कालिदास और भवभूति एक काल में वर्तमान नहीं थे इस विषय में बहुत से प्रमाण भी हैं।

भारत वर्ष के बहुत से राजाओं का नाम विक्रमादित्य था, उज्जयिनी के अधीश्वर विक्रमादित्य जो ५७ खी॰ पू॰ में राज्य करते थे और जिन्हों ने 'संवत' स्थापन किया है तो अब हम लोगों को देखना चाहिये कि कालिदास इस विक्रम के सभा में उपस्थित थे वा नहीं हम्बोल्ट लिखते हैं कि कविवर होरेस और वर्जिलकालिदास के समकालि थे इस बात को बहुत से यूरोपीय पंडितों ने स्वीकार किया है कर्नेल टड ने अपने राजस्थान के इतिहास में लिखा है कि "जब तक हिन्दू साहित्य वर्तमान रहेगा तब तक लोग भोजप्रमर और उन के नवरत्नों को न भूलेंगे" परन्तु यह ठहराना बहुत कठिन है कि वह गुण पंडित तीन भोजराजों में से किस भोजराज की नवरत्न की सभा थी कर्नेल टड ने यह निरूपण किया है प्रथम भोजराज संवत ६३१ में द्वितीय ७२१ और तृतीय भोजराज संवत ११०० में वर्तमान थे "सिंहासनबत्तीसी" "वैतालपच्चीसी" और विक्रमचरित, आदि ग्रन्थों में महाराज विक्रमादित्य की बहुत सी अलौकिक कथा भरी हुई हैं

इसी कारण इन में कोई सत्य इतिहास नहीं मिल सकता । मेरुतुंग कृत "प्रबंध चिन्तामणि" और राजशेखरकृत "चतुर्विंशति प्रबंध" में लिखा है कि महाराजा विक्रमादित्य अति शूर वीर और महाबल पराक्रान्त नृपति थे परन्तु उन में नवरत्न और कालिदास आदि कवियों का कुछ भी वृत्तान्त नहीं लिखा है ।

जैन ग्रन्थों में लिखा है कि सिद्धसेन नामक जैनपुरोहित विक्रमादित्य के उपदेष्टा थे परन्तु हम नहीं कह सकते कि यह बात कहां तक शुद्ध है और एक जैन लेखक कहते हैं कि ७२३ संवत में भोजराज के राज्य में बहुत से लोग उज्जयिनी नगर में जा बसे थे यह और वृद्ध भोज दोनों जैनमतावलंबी थे ये सब वृत्तान्त जैन ग्रन्थों से ज्ञात होते हैं । और २ संस्कृत ग्रन्थों में ये सब प्रमाण नहीं मिलते । वृद्धभोज मनांतुग सूरि के शिष्य थे मनांतुग, और बाण, मयूर भट्ट के समकालिक जैनाचार्य थे । बाणकृत हर्षचरित पढ़ने से ज्ञात होता है कि उन्हों ने सन ७०० ईसवी में श्रीकंठाधिपति हर्षवर्द्धन के साथ भेट किया था यही कान्यकुब्जाधिपति हर्ष वर्द्धन शिलादित्य थे और इन्हीं के सभा में हियांग सियांग नामक चैनिक परिव्राजक बुलाए गए थे । बाण कवि ने हियांग सियांग के ग्रन्थ को पाठ करके अपना ग्रन्थ बनाया हर्षवर्द्धन के साथ चैनिकाचार्य्य की भेट का वृत्तान्त हर्षचरित में "यवन प्रोक्त पुराण" नामक ग्रन्थ से लिया गया है ।

महर्षि कन्ह ने अपने "कथा सरित्सागर" के १८ वें अध्याय में नरवाहन दत्त को विक्रमादित्य का उपन्यास कहा है उस में लिखा है कि विक्रमादित्य सन् ५०० ईसवी में उज्जयिनी में राज्य करते थे नरवाहन दत्त, जैन ग्रन्थ, कथा सरितसागर, और मत्स्यपुराण के मतानुसार शतानिक के पौत्र थे नासिक में एक पत्थर की चट्टान मिली है जिस पर विक्रमादित्य का नाम लिखा है और उन को नभाग, नहुष, जन्मेजय, ययाति और बलराम के नाईं योद्धा वर्णन किया । पाठक जनों को देखना उचित है कि एक विक्रमादित्य के इतिहास में कितनी गड़बड़ है, लोगों में जो केवल एकही विक्रमादित्य प्रसिद्ध है इस समय के भारतवर्षीय इतिहासों में कई एक विक्रमादित्यों के नाम मिले हैं परन्तु हम को उस विक्रमादित्य का इतिहास ज्ञात होना अवश्यक है जिस से हम लोगों का सन्देह दूर हो और यह जान पड़े कि नवरत्नों के अमूल्यरत्न कवि चक्रचुडामणि कालिदास का विक्रमादित्य से कुछ सम्बन्ध है वा नहीं ।

श्री देवकृत विक्रमचरित में लिखा है कि विक्रमादित्य तीर्थंगकर वर्द्ध-मान के नाश होने के ४७० वर्ष पर उज्जयिनी में राज्य करते थे और इन्हीं ने ही संवत स्थापन किया है परन्तु इस ग्रन्थ में कालिदास का नाम भी नहीं लिखा है।

पंडित तारनाथ तर्कवाचस्पति कहते हैं कि महा कवि कालिदास ने 'रघुवंश' 'कुमारसम्भव' और 'मेघदूत' बनाने के अनन्तर ३०६८ कलिगताब्दे में "ज्योतिर्विदाभरण" नामक काल ज्ञान शास्त्र बनाया मेघदूत प्रकाशक बाबू प्रान नाथ पंडित महाशय ने भी इस बात को अपने भूमिका में लिखा है परन्तु यह किसी का ग्रन्थ नहीं दृष्टि पड़ता कि 'ज्योतिर्विदा भरण' रघुकार कालिदास रचित है। तर्कवाचस्पति महाशय के मत को सहायता देने के निमित "ज्योतिर्विदाभरण" के कतिपय श्लोकों का अनुवाद करके हम नीचे लिखते हैं जैसा कालिदास ने लिखा।

मैंने इस प्रफुल्लकर ग्रन्थ को भारतवर्षान्तरगत मालव देश (जिस में १८० नगर हैं) में राजा विक्रमादित्य के राज्य के समय रचा है ॥ ७ ॥

शंकु, वररुचि, मणि, अंशुदत्त, जिष्णु, त्रिलोचन हरि, घटकर्पर, अमर सिंह और २ बहुत से कवियों ने उन के सभा को सुशोभित किया था ॥८॥

सत्य, वराहमिहिर, श्रुतिसेन, श्रीबादरायणी, मनिथ्य, कुमार सिंह और कई एक महाशय ज्योतिशास्त्र के अध्यापक थे ॥ ८ ॥

धन्वन्तरि, क्षपणक, अमर सिंह, शंकु, वेतालभट्ट, घटकर्पर, कालिदास और वरामिहिर और वररुचि ये सब महाशय विक्रम के नवरत्न थे ॥ १० ॥

विक्रम के सभा में ८०० छोटे २ राजा और उन के महा सभा में १६ वाग्मी, १० ज्योतिषि ६ वैद्य और १६ वेद पारग पंडित उपस्थित रहते थे ॥११॥

कोई कहते हैं कि यह कवि, मालवे के राजा हर्ष विक्रमादित्य के समय हजरत ईसा की छठवीं सदी में था। उस राजा की राजधानी उज्जैन नगरी थी। इसी कारण कालिदास भी वहां रहता था। राजा विक्रम की सभा में ८ रत्न थे, उन में से एक कालिदास था। कहते हैं कि लड़कपन में इस ने कुछ भी नहीं पढ़ा लिखा, केवल एक स्त्री के कारण इसे यह अनमोल विद्या का धन हाथ लगा। इस की कथा यों प्रसिद्ध है, कि राजा शरदानन्द की लड़की विद्योत्तमा बड़ी पंडिता थी, उस ने यह प्रतिज्ञा की, कि जो मुझे शास्त्रार्थ में जीतेगा, उसी को ब्याहूंगी। उस राजकुमारी के रूप, यौवन

विद्या की प्रशंसा सुनकर दूर २ से पंडित आते थे । पर शास्त्रार्थ के समय उस से सब हार जाते थे । जब पंडितों ने देखा, कि यह लडकी किसी तरह वश में नहीं आती और सब को हरा देती है, तो मन में अत्यन्त लज्जित होकर सब ने एका किया, कि किसी ढब विद्योत्तमा का विवाह किसी ऐसे मूर्ख के साथ करावें, जिस में वह जन्म भर अपने घर पर पछताती रहे। निदान वे लोग मूर्ख की खोज में निकले । जाते २ देखा, कि एक आदमी पेड के ऊपर जिस टहनी के ऊपर बैठा है, उसी को जड से काट रहा है। पंडितों ने उसे सच्चा मूर्ख समझकर बडी आव भगत से नीचे बुलाया, और कहा, कि चलो हम तुम्हारा व्याह राजा की लडकी से करादेवें । पर खबरदार राजा की सभा में मुंह से कुछ भी बात न कहो, जो बात करनी हो इशारों से कहियो । निदान जब वह राजा की सभा में पहुंचा, जितने पंडित वहां बैठे थे, सब ने उठकर उस की पूजा की, ऊंची जगह बैठने को दी' और विद्योत्तमा से यों निवेदन किया कि ये बृहस्पति के समान विद्वान हमारे गुरू, आप के व्याहने को आये हैं। परन्तु इन्हों ने तप के लिये मौन साधन किया है। जो कुछ आप को शास्त्रार्थ करना हो, इशारों से कीजिए निदान उस राजकुमारी ने इस आशय से, कि ईश्वर एक है, एक उंगली उठाई। मूर्ख ने यह समझकर कि धमकाने के लिये उंगली दिखाकर एक आंख फोड़ देने का इशारा करती है, अपनी दो उंगलियां दिखलाईं । पंडितों ने उन दो उंगलियों के ऐसे अर्थ निकाले कि उस राजकुमारी को हार माननी पडी और विवाह भी उसी दम हो गया। रात के समय जब दोनों का एकान्त हुआ, किसी तरफ़ से एक ऊंट चिल्ला उठा। राजकन्या ने पूछा, कि यह क्या शोर है, मूर्ख तो कोई भी शब्द अशुद्ध नहीं बोल सकता था, कह उठा उट्र चिल्लाता है। और जब राजकुमारी ने दुहराकर पूछा, तो उट्र की जगह उस्ट्र, कहने लगा, पर शुद्ध उष्ट्र का उच्चारण न कर सका। तब तो विद्योत्तमा को पंडितों की दग़ाबाज़ी मालूम हुई, और अपने धोखा खाने पर पछताकर फूट २ कर रोने लगी। वह मूर्ख भी अपने मन में बडा लज्जित हुआ, पहिले तो चाहा, कि जान ही दे डालूं पर फिर सोच समझ कर घर से निकल विद्या उपार्जन में परिश्रम करने लगा। और थोडे ही दिनों में ऐसा पंडित हो गया, जिस का नाम आज तक चला जाता है । जब वह मूर्ख पंडित होकर घर में आया, तो जैसा आनन्द विद्योत्तमा के मन को

हुआ, लिखने से बाहर है। सच है परिश्रम से सब कुछ हो सकता है।

कालिदास के समय घटखर्पर, वररुचिआदि और भी कवि थे। कालिदास काव्य नाटकादि अनेक ग्रन्थ संस्कृत भाषा में लिखे हैं। इन को काव्य रचना बहुत सादी, मधुर और विषयानुसारिणी है। अंग्रेज़ लोग कालिदास को अपने शेक्सपियर को सदृश उपमा देते हैं। इस के समय में भवभूति नामक एक कवि था। कहते हैं कि उस की विद्या कालिदास से अधिक थी। परन्तु कवित्वशक्ति कालिदास को सी न थी। भवभूति कालिदास के श्रेष्ठत्व को मानता था।

कालिदास सारस्वत ब्राह्मण था। उस को आखेट आदि खेलों की बड़ी चाह थी, और उसने अपने ग्रन्थ में इस का वर्णन किया है, कि मनुष्य के शरीर पर ऐसे खेलों से क्या २ उपकारी परिणाम होते हैं।

विक्रमादित्य ने उस को काश्मीर का राजा बनाया और यह राज्य उसने चार बरस ८ महीने किया।

कालिदास उज्जैन में रहता, परंतु उसकी जन्मभूमि काश्मीर थी। देशांतर होने पर स्त्री के वियोग से जोर दुःख उसने पाये,उन का बखान मेघदूत काव्य में लिखा है। कालिदास बडा चतुर पुरुष था, उस की चतुराई की बहुत सी कहानियां हैं, और वे सब मनोरंजन हैं, यथा उन में से कई एकये हैं।

(१) भोजराजा की कवित्व पर बडी प्रीति थी। जो को नया कवि उस के पास आता और कविता चातुर्य बताता, तो उसको वह अच्छा पारितोषिक देता, और चाहता, तो अपनी सभा में भी रखता। इस प्रकार से यह कविमंडल बहुत बढ़ गया। उस में कई कवि तो ऐसे थे कि, वे एक बार कोई नया श्लोक सुन लेते, तो उसे पाठ कर सकते थे। जब कोई मनुष्य राजा के पास आ कर नया श्लोक सुनाता था, तो कहने लगते थे, कि यह तो हमारा पहिले ही से जाना हुआ है और तुरन्त पढ़ कर सुना देते थे।

एक दिन कालिदास के पास एक कवि ने आ कर कहा, कि महाराज, आप यदि राजा के पास ले चलें और कुछ धन दिला देवें, तो मुझ पर आप का बडा उपकार होगा जो मैं कोई नया श्लोक बना कर राजसभा में सुनाऊं तो उस का नूतनत्व मान्य होना कठिन है इस लिये कोई युक्ति बताइए।

कालिदास ने कहा कि तुम श्लोक में ऐसा कहो, कि राजा से मुझ को

रत्नों का हार लेना है, और जो कुछ मैं कहता हूं, सो यहां के कई पंडितों को भी मालूम होगा। इस पर यदि पंडित लोग कहें कि यह श्लोक पुराना है तो तुम को रत्नों का हार मिल जायगा नहीं नए श्लोक का अच्छा पारितोषिक मिलेगा।

उस कवि ने कालिदास की बताई हुई युक्ति को मानकर वैसा ही श्लोक बनाया और जब उस को राज सभा में पढ़ा तो कविमंडल चुपचाप हो रहा और उस कवि को बहुत सा धन मिला।

(२) एक समय कालिदास के पास एक मूढ़ ब्राह्मण आया और कहने लगा, कि कविराज मैं अति दरिद्री हूं, और मुझ में कुछ गुण भी नहीं है, मुझ पर आप कुछ उपकार करें तो भला होगा।

कालिदास ने कहा, अच्छा हम एक दिन तुम को राजा के पास ले चलेंगे आगे तुम्हारा प्रारब्ध। परन्तु रीति है कि जब राजा के दर्शन निमित्त जाते हैं तो कुछ भेंट ले जाया करते हैं* इस लिये मैं जो ये सांटे के चार टुकड़े देता हूं सो ले चलो। ब्राह्मण घर लौटा और उन सांटे टुकड़ों को उस ने धोती में लपेट रक्खा। यह देख किसी ठग ने उस के बिन जाने उन टुकड़ों को निकाल लिया, और उन के बदले लकड़ी के उतने ही टुकड़े बांध दिए।

राजा के दर्शनों को चलने के समय ब्राह्मण ने सांटे के टुकड़ों को नहीं देखा जब सभा में पहुंचा तब यह काष्ट की भेंट राजा को अर्पण की। राजा उस को देखते ही बहुत क्रोधित हुआ। उस समय कालिदास पास ही था उस ने कहा महाराज इस ब्राह्मण ने अपनी दरिद्ररूपी लडकी आप के पास ला कर रक्खी है इस लिये कि उस को जला कर इस ब्राह्मण को आप सुखी करें! यह बात कवि के मुख से सुनते ही राजा बहुत प्रसन्न हुआ, और उस ब्राह्मण को बहुत धन दिया।

(३) एक समय राजा भोज कालिदास को साथ ले वनक्रीडा के हेतु अरण्य को गए, और घूमते २ थके मांदे हो, एक नदी के किनारे जा बैठे। इस नदी में पत्थर बहुत थे, उन पर पानी गिरने से बडा शब्द होता था। उस समय राजा ने कालिदास से बिनोद करके पूछा, कि कविराज यह

---

* राजा कन्या ज्यों तिपो, वैद गुरुसुर सिद्ध ।
भरे हाथ इन पै गए, होय कार्य सब सिद्ध ॥

नदी क्यों रोती है ? कालिदास ने उत्तर दिया, कि महाराज य छोटे छो पन में अपने मैके से ससुराल को जाती है।

कालिदास के प्रसिद्ध ग्रंथ शकुंतला, विक्रमोर्वशी, मालविकाग्निमित्र, और मेघदूत हैं। शकुंतला बहुत वर्णनीय ग्रंथ है। उस का उल्था यूरप में सब देशों की भाषाओं में हो गया है।

एक समय कविवर कालिदास अपने मकान में बैठकर अपने प्रिय पुत्र को अध्ययन कराता था, उसी समय क्षत्रिय कुल भूषण शकारि विक्रमादित्य संयोग से आ गए। कविवर कालिदास ने महाराज को देख प्रिय पुत्र का पढ़ाना छोड कर शिष्टाचार की रीति से महाराज का आदर मान किया। जब क्षत्रियकुल भूषण राजा विक्रमादित्य ने पढ़ाने की प्रार्थना की तब फिर अध्ययन कराना प्रारंभ किया उस समय कविवर कालिदास अपने प्रिय पुत्र को यही पढ़ाता था कि राजा अपने देसही में मान पाता है और विद्वान का मान सब स्थानों में होता है। महाराज इस प्रकार की शिक्षा को सुनकर अपने मन में कुतर्क करने लगे कि कविराज कालिदास ऐसा अभिमानी पंडित है कि मेरेही सामने पंडितों की बड़ाई करता है और राजाओं को वा धनवानों को वा सुनि नीचा दिखता है। मैं पंडितों का विशेष आदरमान करता हूं और जो मेरे वा राजाओं के वा धनवानों के यहां पंडितों का आदर नहीं तो कहां हो सकता है। ऐसा कुतर्क करते हुए अपने घर पर गए। महाराज विक्रमादित्य ने कविवर कालिदास को जो धन सम्पत्ति दी थी उसको हरने के लिये मंत्री को आज्ञा दी। मंत्री ने वैसाही किया जैसा महाराज ने कहा था। कविवर कालिदास की जीविका जब हरली गई तब दुःखी होकर अपने बाल बच्चों के साथ अनेक देशों में भटकता अंत में करनाटक देश में पहुंचा। करनाटक देशाधिपति बड़ा पंडित और गुणग्राहक था उसके पास जाकर कविवर कालिदास ने अपनी कविता शक्ति देखाई। तो उस पर करनाटक देशाधिपति ने अति प्रसन्न होकर बहुत सा धन और भूमि दे कर उसको अपने राज्य में रक्खा। कविवर कालिदास राजा से सनमान पाकर उस देश में रह कर प्रतिदिन राजसभा में जाने लगा वहां राजा के सिंहासन के पास ऊंचे आसन पर बैठ सब राज काजों में उत्तम सलाह देने लगा। और अनेक प्रकार की कविताओं से सभासदों के मन की कली खिलाता हुआ सुख से रहने लगा। जब से कविवर कालिदास को

विक्रमादित्य ने छोड़ा तब से वे बड़े शोक सागर में डूबे थे। नवरत्नों में कविवर कालिदास ही अनमोल रत्न था इस के सिवाय जब राजा को राज काज के कार्मों से फुरसत मिलती थी तब केवल कविराज कालिदासही की अद्भुत कविताओं को सुनकर राजा का मन प्रफुल्लित होता था। इस लिये ऐसे गुणी मनुष्यके बिना राजा का सब वस्तुओं से मन उदास होने लगा। फिर राजा ने कविराज कालिदासका पता लगाने के लिये सब देशों में दूतों को भेजा जब कहीं पता न लगा तब राजा आप ही भेष बदल कर खोजने के लिये निकले। कई देशों में घूमते फिरते जब करनाटक देस में गए उस समय उन्हें पथव्यय के लिये एक हीरा जड़ी हुई अंगूठी के छोड़ और कुछ नहीं था। उस अंगूठी को बेंचने के लिए वे किसी जौहरी की दूकान पर गए। रत्न पारखी ने ऐसे दरिद्र के हाथ में ऐसी अनमोल रत्न जड़ित अंगूठी को देखकर मन में चोर समझा और कोतवाल के पास भेजा। कोतवाल राज सभा में ले गया। वे चारों ओर देखते भालते जो आगे बढ़े तो कविवर कालिदास को देखा और कहा महाराज मैंने जैसा किया वैसाही फल पाया। कविवर कालिदास उठकर राजा को अंक में लगाकर करनाटक देशाधिपति से परिचय करा और सब ब्योरा कहकर राजा विरविक्रमादित्य के साथ चलाआया।

पर इन कथाओं से भी बड़ी झंझट पाईजाती है और कविवर कालिदास का समय ठीक निश्चय होना कठिन है।

कोई कोई कहते हैं कि कविवर कालिदास की सहायता से एक ब्राह्मण ने राजा भोज से एक श्लोक पर अनेक रुपया इस चतुराई से लिया था।

उज्जैन नगरी में राजा भोज ऐसा विद्या रसिक और गुणज्ञ और दान शील था कि विद्या की वृद्धि के प्रयोजन से उस ने यह नियम प्रचलित किया था कि जो कोई नवीन आशय का श्लोक बनाके लावे तो उस को लाख रुपये दक्षिणा देवे इस बात को सुन के देश देशांतर के पंडित लोग नये आशय के श्लोक बना के लाते थे परन्तु उस की सभा में चार ऐसे पंडित थे कि एक को एक बार दूसरे को दो बार तीसरे को तीन बार और चौथे को चार बार सुनने से नया श्लोक कंठस्थ हो जाता था सो जब कोई परदेशी पंडित राजा की सभा में नवीन आशय का श्लोक बना के लाता तो वह राजा के सम्मुख पढ़ के सुनाता था उस समय राजा अपने पंडितों से पूछता था कि यह श्लोक नया है वा पुराना तब वह मनुष्य जिस को कि एक बार के सुनने

से कंठस्थ होने का अभ्यास था कहता कि यह पुराने आशय का श्लोक है और आप भी पढ के सुना देता था इस के अनन्तर वह मनुष्य जिस को दो वार सुनने कंठ ह जाता था पढ़ के सुनाता और इसी प्रकार वह मनुष्य जिस को तीन वार और वह भी जिस को चार वार के सुनने से कंठस्थ होने का अभ्यास था क्रम से सब राजा को कंठाग्र सुना देते इस कारण परदेशी विद्वान अपने प्रयोजन से रहित हो जाते थे और इस बात की चर्चा देश शांतर में फैली सो एक विद्वान ऐसा देश काल में चतुर और बुद्धिमान था कि उसके बानाये हुए आशय के इन चार मनुष्यों को भी अंगीकार करना पड़ा कि यह नवीन आशय है और वह श्लोक यही है ।

श्लोक ।

राजन् श्रीभोजराज त्रिभुवनविजयी धार्मिकस्ते पिताऽभूत ।
पित्रा तेन गृहीता नवनवतिमिता रत्नकोटिर्मदीया ॥
तां त्वं देहि त्वदीयै सकल बुध वरै र्ज्ञायते वृत मेत ।
नोचेज्जानंतितेवैनवकृतमथ वा देहि लक्षं ततो मे ॥ १ ॥

हे राजा भोज तीनों लोक के जीतने वाले तुम्हारे पिता बडे धर्मिष्ट हुए हैं उन्हों ने मुझ से निन्नानबे किरोड रत्न लिया है सो मुझे आप दीजिये और इस वृत्तांत को तुम्हारे सभासद विद्वान जानते होंगे उनसे पूछ लीजिये जो वह कहें कि यह आशय केवल नवीन कविता मात्र है तो अपने प्रण के अनुसार एक लाख रुपया मुझे दीजिये । इस आशय को सुनकर चार विद्वानों ने विचारांश किया कि जे इसको पुराना आशय ठहरावें तो महाराज को निन्नानवे किरोड द्रव्य देना पडता है और नवीन कहने में केवल एक लाख सो उन चारों ने क्रम से यही कहा कि पृथ्वीनाथ यह नवीन आशय का श्लोक है इस पर राजा ने उस विद्वान को एक लाख रुपया दिया ।

श्री रामानुज स्वामी का जीवन चरित्र ।

दक्षिण में पूर्व सागर के पश्चिम तट से बारह कोस दूर तोंडोर देश में भूतपुरी नामक नगरी है । वहां हारीत गोत्र के केशव नामक एक ब्राह्मण रहते थे । वह सन्तान होन न ने के कारण बहुत दुःखी रहा करते । एक बेर

चन्द्र ग्रहण में पुत्र प्राप्ति के हेतु इन्हों ने यज्ञ भी किया था। कहते हैं स्वप्न में शेष जीने दर्शन देकर इन को आज्ञा किया कि हम तुम्हारे घर में अवतार लेंगे। तदनुसार श्री रामानुजाचार्य्य का केशव के घर चैत्र सुदी ५ को जन्म हुआ। लक्ष्मण आर्य्य और रामानुज यह दो नाम इन का रक्खा गया। सोलहवें बरस रक्षकाम्बा नामक स्त्री के साथ इन का विवाह हुआ। विवाह के पीछे केशव-जी मर गए। तब रामानुज स्वामी विद्या पढ़ने को कांचीपुर गए और वहां यादव नामक प्रसि‑ पंडित के पास विद्या पढ़ने लगे। जिन दिनों स्वामी वहां विद्या पढ़ते थे उन्ही दिनों में कांचीपुर के राजा की कन्या को ब्रह्मपिशाच की बाधा हुई। रामानुज स्वामी ने अपना पैर छुला कर उस की पिशाच बाधा दूर कर दी। इस से प्रसन्न होकर राजा ने उन को बहुत सा द्रव्य दिया। उसी काल में स्वामी के मौसा गोविन्द नामक एक बड़े पंडित यादव पंडित से शास्त्रार्थ करने आए और रामानुज स्वामी का और इन का मत विषयक एक विश्वास होने से दोनों में अत्यन्त प्रीति हुई। यादव पंडित जो वास्तव में माया वादी थे गोविन्द पंडित और स्वामी से वाद में बारम्बार पराभूत होने से इस कुविचार में फंसे कि किसी भांति स्वामी के प्राण हरण लिए चाहिए। इसी वास्ते प्रगट में बहुत स्नेह दिखला कर स्वामी को साथ लेकर यात्रा के बहाने से प्रयाग की ओर चले। मार्ग में गोंड़ा के जंगल में गोविन्द पण्डित ने स्वामी से यादव की सब कुप्रवृत्ति कह दिया। स्वामी भयभीत होकर जंगल में छिपे। वहां उस जंगल के देवता नारायण हस्त गिरिनाथ ने लक्ष्मी समेत व्याधमिथुन बन कर दर्शन दिया और अपनी रक्षा में उन को कांचीपुर ले आए।

इसी समय रंगपुर में यामुनार्य्य नामक एक त्रिदण्डी सन्यासी थे उन को सर्व लक्षण संपन्न एक शिष्य करने की इच्छा हु । उन्हों ने अपने चेलों को चारो ओर भेजा कि एक सर्व गुण संयुक्त लड़का खोज लाओ। उन शिष्यों ने आचार्य्य से जाकर रामानुज स्वामी का कुल गुण विद्या रूप आदि का वर्णन किया।

गोविन्द पण्डित इस समय काल हस्ति नगर में आ बसे और वहां एक शिव स्थापन कर के अध्यापन कराने लगे। यादव भी प्रयाग से कांची फिर आए और स्वामी का दैवी प्रभाव देखकर शिष्यों के द्वारा उन से मैत्री करके रहने लगे।

यासुनाचार्य्य रामानुज स्वामी को देखने के हेतु कांचीपुर चले और मार्ग में हस्तिगिरि नारायण के दर्शन के हेतु और अपने शिष्य कांचीपूर्ण से मिलने को हस्तपुर में ठहरे। संयोग से रामानुज स्वामी आदि शिष्यों के साथ यादव पंडित भी हस्तिगिरि नाथ के दर्शन को आए थे। वहां कांचीपूर्ण ने आचार्य्य से स्वामी का परिचय कराया और आचार्य्य इन को देख कर बहुत प्रसन्न हुए और कुछ दिन के पीछे सब लोग अपने २ नगर गए। एक दिन रामानुज स्वामी अपने गुरु यादव पंडित को तेल लगाते थे। उसी समय 'कप्यास्य' इस श्रुति का अर्थ यादव ने कुछ अशुद्ध किया इस से स्वामी को बड़ा कष्ट हुआ और शास्त्रार्थ में स्वामी ने यादव को परास्त किया इस से यादव ने क्रोधित होकर स्वामी को निकाल दिया। स्वामी वहां से हस्तिगिरि चले आए और कांचीपूर्ण के उपदेश से हस्तिगिरिनाथ वरदराज नारायण की सेवा करने लगे।

यह वृत्तान्त सुन कर यासुनाचार्य ने अपने शिष्य पूर्णाचार्य को अपने बनाय स्तोत्र देकर हस्तगिरि भेजा। एक दिन वरदराज स्वामी के सामने पूर्णाचार्य वह सब स्तोत्र पढ रहे थे कि रामानुज स्वामी ने सुन कर और उन की भक्तिपूर्ण रचना से प्रसन्न हो कर पूर्णाचार्य्य से पूछा कि यह स्तोत्र किस के बनाए हैं। पूर्णाचार्य्य ने कहा कि यह सब स्तोत्र यासुनाचार्य के बनाए हैं और वे आप के दरशन की बड़ी इच्छा रखते हैं। पूर्णाचार्य के उपदेश से रामानुज स्वामी यासुनाचार्य्य से मिलने रंगपुर चले और मार्ग में महापूर्णाचार्य से मिलाप हुआ। स्वामी का आना सुन कर यासुनाचार्य भी आगे से उन को लेने चले किन्तु कावेरी के किनारे पहुंच कर शरीर छोड़ दिया स्वामी भी शीघ्रता से वहां पहुंचे तो देखा कि आचार्य्य ने शरीर छोड़ दिया है परन्तु तीन अंगुली उठाय हुए हैं। स्वामी ने आचार्य्य का आशय समझ कर [अर्थात् १ बौधायन मतानुसार ब्रह्मसूत्रादि का भाष्य बनाना २ दिल्ली के तत्सामयिक बादशाह से श्रीराममूर्ति का उद्धार करना और ३ दिग्विजय पूर्वक विशिष्टाद्वैत मत का प्रचार] प्रतिज्ञा किया कि हम आप की इच्छा पूर्ण करेंगे जो सुन कर सुखपूर्वक आचार्य्य बैकुंठ धाम गए और स्वामी भी कांची फिर आए। एक बेर कांचीपूर्ण के घर स्वामी भोजन करने गए तब कांचीपूर्ण ने स्वमत विषयक उन को अनेक उपदेश किया और कहा कि आप रंगपुर जाकर पूर्णाचार्य्य से सब ग्रन्थ पढ़िए।

स्वामी उन के उपदेशानुसार रत्नपत्तन आए और विधिपूर्वक पंच संस्कार * दीक्षित होकर संस्कृत और द्राविड भाषा के ग्रन्थ सरहस्य पूर्णाचार्य्य पढ़े। कुछ काल पीछे एक कुंए में से जल निकालती समय पूर्णाचार्य्य की स्त्री से और स्वामी की स्त्री से कुछ कलह हो गई इस से स्वामी रक्षकाख्या से उदास हो गए। एक यही नहीं अनेक समय में रक्षकाख्या के खरतर स्वभाव का परिचय मिलने से स्वामी का जी उस की ओर से खींच गया था इस से स्वामी उन को नैहर भेज दिया। और आप भी सब धन गृह आदि का त्याग कर त्रिदण्ड सन्यास ग्रहण किया। कांचीपूर्ण ने इस पर अति प्रसन्न होकर 'यतिराज' की स्वामी को पदवी दिया।

कुछ दिन पीछे स्वामी के भांजे दाशरथि और अनन्तभट्ट के पुत्र कूरनाथ यह दोनों आकर कांची रहने लगे और स्वामी से विद्या पढ़ने लगे। एक समय यादव पंडित कांची आए और शंख चक्र से स्वामी का कलेवर चिन्हित देख कर बडा आक्षेप किया। इस पर स्वामी की इच्छा से कूरनाथ ने शास्त्रार्थ पूर्वक स्वमत स्थापन करके यादव को निरुत्तर किया। यादव पंडित ने भी ज्ञान पाकर त्रिदंड ग्रहणपूर्वक गृहस्थाश्रम का परित्याग किया और दीक्षित होकर गोविन्ददास यह नाम पाया। इन्ही गोविन्ददास ने 'यतिधर्म्म समुच्चय' नामक ग्रन्थ बनाया है।

कुछ काल के पीछे यामुनाचार्य्य के पुत्र वररंग स्वामी रामानुज को लेने को हस्तिगिरि आए। यहां उन्हों ने नाटकों का अभिनय दिखला कर श्री वरदराज जी को मांगा और वहां से रामानुज स्वामी को ला कर रंग नाथ जी को सम्पर्ण किया जिस से स्वामी अब रंगनाथ जी की सेवा का अधिकार और उस संप्रदाय का आचार्य्यत्व दोनों के अधिकारी हुए।

उसी समय में स्वामी के ममेरे भाई वेंकट गोविन्द पंडित से जो कि बडे शैव थे वेंकटगिरि के निवासी श्री शैलपूर्ण नामक वैष्णव यति से बड़ा भारी शास्त्रार्थ हुआ। जिस में गोविन्द पंडित ने पराजय पाकर श्री शैलपूर्ण का शिष्यत्व अंगीकार किया।

कुछ दिन पीछे पूर्णाचार्य्य के उपदेश से स्वामी रामानुज अठारह बेर

---

* दो०। ऊर्ध पुंड मुद्रा बहुरि, माला मंत्र बिचार।
संसकार ए वैष्णवो, धर्म कर्म को सार ॥ १ ॥

गोष्ठीपुर में गोष्ठापूर्णाचार्य्य से तत्व पूछने की इच्छा से गए और यद्यपि पहिले उन्हों ने बहुत आनाकानी की पर अन्त में सब रहस्य स्वामी को उपदेश किया किन्तु यह कह दिया था कि यह किसी को बतलाना मत ।

स्वामी रामानुज मंत्रों का रहस्य पाकर ऐसे परितुष्ट हुए कि अनेक लोगों से उन्हों ने दयापूर्वक वह रहस्य कहे। जब गोष्ठीपूर्णाचार्य्य को यह बात मालूम हुई तब उन्हों ने स्वामी से बुलाकर पूछा जो गुरु की आज्ञा उल्लंघन करै उस की क्या गति होती है ? स्वामी ने उत्तर दिया 'नर्क' तब गुरु ने पूछा कि फिर तुम ने हमारी आज्ञा उल्लंघन करके रहस्य क्यों लोगों से कहा। इस पर स्वामी ने अपने दयापरवश उदार स्वभाव से निर्भय हो कर उत्तर दिया।

"पतिष्ये एक एवाहं नरके गुरु पातकात् ।
सर्वे गच्छतु भवतां कृपया परमंपदम् ॥"

अर्थात् आप की आज्ञा टालने से मैं एक नरक में पड़ूं किन्तु और लोग जिनसे हमने रहस्यका उपदेश किया है वे आप को दयासे परमपद पावैं ॥

गुरु उन के इस उदार वाक्य से ऐसे प्रसन्न हुए कि "मन्नाथ" अर्थात् हमारे भी स्वामी, उनका नाम रक्खा और बरदान दिया कि आज से यह वैष्णव सिद्धान्त रामानुजसिद्धान्त से प्रचलित होगा और संसार में तुम आचार्य रूप से प्रसिद्ध होगे।

कुछ कालपीछे स्वामी के भांजे दाशरथि स्वामी को आज्ञा से पूर्णाचार्य्य की बेटी के ससुराल में उसका काम काज सम्हालने को रहने लगे । वहां एक वैष्णव श्रुतियों का कुछ बिरुद्ध अर्थ करता था उससे शास्त्रार्थ कर के उस को उन्होंने स्वामी के पास दीक्षित होने को भेज दिया और वह वैष्णवदास नाम पाकर इस मत का एक मुख्य पंडित हुआ।

इस संप्रदाय में मालाधार नामक एक बड़े पंडित थे। शठकोपाचार्य्य कृत सहस्रगीति का स्वामी ने उन से व्याख्यान सुना। ऐसेही अनेक वयोवृद्ध और ज्ञानवृद्धों से स्वमत का अनेक सिद्धान्त स्वामी ने लिया। बरंच अपने पुत्र सुन्दरबाहु को मालाधर ही से दीक्षित कराया ।

रंग जी ठाकुर का आभूषण एक बेर चोर लोग चुरा ले गए थे और उन लोगों को इस दोष से कारागार हुआ था। वे चोर स्वामी से बड़ा द्वेष

रखते थे इससे उन लोगों ने स्वामी के अंग सेवकों को घूस देकर इनके भोजन में विष मिला दिया। किन्तु परमेश्वर ने यह सब वृत्त अनुभव द्वारा स्वामी को बतला दिया इससे इनकी रक्षा हुई ।

यज्ञमूर्ति नामक एक वेदान्त का बड़ा भारी सन्यासी पण्डित था । वह दिग्विजय करता हुआ-रंगनगर में स्वामी से शास्त्रार्थ करने आया । स्वामीने अठारह दिन पर्य्यन्त उससे शास्त्रार्थ कर के उसको परास्त किया और उस से प्राचिश्चित्त करा के उस को फिर से शिखा सूत्र धारण कराया। देवराज देवमन्नाथ और मन्नाथ यह तीन नाम उस पण्डित के रक्खे गए और वह एक बड़े मठ का स्वामी नियत हुआ। इस पण्डित ने ज्ञानसार और प्रमेयसार नामक द्राविड़ भाषा में वैष्णवमत के दो बड़े सुन्दर ग्रन्थ बनाए हैं।

एक समय पुण्यनगर से अनन्ताचार्य्य बहुत से वैष्णवों के साथ स्वामी के दर्शन को आए। स्वामी ने उन को वेंकटाटगिरि की सेवा का अधिकार दिया। तब वे वेंकुठगिरी गए और वहां वृन्दावन बना कर रहने लगे। इन्हीं ने व्यंकटनाथ स्वामी का "रामानुज" लक्ष्मण इत्यादि नाम रक्खा है ।

स्वामी इसके पश्चात देशाटन करने को निकले और व्यंकटगिरि होते हुए उत्तर की यात्रा को चले। मार्ग में दिल्ली में त्रिविक्रमाचर्य्य से भेंट किया। वहां से बदरीनाथादि होते हुए लौटकर अष्ट सहस्र गांव में आए । वहां वरदाचार्य्य और यज्ञेश नामक अपने दो शिष्यों को मठाधिपति नियुक्त किया। वहां हस्तिगिरि आए और पूर्णाचार्य्यादि से मिलकर कापिल तीर्थ को गए। वहां कुछ दिन तक रहे और देश के राजा विट्ठलदेव को शिष्य किया। इस राजा विट्ठलदेव ने तोंडीर मंडलादिक अनेक गांव स्वामी को भेंट किए। वहां से वृषाचलादि स्थानों में अपना महात्म प्रकाश करते हुए रंगनगर स्वामी लौट आए ।

स्वामी के मामा के पुत्र गोविन्द पण्डित को विराग में ऐसी रुचि हुई कि स्वामी ने बहुत कहा परंतु इन्होंने गृहस्थाश्रम स्वीकार नहीं किया । तब स्वामी ने उनको सन्यास दिया।

एक वेर केवल कूरेश को साथ लेकर स्वामी शारदापीठ गए क्योंकि वहां वशिष्ठाद्वैत * मत का मूल ग्रन्थ बौधायन कृत ब्रह्मसूत्र वृत्ति की पुस्तक थी।

---

* दो० । कहहिं एक अद्वैतमत, दुतिय द्वैत मत जान ।

जिस को देखकर स्वामी को तदनुसार भाष्य बनाना बहुत आवश्यक था। शारदापीठ के सब पंडितों को स्वामी ने शास्त्रार्थ में पराजित किया। जब वहां से लौटे तो बौधायन वृत्ति की पुस्तक स्वामी के साथ थी। किन्तु शारदापीठ के पंडितों ने द्वेष करके रात को डांका डाला और वह पुस्तक लूट ले गए। स्वामी को इस से बड़ा दुःख हुआ। तब कूरेश ने कहा कि आप इतना दुःख क्यों सहते। एक वेर मैं आद्योपान्त उस पुस्तक को देखा है इस से उस के प्रति अक्षर मुझ को कंठाग्र हैं मैं सब आप को लिख दूंगा तदनुसार एक श्रुतिधर कूरेशन ने बौधायन सूत्र वृत्ति सब स्वामी को लिख दी। इसी वृत्ति के अनुसार स्वामी ने वेदांत सूत्र पर श्रीभाष्य वेदान्त दीप, वेदान्तसार, वेदार्थसंग्रह, और गीताभाष्यादि ग्रन्थ बनाए।

इन ग्रन्थों के बनाने के पीछे बहुत से शिष्य को साथ लेकर स्वामी दिग्विजय करने निकले। क्रम से चोलमंडल, पांड्यमंडल कुरुक इत्यादि देशों में जाकर वहां के पंडितों को शास्त्रार्थ में जीतकर उन को वैष्णव धर्म से दीक्षित किया और कुरंगदेश के राजा को दीक्षित करके केरल देश के पंडितों को जीता। वहां से क्रम से द्वारका मथुरा सालग्राम काशी अयोध्या बदरिकाश्रम नैमिषारण्य और श्रीवृन्दावन आदि तीर्थों में होते हुए फिर से शारदापीठ गए। वहां सरस्वती प्रत्यक्ष होकर "कप्यास्य" इस श्रुति का तात्पर्य पूछा। स्वामी ने जो अर्थ कहा इस से प्रसन्न होकर सरस्वती ने श्री भाष्य अपने सिर पर चढ़ाकर स्वामी को दिया और उन का दोनों हाथ पकड़ कर "भाष्यकार" नाम से पुकारा। इस के अनन्तर स्वामी ने वहां के पंडितों को शास्त्रार्थ में पराजित करके पुरुषोत्तम क्षेत्र गमन किया। वहां जाकर देखा कि बौद्ध और कपालिक लोग पुरुषोत्तम की सेवा में नियुक्त हैं। स्वामी ने उन को जीतकर वैष्णव गण सेवा में नियुक्त किए और वहां रामानुज मठ बना कर रहने लगे। स्वामी की इच्छा थी कि पंचरात्र के विधि से जगन्नाथ जी की सेवा हो परन्तु पंडे लोग अपने मन से सब काम करते थे और श्री जगन्नाथ जी भी इसी से प्रसन्न थे। क्योंकि जब स्वामी ने इस बात

त्रितिय विशिष्टा द्वैत है, तामधि तीन प्रमान ॥ १ ॥
प्रगट लोक मत लोक मैं, दुतिय वेदमत जान ।
त्रितियसंतमतकरतजिहि, हरिजनअधिकप्रमान ॥ २ ॥

में आग्रह किया तो एक रात देवगण द्वारा स्वामी को सोए से उठा कर कूर्म्मक्षेत्र में रख दिया। जाग कर स्वामी ने यह चरित्र देखा और भगवदिच्छा मुख्य समझ कर फिर इस विषय में आग्रह न किया।

कुछ दिन कूर्मांचल रहकर स्वामी सिंहाचल अहोबलक्षेत्र गरुडाचलादि तीर्थों में गए और वहां से फिर वेंकट गिरि जाकर वहां के शैवों को शास्त्रार्थ में परास्त किया।

कुछ काल पीछे कूरेश को व्यास पराशर के अंश के दो पुत्र एक साथ उत्पन्न हुए। स्वामी ने एक का नाम पराशर और दूसरे का व्यास वा श्री रामदेशिक रक्खा। इन्हीं पराशर को रंगेश ने अपुत्र होने के कारण गोद लेकर बड़े धूमधाम से विवाह किया था। गोविन्द को भी कालान्तर में पुत्र हुआ तो स्वामी ने परांकुश उसे का नाम रक्खा।

मथुरा के एक धनिक धनुर्दास को उस को भार्या हेमांगना समेत स्वामी ने वैष्णव दीक्षा दी। यह धनुर्दास ऐसा उत्तम वैष्णव हुआ है कि रंगनाथ जी के उत्सव में स्वामी एक बेर उस को मित्र की भांति पकड़े हुए थे और इस पर जब लोगों ने पूछा तो स्वामी ने उस के वैष्णवता की बड़ी स्तुति की।

उसी समय में चोलदेश का एक बड़ा भारी शैव राजा क्रिमिकंठ हुआ था जिस ने चित्रकूट तक विजय किया था। इस ने एक बेर शास्त्रार्थ के हेतु प्रार्थना पूर्वक स्वामी को बुलाया। स्वामी उस के यहां जाते थे कि मार्ग में चेलाचलाम्बा और उस के पति को दीक्षित किया। और बहुत से बौद्धों को शास्त्रार्थ में जय किया। इसी प्रकार कुछ दिन भक्त नगर में रहे। वहां स्वप्न देने से इन्हों ने यादवाचल जाकर वहां छिपी हुई भगवन्मूर्त्ति को निकाला और शके १०१२ में उस मूर्त्ति को यादवाचल में प्रतिष्ठा किया।

एक बेर स्वामी को खबर मिली कि दिल्ली के राजा के घर में रामप्रिय नामक एक नारायण की मूर्त्ति है। स्वामी यह सुन कर दिल्ली गए और वहां कुछ दिन रह कर राजा से वह मूर्ति ले आए कहते हैं कि दिल्ली के राजा की बेटी उस भगवद्विग्रह पर ऐसी आसक्त थी कि उस मूर्ति के साथ ही यादवाचल और भक्ति प्रभाव से आज तक उस की मूर्ति वहां नारायण के पास वर्तमान है।

इसके पीछे विष्णुचित्त की बेटी गोदा को स्वामीने उपदेश दिया। इनके ७४ शिष्य बड़े प्रसिद्ध हुए हैं। इन में भी आंध्रपूर्ण की बड़ी महिमा है॥

इस प्रकार स्वामी रामानुज आचार्य एक सौ बीस वर्ष पृथ्वीपर रहे और चारो ओर वैष्णव संप्रदाय का प्रचार करके सब शिष्यों को भगवद्भक्ति का उपदेश करके माघ सुदी १० को परम धाम पधारे इनके पीछे रंगनाथ जी के मन्दिर का अधिकार पराशर को मिला और दाशरथि पूर्णाचार्य गोविन्द और —क ये चार मत शाखा प्रवर्तक हुए ।

इस संप्रदाय के मुख्य बड़े२ लोग शठकोपाचार्य, रंगेश, वेंकटेश, वरद, वकुलाभरण, सुन्दर, यामुनाचार्य वररंग, पूर्णाचार्य, गोष्ठीपूर्ण, मासभद्र, माधवदास, कासार, भक्तिसार, फणिहाणा, कुलशेखर, भट्टनाथ, पद्मराज और अनन्ताचार्य आदिक हैं ।

दानपात्रादिकों से और दक्षिण राजाओं के घर के लेखों से निश्चय होता है कि सयीसन १०१० वा इसके आस पास किसी संवत में स्वामी का जन्म हुआ था और द्वादशशताब्दी के पूरे पूरे भोग में ये वर्तमान थे ॥

इनका मत विशिष्टाद्वैत है और उपास्यदेव साकार ब्रह्मनारायण हैं । ये भुजापर तप्त शंखचक्र की छाप देते हैं । हिन्दोस्तान के सब प्रान्त में इस मत के लोग मिलते हैं । और बहुत बड़े बड़े पंडित इस मत में हुए हैं । बड़गल और तिङ्गल ये दो शाखा इस मत की बहुत प्रसिद्ध हैं पीछे तो रामनन्द आदि अनेक शाखा इस की हुई हैं । इनके संप्रदाय के वैष्णव श्री वैष्णव कहलाते हैं ॥

श्रीशंकराचार्य्य का जीवन चरित्र ।

इन्दीवरदलश्याममिन्दिरानन्दकन्दलम् ।
वन्दारुजनमन्दरं वन्देहंयदुनन्दनम् ॥

धन्य वह ईश्वर है जो अपनी सृष्टि में अनेक अद्भुत शक्ति के मनुष्यों को उत्पन्न करता है और उनके द्वारा लोगों की पहली चाल चलन को बदल देता है फिर कुछ काल के अनन्तर दूसरे को उत्पन्न करता उससे भी वैसा ही कराता है इसी प्रकार से अपने सृष्टिक्रम को निरन्तर चलाता है ।

देखो कुछन्यूनाधिक ११०० वर्ष हुए इस सारे भारतवर्ष में बौद्धमत फैल गया था और लोग उसी मत पर चलते थे और जो उस मत को स्वीकार करने में अप्रसन्न थे उनको अनेक प्रकार के क्लेश सहने पड़ते थे प्रायः कन्या-

कुमारी अन्तरीप से चीन देश तक और ब्रह्मा के देश से ईरान तक जहां देखो बौद्धमत के मनुष्य देख पडते थे फाहियान और ह्वानसांग जो चीन श से —ात्रा के लिये यहां आए थे और जिन के संवत् ३९९ और ६४० ईस्वी निश्चित किये गए हैं अपने ग्रन्थ में उस समय का भारतवर्ष का वृत्तान्त लिख हैं कि बौद्धधर्म की बड़ी उन्नति है राजाओं ने बौद्ध भिक्षुकों को गांव बाग़ घर विहार बनाने के लिये दे दिये हैं और उन में श्रमण लोग सुख से बास करते हैं मांस खाने का बड़ा निषेध किया गया है कोई यज्ञ याग करने नहीं पाते न देवो के सामने बलिदान कर सकते हैं और पटने में जिसे पाटलिपुत्र भी कहते हैं शाक्यमुनि बुद्ध का बड़ा उत्सव होता है और प्राय: बड़े २ नगरों में स्तूप * और विहार देख पडते हैं।

---

* " गोरखपुर दर्पण " में एक लेख यों लिखा है। :—

भागलपुर के निकट १ पत्थर की लाट है जिस पर पुराने अक्षर खुदे-हुए हैं। उ— अक्षरों को प्रिन्सिप साहिब ने ब—ारस में पढ़ा था। सहिया गांव परगने सलेमपुर मंझाउली में है वहां एक पुराना मन्दिर है जिस के बीच एक बुद्ध की मूर्त्ति वर्तमान और कहांव जो सलेमपुर से ६ मील पश्चिम है उस गां— में एक लाट २४ फुट ऊंची गड़ी है और उस पर ६ फुट लम्बे १६ कोने कलश पर १ बुद्ध की मूर्त्ति स्थापित हैं। उस पर जो पुराने अक्षर अङ्कित हैं उन का उल्था नीचे लिखा जाता है।

मूल---यस्योप स्थान भूमिर्नृपति शत शिर: पातवाताव धूता।
गुप्तानां वंश यस्य प्रविसृत यशसस्तस्य सर्वोत्तम मर्द्धे: ॥
राज्ये शक्रेप मस्याक्षितिप शतपते: स्कन्द गुप्तस्य शान्ते:।
वर्षे त्रिंशद्दशैकोर कशततमे ज्येष्ठ मासि प्रपन्ने ॥ १ ॥
ख्यातेस्मिन् ग्रामर लेक कुंभ: राति जनै स्साधुसंसर्ग पूते।
पुत्रोयरसो मिलस्य प्रचुरगण निधेर्भट्टि सो मो महार्त्थ: ॥
तत्सूनु.रुद्र सोम: प्रथुलमा यशाव्याघ्र रत्यन्य संज्ञो।
मद्रस्तरयात्मजो भूद्विज गुरुययातिपुप्रायश: प्रीति मान्य: ॥ २ ॥
पुण्यस्कंधस चक्रे जगादिदमखिलं सं सरद्वीक्ष्य भीतो।
श्रेयोर्त्थं भूत भूत्यै पथिनियमवता मर्हं तामादिकर्त्तृण् ॥
पञ्चेद्रांस्थापयित्वा धरणि धरमयान्सन्निखातस्ततो याण्।

तुरुांग लिखता है कि बौद्धमत केवल भारतवर्ष ही में फैला न था' परन्तु तूरान और क़ाबुल में भी सौ से अधिक विहार बने थे और उन दिनों में गजनी क़ाबुल इत्यादि पश्चिम के देश इसी भारतवर्ष के राजाओं के अधीन थे सब मिल के ८० राजा गिने जाते थे जालंधर से गङ्गासागर तक और हिमालय से महानदी तक देश कन्नौज के बौद्ध राज हर्षवर्धन के अधीन थे और मगध देश में बौद्ध राजा राज करते थे।

इस से यह न समझना चाहिए कि भारतवर्ष में वैदिकमत लुप्त हो गया था बहुत से ऐसे ऐसे देश दक्षिण में और काशी कुरुक्षेत्र काश्मीर इत्यादि उत्तर में थे जहां वैदिक मत के लोग रहते थे और यज्ञ यागादिक सब अपने कर्म करते थे।

जब इस प्रकार से बौद्धमत भारतवर्ष फैल गया ईश्वर ने सोचा कि अब वैदिक मत डूबने पर है जो इस की सहायता न करेंगे तो इस का चलना कठिन है द्रविड देश में जो अब मंदराज हाते में है चिदंबरपुर में द्राविड़ ब्राह्मण के कुल में सर्वज्ञ नामक तपस्वी का जन्म हुआ उस की स्त्री

शैलस्तम्भः सुचारु गिरिवर-शिखराग्रोपमः कीर्त्ति कर्त्ता ॥ ३ ॥

उल्था—राजा स्कन्धगुप्त, जिस, प्रस्थान के समय अर्थात् जब वह अपने मन्दिर से बाहर निकलता था सैकड़ों राजाओं के सिर के मुकुट उस के चरणों पर झुकते थे, बडा यशस्वी और प्रचुर बल से, युक्त था उस के स्वर्ग वास करने से १२१, वर्ष के अनन्तर ज्येष्ठ महीने में राजा सोमिल का बेटा भट्टिसोम उस का बेटा रुद्रसोम उस का पुत्र व्याघ्र रति उस का बेटा मद्रसोम जिस की भक्ति ब्राह्मण, गुरु और सन्यासियों में अधिक थी जगत का संसरण अर्थात् दिन २; नाश अवलोकन करके बहुत भय युक्त हुआ। और उसने अपनी और अपनी प्रजा की रक्षा के लिये ककुभ रति में जिस को अब कहांव कहते है और जिस में साधु जन अधिक बसते थे जिन के रहने से वह पवित्र गिना जाता था एक यज्ञ किया। उस यज्ञ में पांच इंद्र पहाडों के बराबर अर्थात् पांच स्तम्भ पर इन्द्र की मूर्त्ति बनाकर स्थापित की वह १ कहांव में २ भागलपुर में ३ सारण में ४ बेतिया के राज्य में पांचवां तराई में अब भी कई फुट के लम्बे गड़े हुये खड़े मौजूद हैं और उन के सिवाय एक और स्तम्भ स्थापन किया जो उस की कीर्त्ति को प्रकाश करता है।

का नाम आसाम्बी था और वे दोनों चिदम्बरेश्वर को जो आकाशलिंग करके दक्षिण देश में प्रसिद्ध है सेवा करने लगे और एक कन्या उन को हुई उस का नाम विशिष्टा रक्खा आठवें वर्ष उस कन्या का विवाह विश्वजित् ब्राह्मण से कर दिया और वह विशिष्टा भी सर्व काल अपने मा बाप के सहृश उसी महादेव की सेवा करती थी उस का पति विश्वजित् उस को छोड़ कर जंगल में तप करने को गया परन्तु विशिष्टा ने महादेव की सेवा नहीं त्याग की ईश्वर उस से प्रसन्न हुआ और उस को एक लड़का उत्पन्न हुआ जिस का नाम शंकराचार्य्य रक्खा पुराण और तंत्रों में शंकराचार्य्य को शिव का अवतार लिखा है और इनके प्रतिवादी वैष्णव लोग भी इन को शिव का अवतार होने में कुछ विवाद नहीं करते इन के उत्पत्ति का समय अभी तक ठीक २ नहीं ज्ञात हुआ परन्तु शिष्य परम्परा से जो आचार्य्य के अनन्तर अभी तक चली आती है जान पड़ता है कि कुछ न्यूनाधिक एक हज़ार वर्ष हुए डाकतर डाकवेल साहब अपने ग्रन्थों में ९०० वर्ष लिखता है, और पंडित जयनारायण तर्कपंचानन १२०० वर्ष के निकट अनुमान करता है।

उस नगर के निवासी ब्राह्मणों ने इन के जात कर्मादिक संस्कार किये और तीसरे वर्ष में चौल और पांचवे में यज्ञोपवीत किया तब से श्रीशंकराचार्य जी ने आठवें वर्ष तक सकल विद्या का पूर्ण अभ्यास किया और सब विद्या में पारंगत हुए और शिष्यों को भी विद्या सिखलाई आठवें बरस में श्रीगोविन्द योगीन्द्र के उपदेश से सन्यासाश्रम स्वीकार किया और इन के मुख्य शिष्य बारह थे जिन के नाम पद्मपाद, हस्तामलक, समित्पाणि, चिद्विलास, ज्ञानकन्द, विष्णुगुप्त, शुद्धकीर्ति, भानुमरीचि, कृष्णदर्शन, बुद्धिवृद्धि विरंचिपाद, अनन्तानन्दगिरि थे इन के समय में पचास से अधिक मत प्रचलित थे उन में जो २ कुछ मुख्य मत थे उन के नाम लिखते हैं शैव, वैष्णव, सौर, गणेश, शाक्त, कापालिक, कौल, पांचरात्र, भागवत, बौद्ध, जैन, चार्वाक इत्यादि इन सब मतवालों के आचार्यों उन्हीं को शास्त्रार्थ में जीत लिया और उन सब को अपना शिष्य किया।

तब आचार्य जी काशी में गये और मध्यान्ह के समय मणिकर्णिका पर स्नान करते थे इतने में श्रीव्यास जी बूढ़े ब्राह्मण का भेष लेकर वहां आये और शंकराचार्य से पूछा कि मैंने सुना है कि आप ने ब्रह्मसूत्र में बहुत परिश्रम किया है आचार्य ने उत्तर दिया हां जहां तुम्हारी इच्छा हो वहां पूछो

व्यास जी ने एक ख्यस में पूछा आचार्य जी ने उस का यथार्थ उत्तर दिया इस पर व्यास जी फिर कुछ विवाद करने लगे आचार्य जी को क्रोध आया और अपने पद्मपाद नामक शिष्य से कहा कि इस बूढ़े ब्राह्मण को बाहर निकाल दो तब शिष्य ने यह श्लोक पढ़ा ।

शङ्करः शङ्करः साक्षाद्व्यासो नारायणः स्वयम् ।
तयोर्विवादे सम्प्राप्ते किङ्करः किङ्करिष्यति ॥

आचार्य जी ने यह सुन कर कहा जो सचमुच यह बूढ़ा ब्राह्मण व्यास होगा तो अवश्य हमारे उत्तर पर संतुष्ट हो के प्रत्यक्ष दर्शन देगा व्यास जी यह सुन कर आप प्रत्यक्ष हुए और आचार्य जी से कहा मैं तुमारी परीक्षा लेने के वास्ते आया था तुम तो शिव के अवतार हो तुम को कौन जीतने वाला है फिर व्यास ने आचार्य को वर दिया और ब्रह्मा बुला कर इन की आयु बढ़ा दी तब से आचार्य का प्रताप को द्विगुणित बढ़ गया कुछ समय के अनंतर आचार्य जी रुद्रपुर में गए वहां भट्टपाद जिसे कुमारिल कहते हैं और जिस ने मीमांसातन्त्रवार्तिक नामक एक बड़ा भारी ग्रन्थ बनाया है तुषाग्नि में बैठा था, आचार्य जी ने उस से भेट करके बाद भिक्षा मांगी परन्तु भट्टपाद ने कहा कि मैं अब शरीर दग्ध होने के कारण तुमारे साथ शास्त्रार्थ करने में असमर्थ हूं मेरा बहनोई मंडन मिश्र जो हस्तिनापुर से आग्नेय दिशा में बिजिल बिंदु नाम नगर में रहता है तुम से शास्त्रार्थ करेगा और उस से तुमारा गर्व शांत हो जायगा ।

आचार्य जी यह बचन सुन कर वहां गये और लोगों से मंडनमिश्र के घर का ठिकाना पूछा लोगों ने उत्तर दिया जहां तोते और मैना शास्त्रार्थ करते हैं वही मंडनमिश्र का घर है शंकराचार्य जी ने सोचा कि जो मैं दर्वाजे से जाता हूं तो मुझे बहुत काल लगेगा इस लिये मंत्र के बल से आकाशमार्ग से उस के घर में उतरे कोई कहते हैं कि उस के घर के पीछे एक लंबा ताड़ का पेड़ था उस पर चढ़ कर घर में गये उस समय मंडनमिश्र श्राद्ध करता था इन को देखते ही बहुत क्रुद्ध होगया क्योंकि ये सन्यासी थे और उस ने सन्यास का खंडन किया था और कहा कुतो मुण्डी आचार्य जी ने उत्तर दिया आगलान्मुण्डी, मण्डसुरा, पीता शंका साहिस्र्वेता, मण्ड किं निर्भाग्य शंक यत्यर्चासंइत एव निर्भाग्य इत्यादि दोनों के संवाद हुए

मिश्र जी श्राद्ध समाप्त करने के अनन्तर आचार्य से शास्त्रार्थ करने में प्रवृत्त हुए और उस की स्त्री सरस वाणी जि सरस्वती का साक्षात अवतार कहते थे मध्यस्थ हुई दोनों ने सौ दिन तक शास्त्रार्थ हुआ अन्त में मण्डनमिश्र का पराजय हुआ और सन्यासाश्रम को स्वीकार किया पुराण में मंडनमिश्र को ब्रह्मा का अवतार लिखा है ॥

जब मंडनमिश्र सन्यास लेने लगे उस के पहिले ही सरसवाणी अपना पूर्व शरीर छोड कर ब्रह्मलोक को जाने लगी शंकराचार्य ने वनदुर्गा मंत्र से उस को आकर्षण किया और कहा कि मुझ से शास्त्रार्थ करके चली जाओ उसने कहा कि मैंने वैधव्य के भय से अपने पति के सन्यास से पहिले ही पृथ्वी को त्याग की अब पृथ्वी पर नहीं आ सकती क्योंकर तुम से शास्त्रार्थ करूं आ-चार्य ने उत्तर दिया भूमि से आकाश में छः हाथ दूरी पर खडी होके मुझ से शास्त्रार्थ कर उसने आचार्य के कहने के अनुसार शास्त्रार्थ किया अन्त में हार गई तब उसने सोचा कि यह सन्यासी है इस को काम शास्त्र नहीं आता होगा इस में जो इसे पूछूंगी तो उत्तर नहीं दे सकेगा फिर सरस्वति ने कहा कि काम शास्त्र में विवाद करो शंकराचार्य्य ने इस वचन को सुनकर चुप हो गये और कहा कि छः महीने के अनन्तर तुम से इसी शास्त्र में विवाद करूंगा।

तब शंकराचार्य अमृतपुर में गये वहां का राजा मर गया था इस का नाम अमरु करके प्रसिद्ध था उस का शरीर जलाने के लिये चिता पर रक्खा था इतने में शंकराचार्य ने अपने शरीर से प्राण निकाल कर परकाय प्रवेश विद्या के बल से उस राजा के मृत शरीर में प्रवेश किया और शिष्यों ने आ-चार्य का शरीर एक पहाड की गुफा में रक्खा कहीं लिखा है इस राजा की सौ रानी थीं उन में जो बडी थी उसने देखा कि इस पति की चेष्टा पहले ऐसी नहीं है केवल पहला शरीर मात्र वही है और इसका आत्मा किसी योगी का जान पडता है नहीं तो इतना चातुर्य इस में कहां से होता रानी ने आज्ञा दी कि जहां कहीं मृत शरीर मिले उसी क्षण उस को जला दो राजदूतों ने आचार्य का शरीर गुफा में पाया और उस को जलाने के लिये चितापर रक्खा और आग लगादी आचार्य के शिष्यों ने देख कर राजा की स्तुति की उसका अभिप्राय यही था कि राजा तू शंकराचार्य्य है दूसरा कोई नहीं उसी क्षण राजा के शरीर से प्राण ने निकल कर उस चिता पर रक्खे

शरीर में प्रवेश किया और अग्नि शान्त होने के लिये नृसिंह की स्तुति की नृसिंह ने प्रसन्न होके वरदिया वहां से सरस्वति के पास आये, और उसको जीत लिया और उसको साथ लेकर शृंगपुर में आये जिसको अब शृंगेरी कहते हैं और जो तुंगभद्रा के तीर पर है उसी स्थलपर सरस्वति की स्थापना की और भारति संप्रदाय की शिष्य परमपरा करने की रीति स्थापन की ।

शंकराचार्य्य की गुरुपरमपरा इस प्रकार से लिखी है पहिले नारायण फिर ब्रह्मा वशिष्ठ शक्ति पराशर व्यास शुक गौडपाद गोविन्द योगिन्द्र श्री शंकाराचार्य इनके १२ मुख्य शिष्य हुए उनके नाम पहिले लिख आये हैं।

शृंगेरी में १२ बरस रह कर कांचीपुर में गये वहां कामाक्षी देवी की स्थापना की और कांची का नगर बसाया और विष्णुकांचि में वरदराज विष्णु का और शिवकांची में शिव का मन्दिर बनवाया और अवताम्रपर्णी नदी के तीर पर रहने वाले लोगों को शिष्य किया प्रायः सब भारत वर्ष में इनकी शिष्यशाखा फैली ॥

श्री शंकराचार्य्य जीने व्यास सूत्रपर अद्वैत भाष्य और दस महोपनिषदों और गीता पर भी भाष्य बनाये और कई एक ग्रंथ बनाये हैं वे सब अब तक मिलते हैं इनका मत यह था कि इस प्रपञ्च में ब्रह्म को छोड कर जो कुछ दिखाई देता है सब मिथ्या है सब ब्रह्म रूप है और ईश्वर और जीव एक ही है इत्यादि उनके ग्रंथों को देखने से ज्ञान पडता है इसी लिये किसी मत को जिसमें ईश्वर की सत्तामानी जाती है सर्वथा खंडन नहीं किया नास्तिक मत को छोड कर सब मतों को स्थापन किया और ३२ बरस की वय में परलोक को चले गये शक्ति संगम तंत्रादिक ग्रथों में तो १६ ही वर्ष लिखे हैं परन्तु शंकर विजयादि ग्रथों से ज्ञात हुआ कि जो ऊपर संख्या लिखी है ठीक है क्योंकि इतना कार्य इतने थोडे समय में नहीं हो सकता इन की कीर्ति अब तक इस भारत वर्ष में चली जाती है और प्रायः यहां के लोग भी इसी मत पर चलते हैं ॥

मैं ने शंकराचार्य्य का जीवन वृत्तान्त बहुत संक्षेप से लिखा है यदि इस में कहीं शीघ्रता के हेतु भूल हो तो पढ़ने वाले उस पर क्षमा करें क्योंकि शास्त्र में लिखा है कि भ्रांति पुरुष का धर्म है ॥

महा कवि श्री जयदेव जी का जीवनचरित्र ।

जयदेव जी की कविता का अमृत पान कर के इस चकित लोहित और घूर्णित कौन नहीं होता और किस देश में कौन सा ऐसा विद्वान है जो कुछ भी संस्कृत जानता हो और जयदेव जी की काव्य माधुरी का प्रेमी न हो। जयदेव जी का यह अभिमान कि अंगूर और ऊख की मिठास उनकी कविता के आगे फीकी है बहुत सत्य है। इस मिठाई को न पुरानी होने का भय है न चींटी का डर है। मिठाई है पर नमकीन है यह नई बात है। सुनने पढ़ने की बात है पर गूंगे का गुड़ है। निर्जन में जंगल पहाड़ में जहां बैठने को बिछौना भी न हो वहां गीतगोविन्द सब आनन्द सामग्री देता है, और जहां कोई मित्र रसिक भक्त प्रेमी न हो वहां यह सब कुछ बन कर साथ रहता है। जहां गीतगोविन्द है वहीं वैष्णवगोष्ठी है, वहीं रसिक समाज है, वहीं वृन्दावन है वहीं प्रेम सरोवर है, वहीं भाव समुद्र है, वहीं गोलोक है और वहीं प्रत्यक्ष ब्रह्मानन्द है। पर यह भी कोई जानता है कि इस परब्रह्म रस प्रेम सर्वस्व शृङ्गार समुद्र के जनक जयदेव जी कहां हुए? कोई नहीं जानता और न इसकी खोज करता। प्रोफेसर लेसेन ने लेटिन भाषा में और पूना के मिन्नुसिपल आरनल्ड साहब ने अङ्गरेजी में गीतगोविन्द का अनुवाद किया परन्तु कवि का जीवनचरित्र कुछ न लिखा केवल इतना ही लिख दिया कि सन ११५० के लगभग जयदेव उत्पन्न हुए थे। किन्तु धन्य है बाबू रजनीकान्त गुप्त को जिन्हों ने पहिले पहल इस विषय में हाथ डाला और "जयदेव चरित्र" नामक एक छोटा सा ग्रन्थ इस विषय पर लिखा। यद्यपि समय निर्णय में और जीवन चरित्र में हमारे उन के मत में अनेक अनैक्य है तथापि उन के ग्रन्थ से हम को अनेक सहायता मिली है यह मुक्त कण्ठ से स्वीकार करना होगा और इसमें कोई संशय नहीं कि उन्हीं के ग्रन्थ से हमारी रुचि को इस विषय के लिखने पर प्रबल किया है।

वीरभूमि से प्रायः दस कोस दक्षिण * अजयनद के उत्तर किन्दुबिल्व † गांव में श्रीजयदेवजीने जन्म ग्रहन किया था।

---

* अजयनद भागीरथी का करद है। यह भागलपुर जिला के दक्षिण से निकलकर सौंताल परगने के दक्षिण भाग दक्षिण की ओर और फिर बर्द्धमान और वीरभूमि के जिले के बीच में से पश्चिम की ओर बहकर काटवा के पास भागीरथी से मिला है। (ज० च० बंगदेश विवरन)।

† किन्दुबिल्व वीरभूमि के मुख्य नगर सूरी से नौ कोस है। यहां श्रीराधा

संभव है कि कन्नौज से आए हुए ब्राह्मणों में से जयदेव जी का वंश भी हो। इनके पिता का नाम भोजदेव और माता का नाम रामा देवी था * इन्होंने किस समय अपने आविर्भाव से धरातल को भूषित किया था यह अब तक निर्णय नहीं हुआ। श्रीयुक्त सनातन गोस्वामि ने लिखा है कि बंगाधिपति महाराज लक्ष्मणसेन की सभा में जयदेव जी विद्यमान थे। अनेक लोगों का यही मत है और इस मत को पोषण करने को लोग कहते हैं कि लक्ष्मणसेन के द्वार पर एक पत्थर खुदा हुआ लगा था जिस पर यह श्लोक लिखा हुआ था "गोवर्द्धनश्चशरणो जयदेव उमापति: । कविराजश्चरत्नानि समितौ लक्ष्मनस्यच ॥"

श्रीसनातन गोस्वामि के इस लेख पर अब तीन बातों का निर्णय करना आवश्यक हुआ। प्रथम यह कि लक्ष्मणसेन का काल क्या है। दूसरे यह कि यह लक्ष्मणसेन वही है जो बंगालेका प्रसिद्ध लक्ष्मणसेन है कि दूसरा है। तीसरे यह कि यह बात अन्य है कि नहीं कि जयदेव जी लक्ष्मणसेन की सभा में थे।

प्रसिद्ध इतिहास लेखक मिरहाजिउद्दीन ने तबक़ाते नासरी में लिखा है कि जब बख़तियार खिलजी ने बंगाला फ़तह किया तब लछमनिया बनाम का राजा बंगाले में राज करता था। उन के मत से लछमनिया बंग देश का अन्तिम राजा था। किन्तु बंगदेश के इतिहास से स्पष्ट है कि लछमिनिया नाम का कोई भी राजा बंगाले में नहीं हुआ। लोग अनुमान करते हैं कि बल्लालसेन के पुत्र लक्ष्मणसेन के माधवसेन और केशवसेन "लाक्ष्मनेय" इस शब्द के अपभ्रंश से लछमनिया लिखा है।

राजशाही के जिले से मेटकाफ साहब को एक पत्थर पर खोदी हुई प्रशस्ति मिली है। यह प्रशस्ति विजयसेन राजा के समय में प्रद्युम्नेश्वर महादेव के मंदिर निर्म्माण के वर्णन में उमापति धर की बनाई हुई है।

दामोदर जी की मूर्ति प्रतिष्ठित है। वैष्णवों का यह भी एक पवित्र क्षेत्र है।

* बम्बई की छपी हुई पुस्तक में राधा देवी जो इन की माता का नाम लिखा है वह असङ्गत है। हां वामादेवी और रामादेवी यह दोनों पाठ अनेक हस्त लिखित पुस्तकों में मिलते हैं। बंगला में र और व में केवल एक बिंदु से भेद होने के कारण यह भ्रम उपस्थित हुआ है।

डाक्टर राजेन्द्रलाल मित्र के मत से इस की संस्कृत की रचना प्रनाली नवम वा दशम वा एकादश शताब्दी की है। शोच की बात है कि इस प्रशस्ति में संवत् नहीं दिया है नहीं तो जयदेवजी के समय निरूपण में इतनी कठिनाई न पड़ती। इस में हेमन्तसेन सुमन्तसेन और वीरसेन यही तीन नाम विजयसेन के पूर्वपुरुषों के दिये हैं जिससे प्रगट होता है कि वीरसेन ही वंश स्थापन कर्त्ता है। विजयसेन के विषय में यह लिखा है कि उसने कामरूप और कुरुमण्डल [मद्रास और पुरी के बीच का देश] जय किया था और पश्चिम जय करने को नौका पर गङ्गा के तट में सेना भेजी थी। तवारीखों में इन राजाओं का नाम कहीं नहीं है। कहते हैं आईने अकबरी का सुखसेन (वल्लालसेन का पिता) विजयसेन का नामांतर है क्योंकि बाकरगंज की प्रस्तर लिपि में जो चार नाम हैं वे विजयसेन वल्लालसेन लक्ष्मणसेन केशवसेन इस क्रम से हैं। वल्लालसेन बड़ा पण्डित था और दानसागर और वेदार्थ स्मृति संग्रह इत्यादि ग्रन्थ उसके कारण बने। कुलीनों की प्रथा भी वल्लालसेन की स्थापित है। उसके पुत्र लक्ष्मणसेन के काल में भी संस्कृत विद्या की बड़ी उन्नति थी। भट्ट नारायण (वेणी संहार के कवि) के वंश में धनंजय के पुत्र हलायुध पण्डित उसके दानाध्यक्ष थे जिन्होंने ब्राह्मण सर्वस्व बनाया और इनके दूसरे भाई पशुपति भी बड़े स्मार्त आन्हिक कार थे। कहते हैं कि गौड का नगर वल्लालसेन ने बसाया था परन्तु लक्ष्मणसेन के काल से उस का नाम लक्ष्मणावती (लखनौती) हुआ। लक्ष्मणसेन के पुत्र माधवसेन और केशवसेन थे। राजावली में इनके पीछे सुसेन वा शूरसेन और लिखा है और मुसलमान लेखकों ने नौजीव (नवद्वीप ?) नारायण लखमन और लखमनिया ये चार नाम और लिखे हैं वरञ्च एक अशोक सेन भी लिखा है किन्तु इन राजों का ठीक पता नहीं। मुसलमानों के मत से लखमनियां अन्तिम राजा है जिस ने ८० बरस राज्य किया और बखतियार के काल में जिस ने राज्य छोड़ा। यह गर्भ ही से राजा था। तो नाम का क्रम वीरसेन से लखमनियां तक एक प्रकार ठीक हो गया किन्तु इन का समय निर्णय अब भी न हुआ क्योंकि किसी दानपत्र में संवत नहीं है। दानसागर के बनने का समय समयप्रकाश के अनुसार १०१९ शके (१०९७ ई०) है इस से वल्लालसेन का राजत्व ग्यारहवीं शताब्दी के अन्त तक अनुमान होता है और यह आईने अकबरी के समय से भी मेल खाता है। वल्लालसेन

ने १०६६ में राज्य आरम्भ किया था। तो अब सेन वंश का क्रम यों लिखा जा सक्ता है।

वीरसेन	...	...	...	...	...
सामन्तसेन	...	...	...	...	...
हेमन्तसेन	...	...	...	...	...
विजयसेन वा सुखसेन		...	...	...	...
बल्लालसेन	...	...	...	...	१०६६
लक्ष्मणसेन	...	...	...	...	११०१
माधवसेन	...	...	...	...	११२१
केशवसेन	...	...	...	...	११२२
लक्ष्मनिया	...	...	...	...	११२३

बल्लालसेन का समय १०६६ ई० समय प्रकाश के अनुसार है यदि इस को प्रमाण न मानै और फारसी लेखकों के अनुसार लक्ष्मनियां के पहले नारायण इत्यादि और राजाओं को भी मानै तो बल्लालसेन और भी पीछे जा पड़ेंगे। तो अब जयदेव जी लक्ष्मणसेन की सभा में थे कि नहीं यह बिचारना चाहिए। हमारी बुद्धि से नहीं थे। इस के कई दृढ़ प्रमाण हैं। प्रथम तो यह कि उमापतिधर जिसने विजयसेन की प्रशस्ति बनाई है वह जयदेव जी का सम सामयिक था तो यदि यह मान लें कि जयदेव उमापति गोवर्द्धनादिक सब सौ बरस से विशेष जिए हैं तब यह हो सकता है कि ये विजयसेन और लक्ष्मण दोनों की सभा में थे। दूसरे चन्द कवि ने जिस का जन्म ११५० सन के पास है अपने रायसा में प्राचीन कवियों की गणना में जयदेव को लिखा है * तो सौ डेढ़ सौ वर्ष पूर्व हुए विना जयदेव जी की

---

* भुजगप्रयात—प्रथमं भुजंगी सुधारी ग्रहंनं। जिनें नाम एकं अनेकं कहंनं ॥
दुती लभ्भयं देवतं जीवतेसं। जिनें विश्वराख्यौ बलीमंत्र सेसं ॥
चवं वेद बंभं हरी किति भाषी। जिनें ध्रम्म साध्रम्म संसार साषी ॥
तृती भारती व्यासभारत्थभाष्यौ। जिनें उत्त पारत्थ सारत्थ साष्यौ ॥
चवं सुक्खदेवं परीषत्त पायं। जिनें उद्दर्यौ श्रब्ब कुर्वंस रायं ॥
नरं रूप पंचम्म श्रीहर्ष सारं। नलैराय कंठं दिने पद्द हारं ॥
छटं कालिदासं सुभाषा सुबद्धं। जिनें बागवानी सुबानी सुबद्धं ॥

कविता का चंद के समय तक जगत् में आदरणीय होना असम्भव है।-गो-वर्द्धन ने अपनी सप्तशती में "सेन कुल तिलक भूपति" इतनाही लिखा नाम कुछ न दिया किन्तु उस की टीका में "प्रवरसेन नाम्ना इति" लिखा है। अब यदि प्रवरसेन हेमन्तसेन या बिजयसेन का नामान्तर मान लिया जाय और यह भी मान लिया जाय कि जयदेव जी की कविता बहुत ज़-ल्दी संसार में फैल गई थी और समय प्रकाश का बल्लाल का समय भी प्र-माण किया जाय तो यह अनुमान हो सकता है कि विजयसेन के समय में वा उस से कुछ ही पूर्व सन् १०२५ से १०५० तक में किसी वर्ष में जयदेव जी का प्राकट्य है और ऐसा ही मानने से अनेक विद्वानों की एक वाक्यता भी होती है यहां पर समय विषयक जटिल और नीरस निर्णय जो बंगला और अङ्गरेज़ी ग्रन्थों में है वह न लिख कर सार लिख दिया है। इस से "जयदेव चरित" इत्यादि बंगला ग्रन्थों में जो जयदेव जी का समय तेरह-वीं वा चौदहवीं शताब्दी लिखा है वह अप्रमाण होकर यह निश्चय हुआ कि जयदेव जी ग्यारहवीं शताब्दी के आदि में उत्पन्न हुए हैं।

जयदेव जी की बाल्यावस्था का सविशेष वर्णन कुछ नहीं मिलता। अत्यन्त छोटी अवस्था में यह मातृ पितृ विहीन होगए थे यह अनुमान होता है क्योंकि विष्णु स्वामि चरितामृत के अनुसार श्री पुरुषोत्तम क्षेत्र में इन्हों ने उसी सम्प्रदाय के किसी पण्डित से पढ़ी थी। इन के बिवाह का वर्णन और भी अद्भुत है। एक ब्राह्मण ने अनपत्य होने के कारण जगन्नाथ देव की बड़ी आराधना कर के एक कन्या रत्न लाभ किया था। इस कन्या का नाम पद्मावती था। जब यह कन्या बिवाह योग्य हुई तो जगन्नाथ जी ने स्वप्न में उसके पिता को आज्ञा किया कि हमारा भक्त जयदेव नामक एक-ब्राह्मण अमुक वृक्ष के नीचे निवास करता है उसको तुम अपनी कन्या दो। ब्राह्मण कन्या को लेकर जयदेव जी के पास गया। यद्यपि जयदेव जी ने

कियोकालिकासुक्खवासंसुसुद्ध। जिनें सेत बंध्योति भोज प्रबंधं॥
सतं डंडमाली उलाली कवित्तं। जिनै बुद्धि तारंग गांगा सरित्तं॥
जयद्देव ऋट्ठं कवी कब्बिरायं। जिनें केवलं कित्ति गोविंद गायं॥
गुरं सब्ब कव्वी लहू चंद कब्बी। जिनें दर्सियं देवि सा अंग हव्बी॥
कवी कित्ति कित्तिउकत्ती सुदिक्खी। तिनें कीउछिष्टी कवी चंद भक्खी॥

अपनी अनिच्छा प्रकाश किया तथापि देवादेशानुसार ब्राह्मण उस कन्या को उनके पास छोड़ कर चला आया। जयदेव जी ने जब उस कन्या से पूछा कि तुम्हारी क्या इच्छा है तो पद्मावती ने उत्तर दिया कि आज तक हम पिता की आज्ञा में थे अब आप की दासी हैं। ग्रहण कीजिए वा परित्याग कीजिए मैं आप का दासत्व न छोड़ूंगी। जयदेव जीने उस कन्या के मुख से यह सुन कर प्रसन्न हो कर उसका पाणिग्रहण किया। अनेक लोगों का मत है कि जयदेव जी ने पूर्व में एक विवाह किया था उस स्त्री के मृत्युके पीछे उदास हो कर पुरुषोत्तम क्षेत्र में रहते थे। पद्मावती उनकी दूसरी स्त्री थी। इन्हीं पद्मावती के समय, संसार में आदरणीय कविता रत्न का निकष गीत-गोविन्द काव्य जयदेव जी ने बनाया।

गीतगोविन्द के सिवा जयदेव जी की और कोई कविता नहीं मिलती। प्रसन्नराघव पञ्चशरी चन्द्रालोक और सीताविहार काव्य विदर्भ नगर वासी कौंडिन्य गोत्रोद्भव महादेव पण्डित के पुत्र दूसरे जयदेव जी के बनाए हैं जिनका काव्य में पीयूषवर्ष और न्याय में पक्षधर उपनाम था। वरञ्च अनेक विद्वानों का मत है कि तीन जयदेव हुए हैं यथा गीतगोविन्दकार, प्रसन्न-राघवकार और चन्द्रालोककार जिनका नामान्तर पीयूषवर्ष है।

पद्मावती के पाणिग्रहण के पीछे जयदेव जी अपने स्थापित इष्टदेव की सेवा निर्वाहार्थ द्रव्य एकत्र करने की इच्छा से वा तीर्थाटन और धर्मोपदेश की इच्छा से निज देश छोड़ कर बाहर निकले। श्रीवृन्दावन की यात्रा करके जयपुर वा जयनगर होते हुए जयदेव जी मार्ग में चले जाते थे कि डाकुओं ने धन के लोभ से उन पर आक्रमण किया और केवल धन ही नहीं लिया वरञ्च उनके हाथ पैर भी काट लिए। कहते हैं कि किसी धार्मिक राजा के कुछ भृत्य लोग उसी मार्ग से जाते थे। उन लोगों ने जयदेव जी की यह दशा देखा और अपने राज्य में उनको उठा ले गए। वहां औषध इत्यादि से कुछ इनका शरीर स्वस्थ हुआ। इसी अवसर में वे चोर भी उस नगर में आए और साधु वेश से उस नगर के राजा के यहां उतरे। तब राजा के घर में जयदेव जी का बड़ा मान था और दान धर्म सब इन्हीं के द्वारा होता था। जयदेव जी ने इन साधु वेशधारी चोरों को अच्छी तरह पह-चान लिया और यदि वे चाहते तो भली भांति अपना बदला चुका लेते परन्तु उनके सहज उदार और दयालु चित्त में इस बात का ध्यान तक न

आया वरञ्च दानादिक देकर उनका बड़ा आदर किया। विदा की समय भी उनको बड़े सत्कार से अच्छी बिदाई देकर बिदा किया और राजा के दो नौकर साथ कर दिये कि अपनी सरहद तक उनको पहुंचा आवे। मार्ग में राजा के अनुचर ने उन चोरों से पूछा कि इन साधू जी ने और लोगों से विशेष आप का आदर क्यों किया। इस पर उन चाण्डाल चोरों ने यह उत्तर दिया कि जयदेव जी पहिले एक राजा के यहां रहते थे, इन्हीं ने कुछ ऐसा दुष्कर्म्म किया कि राजा ने हम लोगों को इनके प्राण हरने की आज्ञा दिया किन्तु दया परवश हो कर हम लोगों ने इनके प्राण नहीं लिए केवल हाथ पैर काटके छोड़ दिया इसी बात के छिपाने के हेतु जयदेव ने हम लोगों का इतना आदर किया। कहते हैं कि मनुष्यों की आधारभूता पृथ्वी इस अनर्थ मिथ्याप्रवाद को न सह सकी और द्विधा विदीर्ण हो गई। वे चोर सब उसी पृथ्वीगर्त्त में डूब गए और परमेश्वर के अनुग्रह से जयदेव जी के भी हाथ पैर फिर से यथावत् हो गए। अनुचरों के द्वारा यह वृत्तान्त सुन कर और जयदेव जी से पूर्व्ववृत्त जान कर राजा अत्यन्त ही चमत्कृत हुआ। आश्चर्य्य घटना अविश्वासी विद्वानों का मत है कि जयदेव जी ऐसे सहृदय थे कि उनके सहज स्वभाव पर रीझकर लोगों ने यह गल्प कल्पित कर ली है।

तदनन्तर जयदेव जी ने अपनी पत्नी पद्मावती को भी वहीं बुला लिया। कहते हैं कि एक बेर उस राजा की रानी ने ईर्षा वश पद्मावती की परीक्षा करने को उस से कह दिया कि जयदेव जी मर गए। उस समय जयदेव जी राजा के साथ कहीं बाहर गए थे। पतिप्राणा पद्मावती ने यह सुनते ही प्राण परित्याग कर दिया। जब जयदेव जी आए और उन्हों ने यह चरित देखा तो श्रीकृष्ण नाम सुनाकर उसको पुनर्जीवन दिया किन्तु उसने उठकर कहा कि अब आप हमको आज्ञा ही दीजिए हमारा इसी में कल्याण है कि हम आप के सामने परमधाम जायं और तदनुसार उसने फिर शरीर नहीं रक्खा। जयदेवजी इससे उदास होकर अपनी जन्मभूमि केंदुली ग्राम में चले आए और फिर यावत् जीवन वहीं रहे।

श्री जयदेव जी के गीतगोबिंद के जोड़ पर गीतगिरीश नामक एक काव्य बना है किन्तु जो बात इस में है वह उस में सपने में भी नहीं है।

गीतगोबिंद के अनेक टीकाकार भी हुए हैं यथा उदयन जो खास

गोवर्द्धनाचार्य का शिष्य था और जयदेव जी से भी कुछ पढ़ा था एक टीका उस को बनाई है और पीछे से अनेक टीका बनी हैं । उदयन की टीका जयदेव जी के समय में बन चुकी थी और इस में भी कोई संदेह नहीं कि गीतगोबिंद जयदेव जी के जीवन काल ही से सारे संसार में प्रचलित हो गया था। गीतगोबिंद दक्षिण में बहुत गाया जाता है और बाला जी में सीढ़ियों पर द्राविड़ लिपि में खुदा हुआ है। श्री बल्लभाचार्य्य संप्रदाय में इस का विशेष भाव है वरञ्च आचार्य्य के पुत्र गोसाईं बिट्ठलनाथ जी की इस के प्रथम अष्टपदी पर एक रस मय टीका भी बड़ी सुन्दर है जिस में दशावतार का वर्णन शृङ्गार परत्व लगाया है । वष्णवों में परिपाटी है कि अयोग्य स्थान पर गीतगोबिंद नहीं गाते क्योंकि उन का विश्वास है कि जहां गीतगोबिंद गाया जाता है वहां अवश्य भगवान का प्रादुर्भाव होता है । इस पर वैष्णवों में एक आख्यायिका प्रचलित है। एक बुढ़िया को गीतगोबिंद की " धीर समीरे यमुना तीरे " यह अष्टपदी याद थी। वह बुढ़िया गोवर्द्धन के नीचे किसी गांव में रहती थी। एक दिन वह बुढ़िया अपने बैंगन के खेत में पेड़ों को सींचती थी और अष्टपदी गाती थी इस से ठाकुर जी उस के पीछे पीछे फिरे। श्रीनाथ जी के मंदिर में तीसरे पहर को जब उत्थापन हुए तो श्री गोसाईं जी ने देखा कि श्रीनाथ जी का बागा फटा हुआ है और बैंगन के कांटे और मिट्टी लगी हुई है। इस पर जब पूछा गया तो उत्तर मिला कि अमुक बुढ़िया ने गीतगोबिंद गाकर हम को बुलाया इससे कांटे लगे क्योंकि वह गाती गाती जहां जहां जाती थी मैं उस के पीछे फिरता था। तब से यह आज्ञा गोसांई जी ने बैष्णवों में प्रचार या कि कुस्थान पर कोई गीतगोबिन्द न गावे।

किम्वदन्ती है कि जयदेव जी प्रति दिवस श्रीगंगा स्नान करने जाते थे। उन का यह श्रम देख कर गंगा जी ने कहा कि तुम इतनी दूर क्यों परिश्रम करते हो हम तुम्हारे यहां आप आवैंगे। इसी से अजयनद नामक एक धार में गङ्गा अब तक केंदुली के नीचे बहती हैं।

जयदेव जी विष्णुस्वामी सम्प्रदाय में एक ऐसे उत्तम पुरुष हुए हैं कि सम्प्रदाय की मध्यावस्था में मुख्यत्व करके इन का नाम लिया गया है। यथा—
विष्णुस्वामिसमारम्भां जयदेवादिमध्यगां। श्रीमद्वल्लभपर्य्यन्तांस्तुमोगुरुपरम्पराम् ॥१॥

जयदेव जी का पवित्र शरीर केंदुली ग्राम में समाधिस्थ है। यह समाधि

मन्दिर सुन्दर लताओं से वेष्ठित हो कर अपनी मनोहरता से अद्यापि जय-देव जी के सुन्दर चित्त का परिचय देता है।

" जयदेव जी नितान्त करुण हृदय और परम धार्म्मिक थे। भक्ति विकसित महत्व छटा और अनुपम प्रीति व्यञ्जक उदार भाव यह दोनों उन के अन्तःकरण में निरन्तर प्रति भासित होते थे। उन्हीं ने अपने जीवन का अर्द्ध-काल केवल उपासना और धर्म्म घोषणा में व्यतीत किया। वैष्णव संप्रदाय में इन के ऐसे धार्म्मिक और सहृदय पुरुष विरले ही हुए हैं "।

जयदेव जी एक सत्कवि थे इस में कोई सन्देह नहीं। यद्यपि कालिदास भवभूति भारवि इत्यादि से बढ़ कर कवि थे यह नहीं कह सकते पर इनको अपेक्षा इनको सामान्य भी नहीं कह सकते। बङ्गभूमि में तो कोई ऐसा रस कवि आज तक हुआ नहीं। "ललितपद विन्यास और श्रवण मनोहर अनुप्रास छटा निबन्धन से जयदेव की रचना अत्यन्त ही चमत्कारिणी है। मधुर पद विन्यास में तो बड़े २ कवि भी इस से निस्सन्देह हारे हैं"।

जयदेव जी का प्रसिद्ध ग्रन्थ गीतगोविन्द बारह सर्गों में विभक्त है। जिस में पूर्व में श्लोक और फिर गीत क्रम से रक्खे हैं। इस ग्रन्थ में परस्पर विरह, दूती, मान, गुण कथन और नायक का अनुनय और तत्पश्चात् मिलन यह सब वर्णित हैं। जयदेव जी परम वैष्णव थे इस से उन्हों ने जो कुछ वर्णन किया अत्यन्त प्रगाढ भक्ति पूर्ण हो कर वर्णन किया है। इन्होंने इस काव्य में अपनी रसशालिनी रचना शक्ति और चित्तरञ्जक सद्भाव शालित्व का एक शेष प्रदर्शन किया है। पण्डित वर ईश्वरचन्द्रविद्यासागर स्वप्रणीत संस्कृत विषयक प्रस्ताव में लिखते हैं "इस महाकाव्य गीतगोविन्द की रचना जैसी मधुर कोमल और मनोहर है उस तरह की दूसरी कविता संस्कृत भाषा में बहुत स्वल्प है। वरञ्च ऐसे ललित पद विन्यास, श्रवन मनोहर, अनुप्रास छटा और प्रसाद गुण और कहीं नहीं है" वास्तव में रचना विषय में गीतगोविन्द एक अपूर्व पदार्थ है। और तालमानों के चातुर्य्य से और अनेक रागों के नाम के अनुकूल गीतों से अचर से स्पष्ट बोध होता है कि जयदेव जी गाना बहुत अच्छा जानते थे। कहते हैं कि गीतगोविन्द को अष्टपदी और अष्टताली नाम से भी लोग पुकारते हैं।

अनेक विद्वानों ने लिखा है गीतगोविन्द विक्रमादित्य की सभा में गाया जाता था। किन्तु यह कथा सर्वथा अग्रहेय है। यह कोई और विक्रम होंगे

जिनके सभा में गीतगोविन्द गाया जाता था क्योंकि शकारि विक्रम के अनेक सौ वर्ष पश्चात् जयदेव जी का जन्म है। हां कलिङ्ग कार्णाट प्रभृति देश के राजाओं की सभामें पूर्व में गीतगोविन्द निस्सन्देह गाया जाता था। बरञ्च जोनराज ने अपनी राजतरंगिणी में लिखा है कि श्रीहर्ष जब कम सरोवर के निकट भ्रमण करतेथे उन दिनों गीतगोविन्द उनकी सभा में गाया जाता था।

कहते हैं कि "प्रिये चारुशीले" इस अष्टपदी में "स्मरगरल खण्डनं मम शिरसि मण्डनं" इस पद के आगे जयदेव जी की इच्छा हुई कि "देहि पद पल्लव मुदारं" ऐसा पद दें किन्तु प्रभु के विषय में ऐसा पद देने की उनका साहस नहीं पड़ा इससे पुस्तक छोड़ कर आप स्नान करने चले गए। भक्तवत्सल, भक्त मनोरथ पूरक भगवान इस समय स्नान से फिरते हुए जयदेव जी के वेश में घर में आए। प्रथम पद्मावती ने जो रसोई बनाई थी उसको भोजन किया तदनन्तर पुस्तक खोल कर "देहि पद पल्लवमुदारं" लिख कर शयन करने लगे। इतने में जयदेव जी आए तो देखा कि पतिप्राणा पद्मावती जो बिना जयदेव जी को भोजन कराए जल भी नहीं पीती थीं वह भोजन कर रही है। जयदेव जी ने भोजन का कारण पूछा तो पद्मावतीने आश्चर्य पूर्वक सब वृत्त कहा। इस पर जयदेव जी ने आकर पुस्तक देखा तो "देहि पदपल्लवमुदारं" यह पद लिखा है। वह जान गए कि यह सब चरित्र उसी रसिकशिरोमणि भक्तवत्सल का है इससे आनन्द पुलकित हो कर पद्मावती की थाली का अन्न खा कर अपने को कृतार्थ माना।

कहते हैं कि पुरी के राजा सात्विकराय ने ईर्षापरवश होकर एक जयदेव जी की कविता की भांति अपना भी गीतगोविन्द बनाया था। इस झगड़े को निवटाने को कि कौन गीतगोविन्द अच्छा है दोनों गीतगोविन्दों को पण्डितों ने जगन्नाथ जी के मंदिर में रख कर बन्द कर दिया। जब यथा समय द्वार खुला तो लोगों ने देखा कि जयदेव जी का गीतगोविन्द श्री जगन्नाथ जी के हृदय में लगा हुआ है और राजा का दूर पड़ा है यह देखकर राजा आत्महत्या करने को तयार हुआ तब श्रीजगन्नाथ जीने उसके सम्बोधन के वास्ते आज्ञा किया कि हमने तेरा भी अङ्गीकार किया शोच मत कर।

गीतगोविन्द अङ्गरेज़ी गद्य में सरविलियम जोन्सकृत पद्य में आनरल्ड साहब कृत लैटिन में लासिन कृत, जर्मन में रुकार्ट कृत, ऐसे ही अनेक

भाषाओं में अनेक जन कृत अनुवादित हुआ है । हिन्दी में इस के छन्दोंबद्ध तीन अनुवाद हैं। प्रथम राजा डालचन्द की आज्ञा से रायचन्द नागर कृत, द्वितीय अलतवर के प्रसिद्ध भक्त स्वामी रत्नहरीदास कृत और तृतीय इस प्रबन्ध के लेखक हरिश्चन्द्र कृत । इन अनुवादों के अतिरिक्त द्राविड़ और कार्णाटादि भाषाओं में इसके अपरापर अन्य अनेक अनुवाद है ।

लोग कहते हैं कि जयदेव जी ने गीतगोबिन्द के अतिरिक्त एक ग्रन्थ रति-मञ्जरी भी बनाया था किन्तु यह अमूलक है गीतगोबिन्दकार की लेखनी से रतिमञ्जरी सा जघन्य काव्य निकले यह कभी सम्भव नहीं । एक गङ्गा की स्तुति में सुन्दर पद जयदेव जी का बनाया हुआ और मिलता है वह उनका बनाया हुआ हो तो हो ।

इस भांति अनेक सौ बरस हुए कि श्रीजयदेव जी इस पृथ्वी को छोड़ गए। किन्तु अपनी कविता बल से हमारे समाज में वह सादर आज भी बिराज मान हैं । इनके स्मरण के हेतु केन्दुली गांव में अब तक मकर की संक्रान्ति को एक बड़ा भारी मेला होता है जिस में साठ सत्तर हजार वैष्णव एकत्र हो कर इन की समाधि के चारों ओर संकीर्तन करते हैं ।

महिम्न और पुष्पदन्ताचार्य्य ।

यह स्तोत्र अब ऐसा प्रसिद्ध है कि आर्ष की भांति माना जाता है वरंच पुराणों में भी कहीं२ इसका महात्म्य मिलता है, एक प्रसंग है कि जब पुष्प-दन्त ने महिम्न बना के शिव जी को सुनाया तब शिव जी बड़े प्रसन्न हुए इस्से पुष्पदन्त को गर्व हुआ कि मैंने ऐसी अच्छी कविता किया कि शिव जी प्रसन्न हो गए यह बात शिव जी ने जाना और अपने भृङ्गी गण से कहा कि मुंह तो खोलो जब भृङ्गी ने मुंह खोला तो पुष्पदन्त ने देखा कि महिम्न के बत्तीसों श्लोक भृङ्गी के बत्तीसों दांत में लिखे हैं इस्से यह बात शिव जी ने प्रगट किया कि ये श्लोक तुमने नहीं बनाए हैं बरंच यह तो हमारी अनादि स्तुति के श्लोक है। यह बात प्रसिद्ध है कि पुष्पदन्त जब शाप से ब्रा-ह्मण हुआ था तब यह स्तोत्र बनाया है और ऐसी ही अनेक आख्यायिका हैं अब वह पुष्पदन्त कौन है और कब वह ब्राह्मण हुआ इसका बिचार करते हैं। कथासरितसागर में एक पहिला ही प्रसंग है जिस्से यह प्रसंग बहुत स्पष्ट होता है, उस में लिखते हैं कि पार्वती जी का मान छुड़ाने को शिवजी

ने अनेक विचित्र इतिहास कहे और उस समय नन्दी को आज्ञा दी थी कि कोई भीतर न आवे परन्तु पुष्पदन्त गण ने योग बल से नन्दी से छिप कर भीतर जा कर वह सब कथा सुनी और अपनी स्त्री जया से कही और जया ने फिर पार्वती से कही ; यह सुन कर पार्वती ने बड़ा क्रोध किया और पुष्पदंत और उसके मित्र माल्यवान् को शाप दिया कि दोनों मृत्यु लोक में जन्म लो। फिर जब उन सबों ने पार्वती को बहुत मनाया तब पार्वती ने कहा कि अच्छा विंध्याचल में सुप्रतीक नाम यक्ष काणभूति पिशाच हुआ है उस को देखकर पुष्पदंत जब यह सब कथा कहेगा तब दोष दूर होगा और काणभूति से जब माल्यवान् सुनेगा तब शाप से छूटेगा वही पुष्पदंत बररुचि नामक कवि कौशाम्बी में हुआ और सुप्रतिष्ठ नगर में माल्यवान् गुणाढ्य कवि हुआ यथा ।

अवदच्चचन्द्रमौलि: कौशाम्बीत्यस्तियामह:नगरी।
तस्यां सपुष्पदंतो वररुचि नामा प्रिये जात: ॥ १ ॥
अन्यश्च माल्यवानपि नगरे सुप्रतिष्टाख्ये।
जातो गुणाढ्य नामा देवितयो रेषवृत्तान्त: ॥ २ ॥ ”

कौशाम्बी नगरी में सोमदत्त वा अग्निशिख नामा ब्राह्मण की स्त्री वसुदत्ता से बररुचि का जन्म हुआ और पिता छोटे ही पन में मर गया इस से माता ने बड़े कष्ट से इस का पालन किया। यह छोटे ही पन में ऐसा श्रुतिधर था कि एक बेर जो सुनता वा जो कला देखता कण्ठ कर लेता और जान जाता। एक समय बेतसपुर के देवस्वामी और करम्भक नामा ब्राह्मण के पुत्र इन्द्रदत्त और व्याड़ि इस के घर में आए वहां इन दोनों ने बररुचि को एक श्रुतिधर सुनके प्राति शाख्य पढ़ा और बररुचि ने उन दोनों को वह ज्यों का त्यों सुना दिया और बररुचि के पिता का मित्र भवानंद नामक नट उस रात्रि को कहीं अभिनय करता था वह देख कर बररुचि ने अपने माता के सामने ज्यों का त्यों फिर कर दिखाया। उन दोनों ब्राह्मणों को इस की एक श्रुतिधरता से बड़ी प्रसन्नता हुई क्योंकि जब इन दोनों ने विद्या के हेतु तप किया था तब इन को वर मिला था कि पाटलिपुत्र में वर्षनामक उपाध्याय से तुम सब विद्या पाओगे। वर्ष उपवर्ष यह दो भाई शंकर स्वामि ब्राह्मण के पुत्र थे उस में उपवर्ष पण्डित और धनी था और वर्ष मूर्ख और दरिद्री था उपवर्ष की स्त्री से अनादर पा कर वर्ष ने विद्या के हेतु तप किया और स्कन्द से सब

विद्या पाई परन्तु स्वामी ने कहा था कि जो एक श्रुतिधर हो उस के सामने तुम अपनी विद्या प्रकाश करना। भी जब वर्ष के पास ये दोनों ब्राह्मण गए तब उस की स्त्री ने कहा कि एक श्रुतिधर कोई हो तो ये अपनी विद्या प्रकाश करें अन्यथा न प्रकाश करेंगे इसी से वे दोनों ब्राह्मण वररुचि को एक श्रुतिधर पा कर बड़े प्रसन्न हुए। वररुचि की माता से उन दोनों ने सब वृत्तांत कह कर वररुचि को साथ लिया और फिर पाटलि पुत्र में आए क्योंकि उसकी माता से भी आकाश वाणी ने कहा था कि तेरा पुत्र एक श्रुतिधर होगा और वर्ष से सब विद्या पढ़ेगा और व्याकरण का आचार्य होगा वर्ष ने तब उन तीनों को विद्या पढ़ाया और बहुत प्रसन्न हुआ क्योंकि वररुचि एक श्रुतिधर द्वि श्रुतिधर व्याड़ि और इन्द्रदत्त त्रि श्रुतिधर था,। वर्ष को नगर के लोग मूर्ख जानते थे पर जब एका एकी उसकी विद्या का प्रकाश हुआ तो सब ब्राह्मण वर्ग बड़े प्रसन्न हुए और नंद राजा ने भी बहुत सा धन वर्ष को दिया, फिर इन तीनों ने बड़ी विद्या पढ़ी और वररुचि ने उपवर्ष की कन्या उपकोशा से विवाह किया, और उपकोशा अपने पातिव्रत और चरित्र से नन्द की भगिनी हुई, वर्ष से एक पाणिनी * नामा मूर्ख शिष्य ने शिव जी से वर पा कर व्याकरण बनाया और जब वररुचि ने उस से वाद किया तो

---

* राजा शिवप्रसाद यों लिखते हैं। "समय के उलट फेर में हमारे पंडित लोग जो कुछ अपनी पंडिताई दिखलाते हैं लिखने योग्य नहीं है इसी एक बात से सोच लो कि जिस पंडित से पाणिनि वैय्याकरण का ज़माना पूछोगे छूटते कहेगा कि सत्ययुग में हुआ था लाखों बरस बीते परंतु हम से इन्कार न करेगा कि कात्यायन की पतंजलि ने टीका लिखी और पतंजलि की व्यास ने अब हेमचन्द्र अपने कोश में कात्यायन का नाम वररुचि बतलाता है और कश्मीर का सोमदेव भट्ट अपने कथासरित्सागर में लिखता है कि कात्यायनवररुचि कौशाम्बी में जो अब प्रयाग के पास जमना के कनारे कोसम गांव कहलाता है पैदा हुआ पाणिनि से व्याकरण में शास्त्रार्थ किया और राजा नन्द का मंत्री हुआ मुद्राराक्षस इत्यादि बहुत ग्रंथों से साबित है कि नन्द के बाद ही चन्द्रगुप्त राज्यसिंहासन पर बैठा और चन्द्रगुप्त का ज़माना ऐसा निश्चय ठहर गया है कि जैसे पलासी की लड़ाई अथवा नादिरशाही अथवा पृथीराज और विक्रम अब तो कहो कि हम पाणिनि का ज़माना अब अढ़ाई हजार बरस से इधर मानें या लाखों बरस से उधर ? पतंजलि चन्द्रगुप्त के पीछे हुआ इस में

शिव जी ने हुंकार के वररुचि का इन्द्रमत का व्याकरण भुला दिया इससे वररुचि ने फिर तपस्या कर के शिव जी से पाणिनि व्याकरण सीखा। यह वररुचि बहुत दिन तक योगानंद का मंत्री रहा और इस का नामान्तर कात्यायन था परन्तु यह नंद का मन्त्री कैसे हुआ और कब तक रहा यह यहां नहीं लिखते क्योंकि प्रसंग के बाहर है। यह वन २ फिरने लगा जब शकटार ने चाणक्य द्वारा नंद वंश का नाश किया तब उदास हो कर

किसी तरह का संदेह नहीं क्योंकि उसने अपने भाष्य में " सभाराजा मनुष्य पूर्वा" इस सूत्र पर "चंद्रगुप्तसभम्" ऐसा उदाहरणदिया है।"

Dr. Rajendra Lal Mitra L. L. D. in his Indo-Aryans No. 1 P. 19 "says, according to Dr. Goldstucker, the Grammar of Panini was composed between the 9th and the 11th centuries before Christ Professor Max Muller brings down the age of the Grammar to the 6th century B. C."

पाणिनीय व्याकरण के समय में निम्नलिखित बातें होती थीं।

१ उस समय के लोगों में हंसी करने की चाल थी। एहिमन्ये ओदनं भोक्ष्यसे इति भुक्तः सोऽतिथिभिः—मानो भात खाने आया है सब खा गो गया।

२ श्राद्धों में नाती को अवश्य बुलाने की चाल थी निमन्त्रणं, आवश्यके श्राद्ध भोजनादौ दौहित्रादेः प्रवर्तनं—निमन्त्रण, अर्थात् जैसे नाती वगैरह को श्राद्ध भोजन में बुलाना।

३ नृतय और नृतय में भेद। गात्र विक्षेपमात्रं नृतं भांड़ों का तमासा, बदन तोड़ना इत्यादि। पदार्थाभिनयोनृत्यं—भावादिको का दिखलाना।

४ बहुत सी कहावतें उस समय के लोग जानते थे जैसा। नविश्वसेदविश्वस्त'—जिस्का विश्वास एक बेर गया फिर उस का विश्वास न करना।

५ आलिङ्गन करने की रीत थी। अश्लिषत् कन्यां देवदत्तः—देवदत्त ने कन्या को आलिङ्गन दिया।

६ लड़कियों को गहना पहिनाने की चाल। उपस्कृता कन्या—अलंकार पहिनाई गई कन्या।

७ मुहावरेदार बोलने की चाल। हस्तयते—हाथी पर चढ़के जाता है।

और विन्ध्याचल में काणभूति पिशाच को देख कर अपना पूर्व जन्म स्मरण कर के उससे सब कथा कह कर बदरिकाश्रम में जा कर योग से अपनी गति को गया और शाप से छूटा। गन्धर्व से भी पहिले जन्म में यह गंगातीरके बहार नामक ग्राममें गोविन्ददेव ब्राह्मण अग्निदत्ता ब्राह्मणी का पुत्र देवदत्त था और प्रतिष्ठानपुर के राजा की कन्या से विवाह किया था उस कन्या ने पहिले दांत में फूल दबा कर उस को संकेत बताया था इससे जब वह ब्राह्मण बरदान पा कर शिव गण हुआ तब उस की स्त्री भी जया प्रतिहारी हुई।

इस कथा के व्याख्यान से यह स्पष्ट होता है कि वर्णन नंद के राज्य के समय का है और उस समय के देवता शिव और स्कन्ध थे और व्याकरण का बड़ा प्रचार था कातंत्र कालाप एन्द्र पाणिनी इत्यादि मत में परस्पर बड़ा विरोध था संस्कृत प्राकृत पैशाची और देश भाषा बहुत प्रसिद्ध थी परन्तु पांच और भाषा भी प्रचलित थीं, पाटलिपुत्र नया बसा था, प्रतिष्ठान पुर और अयोध्या भी बहुत बसती थी, धूर्तता फैल गई थी और हिन्दुस्तान में पश्चिम देश बहुत मिला हुआ था इत्यादि।

इस बृहत्कथा में ऐसे ही गुणाढ्य कवि के भी तीनों जन्म लिखे हैं और उसका बृहत्कथा का पैशाची भाषा में निर्माण करना उस में छः लाख ग्रंथ जला देना और एक लाख ग्रंथ नर बाहन दत्त के चरित्र का राजा शात बाहन को देना इत्यादि सविस्तर वर्णित है।

पादयते—लात मारता है।

८ लोग बहुत भावुक थे। सिद्धशब्दो ग्रन्थान्ते मङ्गलार्थे—ग्रन्थ के अन्त में। सिद्ध—ऐसा लिखो क्योंकि यह मङ्गल है।

९ वृषस्यतिगौ:—गाय उठी है।

१० महल बना करते थे। कुटीयति प्रासादे। महल में बैठ कर झोपड़ी समुझता है।

११ भिक्षुक लोग राजा के पास जाया करते थे भिक्षुक: प्रभुमुपतिष्टते।

१२ मल्लयुद्ध हुआ करता था। आह्वयते—मैदान में खड़े होकर पुकारना। नहीं तो आह्वयति।

१३ खिराज दिया जाता था। करंविनयते—कर देने को निकालता है।

१४ शास्त्र की चर्चा रहाकरती थी। शास्त्रे वदते शास्त्र में बोल रखता है।

अब यह बृहत्कथा कब बनी है और किसने बनाया है इस के विचार में चित्त बहुत दोलायित होता है क्योंकि इस का काल ठीक निर्णीत नहीं होता। नंद के समय की भी नहीं मान सकते क्योंकि इसी बृहत्कथा में विक्रमादित्य उदयन ऐसे प्राचीन नवीन अनेक राजाओं का वर्णन है परन्तु इतना कह सकते हैं कि इस का मूल प्राचीन काल से पड़ा है और उस को अनेक काल में अनेक कवि बढ़ाते गए हैं क्योंकि "कात्यायनाद्यैर्ज्ञातिः, तत्पुष्पदंतादिभिः" इत्यादि पदों में आदि शब्द मिलता है। वा अनेक प्राचीन सुनी हुई कथाओं को किसी ने एकत्र कर के आदर के हेतु उस में पुष्पदंत का नाम रख दिया हो तो भी आश्चर्य नहीं क्योंकि कात्यायन वररुचि का होना खीस्ताब्दीय के १२० वर्ष पूर्व लोग अनुमान करते हैं और विक्रम का काल पण्डितों ने ५०० खीस्ताब्द के लगभग निश्चय किया है और ऐसा माननें से प्रोफ़ेसर गोल्डस्टकर इत्यादि इतिहास वेत्ताओं का दो वररुचि मानने वाला मत भी स्पष्ट खंडित होता है क्योंकि बृहत्कथा में जब विक्रम का चरित्र है तब उसी विक्रमादित्य वाले वररुचि का नाम कात्यायन संभव है।

परतु हमारा कथन यह है कि संस्कृत बृहत् कथा गुणाढ्य की बनाई हो नहीं है क्योंकि उस में स्पष्ट लिखा है कि गुणाढ्य ने संस्कृत बोलना छोड़ दिया था इसे पिशाच भाषा में बृहत्कथा बनाया तो इस दशा में संभव है कि किसी ने यह बृहत्कथा बना कर वररुचि गुणाढ्य पुष्पदंत इत्यादि का नाम आदर और प्रमाण पाने के हेतु रख दिया हो।

अब जो बृहत्कथा मिलती है वह तीस हजार श्लोक में रामदेवभट्ट के पुत्र सोमदेवभट्ट की बनाई है जो उस में काश्मीर के राजा संग्रामदेव के पुत्र अनन्त देव की रानी सूर्यवती के चित्त विनोद के हेतु बनाई है और इसी अनन्तदेव के पुत्र कमलदेव हुए और कमलदेव के पुत्र श्री हर्षदेव हुए।

काश्मीर के इन राजाओं के नाम चित्त को और भी संशय में डालते हैं क्योंकि रत्नावली वाला श्रीहर्ष कालिदास से पहिले का है क्योंकि कालिदास ने मालविकाग्निमित्र में धावक कवि का नाम प्राचीन कवियों में लिखा है अब इस दशा में विरोध का परिहार यों हो सकता है कि जिस विक्रम का चरित्र बृहत्कथा में है वह नवरत्न वाला विक्रम नहीं किन्तु कोई प्राचीन विक्रम है। और यह बृहत्कथा धाव के थोड़े ही काल पहिले काश्मीर में सोमदेव ने बनाई है क्योंकि इस में नन्द और विक्रम के नाम की भांति

भोज कालिदास इत्यादि का नाम नहीं है और नवरत्न वाला वररुचि दूसरा था क्योंकि उस काल में राजा और कवियों को वही नाम बारम्बार होते थे इस से बृहत्कथा संवत और खिस्तसन के पूर्व बनी है और गुणाढ्य और वररुचि कुछ इससे भी पहिले के हैं।

परन्तु बृहत्कथा के किसी लेख का हम प्रमाण नहीं करते क्योंकि यह बड़ा ही असंगत ग्रन्थ है। जैसा अनन्त पंडित की बनाई मुद्राराक्षस की पूर्व पीठिका में नन्द का नाम सुधन्वा लिखा है और इसमें योगनद है उस में जो वररुचि के मंत्री होने का प्रसंग है वह इस पीठिका में कहीं मिलताही नहीं और पाणिनी वर्ष, कात्यायन, व्याड़ि, इन्द्रदत्त और अनेक व्याकरण के आचार्य बृहत्कथा के मत से एक काल के थे पर बुद्धिमानों ने इन सब के काव्य में बड़ा भेद ठहराया है इस से इतिहास विषयमें बृहत्कथा अप्रमाणिक है।

बृहत्कथा का वर्णन और गुणाढ्य इत्यादि कवियों का वर्णन आर्य्या सप्तशती बनाने वाले गोवर्द्धन कवि ने किया है और गोवर्धन कवि का काव्य जयदेव जी के काल से निश्चित होगा बंगाली लेखकों ने जयदेव जी का समय पन्द्रहवां शतक ठहराया है पर इस निर्णय में परम भ्रांत हुए हैं क्योंकि जयदेव जी का काल एक सहस्र वर्ष के पूर्व है और इस्में प्रमाण के हेतु पृथ्वीराज रायसा में चंद कवि का जयदेव जी का और गीतगोबिन्द वर्णनही प्रमाण है । जयदेव जी ने गोवर्द्धन कवि का वर्णन वर्त्तमान क्रिया से किया है इससे अनुमान होता है कि उस काल में गोवर्धन कवि था बङ्गाली लोगों में कोई बारहवें शतक में लक्ष्मनसेन के काल में जयदेव को मानते हैं और उसके समकालीन गोवर्धन इत्यादि कवियों को लक्ष्मन सेन की सभा को पञ्चरत्न मानते हैं यह बात भी असम्भव है क्योंकि पृथ्वीराज ग्यारहवें शतक में था और चन्द भी तभी था तो जयदेव के चन्द के सैकड़ों वर्ष पहिले निस्सन्देह हुए हैं क्योंकि चन्द ने प्राचीन कवियों की गणना में बड़ी भक्ति से जयदेव जी का वर्णन किया है, हां यदि लक्ष्मन सेन को पृथ्वीराज के पहिले मानो तो जयदेव उस के सभा के पण्डित हो सकते हैं नहीं तो समझ लो कि आदर के हेतु इन कवियों का नाम लक्ष्मन सेन ने अपनी सभा में रक्खा है इस्से चलसखि ग्रांजं की भाषा और अङ्गरेजी इतिहास वेत्ताओं का मत लेकर बंगालियों ने जयदेव जी का जो काल निर्णय किया है वह अप्रमाण है यह निश्चय हुआ और बृहत्कथा उस काल को भी पहिले बनी है यह भी सिद्धान्तित हुआ।

श्रीवल्लभाचार्य्य का जीवन चरित्र ।

दोहा—तम पाखंड हि हरत करि, जन मन जलज विकास ।
जयति अलौकिक रवि कोऊ, श्रुति पथ करन प्रकास ॥

जो लोग बहुत प्रसिद्ध हैं और जिन को लाखों मनुष्य सिर झुकाते हैं उन के जीवन चरित्र पढ़ने या सुनने की किस को इच्छा न होगी इस हेतु यहां पर श्री वल्लभाचार्य्य का जीवन चरित्र संक्षेप से लिखा जाता है।

मन्दराज हाते में, तैलंगदेश के आकबीडु जिले में कांकरवल्लि गांव में भारद्वाज गोत्र, तैलंग ब्राह्मणजाति, पंचप्रवर, यजुर्वेद, तैतिरीयशाखा, दीक्षित सोमयागी उपनाम, यज्ञनारायण भट्ट के प्रसिद्ध वंश में, लक्ष्मण भट्ट जी की धर्म पत्नी इल्लमगारु के गर्भ से, चम्पारण्य में इनका जन्म हुआ।

लक्ष्मण भट्ट जी के तीन पुत्र थे, बड़े रामकृष्ण भट्ट जी युवावस्थाही में सन्यस्त हो गये और केशव पुरी नाम से प्रसिद्ध हुए। मझले पूर्वोक्ताचार्य और छोटे रामचन्द्र भट्ट जी, जिन के कृष्णकुतूहल गोपाल लीला इत्यादि अनेक ग्रन्थ हैं। इन्हीं ने अपने नाना की वृत्ति पाई थी परन्तु विवाह न करके अपना सब जीवन अयोध्या में बिताया।

लक्ष्मण भट्टजी अपने घर के खान पान से बहुत सुखी थे, वे जब काशी में अपने जाति के ब्राह्मणों का सत्कार करने आये तो मार्ग में बितिया के इलाके में चौरा गांव के पास चम्पारण्य में संवत १५३५ बैशाख बदी ११, (१) आदित्यवार को मध्यान्ह समय आचार्य का जन्म हुआ जब ये पांच वर्ष के हुए तब चैत सुदी ९ के दिन अपने पिता से गायत्री उपदेश लिया और कृष्णदास मेघन को उसी दिन अष्टाक्षर मंत्र का उपदेश करके प्रथम वैष्णव किया।

---

१ वल्लभदिग्विजय में लिखा है। संवत १५३५ शाके १४४० बैशाख मास कृष्णपक्ष ११ रविवार मध्यान। एक पद श्रीद्वारकेश जी कृत॥ रागसारङ्ग ॥
तत्व गुनवान भुव माधवासित तरणि प्रथम सौभग दिवस प्रकट लक्ष्मण सुवन।
धन्य चम्पारन्य मन्य त्रैलोक्य जन अन्य अवतार भुवि है न ऐसो भवन ॥ १ ॥
लग्न वृश्चिक कुंभ केतु कवि इन्दु सुख मीन बुध उच्च रवि वैरि नाशे।
मन्द वृष कर्क गुरु भौम युत सिंह में तमस के योग ध्रुव यश प्रकाशे ॥ २ ॥
रिक्ष धनिष्टा प्रतिष्टा अधिष्टान स्थिर विरह वदनानलाकार हरि को।
यहै निश्चय द्वारकेश इनके शरण और को श्री वल्लाधीश सर को ॥ ३ ॥

इसी साल असाढ़ सुदी ८ को काशी के प्रसिद्ध पंडित माधवानन्द तीर्थ त्रिदंडी से विद्याध्ययन किया और छोटेपन ही में पत्रावलम्बन ग्रन्थ करके विश्वनाथ के दरवाजे पर लगा दिया और डौंड़ी पीट कर काशी के पंडितों से पहला शास्त्रार्थ किया जब इन के पिता काशी से चले, तो लक्ष्मणबाला जी में उनका देहान्त हुआ, उन को क्रियादिक के पीछे आचार्य पृथ्वी परिक्रमा को चले और विद्यानगर में जाकर, कृष्णदेव राजा की सभा में सब पंडितों को जीत कर आचार्य पद पाया । संवत १५४८ के बैशाख बदी २ को ब्रह्मचर्य धर्म से पहिली पृथ्वी परिक्रमा करने चले और पंढरपुर त्र्यम्बक उज्जैन होते हुए ब्रज आए और चार महीने श्रीवृन्दावन में रहकर श्रीमद्भागवत का पारायण किया और फिर सोरों अयोध्या व नैमिषारण्य होते हुए काशी आए ।

राह में जो पण्डित मिलते उनसे शास्त्रार्थ करते और वैष्णव धर्म फैलाते थे ।

काशी जी से गया और जगन्नाथ जी होते हुए फिर दक्खिन चले गए और संवत १५५४ अपना पहिला दिग्विजय समाप्त किया दूसरे दिग्विजय में ब्रज में गोवर्द्धन पर्वत पर श्रीनाथ जी का स्वरूप प्रगट करके उन की सेवा स्थापन किया, और तीन पृथ्वी परिक्रमा करके सारे भारतखंड में वैष्णव मत फैलाकर बावनवर्ष की अवस्था में संवत १५८७ आसाढ़सुदी २ को काशी जीमें लीला में प्राप्त भए । इनके दो पुत्र बड़े श्रीगोपीनाथ जी छोटे श्री विट्ठलनाथ

श्री महाप्रभुन की जन्म कुण्डली ऊपर के कीर्त्तन अनुसार ।
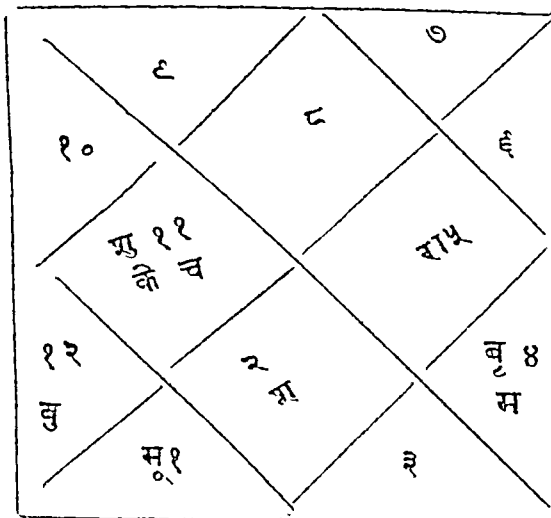
जो गोपीनाथ जी के पुत्र श्री पुरुषोत्तम जी पर इनकी आगे वंश नहीं, श्रीवि-ट्ठलनाथ जी के सात पुत्र जिनमें बड़े गिरधर जी और छोटे पुत्र यदुनाथ जी का वंश अब तक वर्त्तमान हैं, इनका मत शुद्धाद्वैत अर्थात् जगत ब्रह्म के सच्चित रुप से अभिन्न और सत्य परन्तु भक्ति विना ब्रह्म स्वरूप का ज्ञान फल दायक नहीं परमोपास्य श्रीकृष्ण और विष्णुस्वामी परमाचार्य, साधन सेवा मुख्य, प्रमाण ग्रंथ, वेदव्याससूत्र, गीता और भागवत। तिलक दो रेखा का लाल जर्द पुंड्र शंख चक्र शीतल ॥

आचार्यने अणुभाष्य, तत्वदीप, निबन्ध, रसमंडन, श्री मद्भागवत पर सुबो-धिनी टीका, सिद्धान्त मुक्तावली, पुष्टिप्रवाह मर्यादा, पुरुषोत्तम सहस्र नाम, सिद्धान्त रहस्य, अन्तः करण प्रबोध, भक्ति प्रकरण, नवरतन, बिवेक धैर्याश्रय, पत्रावलम्बन, कृष्णाश्रय, भक्तिवर्द्धिनी, जलभेद सन्यासनिर्णय, जैमिनी सूत्र-भाष्य, चित्तप्रबोध, निरोधलक्षण, व्यासबिराध लक्षण, परिवृढ़ाष्टक और वैद्यवल्लभ ये चौवीस ग्रंथ बनाये हैं जिन में दोनों सूत्रों का भाष्य और भागवत की टीका बहुत बड़े ग्रंथ हैं।

सूरदास जी का जीवन चरित्र।

दोहा—हरि पद पंकज मत्त अलि, कविता रस भर पूर।
दिव्य चक्षु कवि कुल कमल, सूर नौमि श्री सूर ॥

सब कवियों के वृत्तान्त में सूरदास जी का वृत्तान्त पहिले लिखने के योग्य है क्योंकि यह सब कवियों के शिरोमणि हैं और कविता इन को सब भांति की मिलती है कठिन से कठिन और सहज से सहज इन के पद बने हैं और किसी कवि में यह बात नहीं पाई जाती और कवियों की कविता में एक एक बात अच्छी है और कविता एक ढंग पर बनती है परन्तु इन की कविता में सब बात अच्छी है और इन की कविता सब तरह की होती है जैसे किसी ने शहनशाह अकबर के दरबार में कहा था।

दोहा—उत्तम पद कवि गंग को, कविता को बल बीर।
केशव अर्थ गंभीर को, सूर तीन गुन धीर ॥

और इसके सिवाय इन की कविता में एक असर ऐसा होता है कि जी में जगह करे जैसे एक वार्ता है कि किसी समय में एक कवि कहीं जाता था

और एक मनुष्य बहुत व्याकुल पड़ा था उस मनुष्य को अति व्याकुल देखकर उस कवि ने एक दोहा पढ़ा।

दोहा—किधौं सूर को सर लग्यो, किधौं सूर की पीर ।
किधौं सूर को पद सुन्यो, जो अस विकल शरीर ॥

इस वार्ता के लिखने का यह अभिप्राय है कि निस्सन्देह इन के पदों में ऐसा एक असर होता कि जो लोग कविता समझते हैं उन के जो पर इसकी चोट लगे।

ये जाति के ब्राह्मण थे और इन के पिता का नाम बाबाराम दास जी था जो गाना बहुत अच्छा जानते थे और कुछ धुरबपद इत्यादि भी बनाते थे और देहली या आगरे या मथुरा इन्हीं शहरों में रहा करते थे और उस समय के नामी गुनियों में गिने जाते थे उनके घर यह सूरदास जी पैदा हुए यह इस असार संसार के प्रपंच को न देखने के वास्ते आँख बंद किए हुए थे इन के पिता ने इन को गाना सिखाने में बड़ा परिश्रम किया था और इनकी बुद्धि पहिलेही से बड़ी विचक्षण और तीव्र थी संवत् १५४० के कुछ न्यूनाधिक में इन का जन्म हुआ था और आगरे में इन्होंने कुछ फारसी विद्या भी सीखी थी इनकी जवानी ही में इन के पिता का परलोक हुआ और यह अपने मन के हो गए और भजन तभी से बनाने लगे उस समय में इनके शिष्य भी बहुत से हो गए थे और तब यह अपना नाम पदों में सूर स्वामी रखते थे उन्ही दिनों में इनने महाराज नल और दमयन्ती के प्रेम की कथा में एक पुस्तक बनाई थी जो अब नहीं मिलती। उस समय इनकी पूर्ण युवा अवस्था थी। और उन दिनों में ये आगरे से नौ कोस मथुरा के रास्ते के बीच में एक स्थान जिसका नाम गऊघाट है वहीं रहते थे और बहुत से इन के शिष्य इनके साथ थे फिर ये आचार्य्य कुल शिरोरत्न श्री श्री वल्लभाचार्य्य महाप्रभु के शिष्य हुए तब से यह अपना नाम पदों में सूरदास रखने लगे ये भजनों में नाम अपना चार तरह से रखते थे सूर, सूरदास, सूरजदास, और सूरश्याम, जब यह सेवक हुए थे तब इन्हों ने यह भजन बनाया था।

भजन—चकई री चलि चरन सरोवर, जहं नहिं प्रेम बियोग ।
जहं भ्रम निसा होत नहिं कबहूं सो सागर सुख जोग ॥ १ ॥
सनक से हंस मीन शिव मुनि जन नख रवि प्रभा प्रकास ।
प्रफुलित कमल निमेषन ससि डर गुंजत निगम सुवास ॥ २ ॥

जेहि सर सुभग सुक्ति मुक्ताफल सुक्रत विमल जल पोजै ।
सो सर छाड़ि कुवुद्धि विहंगम इहां कहा रहि कीजै ॥ ३ ॥
जहां श्री सहस्र सहित नित क्रीडत सोभित सूरज दास ।
अवन सुहाई विषै रस छीलर वा समुद्र की आस ॥ ४ ॥

फिर तो इनकी सामर्थ्य बढ़तीही गई और इन्हीं ने श्री मद्भागवत को भी पदों में बनाया और भी सब तरह के भजन इन्हीं ने बनाए इन के श्री गुरु इन को सागर कहकर पुकारते थे इसी से इन ने अपने सब पदों को इकट्ठा करके उस ग्रन्थ का नाम सूरसागर रक्खा जब यह वृद्ध हो गए थे और श्री गोकुल में रहा करते थे धीरे धीरे इनके गुन शहनशाह अकबर के कानों तक पहुंचे उस समय ये अत्यन्त वृद्ध थे और बादशाह ने इन को बुलवा भेजा और गाने की आज्ञा किया तब इनने यह भजन बनाकर गाया।

मनरे करि माधो सो प्रीति।

फिर इनसे कहा गया कि कुछ शहनशाह का गुणानुवाद गाइए उसपर इन्हीं ने यह पद गाया ।

केदारा—नाहिं न रह्यो मन में ठौर ।

नन्द नन्दन अछत कैसे आनिये उर और ॥ १ ॥
चलत चितवत दिवस जागत सुपन सोवत राति ।
हृदत तें वह मदन मूरति छिनु न इत उत जाति ॥ २ ॥
कहत कथा अनेक ऊधो लोग लोभ दिखाइ ।
कहा करौं चित प्रेम पूरन घट न सिंधु समाइ ॥ ३ ॥
श्यामगात सरोज आनन ललित गति मृदु हास ।
सूर ऐसे दरस कारन मरत लोचन खास ॥ ४ ॥

फिर संवत् १६२० के लग भग श्री गोकुल में इन्हीं ने इस शरीर को त्याग किया सूरदास जी ने अन्त समय यह पद किया था।

बिहाग—खंजन नैन रूप रस माते ।

अतिशय चारु चपल अनियारे पल पिंजरा न समाते ॥
चलि चलि जात निकट श्रवनन के उलटि फिरत ताटंक फंदाते ।
सूरदास अंजन गुन अटके नातरु अब उड़िजाते ॥

दोहा—मन समुद्र भयो सूर को, सीप भए चख लाल ।
हरि मुक्ताहल परतहीं, मूंदी गए तत काल ॥

संसार में जो लोग भाषा काव्य समझते होंगे वह सूरदास जी को अवश्य जानते होंगे और इसी तरह जो लोग थोड़े बहुत भी वैष्णव होंगे वह इनका थोड़ा बहुत जीवन चरित्र भी अवश्य जानते होंगे। चौरासी वार्ता, उसकी टीका, भक्तमाल और उसकी टीकाओं में इनका जीवन विहृत किया है। इन्ही ग्रन्थों के अनुसार संसार को और हम को भी विश्वास था कि ये सारस्वत ब्राह्मण हैं इनके पिता का नाम रामदास, इनके माता पिता दरिद्री थे, ये गऊघाट पर रहते थे, इत्यादि। अब सुनिए, एक पुस्तक सूर-दास जी के दृष्टिकूट पर टीका [टीका भी सम्भव होता है उन्ही की क्योंकि टीका में जहां अलंकारों के लक्षण दिए हैं वह दोहे और चौपाई भी सूर नाम से अंकित हैं] मिली है। इस पुस्तक में ११६ दृष्टिकूट के पद अलंकार और नाइका के क्रम से हैं और उनका स्पष्ट अर्थ और उनके अलंकार इत्यादि सब लिखे हैं। इस पुस्तक के अन्त में एक पद में कवि ने अपना जीवन चरित्र दिया है जो नीचे प्रकाश किया जाता है। अब इस को देखकर सूरदास जी के जीवन चरित्र और वंश को हम दूसरी ही दृष्टि से देखने लगे। वह लिखते हैं कि 'प्रथजगात [१]' प्रार्थज गोत्र। वंश में इन के मूल पुरुष ब्रह्मराव [२] हुए जो बड़े सिद्ध और देवप्रसाद लब्ध थे। इन के वंश में भीचन्द [३] हुआ। पृथ्वीराज [४] ने जिस को ज्वाला देश दिया। उस के चार पुत्र जिन में पहिला राजा हुआ। दूसरा गुणचन्द्र। उस का पुत्र सीलचन्द्र उस का वीरचन्द्र। यह वीरचन्द्र रनथम्भर [रणथम्भौर] के राजा

---

१ 'प्रथ जगात' इस जाति वा गोत्र के सारस्वत ब्राह्मण सुनने में नहीं आए। पण्डित राधाकृष्ण संग्रहीत सारस्वत ब्राह्मणों की जाति माला में 'प्रथ जगात' 'प्रथ' वा 'जगात' नाम के कोई सारस्वत ब्राह्मण नहीं होते। जगा वा जगातिआ तो भाट को कहते हैं।

२ ब्रह्मराव नाम से भी सन्देह होता है कि यह पुरुष या तो राजा रहा हो या भाट।

३ 'भी'का शब्द हुआ अर्थ में लीजिए तो केवल चन्द्र नाम था। चन्द्र नाम का एक कवि पृथ्वीराज की सभा में था ? आश्चर्य !!!

४ पृथ्वीराज का काल सन ११७६।

प्रसिद्ध हम्मीर [५] के साथ खेलता था। इस के वंश में हरिचन्द्र [६] हुआ उस के पुत्र को सात पुत्र हुए जिन में सब से छोटा [कवि लिखता है] मैं सूरजचन्द था। मेरे छ भाई मुसल्मानों के युद्ध [७] में मारे गए। मैं अन्धा कुबुद्धि था। एक दिन कूंए में गिर पड़ा तो सात दिन तक उस [अंधे] कूंए में पड़ा रहा किसी ने न निकाला। सातए दिन भगवान ने निकाला और अपने स्वरूप का (नेत्र दे कर) दर्शन कराया और मुझ से बोले कि वर मांग। मैंने वर मांगा कि आप का रूप देख कर अब और रूप न देखूं और मुझ को दृढ़ भक्ति मिले और शत्रुओं (८) का नाश हो। भगवान ने कहा ऐसा ही होगा तू सब विद्या में निपुण होगा। प्रबल दक्षिण के ब्राह्मण कुल (९) से शत्रु का नाश होगा। और मेरा नाम सूरजदास सूर सूरश्याम इत्यादि रखकर भगवान अन्तर्धान हो गए। मैं व्रज में बसने लगा। फिर

---

५ हम्मीर चौहान, भीमदेव का पुत्र था। रणथम्भौर के किले में इसी की रानी इस के अलाउद्दीन (दुष्ट) के हाथ से मारे जाने पर सहस्रावधि स्त्री के साथ सती हुई थी। इसी का वीरत्व यश सर्व्व साधारण में ' हमीर हठ ' के नाम से प्रसिद्ध है (तिरिया तेल हमीर हठ चढ़ै न दूजो बार) इसी की स्तुति में अनेक कवियों ने वीर रस के सुन्दर श्लोक बनाए हैं " मुञ्चति मुञ्चति कोषं भजति च भजति प्रकम्पमरिवर्गः। हमीर वीर खड्गे त्यजति च त्यजति क्षमा माशु "। इस का समय सन् १२९० (एक हमीर सन् ११९२ में भी हुआ है)

६ सम्भव है कि हरिचन्द के पुत्र का नाम रामचन्द्र रहा हो जिसे वैष्णवों ने अपनी रीति के अनुसार रामदास कर लिया हो।

७ उस समय तुगलकों और मुगलों का युद्ध होता था।

८ शत्रुओं से लौकिक अर्थ लीजिए तो मुगलों का कुल। [इस से सम्भव होता है इन के पूर्व पुरुष सदा से राजाओं का आश्रय करके मुसल्मानों को शत्रु समझते थे या तुगलकों के आश्रित थे इस से मुगलों को शत्रु समझते थे) यदि अलौकिकअर्थ लीजिए तो काम क्रोधादि ।

९ सेवा जी के सहायक पेशवा का कुल जिस ने पीछे मुसल्मानों का नाश किया। अलौकिक अर्थ लीजिये तो सूरदास जी के गुरू श्री वल्लभाचार्य्य दक्षिण ब्राह्मण कुल के थे।

गोसाईं (१०) ने मेरी अष्ट (११) छाप में थापना की। इत्यादि। इस लेख से और लेख अशुद्ध मालूम होते हैं क्योंकि जैसा चौरासी वार्त्ता की टोका में लिखा है कि दिल्ली के पास सीही गांव में इन का दरिद्र माता पिता के घर इन का जन्म हुआ यह बात नहीं आई। यह एक बड़े कुल में उत्पन्न थे और आगरे वा गोपाचल में इन का जन्म हुआ। हां यह मान लिया जाय कि मुसल्मानों के युद्ध में इतने भाइयों के मारे जाने के पीछे भी इन के पिता जीते रहे और एक दरिद्र अवस्था में पहुंच गए थे और उसी समय में सीही गांव में चले गए हों तो लड़ मिल सकती है। जो हो हमारी भाषा कविता के राजाधिराज सूरदास जी एक इतने बड़े वंश के हैं यह जान कर हम को बड़ा आनन्द हुआ। इस विषय में कोई और विद्वान जो कुछ और विशेष पता लगा सके तो उत्तम हो ।

भजन--प्रथमही प्रथ जगते में प्रगट अद्भुत रूप ।
ब्रह्मराव बिचारि ब्रह्मा राखु नाम अनूप ॥
पान पय देवी दियो शिव आदि सुर सुख पाय ।
कह्यौ दुर्गा पुत्र तेरो भयो अति अधिकाय ॥
पारि पायन सुरन के सुर सहित अस्तुति कीन ।
तासु बंस प्रसिद्ध में भौचन्द चारु नवीन ॥
भूप पृथ्वीराज दीन्हो तिन्हैं ज्वाला देस ।
तनय ताके चार कीन्हो प्रथम आप नरेस ॥
दूसरे गुनचन्द ता सुत सीलचन्द सरूप ।
बीरचन्द प्रताप पूरन भयो अद्भुत रूप ॥

---

१० 'गोसाईं' श्री विट्ठलनाथ जी श्री वल्लभाचार्य्य के पुत्र ।

११ अष्ट छाप यथा सूरदास, कुम्भनदास, परमानन्ददास और कृष्णदास ये चार महात्मा आचार्य्य जी के सेवक और छीत स्वामि गोबिन्द स्वामि, चतुर्भुज दास और नन्ददास ये गोसाईं जी के सेवक। ये आठो महा कवि थे।

दोहा—श्री वल्लभआचार्य्य के, चारि शिष्य सुखरास ।
परमानन्द अरु सूर पुनि, कृष्णरु कुंभन दास ॥ १ ॥
बिट्ठलनाथ गोसाईं के, प्रथम चतुर्भुज दास ।
छीतस्वामि गोबिन्द पुनि, नन्ददास सुख बास ॥ २ ॥

रणभार हमीर भूपत संग खेलत आय ।
तासु बंस अनूप भो हरिचन्द अति विख्याय ॥
आगरे रहि गोपचल में रह्यो ता सुत बीर ।
पुत्र जनमें सात ताके महा भट गम्भीर ॥
कृष्णचन्द उदारचन्द जु रूपचन्द सुभाइ ।
बुद्धिचन्द प्रकाश चौथो चन्द भे सुखदाइ ॥
देवचन्द प्रबोध संसृत चन्द ताको नाम ।
भयो सप्तो नाम सूरज चन्द मन्द निकाम ॥
सो समर करि स्याहि सेवक गए विध के लोग ।
रह्यो सूरज चन्दहगते हीन भर वर सोक ॥
परो कूप पुकार काहू सुनी ना संसार ।
सातएं दिन आइ जदुपति कीन आपु उधार ॥
दियोचक्षु दै कही सिसु सुनु मांगु बर जो चाइ ।
हौं कही प्रभु भगति चाहत सत्रु नास सुभाइ ॥
दूसरो ना रूप देखो देखि राधा स्याम ।
सुनत करुनासिन्धु भाखि एवमस्तु सुधाम ॥
प्रबल दच्छिन बिप्र कुलतें सत्रु ह्वै है नास ।
अषित बुद्धि बिचारि विद्यामान माने मास ॥
नाम राखो मोर सूरज दास सूर सुश्याम ।
भए अन्तर धान बीते पाछली निसि जाम ॥
मोहि पन सोइ है व्रज की बसे सुखिचित थाप ।
थापि गोसांई करी मेरी आठ मद्धे छाप ॥
विप्र प्रथ जगात को है भाव भूरि निकाम ।
सूर है नदनन्द जू को लयो मोल गुलाम ॥

सुकरात का जीवन चरित्र ।

इतिहासों से प्रगट है कि यूनान देश प्राचीन काल में हर तरह की विद्या शिल्प विज्ञान आदि के लिये अति प्रसिद्ध था वरन हर एक विद्याओं की खान या उत्पत्ति भूमि कहा जाय तो कुछ अनुचित न होगा वहीं के बड़े २ विद्वान और विज्ञानों में एक सुकरात भी था यह ईसाई सन् के ४०१

वर्ष पहिले आसोनिया नगर में पैदा हुआ था और होनहार बिरवान के होत चीकने पात इस कहावत के अनुसार छोटी ही उमर में अपने बाप के सौदागरी पेशे का काम झटपट सिख सिखाय भली भांत प्रखर होगया तब यह हर तरह की बिद्याओं के सीखने में प्रवृत्त हुआ और अपना समय यूनान देश के विद्वानों में काटने लगा जिनके सतसंग से कुछ दिनों के उपरान्त अपनी बिमल बुद्धि के कारण यह सम्पूर्ण विद्या बिज्ञान और शिल्प-शास्त्र में भली भांति कुसल हो यूनान के बड़े २ बिद्वान और दर्शनिकों से भी वादा विवाद में भिड़जाता था उनका पक्ष खंडन कर अपनी बात अनेक युक्तियों से सिद्ध करता था यहांतक कि कुछ दिनों में संपूर्ण यूनान भर में इस की लोकोत्तर चमत्कार बुद्धि की धूम मच गई, एक बार सुकरात का बाप कहीं बाहर सफर को जाते समय इसे चार हजार लूर जो उस समय का यूनानी सिक्का था इसके निज के खर्च के लिए दे गया था परइसने उन सब रुपयों को बतौर ऋण के एक अपने मित्र को दे दिया उसने रुपये इसे फिर लौटा कर न दिए पर सुकरात ने इस बात का कुछ भी ख्याल न किया और न रुपए उस्से कभी मांगे; मेसिडोनिया का राजा अर्किलीस बहुत कुछ चाहा कि सुकरात एक बार उस्से किसी बात के लिए कुछ कहे पर इसने कभी इस बात की ओर ध्यान भी न किया; इस बुद्धिमान हकीम में धीरज इतना था कि किसी तरह की तकलीफ या रंज जो इस पर आपड़ते थे तो यह किसी प्रकार और लोगों को उस मानसी व्यथा को नहीं प्रगट होने देता था; उसके मन की सब से बड़ी अभिलाषा जिसके लिए वह अत्यन्त लौलीन रहा किया यह थी कि जिस तरह हो सके हम अपनी जन्मभूमि को कुछ फाइदा पहुंचा सकें और सब लोग कुमार्ग से बच सच्चे और सीधे राह पर चलें एक दूसरे की बुराई कभी न चेतें; यद्यपि इस सज्जन पुरुष ने कोई स्कूल या वाज करने को कोई जगह नहीं बनवाया पर अकसर जहां लोगों की बहुत भीड़ भाड़ रहती उन के बीच यह खड़ा हो घंटों तक सदुपदेश किया करता था और दिन रात मनसा वाचा कर्मणा अपने देश के लोगों के हित में तत्पर रहा; हकीम अफलातून सुकरात का बहुत बड़ा शागिर्द था मरती बार सुकरात ने तीन बात के लिये अपनी प्रसन्नता प्रगट की और हाथ जोड़ कर कहा हे जगदीश्वर मैं तुझे कोटि कोटि धन्यवाद देता हूं कि तूने मुझे बातों के मर्म समझने की बुद्धि दी यूनान ऐसे देश में

जन्म दिया और अफलातून ऐसा शिष्य मुझे दिया; एक दिन अटिका का राजा अलसिबिडीस बड़े घमंड में भर यह डून हांक रहा था कि मेरे पास बड़ा धन है और मैं बड़े भारी राज्य का स्वामी हूं जब सुकरात ने उसकी यह घमंड की बात सुनी उससे कहा ए अलसीबिडीस तनिक इधर आ और भूगोल के नकशे की ओर ध्यान कर और बता तेरा राज्य अटिका कहां पर है जब उसने नकशे को देखा घमंड के नशे में जो चूर चूर था सब उतर गया और उसकी आंख खुल गई सिर नीचा कर कहा कि मेरा मुल्क यूनान जो संपूर्ण यूरोप का एक छोटा सा देश है उस का भी एक अत्यन्त छोटा प्रदेश है उसकी यह बात सुन सुकरात ने कहा तो ए प्यारे फिर क्यों इतनी डून की हांक रहा है घमंड बहुत बुरा होता है सर्व शक्तिमान जगदीश्वर के करतब से इस भूमंडल पर एक से एक चढ़ बढ़ कर पड़े हैं उन के सामने तू किस गिनती में है थोड़े दिन बाद यूनान के बहुत से अतयाचारी निष्ठुर मनुष्यों ने इर्ष्या से उनहत्तरवें वर्ष में सुकरात पर यह दोष लगाया कि यह बुड्ढा असीना नगर के नव यूवा लोगों को बुरे चाल चलन की ओर रुजू करता है उन के बाप दादाओं के पुराने वर्त्ताव और मत से हटा कर उन्हें नास्तिक बनाया चाहता है और उनके देवो देवताओं की निन्दा करता है इन दोषों के कारण वह अदालत के सपुर्द हुआ अदालत ने इसे विष पीकर मर जाने की सजा तजवीज की उस निर्दोषि पर प्राणान्त दण्ड का सजा का हुक्म सुन जब सब उस के बन्धु भाई और मित्र विलाप और पछता रहे थे सुकरात अतयन्त धैर्य के साथ विष का प्याला उठा कर घूंट गया और अपने मरने तक सबों को सदुपदेश देता रहा जब विष इसके सर्वाङ्ग में व्याप्त हो गया यहां तक कि बोल भी न सकता था तब इस ने आंख बन्द करली और सिधार गया ।

महाराजाधिराज नेपोलियन का जीवनचरित्र ।

९ वीं जनवरी सन १८७३ ई० को बारह बज के २५ मिनट पर महाराजाधिराज ३ नेपोलियन ने इस असार संसार को त्याग किया । जो मनुष्य मरने के अढ़ाई वर्ष पूर्व्व एक प्रधान देश का राजा और संसार के सब मनुष्यों में मुख्य बीर और बुद्धिमान था और पांच लाख योद्धा जिस के साथ चलते थे और जिसने एक सामान्य मेला किया था उस में सारे संसार के राजा और महाराज दौड़े आए थे वही नेपोलियन इङ्गलैण्ड के एक गांव में एक छोटे घर

में मरा ! ! ! इस से बढ़ के और क्या दुःख होगा कि जिस के एक खेल में इस और रूस के महाराज पारिस की गलियों में दौड़ते थे उस के शव के साथ वही ग्राम निवासी लोग ! ! ! क्यों धन के अभिमानियो ! तुम अब भी अपने धन का अभिमान करोगे और अपने से छोटों को दुःख देने में प्रवर्त्त होगे ? यह वही नैपोलियन है जिस का दादा ऐसा प्रतापी था जिसने सारे यूरप को हिला दिया था और सब अंगरेज़ों को दातों चने चबवा दिए थे। जर्मनी के युद्ध में नैपोलियन पराजित हुआ इस का कुछ शोच नहीं क्योंकि जिस काल में नैपोलियन के स्थान का वा उस की समाधि का वा उस युद्ध स्थान का भी चिन्ह भी न मिलैगा उस समय तक उस का नाम वर्त्तमान रहैगा।

महाराज नैपोलियन चिजिलहर्स्ट नामक स्थान में गाड़े गए उस समय बोनापार्ट के वंश के सब लोग और पारिस के समस्त शिल्पविद्या के गुणियों का समाज विमान के आगे था लार्डसाइडनी और लार्डस्फील्ड महारानी विकटोरिया और युवराज की ओर से आए थे और पचास सहस्र मनुष्य केवल कौतुक देखने को एकत्र थे और राजकुमार और विधवा महारानी भी साथ थीं शव को समाधि करने के पीछे बोनापार्ट के वंश के सब लोगों ने राजकुमार को पिता के स्थानापन्न भाव से बन्दना किया। इङ्गलैंड रूस इत्यादि सब राजकीय कार्य्यालय दस दिवस तक शोक भेष में रहे।

हम को लिखने में अत्यन्त खेद होता है कि पृथ्वी पर का एक महा विख्यात पुरुष समाप्त हुआ इस मनुष्य की सब आयुषा प्रारम्भ से अंत तक चमत्कारित और फेरफार की एक विलक्षण शृङ्खला थी कुछ काल तक राजा और कुछ काल तक रंक, सांप्रत के सब पराक्रमी राजा उसका आदर करते थे तो क्या अब उस को तुच्छ मान कर उस की अप्रतिष्ठा करनी चाहिए ?

यद्यपि वे राज सिंहासन पर न थे औ इंग्लण्ड में केवल एक साधारण मनुष्य के समान रहते थे तथापि उन के मरण की दुःख वार्त्ता श्रवण कर के राजकीय और राजसभा के अधिकारियों के चित अवश्य चकित होंगे और फ्रांस के राज्य प्रबंधों में इन के मृत्यु से कुछ विलक्षण फेरफार होगा। यह नैपोलिन फ्रेंच लोगों के मुख्य महाराज थे। और इन को तीसरे नैपोलियन कहते थे और बड़े नैपोलियन बोनापार्ट के भतीजे थे इन का जन्म तारीख २० आप्रेल सन् १८०८ में फ्रांस देश में हुआथा और इन के पिता का नाम लुई बोनापार्ट था जो हालैंड के महाराज थे जब यह सात बर्ष के हुए थे तब

प्रथम नैपोलियन का अंत का पराभव हुआ था अनंतर इन को और इनकी माता को फ्रांस छोड़ कर के अन्य देश में जाना पड़ा इन्होंने स्विटज़र ल्यांड में विद्याभ्यास आदि किया पीछे इन को वहां के सेना में रहने की आज्ञा मिली कुछ दिवस पर्य्यन्त थन सरोवर के तट के तोपखाने में अभ्यास किया तदनन्तर सन् १८३० में फ्रांस देश में राज्य संबंधी हलचल देखकर के फिर अपने स्वदेश में आने का उद्योग किया परंतु वह सफल न हुआ उलटी सीमा के बाहर रहने की आज्ञा हुई एक वर्ष के अनंतर स्विटज़र ल्यांड छोड़ कर के टस्कनी में जाकर रहना पड़ा और रोम के युद्ध में मिल गए इतने में उन के जेष्ठ भ्राता का देहांत हुआ फिर वहां से निकल कर इंग्लंड में जाकर रहे सन् १८३२ से सन् १८३५ पर्य्यंत काल ग्रंथ लिखने में व्यतीत किया इसी काल में उन के चचेरे भाई, प्रथम नैपोलियन के पुत्र नैपोलियन की सहायता कर के उसे दूसरा नैपोलियन कहला कर राज सिंहासन पर बैठावें फ्रांस देश के कई एक मुख्य निवासियों के चित्त में यह बात आई थी और फ्रांस के सीमा तक आगमन की इच्छा करते थे तो इतने में उन का भी देहांत हुआ इस्से फ्रांस के राज सिंहासन पर बैठने का अधिकार उक्त नैपोलियन को प्राप्त हुआ और वह संपादन करने का विचार उनके चित में आया सन् १८३६ पर्य्यन्त प्रयत्न कर के स्ट्रास्वर्ग पर चढ़ाई किया परंतु यह प्रयत्न सफल न होकर आपही पकड़े गए अंत में पारिस में उन को लेगए उन की माता और दूसरे महाशयों के उद्योग से इनका प्राण बचा और ये युनैटेड स्टेट्स के पास भेजे गए वहां एक दो वर्ष रहकर स्विटज़र ल्यांड में लौट आए तो वहां उन के माता का देहांत हुआ सन् १८३८ में उनकी अनुमति से एक महाशय ने स्ट्रास वर्ग के चढ़ाई का वर्णन लिखा इससे फ्रेंच सरकार को बड़ा खेद हुआ और उक्त महाशय को दंड दिया और नैपोलियन को स्विटज़र ल्यांड से निकाल देने के हेतु वहां के सरकार को लिख भेजा परंतु नैपोलियन आपही स्विटज़र ल्यांड छोड़ कर पुनः इंगलैण्ड में गए वहां दो वर्ष रहकर सन् १८४० में फ्रांस का राज्य मिलने के हेतु प्रयत्न करते रहे और बोलोन पर चढ़ाई किया परंतु वह भी प्रयत्न निष्फल हुआ और पकड़े गए और इन के सहकारी जितने मनुष्य थे सभों को जन्म भर के हेतु वहां के दुर्ग में कारागार हुआ इस दुर्ग में छः वर्ष पर्य्यंत रहे अनंतर सन् १८४६ के मई महीने के २५ वीं तारीख़ को अपूर्व वेश धारण कर के बेलजम में भाग कर फिर इंगलैंड में

गए सन् १८४८ के फ्रांस के युद्ध तक वहां रहे इस युद्ध के समय फ्रांस के निवासियों ने इन को न्याश्नल असेम्ब्ली का सभासद नियत किया तदनंतर उन्ही महाशयों ने इन को अध्यक्ष नियत किया तारीख २ दिसम्बर सन् १८५१ को उन्हों ने कई महाशयों के विचार से और पारिस के सर्व प्रसिद्ध राजकीय महाशयों को घेर कर कारागार में डालदिया और न्याश्नल असेम्ब्ली को तोड़ कर के स्वतः मुख्याधिकारी डिक्टेटर नाम से आप प्रसिद्ध हुए कुछ सेना मार्ग में रख कर प्रबंध किया नगर का प्रबंध करने के अनंतर सकल देश का हम को दस वर्ष अध्यक्ष का अधिकार मिला यह प्रसिद्ध किया और उन्ही के इच्छानुसार सब अधिकार उन को प्राप्त हुआ और उन्होंने फ्रेंच लोगों की सम्मति से तारीख २ दिसम्बर सन् १८५२ को अपने को महाराज तीसरा नैपोलियन कहवाया।

इंग्लण्ड के सरकार ने प्रथम उन को मान्य किया और पश्चात् यूरोपीयन सब राजाओं ने धीरे धीरे उन को फ्रेंच का महाराज कहना स्वीकार किया सन् १८५३ के जनवरी की १३ तारीख को उन्हों ने विवाह किया तदनंतर १८५४ में रशिया के युद्ध का आरंभ हुआ और सन् १८५६ में समाप्त हुआ इस युद्ध से उन की बड़ी प्रतिष्ठा हुई सन् १८५९। ६० इस वर्ष में उन्हों ने विक्टर इमानुअल की सहायता कर के इटली को आस्ट्रिया के अधिकार से निकाल कर स्वतंत्र किया और अस्ट्रिया का पराभव करने से उन की और भी विशेष प्रतिष्ठा बढ़ी और उन को कुछ देश भी इसी कारण मिला इसी समय में महाराज नैपोलियन ने अत्युच्च पद की प्राप्ति किया यह समझना चाहिए। तदनंतर मेक्सिको में इन्होंने प्रयत्न और लड़ाई करके अपना राज्य स्थापन किया परन्तु इस का परिणाम अत्यंत दुःख कारक हुआ अंत में सन् १८७० में प्रूशिया और उन के युद्ध का आरम्भ होकर इन का भली भांति पराभव ता० २ सेप्टेंबर सन् १८७० में हुआ तदनंतर कुछ दिवस जरमनी के दुर्ग में बद्ध रहकर छूट गए पश्चात् इंग्लण्ड में आप और अपनी राणी और पुत्र चिरंजीव प्रिन्स नैपोलियन यह सब तारीख २० मार्च सन् १८७१ को एकत्र हुए इस पुत्र का जन्म ता० १६ मार्च सन् १८५६ में हुआ था अंत का समय उन का साधारण मनुष्य के समान परदेश में और परराष्ट्र में व्यतीत हुआ उन को कई दिन से रोग हुआ पर शास्त्रोपाय बहुत करते थे परन्तु उस से कुछ न्यून न हुआ और बहुत कष्ट हो गए तारीख ८ को दिन के साढ़े

बारह बजे उन का देहांत हुआ जब ये राजसिंहासन पर थे. इन्हीं ने रोम के प्रथम प्रख्यात महाराज जुलियससीज़र का इतिहास लिखा । इस सब वृत्तान्त से स्पष्ट विदित होगा कि इन की जन्म भर फेरफार उलट पुलट करते व्यतीत हुआ उन को भली भांति स्वस्थता कभी नहीं हुई थी। प्रशियन लोगों से इन का पराभव होने तक सर्व पृथ्वी में इधर दश वर्ष परियन्त इन के समान बुद्धिमान और वीर सर्व सामान्य गुणयुक्त दूसरा पुरुष नहीं हुआ। ऐसा लोग कहते हैं कि इन की शीघ्र इस दशा में पहुंचने का मुख्य कारण यही है कि इन से कोई परोपकार नहीं हुआ और इन के हाथ जेनरल वाशीकृन के समान निष्काम और परोपकार से रहित थे और अपने बुद्धि से कोई उत्तम कार्य नहीं किया इसी कारण इनकी कीर्ति का उदय और अस्त अन्तकाल में हुआ तथापि यह मनुष्य अति उच्च पद को प्राप्त करके पतन हुआ और परिणाम अत्यन्त खेदजनक हुआ इस से सकल मनुष्यों को खेद हुआ यह वार्ता प्रसिद्ध है।

महाराज जंगबहादुर का जीवन चरित्र ।
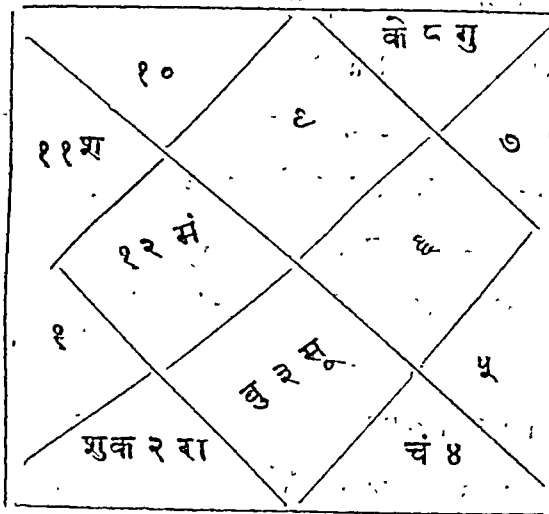
श्रीमन्महाराज जंगबहादुर का बैकुंठ बास होना सब पर विदित है और बहुत से समाचार पत्रों में यह समाचार प्रकाश हो चुका है परन्तु हमारी लेखनी इस शोच से काले आसुओं से न रुदन करे यह चित्त नहीं सहन कर सकता। बादशाह रंजीत सिंह को सब लोग भारत वर्ष का अंतिम मनुष्य कहते थे परंतु महाराज जंगबहादुर ने अपने प्रमेय बल से उन्ही लोगों से

यह कहलाया कि महाराज जंगबहादुर भी हिन्दुस्तान में एक मनुष्य हैं पूर्वोक्त महाराज ने १८७७ फरवरी की पचीसवीं तारीख को बीर प्रसू भारत भूमि को पुत्र शोक दिया, यों तो अनेक जननीयौवनकुठार नित्य जनमते और मरतेही हैं पर यह एक ऐसा पुरुष मरा कि भारतवर्षके सच्चे हितकारी लोगों का जी टूट गया, भादों की गहरी अंधेरी में एक दीप जो टिम २ करके भिलमिला रहा था वह भी बुझ गया, क्या इस अभागिन भारतमाता को फिर ऐसे पुत्र होंगे ? नीति के तो मानो ये मूर्त्तिमान औतार थे, ऐसे प्रदेश में रह कर जो चारो ओर भिन्न २ राज्यों से घिरा हो खामी की उन्नति साधन करते हुए आस पासके कठिन महाराजों को प्रसन्न रखना नीति सूत्रके परम चतुर सूत्रधार का काम है हम लोगों के भाग्यही ऐसे हैं यह रोना कहां तक रोंएं ।

पूर्व्वोक्त महाराज प्रतिवर्ष की भांति दौरा करते हुए शिकार खेलते थे कि एका एक सुगौली में जो पहुंचे तो रोगाक्रान्त होगए, कहते हैं कि उबान्त और दस्त होने से एक साथ बहुत व्याकुल होगए और उसी समय कहारों को आज्ञा दी कि बाघमति गङ्गा पर पालकी ले चलो, बड़ी महारानी महाराज के साथ थीं और उन्हों ने अत्यन्त सावधानी से अपने जगत विख्यात प्राणपित पति को उभय लोक साधिनी अन्तिम सेवा की, कहारों के बदले पालकी चत्रियों ने उठाई थी, जब नदी पर सवारी पहुंची तब दानादिक करके महाराज ने इस असार संसार का त्याग किया, उनके भाई जनरल रणोद्दीप सिंह बहादुर उसी समय काठमांडू गए और महाराज से एकान्त में यह शोक समाचार कहा, महाराजाधिराज ने उसी समय उनको महाराजगी का पद और उनके भाई की जो जो अधिकार प्राप्त थे सब दिए, महाराज राणोद्दीप सिंह ने बाहर आकर चालीस हजार सेना में से बीस हजार को बाहरी और सीमा के प्रान्तों पर और बीस हजार को नगर के चारो ओर उपस्थित रहने की आज्ञा दिया जिस से किसी प्रकार के उपद्रव की शंका न हो । इस सेना भेजने की आज्ञा केवल स्वकीय रक्षा के निमित्त थी । राजधानी में दो दिन तक यह समाचार छिपा रहा दूसरी रात्र को एक साथ यह बज्रपात सा समाचार नगर में फैल गया जिस से सारी राजधानी में महा हाहाकार फैल गया । महाराज के संग एक बड़ीरानी और दो छोटी रानी अत्यन्त प्रसन्नता पूर्वक सती हुई । कहते हैं कि जिन

रानियों से विशेष प्यार था और जो महाराज के साथ सती होना प्रकाश करती थीं वे न सती हुई और इन दोनों छोटी रानियों से प्रकाश में प्रेम विशेष नहीं था और ये सती हुई। कहां हैं और देश की स्त्रियां आवें और आंख खोल कर भारत भूमि का प्रेम और पातिव्रत देखें और लाज से सिर झुका लें।

जज्ज द्वारकानाथ मित्र का जीवन चरित्र ।

स्वर्गीय आनरेबुल द्वारकानाथ मित्र ने सन् १८३१ में हुगली ज़िला के अन्तर्गत आपता से एक कोस दूर अगुनाशी गांव में एक साधारण हुगली और हवड़ा की कचहरी के मुख्तार विश्वनाथ मित्र के घर जन्म लिया था बंगाली पाठशाला और हुगली ब्रांच स्कूल में पढ़कर हुगली कालेज में इन्हों ने अंगरेजी विद्याध्ययन कर के अपनी बुद्धि के चमत्कार से सब मित्रकादिकों अचंभित किया ये अंगरेज़ी भाषा की पारज्ञतता के अतिरिक्त हिसाब किताब भी बहुत अच्छी भांति जानते थे हुगली कालेज से ये हिन्दू कालेज में आए जब इन के शील औदार्य, चातुर्य, स्वातन्त्र्य इत्यादि गुण सब छोटे बड़े के चित्त पर भली भांति खचित हो गए थे। हुगली कालेज में सुख्यछात्र वृत्तिपाना तथा अपने पहिलेही लेख पर पारितोषिकपाना, कौन्सल आफ़ एजुकेशन के रिपोर्ट में इन की ख्यिति का लिखाजाना, और कलकत्ता युनिवरसिटि के फ़ेलोशिप के हेतु इन का चुनाजाना ही इन के गुणों और विद्या का प्रत्यय देता है एक क़ानूनी मनुष्य के पुत्र होने के कारण इन की चित्तवृत्ति एक साथ कांनून की ओर फिरी और उस में योग्य क्षमता पाकर सन् १८५६ में ये वकीलों की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए और उसी वर्ष के मार्च में अपना वर्त्तमान इन्टर प्रिटर का पद छोड़ कर इन्हों ने सदर कचहरी में वकीली करना आरंभ किया इन्हीं ने केवल अपने व्यय से एक औषधालय नियत किया और द्रव्य हीन छात्रों को उत्तम परीक्षा होने तक सहायता करते थे और इन के सत्य प्रियता, निष्पक्षपातिता, दीनों पर दया, मुक़द्दमों के सूक्ष्म भावार्थों को समुझ और कार्य में चातुर्य इत्यादि गुण हाकिमों से लेकर चपरासियों तक विदित हो गए थे और जज्ज लोग इन को विवाद की जड़ समझने और समझाने से बहुत ही प्यार करते थे विशेष कर के आनरे-

वृत्त पण्डित शंभूनाथ अपनी वकीली से लेकर के जज्ज होने की अवस्था तक इन्हें बहुत प्यार करते थे ठकुरानी दासी के कर सम्बन्धी बड़े मुकद्दमें में १५ जज्जों के फुल बेंच के सामने मिस्टर डाइन ऐसे प्रसिद्ध वकील और अनेक अंगरेज वकीलों को सात दिन तक अनवरत वाग्धारा वर्षण से और कानून सम्बन्धी सूक्ष्म बातों की झर से परास्त करके हिन्दू वकीलों में इन्हों ने चिरकीर्त्तिका ध्वज स्थापित किया और गवर्नमेंट की इन पर विशेष दृष्टि से उस समय में जब की इन की आमदनी एक लाख रुपये साल की थी ये गवर्नमेंट के मुख्य वकील हुए और पण्डित शंभूनाथ के मृत्यु पर सन् १८६७ में ये बिना इच्छा किये भी जस्टिस पीकाक की प्रार्थनानुसार गवर्नमेंट से प्रधान जज्ज नियत किये गये और विचारासन पर बैठ कर जैसी योग्यता और शुद्ध चित्त से सावधान होकर इन्हों ने काम किया वह हिन्दू समाज में चिरस्मरणीय है जस्टिस पीकाक के अतिरिक्त कोई जज्ज इन की योग्यता के तुल्य नहीं गिने जाते थे और एक व्यभिचारिणी के दाय भाग के बड़े मुकद्दमें के समय बीमार होकर सात बरस जज्जी का काम करके अपने ग्राम में अपनी वृद्धा माता तीसरी स्त्री दो बालक और दो विवाहिता बालिका छोड़ कर ये भारतवर्ष को शून्य कर के अपनी ४३ वर्ष की अवस्था में ता० २५ फ़िब्रुवरी १८७४ बुध के दिन परलोक को सिधारे।

श्री राजा राम शास्त्री का जीवनचरित्र।

श्रीयुत पण्डितवर राजारामशास्त्री वेद श्रौतादि विविध विद्यापारीण श्रीयुत गोविंदभट कार्लेकर के तीन पुत्रों में कनिष्ठ थे। जब ये दस वर्ष के लगभग थे तब इन के पितृचरण परलोक को सिधारे। फिर त्रिलोचन घाट पर एक ऋषितुल्य सद्दातपस्वी श्रीयुत दानडोपनामक हरिशास्त्री विद्वान् ब्राह्मण रहते थे उन के पास इन्हों ने अपनी तरुण अवस्था के प्रारंभ में काव्य और कौमुदी पढ़ कर आस्तिकनास्तिको भयविध द्वादश दर्शनाचार्यवर्य परम मान्य जगद्विदित कीर्त्ति श्रीयुत दामोदर शास्त्री जी के पास तर्कशास्त्राध्ययन प्रारम्भ किया। थोड़े ही दिनों में इन की अतिलौकिक प्रतिभा देख कर इन को उक्त शास्त्री जी महाशय ने अपनी वृद्ध अवस्था के कारण पढ़ाने का आयास अपने से न हो सकेगा, जान कर श्रीमान् कैलास निवास परम-

नंदनिमग्न दिगङ्गनाविख्यातयशोराशि प्रसिद्ध महा पण्डितवर्य श्रीयुत काशीनाथ शास्त्री जी के जिन के नाम श्रवणमात्र से सहृदय पंडितवर समूह गद्गद होकर सिर डुलाते हैं स्वाधीन कर दिया और इन के प्रतिभा का अत्यन्त वर्णन कर के कहा कि मैं यह एक रत्न आप को पारितोषिक देता हूं जो आप के सुविस्तीर्ण शाखाकांडमंडित कुसुमचयाकीर्ण यशोवृक्ष को अपनी यशश्चन्द्रिका से सदा अम्लान और प्रकाशित रक्खेगा। फिर इन्हीं ने उक्त महाशय के पास व्याकरणादि विविध शास्त्र पढ़ कर चित्रकूट में जाकर उत्तम २ पंडितों के साथ विप्रतिपत्तियों में अत्युत्तम प्रतिष्ठा पाई और श्रीमन्त विनायक राव साहेब ने बहुत सन्मान किया। फिर जब संस्कृतादिक विविध विद्या कलादि गुणगण मंडित श्री मान् जान म्यूर साहब श्री काशी में आए और पाठशाला में विविध विद्या पारंगम पण्डिततुल्य विद्यार्थियों की परीक्षा ली तब उक्त शास्त्री जी महाशय के विद्यार्थिगण में इन की अद्भुत प्रतिभा और अनेक शास्त्रोपस्थिति देख प्रसन्न होकर केवल इस अभिप्राय से कि ऐसे उत्तम पण्डि रत्न का अपने पास रहना यशस्कर है और आजिमगढ़ के जिले में उक्त साहेब महाशय प्राड्विवाक थे इस लिये कहीं कहीं हिन्दू धर्म शास्त्र के अनुसार निर्णय करने के विमर्श में और उन की बनाई हुई अनेक सुन्दर सुन्दर कविता के परिशोधन में सहायता के लिए इन को अपने साथ ले गए। उन के साथ पांच चार वर्ष के लगभग रह कर ग्वालियर में गए, वहां बहुत से उत्तम२ पण्डितों के साथ शास्त्रार्थ में परम प्रतिष्ठा और राजा की ओर से अत्युत्तम सन्मान पूर्वक बिदाई पाकर संवत् १९१२ के वर्ष में काशी में आए तब यद्यपि विधवोद्वाहशङ्कासमाधि अर्थात् पुनर्विवाह खण्डन श्रीमान् परम गुरु श्री काशीनाथ शास्त्री जी तैयार कर चुके थे तथापि उस को इन्हों ने अपूर्व २ अनेक शंका और समाधानों से पुष्ट किया इसी कारण उक्त शास्त्री जी महाराज ने अपने नाम के पहिले इन्हीं का नाम उस ग्रन्थ पर लिख कर प्रसिद्ध किया संवत् १९१३ के वर्ष में श्रीमान् यशोभाजा ग्रिफिथ बालण्टेन साहेब महाशय ने सांख्यशास्त्राध्यापन के कार्य्य में इन को नियुक्त किया। उस कार्य पर अधिष्ठित होकर सपरिश्रम पाठन आदि में अनेक विद्यार्थियों को ऐसे व्युत्पन्न किया जिनकी सभा में तत्काल अपूर्व कल्पनाओं को देख कर प्राचीन प्रतिष्ठित पण्डित लोग प्रसन्न हो कर श्लाघा करते थे। संवत् १९२० के वर्ष में राजकीय श्री संस्कृत पाठशालाध्यक्ष श्रीमान् ग्रिफिथ साहेब

महाशय ने इन को धर्मशास्त्राध्यापन का पद दिया तब से बराबर पढ़ा २ कर शतावधि विद्यार्थियों को इन्होंने उत्तम पण्डित किया जो संप्रति देशदेशान्तर में अपने २ विद्यार्थि गण को पढा कर इनकी कीर्ति को आसमुद्रांत फैला रहे हैं। कुछ दिन हुए श्रीमान् लन्दन नगर की पाठशाला के संस्कृताध्यापक मोक्षमूलर साहिब महाशय की बनाई हुई अंगरेजी और संस्कृत व्याकरण की पुस्तक का परिशोधन और कई स्थलों में परिवर्तन किया था जिस से उक्त साहेब महाशय ने अति प्रसन्न होकर इनकी कीर्ति अनेक द्वीपान्तर निवासियों में विख्यात की, यहां तक कि जब उन्होंने अपने पुस्तक की द्वितीयावृति छपवाई तब उसकी भूमिका में लिखा कि इनके समान संस्कृत व्याकरण जानने वाला इस द्वीप में तो क्या संसार भर में दूसरा को नहीं है। वे उक्त पण्डित वर राजारामशास्त्री संप्रति पांच चार वर्ष से विरक्त होकर योग्याभ्यास में लगे थे और अपने दीन बांधवों का पोषण और दीने विद्यार्थि प्रभृति का परि पालन ही के हेतु अर्जन करते थे और आप साधारण ही वृत्ति से जीवन करते हुए मठ में निवास करते थे संवत १९३२ श्रावण शुक्ल १२ के दिन सन्यास लेकर उसी दिन से अन्न परित्याग पूर्वक परमार्थ का अनुसन्धान करते २ मरण काल से अव्यवहित पूर्व तक सावधानता पूर्वक परमेश्वर का ध्यान करते २ भाद्रपद कृष्ण ३ गुरुवार को प्रातःकाल ८ बजते २ परमपद को प्राप्त होकर यशोमात्रावशिष्ट रह गए।

लार्ड म्योसाहिब का जीवन चरित्र।

हा! यह कैसी दुःख की बात है कि आज दिन हम उस्के मरण का वृत्तान्त लिखते हैं जिस्की भुजा की छांह में सब प्रजा सुख से काल क्षेप करती थी और जो हम लोगों का पूरा हितकारी था ऐसा कौन है जो इस्को पढ़कर न कम्पित होगा और परम शोक से किसकी आंखों से आंसू न बहैंगे। मनुष्य की कोई इच्छा पूरी नहीं होने पाती और ईश्वर और ही कुछ कर देता है कहां युवराज के निरोग होने के आनन्द में हम लोग मग्न थे और कैसे कैसे शुभ मनोरथ करते थे कहां यह कैसा विज्जुपात सा हाहाकार सुन्ने में आया। निस्सन्देह भरतखंड के वृत्तान्त में सर्व्वदा इस विषय को लोग

बड़े आश्चर्य और शोक से पढ़ेंगे और निश्चय भूमि ने एक ऐसा अपूर्व स्वामी खो दिया है जैसा फिर आना कठिन है तारीख १२ को यह भयानक समाचार कलकत्ते में आया और उसी समय सारा नगर शोकाक्रान्त हो गया।

गुरुवार ८ वीं तारीख को श्रीमान् लार्ड म्यो साहिब पोर्ट ब्लेयर उपद्वीप में ग्लासगो नामक जहाज़ पर आए और ढाका और नेमिसिस नाम के दो जहाज़ और भी संग आए और साढ़े नौ बजे उन टापुओं में पहुंचे और ग्यारह बारह के भीतर श्रीमान् ने वर्मा के चीफ कमिश्नर इत्यादि लोगों के साथ कैदियों की बारक गोरावारिक और दूसरे प्रसिद्ध स्थानों को देखा उस समय श्रीमान् को शरीर रक्षा के हेतु बहुत से सिपाही, कांस्टेबल् और गार्ड बड़ी सावधानी से नियत किए गए और थोड़ी देर जेनरल स्टुअर्ट साहिब की कोठी पर ठहर कर सब लोग जहाज़ों को फिर गए। अढ़ाई बजे सब लोग फिर उतरे और इन टापुओं के लोगों का स्वभाव जानकर सब लोग बड़ी सावधानी से चले और बड़े यत्न से सब लोग श्रीमान् की रक्षा करते रहे उस समय श्रीमती लेडी म्यो और सब स्त्रियां ग्लास गो जहाज़ पर ही थीं। ये लोग अबर दीन और ऐडी होते हुए वाइपर टापू में पहुंचे। यह स्थान रास के टापू से ढाई कोस है और यहां १३०० कैदी रहते हैं जो अपने बुरे कर्म्मों से काले पानी भेजे गए हैं। भय का स्थान समझ कर कांस्टेबल् और सरकारी पलटन रक्षा के हेतु संग हुई और जेलखाना इत्यादि स्थानों को देख कर चथाम टापू में गए और वहां कोयले की खान देख कर फिर जहाज़ पर फिर आने का विचार करने लगे। अब ५ बजने का समय आया और सब लोग जहाज़ पर जाने को घबड़ा रहे थे कि श्रीमान् ने कहा कि हम लोग हिरात की पहाड़ी पर चढ़ें और वहां से सूर्य्यास्त की शोभा देखें। यह पहाड़ी इसी टापू में है और इसके ऊपर कोई बस्ती नहीं है परन्तु नीचे होप टौन नामक एक छोटी बस्ती है जिसमें कुछ कैदी काम करनेवाले रहते हैं। यद्यपि सवेरे ऐसा लोगों ने सोचा था कि समय मिलेगा तो इस पहाड़ी पर जायंगे पर ऐसा निश्चय नहीं था और न वहां कुछ तयारी थी। ऐलिस साहिब इस पहाड़ी पर नहीं चढ़े और यहां पलटन के न होने से चथाम से पलटन बुलाई गई कि वह श्रीमान् की रक्षा करे और वहां से आठ कांस्टेबल् रक्षा के हेतु संग हुए। श्रीमान् एक छोटे टट्टू पर चलते थे और सब लोग पैदल थे ऊपर बहुत से ताड़ और सुपारी के पेड़ों से स्थान घना हो रहा था-और

चोटी पर पहुंच कर श्रीमान् पाव घंटे तक सूर्य्यास्त की शोभा देखते रहे। यद्यपि सूर्य्यास्त हो चुका था पर ऊपर प्रकाश इतना था कि नीचे की घाटी दिखाती थी और अंधकार होता जान कर सब लोग नीचे उतरने लगे मार्ग में केवल दो छुटे हुए कैदी मिले और उन लोगों ने कुछ बिनती करना चाहा पर जेनरल स्टुअर्ट ने उनको टोका और कहा कि जब श्रीमान् स्वस्थ रहैं तब आओ इनके अति रिक्त और कोई मार्ग में नहीं मिला। कप्तान लकउड और कौंट बाल्लास्टन आगे बढ़ गए थे और एक चट्टान पर बैठे उन लोगों का मार्ग देखते थे। इस समय अंधेरा हो गया था परन्तु कुछ मार्ग दिखाई देता था और उन लोगों ने केवल कुछ मनुष्यों को पानी ले जाते देखा और कोई नहीं मिला। श्रीमान् सवा सात बजे नीचे पहुंचे और उस समय सम्पूर्ण रीति से अंधेरा होगया था और एक अफसर ने मशाल लाने की आज्ञा दिया इस्से कई मनुष्य भी संग के उनको बुलाने के हेतु दौड़ गए। जब कैदियों के झोपड़े के आगे बढ़े जेनरल स्टुअर्ट एक ओवरसियर को आज्ञा देने के हेतु पीछे ठहर गए और श्रीमान् आगे बढ़ गए। उस समय श्रीमान् के आगे दो मशाल और कुछ सिपाही थे और उनके प्राइवेट सेक्रोटरी मेंं बर्न और जमादार भी कुछ दूर हो गए थे और कालनल जरवस और मि. हाकिन और मि. एलिन भी पीछे छूट एग थे कि इतने में एक मनुष्य उन के बीच से उछला और श्रीमान् को दो छुरी मारी जिस्में से पहिली दहिने कन्धे पर और दूसरी बांए पर लगी। यह नहीं जाना गया कि वह किस मार्ग से वहां आया क्योंकि चारो ओर लोग घेरे थे पर ऐसा अनुमान होता है कि चट्टानों के नीचे छिप रहा था। श्रीमान् चोट लगतेही उछले और पासही पानी के गड़हे में गिर पड़े यद्यपि लोगों ने उनको उठाकर खड़ा किया पर ठहर न सके और तुरत फिर गिर पड़े। उनके अन्त के शब्द यह हैं "They've hit me Burne" "बर्न उन लोगों ने मुझे मारा" और फिर जो दो एक शब्द कहे वह समझ न पड़े और उन के शरीर को लोग उठाकर जहाज़ पर लाने लगे परन्तु श्रीमान् तो पूर्वही शरीर त्याग कर चुके थे और बीरों की उत्तम गति को पहुंच चुके थे। उस दुष्ट को अर्जुनसिंह नामक क्षत्रिय ने बड़े साहस से पकड़ा कहते हैं कि उसने पहिले तो उस हत्यारे के मुख पर अपना दुपट्टा डाल दिया और फिर आप उस पर एक साहिब की सहायता से चढ़ बैठा और फिर तो सब लोगों ने उस्को हाथों हाथ पकड़ लिया और यदि उस

समय विशेष रक्षा न की जाती तो लोग क्रोधावेश में उसको मार डालते। कहते हैं कि जिस समय उनका शरीर जहाज़ पर लाए हैं उस समय अनवर्त्त रुधिर बहता था जब श्रीमान् का शरीर ग्लास गो पर लाए उस समय लेडी म्यो के चित्त की दशा सोचनी चाहिये! हा! कहां तो वह यह प्रतीक्षा करती थीं कि प्यारा पति फिर के आता है अब उस के साथ भोजन करेंगे और यात्रा का वृत्तान्त पूछेंगे कहां उस पति का मृतक शरीर समय आया हाय हाय कैसा दारुण समय हुआ है!! परन्तु बाहरे इनका धैर्य्य कि उसी समय शोक को चित में छिपाकर सब आज्ञा उसी भांति किया जैसी श्रीमान् करते थे। जब यह समाचार कलकत्ते में १२ वीं तारीख को पहुंचा उसी समय आज्ञा हुई दुर्गध्वज अधोमुख हो और ३८ मिनिट पर सायंकाल तोप छुटें। कानून के अनुसार लार्ड नेपियर गवर्नर जेनरल हुए और उसी टापू से एक जहाज़ उन के लाने को भेजा गया और श्रीमान् के भाई भी फिर बुला लिए गए परन्तु लार्ड नेपियर के आने तक आनरेबुल स्ट्रेची स्थापन गवर्नर जेनरल हुए। कहते हैं कि लार्ड नेपियर १६ तारीख को चले जिस दिन ये वहां से चले थे उस दिन सब लोग शोक वस्त्र पहरे हुए इन को बिदा करने को एकत्र हुए थे। श्रीमान् का शरीर कलकत्ते में आया और वहां से आयर्लैण्ड गया। लेडी म्यो और श्रीमान् के दोनों भाई और पुत्र तो बम्बई जायंगे वहां से जहाज़ पर सवार होंगे पर श्रीमान् का शरीर सीधा कलकत्ते से ग्लास गो पर जायगा।

नीचे लिखा हुआ आशय का पत्र कलकत्ते के छापे वालों को सर्कार की ओर से मिला है। आठवीं तारीख़ बृहस्पति के दिन श्रीमान गवर्नर जेनरल बहादुर पोर्टब्लेर नामें स्थान पर पहुंचे और रास नाम स्थान को भली भांति निरीक्षण कर वाइपर नामे टापू में पहुंचे जहां महा दुष्ट गण रहते हैं स्टीवर्ट साहेब सुपरिन्टेन्डेन्ट ने श्रीमान के शरीर रक्षा के हेतु बहुत अच्छा प्रबन्ध किया था कि कोई मनुष्य निकट न आने पावे पुलीस के व्यतिरिक्त एक विभाग पदचारियों का साथ था परंतु यह श्रीमान को क्लेशकर जान पड़ता था और उन्हों ने कई बार निषेध किया। यहां से लोग चाथम में गए जहां आरे चलते हैं और लकड़ी काटी जाती है। परंतु यह सब कर्म पांच बजे के भीतरही हो गया तो श्रीमान ने कहा कि होपटाउन प्रदेश में चल कर हरियट पर्वत पर आरोहण करके प्रदोष काल की शोभा देखना चहिये। यह

स्थिर कर सब लोग उसी ओर चले और साढ़े पांच बजे वहां पहुंचे। थोड़े से पुलीस के सिपाही साथ में थे क्योंकि वहां यह आशा न थी कि कोई दुष्कर्मी मिले—वहां सब रोग ग्रसित और असित लोग रहते हैं। श्रीमान बहुत दूर पर्यंत एक टट्टू पर आरूढ़ थे और उनके सहचारी लोग भूमि पर चलते थे। हारियट पर्वत पर पहुंच कर लोगों ने किंचितकाल विश्राम किया और फिर तीर की ओर चले। मार्ग में दो एक असित व्यक्ति मिले और श्रीमान से कुछ कहने की इच्छा प्रगट की परंतु स्टीवर्ट साहेब ने उनसे कहा कि तुम लोग लिख कर निवेदन करो। दो साहेब आगे थे और और लोग साथ में थे। उन लोगों के तीर पर पहुंचने के पूर्व ही अंधकार छा गया और श्रीमान के पहुंचते २ "मशाल" जल गए। तीर पर पहुंच कर स्टीवर्ट साहेब पीछे हट कर किसी को कुछ आज्ञा देने लगे। शेष २० गज आगे नहीं बढ़े थे कि एक दुष्कर्मी हाथ में छुरी लिये द्रुतवेग से मंडल में आया औ श्रीमान को दो छुरी मारी एक तो वाम स्कन्ध पर और दूसरी दक्षिण स्कन्ध के पुट्ठे के नीचे। अर्जुन नाम सिपाही और हाविन्स साहेब ने उसे पकड़ा और बड़ा कोलाहल मचा और "मशाल" बुत गए। उसी समय श्रीमान भी या तो करारे पर से गिर पड़े वा कूद पड़े। जब फिर से प्रकाश हुआ तो लोगों ने देखा कि गवर्नर जेनरल बहादुर पानी में खड़े थे और स्कन्ध देश से रुधिर का प्रवाह बड़े वेग से चल रहा था। वहां से लोग उन्हें एक गाड़ी पर रख कर ले गए और घाव बांधा गया परंतु वे तो हो चुके थे। जब उनकी लाश ग्लास गो नाम नौका पर पहुंची तो डाकृरों ने कहा कि इन दोनों घाओं में एक भी प्राण लेने के समर्थ था। परन्तु उस समय लेडी म्यो का साहस प्रशसनीय था, उन को अपने "राज" नाश की अपेक्षा भरतखण्ड के राज के नाश और प्रजा के दुःख का बड़ा शोच हुआ स्टुअर्ट साहेब ने इस विषय का गवर्मेंट को एक रिपोर्ट किया है और एक सार्टिफिकेट डाक्टरों के ओर से भी गवर्मेंट को भेजा गया है।

हा! शनिश्चर को (१७ वीं) कलकत्ते की कुछ और ही दशा थी सब लोग अपना २ उचित कार्य परित्याग कर के विषन्नवदन प्रिन्सेप घाट की ओर दौड़े जाते थे। बालक अपनी अवस्था को विस्मृत कर और खेल कुतूहल छोड़ उस मानव प्रवाह में बहे जाते थे, वृद्ध लोग भी अपने चिरासन को छोड़ लकुट हाथ में, शरीर कांपते हुए उन के अनुसरण चले—स्त्री बेचारी

कुलमर्यादसीमा परिबद्ध उद्विग्न चित्त होकर खिड़कियों पर बैठी युगल नेत्र प्रसारनपूर्वक अपने हितैषी, परमविद्याशाली, और परमगुणवान उपराज के मृतक शरीर के आगमन की मार्ग प्रतीक्षा करती थीं । मार्ग में गाड़ियों की श्रेणी बंध गई थी, नदी में सम्पूर्ण नौकाओं के पताका युक्त मस्तूल झुक रहे थे मानो सब सिर पटक २ रो रहे हैं। दुर्ग से सेना धीरे २ आई और गवर्नमेन्ट हाउस से उक्त घाट पर्यंत श्रेणी बद्ध होकर खड़ी हुई और प्रत्येक वर्ग के पुरुष समुचित स्थान पर खड़े थे एक सन्नाटा बंध गया था कि पौने पांच बजे घाट पर से एक शतघ्नी (तोप) का शब्द हुआ और उसका प्रतिउत्तर दुर्ग और कानी नाम नौका पर से हुआ। बाजावालों ने बड़ी सावधानी से अपने २ वाद्य यन्त्रों को उठाया और कलकत्ते के वालन्टीयर्स लोग आगे बढ़े । एक तोप की गाड़ी पर इङ्गलंड के राजकीय पताका से आच्छादित श्रीमान् गवर्नर जेनरल का मृतक शरीर शवयात्रा के आगे हुआ, उस समय लोगों के चित्त पर कैसा शोच छा गया था उसका वर्णन नहीं हो सक्ता। ऐसा कौन पाहनचित होगा जिसका हृदय उस श्रीमान् के चंचल अश्व को देख कर उस समय विदीर्ण न हुआ होगा। उसके नेत्र से भी अश्रुधारा प्रवाहित होती थी। हा ! अब उस घोड़े का चढ़नेवाला इस संसार में नहीं है। उस्से भी शोक जनक श्रीमान् के प्रिय पुत्र की दशा थी जो कि विषन्नवदन, अधोमुख, सजलनयन, बाल खोले अपने दोनों चचा के साथ पिता के मृतक शरीरक के साथ चलते थे, हा ! ऐसी वयस में उन्हें ऐसी बिपद पड़ी। परमेश्वर बड़ा विषमदर्शी दीख पड़ता है। वैसेही मेजर वर्न भी देखे नहीं जाते थे। शोक से आंखें लाल और डबबाईं हुईं थीं और अनाथ की भांति अपने स्वामी वरन उस मित्र के शोक में आतुर थे जिन्ने उन्हें अन्त में पुकारा और मरण समय उन्हीं का नाम लिया हा !। यह यात्रा निम्नलिखित रीति पर गवर्नमेन्ट हाउस में पहुंची। क्वार्टर मास्टर जेनरल के विभाग का एक अश्वारोही अफसर, फस्ट बेंगाल कवलरी (अश्वारोही सेना) का एक भाग। कलकत्ते के वालन्टीयर्स की रफल पलटन अस्त्र उलटा लिए हुए और श्रीमहाराणी की १४ वीं रजमट का शोक सूचक बाजा बजता हुआ।

श्रीमान् का बाजा

बाडी गार्ड (शरीर रक्षक) पैदल

दुर्ग और कथीड्रल गिरजा के पादरी

श्रीमान् के चापलेन

डाक्टर जे. फेअरर सी. एस. आई. करनेल जी. डिलेन

कर्मडिंग

बाडी गार्ड

क. एफ. एच. ग्रेगरी

एडीकांग

डाक्टर ओ. बर्नेट

क. एच. बी. लाकउड

एडीकांग क. टी. एस. जोनस

आर. एन. ले. टी. डीन

क. आर. एच. ग्रांट एडिकांग
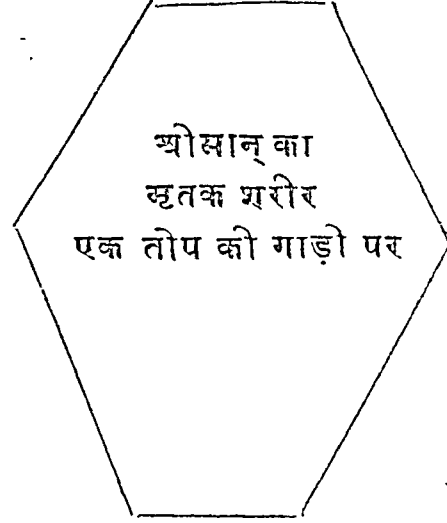
सुबादार मेजर और सरदार बहादुर शिवबक्स अवस्थी

एडिकांग

क. सी. एल. सी. डी रोवक

एडिकांग

ले. सी. हाकिन्स आर. एन.

मेजर ओ. टी. वर्न प्राइवेट सेक्रेटरी।

मुख्य शोक प्रकाशक।

अनरएबल आर. बोर्क, आनरएबल टी. बोर्क, मेजर बोर्क।

श्रीमान् का विश्वास पात्र क्लार्क वा लेखक।

श्रीमान् के सेवक।

श्रीमान् के पलटन के अफसर।

श्रीमान् के एतद्देशीय सेवक।

साक्षी नौकास्थ लोग और ग्लासगो और डाफनी नाम नौका का तोपखाना।

उक्त नौकाओं के अफसर।

अस्थिर कालिक गवर्नर जेनरल।

बंगाल के लेफ्टिनेन्ट गवर्नर और श्रीमान् कमांडर इनचीफ़।

बंगाल के चीफ जष्टिस, कलकत्ते के लार्ड विशप, आर्क विशप और पश्चिम बंगाल के विकार अपस्टालिक।

श्रीमान गवर्नर जेनरल के सभा के सभासद।

कलकत्ते पुइन जज्ज।

सभा के अधिक सभासद।

एतद्देशीय राजे।

कानसलस जेनरल। वरमा के चीफ कमिश्नर।

अन्य देशों के कन्सल एजेन्ट।

गवर्नमेन्ट के सेक्रेटरी।

इन के पीछे और बहुत से लोग पलटन के अफसर इत्यादि और लेफ्टिनेन्ट गवर्नर के साथ के लोग थे।

यद्यपि अनुचित तो है परंतु ऐसी शोभा कलकत्ते में कभी देखने में नहीं आई थी और ईश्वर करे न कभी देखने में आवे।

श्रीमन् का शरीर सर्वसाधारण लोगों के देखने के लिये तीन दिन पर्यंत सार्वुहाल रक्खा गया है और सब लोग श्रीमान् का अन्त का दरबार करने वहां जायंगे।

हे भारतवर्ष की प्रजा अपने परम प्रेमरूपी अश्रुजल से अपने उस उपराज्याधीश का तर्पण करो जो आज तक तुम्हारा स्वामी था और जिस की बांह की छांह में तुम लोग निर्भय निवास करते थे और जो अनेक कोटि प्रजा लक्षावधि सैन्य के होते भी अनाथ की भांति एक क्षुद्र के हाथ से मारा गया और एक वेर सब लोग निस्सन्देह शोक समुद्र में मग्न हो कर उस अनाथ स्त्री लेडी म्यो और उन के छोटे बालकों के दुःख के साथी बनो। हा! लेखिनी दुःख से आगे लिखने को असमर्थ हो रही है नहीं तो विशेष समाचार लिखती निश्चय है कि पाठकजन इस असह्य दुःख रूपी वृत्त को पढ़ कर विशेष दुःखी होने की इच्छा भी न रक्खेंगे।

श्रीमान् स्वर्गवासी के मरण पर लोगों ने क्या किया।

जिस समय यह शोक रूपी वृत्त श्रीमती महारानी को पहुंचा श्रीमती ने लेडी म्यो और वर्क साहेब को तार भेजा कि हम तुम लोगों के उस अपार

दुःख से अत्यन्त दुःखी हुए और हम तुम लोगों के उस दुःख के साथी हैं जो श्रीमान् लार्ड म्यो के मरने से तुमपर पड़ा है। सेक्रेटरी अफ स्टेट ने भी इसी भांति स्थानापन्न गवर्नर जेनरल को तार दिया कि "हम इस समाचार से अत्यन्त दुःखी हुए निस्सन्देह भरतखण्ड ने एक अपना बड़ा योग्य स्वामी नाश किया और यह ऐसा अकथनीय वृत्तान्त है कि इस समय हम विशेष कुछ नहीं कह सकते"। महाराज साम ने भी स्थापन गवर्नर जेनरलको तार दिया है कि हम इस दुःख में लेडो म्यो और भारत की प्रजा के साथ हैं जो उन लोगों पर अकस्मात् एक योग्य स्वामी के नाश होने से आ पड़ा है। महाराज जयपुर को जब यह समाचार गया एक सङ्ग शोकाक्रान्त हो गए और राज के किले का झंडा आधा गिरवा दिया और श्री पंचमी का बड़ा दर्बार बन्द कर दिया और बीस बीस मिनिट पर किले से शोकसूचक तोप छूटी और नगर में एक दिन तक सब काम बन्द रहा। सुना है कि महाराज कलकत्ते जायंगे। पटियाला के महाराज ने एक शोकसूचक इश्तिहार प्रकाशित किया और अपने दर्बारियोंको आज्ञा दिया कि शोक का वस्त्र पहिरें। महाराज कपूरथला ने भी ऐसाही किया और अवध अंजमन के सेक्रेटरी को एक पत्र भेजा कि उन के स्मर्णार्थ उद्योग करें। कलकत्ते की दशा तो लिखने के योग्य ही नहीं है न ऐसा कभी पूर्व्व में हुआ था और न ईश्वर करे होय। वसन्त पञ्चमी का नाच गाना सब बन्द होगया और नगर में दूकानें सब कई दिन तक बन्द रहीं, बरात नहीं निकली कई लग्न टाल दिये गए, वहां के जष्टिस आफदि पोस लोग मिल कर एक शोक पत्र श्री लेडी म्यो को देने वाले हैं और और भी अनेक शोकसूचक कृत्य हो रहे हैं। बम्बई में भी सब दुकानें बन्द हो गईं और सब कारखाने बन्द हो गए। बनारस में भी इस समाचार के आने से कई स्कूल बन्द हो गए और कई शोकसूच कमिटियां हुईं। बम्बई में फरासीस, इटलटी और प्रशिया इत्यादि देशों के राजदूतों ने अपनी कोठियों के राज के झंडे आधे आधे गिरा दिये और सब मिल कर शोक का वस्त्र पहिन कर वहां के गवर्नर के पास गए थे और वहां सब लोगों ने शोक भरी वार्त्ता किया और उस के उत्तर में लाट साहिब ने भी एक सुरस भाषण किया। हा! ईश्वर फिर यह दिन न लावे!!

उस चण्डाल दुष्ट हत्यारे शेरअली के विषय में फ्रेंड आफ इंडिया के सम्पादक से हम पर्ण सम्मति करते हैं निस्सन्देह उस दुष्ट को केवल

प्राण दण्ड देना तो उस की मुंह मांगी बात देनी है क्योंकि मरने से डरता तो ऐसा कर्म्म न करता, सम्पादक महाशय लिखते हैं कि ये दुष्ट प्राण से प्रतिष्ठा और धर्म्म को विशेष मानते हैं इससे ऐसा करना चाहिये जिस में इन दुष्टों का सुख भंग हो और धर्म्म और प्रतिष्ठा दोनों को हानि पहुंचे वह लिखते हैं (और बहुत ठीक लिखते हैं अवश्य ऐसा ही बरन इस से बढ़ कर होना चाहिये) कि उस के प्राण अभी न लिये जांयं और उसे खाने को वह वस्तु मिलें जो " हराम " हैं और वस्त्र के स्थान पर उस को सूअर के चर्म्म की टोपी और कुरता पहिनाया जाय यावच्छक्ति उस को दुःख और अनादर दिया जाय ऐसे नीच के विषय में जितनी निर्द्दयता की जाय सब थोड़ी है और ऐसी समय हमलोगों को क़ानून छप्पर पर रखना चाहिए और उस को भरपूर दुःख देना चाहिये।

श्रीमान् लार्ड म्यो स्वर्गबासी के मरने का शोक जैसा विद्वानों की मंडली में हुआ वैसा सर्व्वसाधारण में नहीं हुआ इस में कोई सन्देह नहीं कि एक बेर जिसने यह समाचार सुना घबड़ा गया पर तादृश लोग शोकाक्रान्त न हो गए इसका मुख्य कारण यह है कि लोगों में राजभक्ति नहीं है निस्सन्देह किसी समय में हिन्दुस्तान के लोग ऐसे राजभक्त थे कि राजा को साक्षात् ईश्वर की भांति मानते और पूजते थे परन्तु मुसल्मानों के अत्याचार से यह राज भक्ति हिन्दुओं से निकल गई। राज भक्ति क्या इन दुष्टों के पीछे सभी कुछ निकल गया विद्या ही का वैसा आदर न रहा अब हिन्दुस्तान में तीन बात का बड़ा घाटा है वह यह है कि लोग विद्या, स्त्री राजा का तादृश स्वरूप ज्ञान पूर्व्वक आदर नहीं करते विद्या को केवल एक जीविका की वस्तु समझते हैं वैसे ही स्त्री को केवल काम शान्त्यर्थ वा घर की सेवा करने वाली मात्र जानते हैं उसी भांति राजा को भी केवल इतना जानते हैं कि वह मुझ से बलवान है और हम उस के वश में हैं राजा का और अपना सम्बन्ध नहीं जानते और यह नहीं समझते कि भगवान की ओर से वह हम लोगों के सुख दुख का साथी नियत हुआ है उससे हम भी उस के सुख दुःख के साथी हों।

हम आशा रखते हैं कि श्रीमान गवर्नर जेनरल बहादुर के अकाल मृत्यु का समाचार अब सब को भली भांति पहुंच गया। हम लोगों ने जिस समय यह सम्वाद सुना शरीर शिथिलेन्द्रिय और वाक्य शून्य हो गया। यदि

कोई आ कर कहे कि चन्द्रमा में आग लगी है तो कभी विश्वास न होगा उसी प्रकार भरतखंड के उपराज का एक कैदी के हाथ से मारा जाना किसी समय में एकाएकी ग्राह्य नहीं होसकता। हाय! देश को कैसा दुःख हुआ! अभी वे ब्रह्म देश की यात्रा करके अंडमन्स नाम द्वीपस्थित दुखियों के सहायार्थ उपाय करने को जाते थे और वहां ऐसी घटना उपस्थित हुई। चीफ जष्टिस नार्मन का मरण भूलने न पाया और एक उस से भी विशेष उपद्रव हुआ और फिर भी मुसल्मान के हाथ से। यद्यपि कई अंग्रेजी समाचार पत्र सम्पादकों ने लिखा है कि जो कारण नारमन साहिब के मारने का था सो श्रीमान के घात का कारण नहीं हो सकता परन्तु इस में हमारी सम्मति नहीं है। क्योंकि यदि शेरअली के मन यह बात पहिले से ठनी न होती तो वह ऐसे निर्जन स्थान में छुरी ले कर छिपा क्यों बैठा रहता। फिर एक दूसरे कैदी के "इजहार" से स्पष्ट ज्ञात होता है जिस समय शेरअली ने अब्दुल्ला के और नार्मन साहिब के मरण का समाचार सुना कैसा प्रसन्न हुआ और लोगों का निमन्त्रण किया। यदि वह उस वर्ग का न होता जो कि तन मन से चाहते हैं कि सरकार "काफिर" है इस लिये उस के बड़े २ अधिकारियों के मारने से बड़ा "सवाब" होता है प्रसन्नता और निमन्त्रण का क्या कारण था। फिर वह स्वतः कहता है कि अपने मरण के पूर्व्व में एक बात कहूंगा। वह कौन सी बात हो सकती है! इन सब विषयों को भली भांति दृढ़ कर के तब उस को फांसी देना उचित है।

लार्ड लारेन्स का जीवन चरित्र।

सन् १८११ ई० ४ मार्च को उक्त महात्मा ने जन्म ग्रहण किया था। उन्हों ने पहिले कुछ दिन वर्ड लण्डन डेरी के काथेल कालिज में शिक्षा लाभ की थी, बाद उस के हेलिवरि कालिज में पढ़ने लगे। १८२८ ई० में सिवीलियन हो कर भारतवर्ष में आए। १८३१ ई० में दिल्ली के रेजीडेण्ट और चीफ कमिश्नर सहकारी हुए। १८३२ ई० में प्रतिनिधि मजिस्टर और कलक्टर हुए। १८३४ ई० में पानीपत के प्रतिनिधि मजिस्टर हो के गए। २ बरस के बाद गुड़गांव के एजण्ट मजिस्टर और डिपटी कलक्टर हुए। कई एक वर्षों के बाद दिल्ली के मजिस्टर हुए। उस समय यहां के गवर्नर जेनरल सर हेनरी

हारडिङ्गटी थे उन्हों ने इनको चमत्कार राजनीति देख कर इनको शतद्रु, तीरस्थ प्रदेशों का कमिश्नर करके भेज दिया । १८४८ ई० में लारेन्स लाहोर के रेसिडेण्ट के प्रतिनिधि हुए । सिक्खों की दूसरी लड़ाई के बाद लार्ड डिलहौसी ने पञ्जाब शासन करने के लिये एक एडमिनिष्ट्रेशन बोर्ड स्थापन किया, उस में यह और इनके बड़े भाई सरहेनरी लारेन्स, चार्लस, और मानसेल, सभ्य नियुक्त हुए इन दोनों भाइयों ने राज्य शासन सम्बन्ध में अति उत्तम चमता और निपुणता दिखाई । जान लारेन्स ने १८५७ ई० के गदर में अपनी अद्भुत शक्ति के प्रभाव से पञ्जाब को शांत रक्खा था इसी लिये आज तक भारत साम्राज्य अव्याहत है । उस समय लारेन्स पञ्जाब के चीफ कमि-श्नर थे । १८५६ ई० में लारेन्स को के. सी. बी. की उपाधि मिली और बाद-मेंइनको जी. सी. बी. की भी उपाधि मिली थी । १८५८ ई० में यह महा-राज वारनट होकर प्रीवी कौंसिल के सभ्य हुए । १८६३ ई० के डीसेम्बर म-हीने में भारतवर्ष के गवर्नर जनरल होकर लार्ड एलगिन के उत्तराधिका-री हुए । १८६८ ई० के मार्च महीने में यह लार्ड उपाधि प्राप्त होकर पा-र्लियामेण्ट में सभ्य हुए । लार्ड लारेन्स का धर्म विषय में विशेष अनुराग था । इन्हों ने भारतवर्ष के गवर्मेण्ट स्कूल समूहों में बाइबेल पढ़ाने का प्रस्ताव किया था । और और भी विशेष गुण इनमें थे । आज कल यह पार्लि-यामेण्ट में भारतवर्ष सम्बन्धी विषयों की चरचा विशेष करने लगे थे । जिसमें भारतवर्ष का मङ्गल हो इनकी यही इच्छा और चेष्टा रहती थी । ऐसे हित-कारी मित्र को खोकर जो भारतवर्ष शोकाकुल न होगा, यह कहना बाहुल्य है । उनके सन्मानार्थ १ जूलाई को कलकत्ते के किले का निशान गिरा दिया था और ३१ तोपें दागी गई थीं । लार्ड हेंष्टिङ्ग के बाद और किसी का ऐसा सन्मान नहीं किया गया था । वेष्टमिनिष्ट्र आदिमें इनकी समाधि दी गई है ।

महाराजाधिराज ज़ार का संक्षिप्त जीवन चरित्र ।

ता० १३ मार्च (१८८१ ई०) रविवार के दिन रूस के शाहनशाह ज़ार राज-कीय गाड़ी में बैठकर भजन मन्दिर से अपने भवन में जाते थे कि इस बीच में किसी दुष्ट ने डुलफोदार गोला उन की गाड़ी के नीचे फेंका परन्तु वार खाली गया । तब दूसरा फेंका । इसबेर गोला फूट गया और उस के भीतर की बारूद और गोलियों ने चारो ओर उड़ कर गाड़ी को निध्वंश किया । और

जार के पैरों का पता न लगा। केवल दो घण्टा प्राणरहा पश्चात शाहनशाह रूस पंचत्व को प्राप्त हुए। इस गोले ने कई मनुष्यों का प्राण लिया। इस दुष्ट घातक के पकड़ने का शोध हुआ और पकड़ा गया इसकी अवस्था केवल २१ वर्ष की है नाम इसका रोसा काफ है। यह खनन विद्या में निपुण है। पहले तो इस दुष्ट ने अपने अपराध को अस्वीकार कर के बचाव किया था पर यह गुप्तभाव कब छिपे, अन्त में इसने सब कुछ अपने मुख से प्रगट किया। इसघोर विपत्ति से रूस में हाहाकार मचा है। यूरोप के लोगों को भी बड़ा दुःख हुआ है। राजकुमार जारविच् रूसी राज्य के उत्तराधिकारी अपने पिता के पद पर नियुक्त हुए। और उन का राजकीय नाम "तृतीय एलैकज्याण्डर" रक्खा गया है, ड्यूक आफ एडिम्बरा सपत्नीक सेण्टपीटर्सबर्ग में गए हैं। इंगलैण्ड में एक मास भर अधिकारी लोग शोच सूचक वस्त्र धारण करेंगे। हाउस आफ कामंस और लार्डस की तरफ से दुःख शांत्वन पत्र भेज जायंगे। निहिलिष्ट लोग इस दुष्ट कर्म के करने में बहुत दिन से लगे हुए थे। और कई बेर जो नहीं सो कर चुके थे पर शाहनशाह की आयुष्य, थी इस से इन का यत्न पूरा नहीं होता था। अब की इन्हों ने अपना दुष्ट सङ्कल्प पूरा कियो। शहनशाह रूस जैसे शूर और पराक्रमी थे सो समस्त भूमण्डल में प्रख्यातही है।

इस महान् व्यक्ति का जन्म सन् १८१८ में हुआ। उस समय इनके चचा अलेक्ज़ांडर प्रथम रूस के राज्य सिंहासन पर थे। इनकी पूरी सात वर्ष की अवस्था भी नहीं हुई थी कि इनके चचा साहब स्वर्ग वासी हुए। मृत अलेक्ज़ेंडर के भाई कांसटंटाइन ने राज्य के भार से मुख मोड़ लिया था इस कारण जार के पिता निकोलस को गद्दी मिली और ये युवराज हुए। इस के अनन्तर रूसी सैनिक लोगों में बलवा उत्पन्न हुआ और वह कई दिन तक रहा इन बलवाइयों का नाम "डिकाब्रिस्टस" था और ये लोग राजकीय कुटुंब के पूर्ण शत्रु थे। इनका यह संकल्प था कि जैसे जर्मनी के छोटे २ हिस्से हो गए हैं, वैसेही इस राज्य के भी हो जावें परन्तु बहुतसी अन्य प्रामाणिक सैन्य समूहने प्रथम निकोलस को इनके पराजय करने में बड़ी ही सहायता दी, जिस्से इन का दुष्ट संकल्प निर्मूल होगया। सन १८२५ में राजकीय व्यवस्था भली भांति स्थापित करके निकोलस अपनी इच्छानुरूप

राज करने लगे। ज़ार की माता प्रुशिया के सम्राट तृतीय फ्रेडरिक की कन्या थीं। इन्हीं ने स्वयं अपने लड़के ज़ार को विद्या सिखाई परन्तु इस बात से इनके पिता अप्रसन्न रहते थे। उन्हीं ने ज़ार को फौजी गवर्नरों और निपुण शिक्षकों के पास विद्योपार्जन के निमित्त बैठाया। इस बात को ज़ार ने अनहित समझ अपने को उस शिक्षा से हटाया और देश २ पर्यटन करनेलगे और कुछ काल तक अपनी माता की सम्बन्धिनी स्त्रियों के सहवासी रहे। ये राजकीय प्रबंधों से बहुत प्रसन्न रहते थे। सैनिक कामों में इन का मन कुछ भी न लगता, । जो बात रूसी राजदरबार के संपूर्ण विरुद्ध थी। इस विषय में पूर्ण चिंतना और यह कल्पना होने लगी कि इस युवराज के अधिकार में पुराने रूसी समूह क्योंकर रहने पावेंगे। यह बात इन के भाई ग्रांडड्यूक कांस्टनटाइन के लिये परमोपयोगी थी। इन दोनों भाइयों में इस कारण ईर्षा उत्पन्न हुई। सामान्यत: इस बात की चर्चा होने लगी और कभी२ लड़ाई भी होती जाती थी।

एक समय की बात है कि इन के भाई कंस्टनटाइन ने जो समुद्रीयसेना के ऐडमिरल थे, इतनी अधिक शत्रुता इन पर की गई कि ये कैद कर लिए गए। इस व्यवहार के पलटे निकोलस ने यही दण्ड देना कस्टेन्टाइन को योग्य समझा। इस आपुस के विरोध से इन के पिता को बड़ा शोच रहता था। जब कि सन् १८४३ में अलेकजेंडर का प्रथम पुत्र जन्मा तब निकोलस ने कांस्टेन्टाइन से शपथ ली कि वह युवराज का आज्ञाकारी रहेगा। निदान निकोलस ने अपने मरने के समय दोनों लड़कों को बुलाकर उन के समक्ष अलेक्जेंडर को राज्याधिकार का तिलक दे दिया और इन दोनों से शपथ ली कि आपुस में बिरोध रहित राज्य प्रबन्ध में सन्नद्ध रहें जिस से प्रजा और राज्य को हानि न पहुंचे। यह सुन शाहजादे ने बड़े २ प्रधान मंत्रियों के सम्मुख प्रतिज्ञा की कि राज्य प्रबंध हम भलीभांति करेंगे और अपने को द्वितीय अलेक्ज़ेंड्र के नाम से विख्यात किया। उसी दिन अपरान्ह समय सब राजकीय और सैनिक कर्मचारियों, ने जो सेन्टपीटर्सबर्ग में थे आज्ञाकारी स्वीकार की और भेंटें दीं। एक कौंसिल जो नवीन अलेक्जेंडर के लिए नियत हुई थी उस में यह विचार ठहरा कि जो युद्ध उस से और अन्य राजों से होरहा है वह हुआ करे। अलेक्जेंडर का प्रथम काम यह था कि उस ने समग्र राज्यभर में अपने नाम और राज्यसिंहासन पर स्थित होने का विज्ञा-

पन दिया और इस में यह आशय प्रगट किया कि मुख अभिप्राय मेरा यह है कि जिस प्रकार से पीटर दि ग्रेट, अलेक्जेण्डर प्रथम और निकोलस प्रथम के समय से राज्य की प्रभा और वैभव बढ़ती आई है वैसे ही बढ़ा करे। जेनरल रूडीगर को वार्स नामक स्थान से बुलाकर राजकीयगार्ड की कमान दी और अपनी शान, शौकत के मुआफ़िक सेना भरती की, वाणिज्य की उन्नति में भी बड़ी चेष्टा की। राज्य में बहुत से गुलाम जो सरदार लोगों के पास थे उन में से २३०००००० गुलामों को दासत्व भाव से मुक्त कराया। यही नहीं वरन उन को पेट भरने का उद्योग भी बतला दिया। निःसंदेह यह काम ज़ार का जो सन् १८६१ में हुआ था अत्यन्त प्रशंसा के योग्य है। इन्हों ने सरकारी कालेज स्थापित किए। देश २ में सभा नियत कराई। फ़िब्रुअरी सन १८६८ में पोलैण्ड के लौंडी गुलामों को भी स्वाधीन किया। इस के करने का अभिप्राय यह था कि पोलैण्ड के सरदारों का ऐश्वर्य न्यून हो जाय, क्योंकि पूर्व्व में उस भूमि के स्वामी वेही लोग थे। ज़ार की विद्याविभाग की ओर दृष्टि इतनी अधिक बढ़ी थी कि उन्हों ने यूरप के कालिजों के समान अपनी राजकीय पाठशाला में बड़े २ पद स्थापित किए थे और यह प्रबन्ध बड़ा ही उत्तम था कि प्रत्येक सूबे की ओर से मेम्बर भरती होते थे, इन की सभा प्रथम सन १८६५ में हुई थी, जिस से बहुत कुछ उपकार के पलटे अपकार की संभावना भी हुई। ज़ार ने अपनी प्रजा को युद्धविद्या में बहुत निपुण किया और राज्य में पञ्चायती कोर्टन्याय करने को स्थापित कर दिए। सन १८६६ में इन्हों ने बुखारे के अमीर से लड़ाई प्रारंभ की, जो डेढ़ वर्ष तक होती रही, इस में रूसी लोग विजयी हुए और समरकन्द पर अपना अधिकार जमालिया। सन १८६८ में ज़ार ने अपने अमेरिकाप्रदेश में यूनाइटेड स्टेटस की गवर्नमेन्ट अमेरिका के हाथ १४००००००) रुपये को बेच दिया। जब फ्रेञ्च और जर्मन में लड़ाई होने लगी और जर्मन में लोगों ने पेरिस नामक स्थान को घेर लिया तब ज़ार ने सन १८५६ के संधि पत्र को (जिस से बलक्सी की सीमा बांधी गई थी) मानना अङ्गीकार किया, इस से बड़े बड़े राष्ट्रों को बड़ी कठिनता देख पड़ने लगी। सन् १८७१ में इस निमित्त एक कान्फरेंस हुआ जिस में ज़ार के इच्छानुरूप संधिपत्र स्थापित हुआ। सन् १८७२ में जब ज़ार बर्लिननगर को गए तो जर्मन और आस्ट्रिया के सम्राट से भेंट किया, ये दोनों महाराज सेन्टपीटर्सबर्ग में थे

शहनशाह की भेंट के लिए निमंत्रित होकर आए थे, उस अवसर में बड़ा उत्सव हुआ था। सन् १८७३ में जनरलकाफमैन ने खीवा को अधिकार में लाकर इस का कुछ खंड रूसी महाराज्य में जोड़ा था। सन् १८७४ में इन्हों-ने अपने राज्य के चारो ओर पर्य्यटन किया, जहां २ इन का गमन होता था वहां २ की प्रजा बड़ी धूम धाम से इन का आदर सन्मान करती थी। सन् १८७५ में इन के जनरल काफमैन ने कोखन्द नामक स्थान को सर किया और सबज़ दरिया का उत्तर भाग अपने अधिकार में करके मस्काविट के राज्य को मिला लिया। सन् १८७६ में जब टर्की और सर्विया के बीच में युद्ध प्रा-रंभ हुआ, उसमें इन्हों ने कुछ स्वयं सहायता किसी की नहीं की। हां रूसी लोग सर्विया की सैन्य समूह में गए थे। जब तुर्क लोगों ने अलेकजनाम को फतः कर लिया उस समय कुस्तुन्तुनियां में रहने वाले वकील ने सुल्तान को छः सप्ताह तक युद्ध बन्द करने के लिए एक निवेदनपत्र प्रदर्शित किया था, जिसे सुल्तान ने मान्य किया। सन् १८७७ में, टर्की और सर्विया के मध्य एक सन्धीपत्र हुआ और इसी वर्ष में यूरप के सब राजों के वकीलों का कुस्तु-न्तुनियां में कान्फरेंस हुआ था, उस में जो व्यवस्था नियत हुई सो टर्की के सुलतान को माननीय न हुई इस कारण ज़ार ने टर्की से लड़ने का उद्देश प्रकट किया। इस युद्ध में तुर्क लोग बड़ी शूरता से लड़े परन्तु तुर्की लोग पराजित हुए।

उस समय रूसी सेना कुस्तुन्तुनियां के द्वार तक पहुंची थी। सन् १८७८ ता० १९ फिब्रुअरी को एक सन्धि पत्र स्थान स्टेफिनों में हुआ। जिसके नियम बर्लिन के कान्फरेंस में कुछ परिवर्त्तित हुए थे। ज़ार का चित्त सर्वदा धर्म्म विषय में लगा रहता था, इसी कारण ये सब भजन मन्दिरों के अध्यक्ष हुए थे परन्तु ये रोमनकैथलिक चर्च से द्वेष रखते थे। ज़ार के ऊपर दो मारण प्रयोग हुए प्रथम सन् १८६६ ता० १६ एप्रिल को ज्योंही ये गाड़ी पर सवार होते थे कि एक काराकोसोक विद्यार्थी ने] गोली चलाई परन्तु एक कारी-गर ने उसी क्षण अपने बुद्धि बल से उस विद्यार्थी के हाथ को फेर दिया इस कारण निशाना उसका खाली गया।

इस बात को देख कर ज़ार ने उस कारीगर कामिसरोफ नामक को उच्च पदवी का सरदार बनाया। द्वितीय सन् १८६७ में ता० ६ जून को पारिस में पोल जाति के बरेजोमास्की नामक पुरुष ने इन पर गोली चलाई थी

उस समय ज़ार अपने दोनों पुत्र और शहनशाह नेपोलियन के साथ गाड़ी में बैठे थे। परन्तु कुशल हुई, कि गोली किसी को न लगी, केवल एक अर्दली सवार का घोड़ा ज़ख्मी हुआ दूसरी गोली वह दुष्ट छोड़ता ही था कि बंदूक की नली फट गई और उसी के हाथ में जा लगी। ज़ार का विवाह ता० २८ एप्रेल सन् १८४१ में हेंस की राजकन्या मेरिया एलेकज़ाड्रोवना से हुआ। जिस्से सन्तति बहुत हुई जेष्ठ पुत्र स्वर्गबासी निकोलस का जन्म ता० २२ सेप्टेम्बर सन् १८४३ में हुआ था। जो सन् १८६५ में मृत्यु के वश हुआ। द्वितीय पुत्र एलेग्ज़ेण्डर ता० १० मार्च सन् १८४५ में जन्मे और उन का बिवाह ता० ८ नवम्बर सन् १८६६ में डेनमार्क की राजकन्या मेरियाफिडोरवना से हुआ। इन की राजकन्या डचेज़मेरी का बिवाह ता २३ जनवरी सन् १८७४ में इंगलेण्ड के राजकुमार ड्यूक आफ एडिम्बरा से हुआ।

FRANCIS I KING OF FRANCE.

इन का जन्म सन् १४९४-सेप्टेम्बर को १२ वीं तारीख को दो पहर बाद १० घंटा ३७ मिनट पर जन्मदेश का अक्षांश याम्य ४८ अंश उस समय दशम का विषुवांश ३३ अंश ४८ कला दशम लग्न ११ राशि ६ अंश जन्म लग्न ३ राशि ५ अंश ५६ कला।

सायना: स्पष्ट ग्रहा:।

र०	चं०	बु०	शु०	मं०	गु०	श०	ग्रहा:
५	१०	६	४	४	५	११	रा०
२८	२७	१९	१५	२३	२३	१०	अ०
३९	३०	१०	५०	१५	५४	२२	क०

दक्षिण चन्द्र क्रांति: १० अंश २ कला। दक्षिण शनि क्रांति: ९ अंश ४३ कला।

जन्म कुंडली।

CHARLES V EMPEROR OF GERMANY.

इन का जन्म सन् १५०० फेब्रुअरी की चौबीसवीं तारीख आधीरात के बाद २ घंटा ३९ मिनट जन्मस्थान का अक्षांस याम्य ५२ अंश उस समय दशम का विषुवांश ९२० अंश दशम लग्न ७ राशि १२ अंश २७ कला जन्म लग्न ९ राशि ५ अंश ४४ कला।

सायनाः स्पष्ट ग्रहाः ।

र०	चं०	बु०	शु०	मं०	गु०	श०	ग्रहाः
११	९	११	११	१	११	१	रा०
१४	६	१९	२६	२४	७	१७	अं०
३०	४५	३६	४०	४०	२९	३७	क०

जन्म कुंडली ।
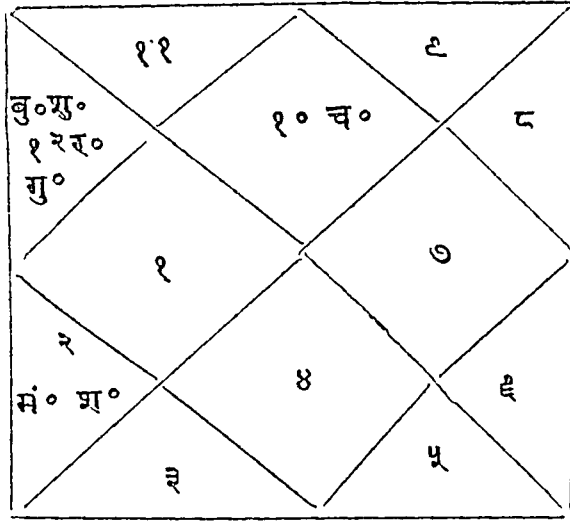
NAPOLEON III EMPEROR OF FRANCE.

इन का जन्म सन् १८०८ अप्रिल की २० वीं तारीख की आधीरात के बाद १ घंटा पर जन्मस्थान प्यारिस दशम का विषुवांस २२२ अंश ५६ कला दशम लग्न ७राशि १५ अंश २४ कला जन्म लग्न ९राशि १ अंश २४ कला ॥

सायना: स्पष्ट ग्रहा: संक्रांतय: ।

र०	चं०	बु०	शु०	मं०	गु०	श०	हर्नेस	ग्रहा:
०	१०	०	०	०	११	७	७	रा०
२९	२६	२	२	२९	९	२०	३	अं०
४५	२९	३२	२	५३	२४	२४	८	क०
क्रा ३	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ३	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ६	
११	७	१	०	११	८	१५	१२	अं०
२४	४६	१८	३८	७	५५	२८	३	क०

जन्म कुण्डली।
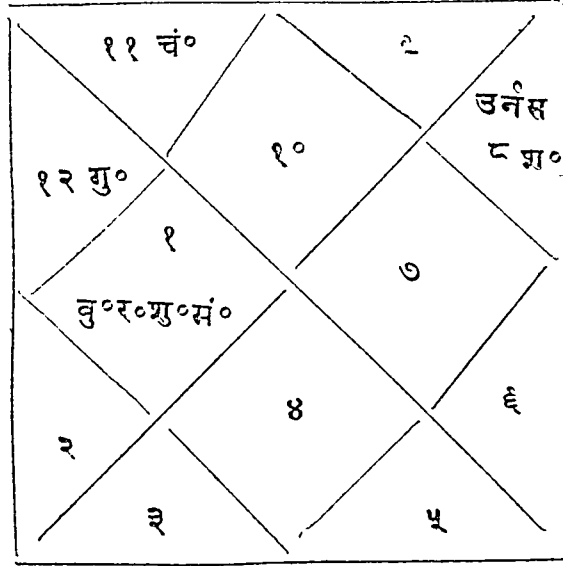
FREDERIC WILLIAM V EMPEROR OF GERMANY.

इन का जन्म सन् १७९७मार्च की २२ वीं तारीख की दो पहर के बाद दो बजे पर जन्म। जन्मस्थान बर्लिन दशम का विषुवांश ३० अंश ३० कला ४४ विकला दशम लग्न १ राशि २ अंश ३३ कला। जन्म लग्न ४ राशि १८ अंश ५१ कला।

सायनाः स्पष्ट ग्रहाः संक्रांतयः।

र०	चं०	बु०	शु०	मं०	गु०	श०	उर्नेस	ग्रहाः
० २ २५	९ २५ २४	११ ७ २२	११ १४ ५२	१ १५ २८	११ २७ ३६	२ २१ ४८	५ ९ ५९	रा० अ० क०
क्रा ३	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ३	क्रा ६	क्रा ३	क्रा ३	
० ५८	२३ ३०	१० ४६	७ १९	१७ २	१ ५६	२२ १२	८ ३५	अ० क०
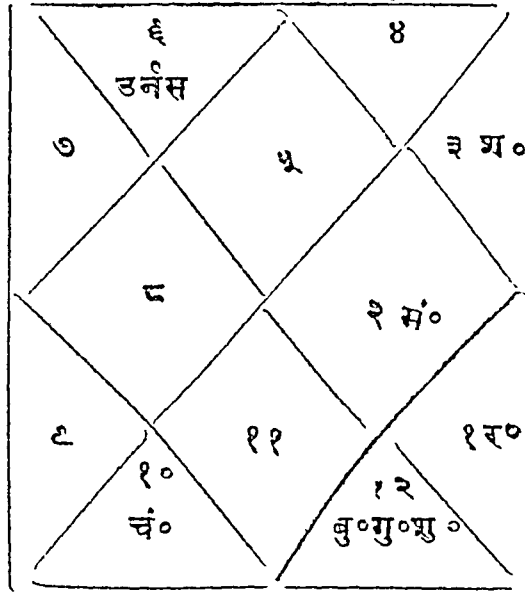
जन्म कुंडली ।

महाराज मल्हार राव की जन्म कुंडली ।
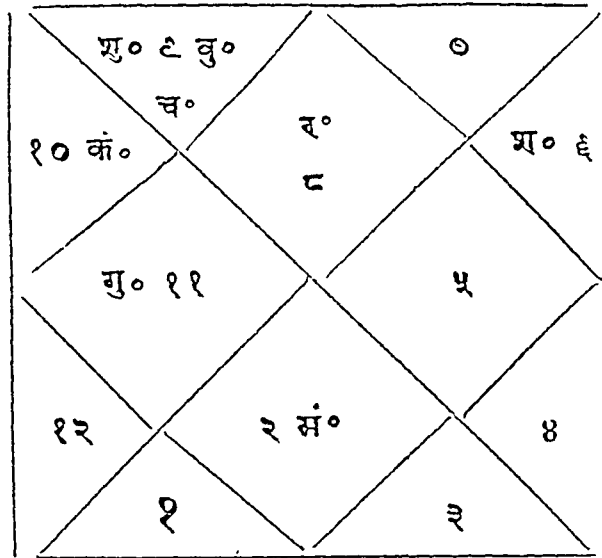
महाराज के प्रस्तुत दशा का कारण लग्नेश ७, भौम है दशमेश रवि ६ तनु भावि दोनों का परस्पर दृष्टि योग है ।

लग्नकर्माधिनेतारौ अन्योन्याश्रयि संस्थितौ ।

राजयोगावितिप्रोक्तौ विख्यातौविजयीभवेत् ॥ १ ॥

टीपू सुल्तान की जन्म कुंडली ।

सिकन्दर की जन्म कुंडली ।

रावण की जन्म कुंडली ।
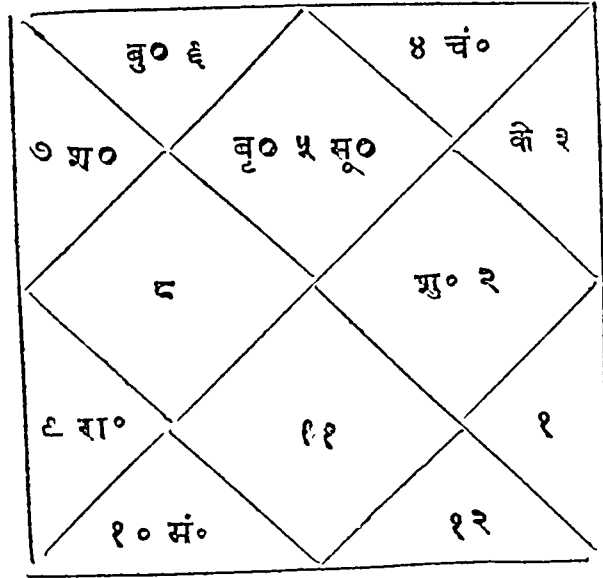
पंच पवित्रात्मा ।

अर्थात्

मुसलमानी मत के मूलाचार्य महात्मा मुहम्मद , आदरणीय अली ,

बीबी फातिमा , इमाम हसन

और

इमाम हुसैन की संक्षिप्त जीवनी ।

पंच पवित्रात्मा।

महात्मा मुहम्मद।

जिस समय अरब देश वाले बहुदेवोपासना के घोर अन्धकार में फंस रहे थे उस समय महात्मा मुहम्मद ने जन्म ले कर उन को एकेश्वर वाद का सदुपदेश दिया। अरब के पश्चिम ईसामसीह का भक्तिपथ प्रकाश पा चुका था किन्तु वह मत अरब फारस इत्यादि देशों में प्रबल नहीं था और न अरब ऐसे कट्टर देश में महात्मा मुहम्मद के अतिरिक्त और किसी का काम था कि वहां कोई नया मत प्रकाश करता। इस काल के अरब के लोग मूर्ख स्वार्थतत्पर निर्दय और वन्यपशुओं की भांति कट्टर थे। यद्यपि उन में से अनेक अपने को इबराहीम के वंश का बतलाते और मूर्ति पूजा बुरी जानते किन्तु समाजपरवश होकर सब बहु देवोपासक बने हुए थे। इसी घोर समय में मक्के से मुहम्मद चन्द्र उदय हुआ और एकेश्वर का पथ परिष्कार रूप से सब को दिखलाई देने लगा।

महात्मा मुहम्मद इबराहीम के वंश में इस क्रम से हैं। इबराहीम, इसमाईल, कबजार, हमल, सलमा, अलहौसा, अलीसा, अद, साद, अदनान, साद, नजार, मजर, अलयास, बदरका, खरीमा, किनाना, नगफर, मालिक, फहर, गालिब, लबी, काब, मिरह, कलाब, फजी, अबदसनाफ, हाशिम, अबदुल मतलब, अबदुल्लाह और इनके अबुल कासिम मुहम्मद।

अबदुलमतलब के अनेक पुत्र थे। जैसा हमजा, अब्बास, अबूतालिब, अबुलहब, अईदाक। कोई कोई हारिस, हजब, हकूम, जरार जुबैर, कासमि अमगर, अबदुलकाबा और मकूम को भी कुछ विरोध से अबदुल मतलब का पुत्र मानते हैं। इनमें अबदुल्लाह और अबीतालिब एक मां से हैं। अबीतालीब के तीन पुत्र अकील, जाफर और अली। यह अली महात्मा मुहम्मद के मुसलमानी सत्य मत प्रचार करने के मुख्य सहायक और रात दिन के उन के दुख सुख के साथी थे और यह अली जब महात्मा मुहम्मद ने दूतत्व का दावा किया, तो पहिले पहल मुसल्मान हुए।

महात्मा मुहम्मद की मा का नाम आमिना है जो अबदमनाफ के दूसरे बेटे वहब की बेटी है और आदरणीय अली की मा का फातमा है जो असद की बेटी है और यह असद हाशिम के पुत्र है इस से मुहम्मद और अली पितृ कुल और मातृ कुल दोनों रीति से हाशिमी है।

महात्मा मुहम्मद १२ वीं रबिउलअौवल सन् ५६९ ईस्वी को मक्का में पैदा हुए।

महात्मा मुहम्मद पिता के इन के जन्म के पूर्व [एक लेखक के मत से इन के जन्म के दो वर्ष पीछे] मर जाने से उनके दादा इन का लालन पालन करते थे। अरब के उस समय की असभ्य रीति के अनुसार कोई नारी अनाथ लड़के को दूध नहीं पिलाती थी और इस में वहां की स्त्रियां असंगल समझती थी किन्तु अलीमा नामक एक स्त्री ने इन को दूध पिलाना स्वीकार किया। इस दाई को बालक ऐसा हिए लग गया की एक दिन अलीमा ने आकर महात्मा मुहम्मद की माता मीना से कहा की मक्के में संक्रामक रोग बहुत से होते हैं इस से इस बालक को मैं अपने साथ जंगल में लेजाऊंगी उन की मा ने आज्ञा दे दी और साढ़े चार बरस तक महात्मा मुहम्मद अलीमा के साथ वन में रहे परन्तु इनके दैवी चमत्कार से कुछ शङ्का करके दाई फिर इन को इन की माता के पास छोड गई। इनको छ बरस की अवस्था में इन की माता अमीना का भी परलोक हुआ और आठ बरस की अवस्था में इन के दादा अब्दुल मतलब भी मर गए। तब से इन के सहोदर पितृव्य अबीतालिब पर इनके लालन पालन का भार रहा। अबीतालिब महात्मा मुहम्मद के बारह और पितृव्यों में इन के पिता के सहोदर भ्राता थे। हाशिम महात्मा मुहम्मद के परदादा का नाम था और यह मनुष्य ऐसा प्रसिद्ध हुआ कि उस के समय से उस के वंश का नाम हाशिमी पडा। यहां तक कि मक्का और मदीने का हाकिम अब भी "हाशिमिओं के राजा" के पद से पुकारा जाता हैं। अबदुल मतलब महात्मा मुहम्मद को बहुत चाहते थे और यह नाम भी उन्ही का रक्खा हुआ था इस हेतु मरती समय अबीतालिब को बुलाकर महात्मा मुहम्मद की बांह पकडा कर उनके पालन के विषय में बहुत कुछ कह सुन दिया था। अबीतालिब

An Athiopian Female Slave.

ने पिता की शीक्षा अनुसार महात्मा मुहम्मद के साथ बहुत अच्छा बरताव किया और इनको देश और समद के अनुसार शीक्षा दिया और व्यापार भी सिखलाया।

उन्हों ने रीति मत विद्या शिक्षा किया था इस का कोई प्रमाण नहीं मिला। पचीस बरस की अवस्था तक पशु चारण के कार्य में नियुक्त थे। चालिस बरस की अवस्था में उन का धर्म भाव स्फूर्ति पाया। ईश्वर निराकार है, और एक अद्वितीय हैं; उनकी उपासना बिना परित्राण नहीं है। यह महासत्य अरब के बहु देवोपासक आचार भ्रष्ट दुर्दान्त लोगों में वह प्रचार करने को आदिष्ट हुए। तेंतालिस बरस की अवस्था के समय में अग्निमय उत्साह और अटल विश्वास से प्रचार में प्रवृत्त हुए। "रजीत: मदुदा" नामक मुहंमदीय धर्म ग्रंथ में उनकी उक्ति कह कर ऐसा उल्लिखित है। "हमारे प्रति इस समय ईश्वर का यह आदेश है कि निशा जागरण करके दीन हीन लोगों की अवस्था हमारे निकट निवेदन करो, आलस्य शय्या में जो लोग निद्रित हैं उन लोगों के बदले तुम जागते रहो, सुख ग्रह में आनन्द विह्वल लोगों के लिये अश्रुवर्षण करो" पैगम्बर महम्मद जब ईश्वर का स्पष्ट आदेश लाभ करके ज्वलन्त उत्साह के साथ पौत्तलिकता के और पापाचार के विरुद्ध खड़े हुए और ईश्वर एक मात्र अद्वितीय हैं" यह सत्य स्थान स्थान में गभीरनाद से घोषना करने लगे, उस समय वह अकेले थे, एक मनुष्य ने भी उनको सम विश्वासी रूप से परिचित होकर उनके उस कार्य में सहानुभूति दान नहीं किया। किन्तु उन्हों ने किसी की सुखापेक्षा नहीं किया किसी का अनुमात्र भय नहीं किया, बुद्धि विचार तर्क की हदसीमा में भी नहीं गये प्रभु का आदेश पालन करना ही उनका दृढ़ व्रत था जब वह ईश्वर के आदेश से "ला इलाह एलिल्लाह" (ईश्वर एक मात्र अद्वितीय हैं) इस सत्य प्रचार में प्रवृत्त हुए, तब सब अरबी लोग उनके कई एक पितृव्य और समस्त ज्ञाति सम्बन्धी निज अवलम्बित धर्म्म के विरुद्ध वाक्य सुन कर भयानक क्रोधान्ध हुए और उनके स्वदेशीय और आत्मीय गन "महम्मद मिथ्या वादी और एन्द्रजालिक हैं" इत्यादि उक्ति कहके उन के प्रति और सबों का मन विरक्त और अविश्वस्त करने लगे। स्वजन सम्बन्धियों के द्वारा क्लेश अपमान प्रहार यन्त्रना आदि उनको जितनी सह्य करनी पड़ी थी उतनी दूसरे किसी महापुरुष को नहीं सहनी पड़ी। विपरीत लोगों के प्रस्तराघात से उनका

शरीर क्षत विक्षत हुआ था। किसी के प्रस्तराघात से उन का दो दांत भग्न और ओठ विदीर्ण तथा ललाट और बांहु आहत हुआ था। किसी शत्रु ने उनको आक्रमन करके उनका मुख मण्डल कांकड़ मय मृतिका में घर्षन किया था उस से मुह क्षत विक्षत और शोनिताक्त हुआ था। एक दिन किसी ने उनके गले में फांसी लगा कर स्वास रोध्य करके उनको बध करने का उपक्रम किया था। एक दिन किसी ने उनका गला लक्ष करके करवालाघात किया था तब गह्वर में छपकर उन्हीं ने अपने प्राणकी रक्षा किया था। कई वार उनको जीवनाशा कुछ भी नहीं थी। एक दिन उनके पितृव्य और जातिवर्ग उनको बध करने को कृत संकल्प हुए थे, उनकी प्रियतमा दुहिता फातिमा ने जानकर रोते रोते उनसे निवेदन किया, उस में धर्म्मवीर विश्वासी महम्मद अकुतोभय भाव से बोले कि वत्से मत रो, हम को कोई बध नहीं कर सकेगा, हम उपासनारूप अस्त्र धारण करेंगे, विश्वास बर्म्म से आवृत होंगे। जब हजरत महम्मद को प्रहार क्षत कलेवर और निःसहाय देख कर उनके पितृव्य हमजा महाक्रोध से अबुलहब और अबुजोहल प्रभृति मुहम्मद के परमशत्रु पितृव्य और दूसरे २ ज्ञाति सम्बन्धियों को प्रहार करने जाते थे। उस समय वह बोले, "जिनने हमको सत्यधर्म्म प्रचार के हेतु मनुष्य मण्डली में रण किया है, उस सत्य परमेश्वर के नाम पर शपथ करके हम कहते हैं, यदि तुम सुतीक्ष्ण करवाल के द्वारा नीच बहु-देवोपासक लोगों को निहत करो और उसी भाव से हमारी सहायता करने को अग्रसर हो तो तुम अपने को शोणित में कलंकित करके पुन्यमय सत्य परमेश्वर से दूर जा पड़ोगे। ईश्वर के एकत्व में और हम उनके प्रेरित हैं इस सत्य का विश्वास जब तक न करोगे तब तक तुम को युद्ध विबाद में कोई फल नहीं होगा पितृव्य यदि तुम वात्सल्यरूप औषध हम को प्रदान करने चाहते हो, और हमारे आहत हृदय में आरोग्य का औषध लेपन करना चाहते हो, तो "ला इलाह इलेल्लाह महम्मद रसुलल्लाह" [ईश्वर एकमात्र अद्वितीय और मुहम्मद उस का प्रेरित है] यह वाक्य उच्चारण करो। यह सुन कर हमजा विश्वासी होकर कलमा उच्चारण पूर्वक एक ईश्वर के धर्म्म में दीक्षित हुए। तीन बरस शत्रु मण्डली से अवरुद्ध होकर हजरत महम्मद को महा क्लेश से एक गिरिगुहा में कालयापन करना पड़ा था। इस बीच में बहुत से मनुष्यों ने उन के साथ उस उन्नत विश्वास में योग दिया था

और उन के निकट एक ईश्वर के धर्म में दीक्षित हुए थे । ईश्वर की आज्ञा-पालन के लिए वह दश बरस मक्का नगर में अपरिसीम क्लेश और अत्याचार सहन करके पीछे मदीना नगर में चले गए । वहां शत्रु गन से आक्रान्त होकर उन लोगों के अनुरोध से और आवाहन से युद्ध करने को बाध्य हुए । वह विपन्न अत्याचारित होकर कभी तनिक भी भीत और संकुचित नहीं हुए थे। जितनी बाधा और विघ्न उपस्थित होता था उतना ही अधिक उत्साहानल से प्रज्वलित हो उठते थे। सब विघ्न अतिक्रम करके अटल विश्वास से वह ईश्वरादेश पालन व्रत में दृढ़ व्रती थे। वह ईश्वर और मनुष्य के प्रभू भृत्य का सम्बन्ध अपने जीवन में विशेष भांति प्रदर्शन करा गए हैं । वह स्वामी आदेश शिरोधार्य करके स्वर्गीय तेज और अलौकिक प्रभाव से कोटि कोटि मनुष्य को अन्धेरे से ज्योति में लाए। लक्ष लक्ष जन का संसारिक बल एक विश्वास के बल से चूर्ण करके जगत में अद्वितीय ईश्वर की महिमा को महीयान् किया। एकेश्वर की पूजा और सत्य का राज्य प्रतिष्ठित किया। प्रभु का आदेशपालन के हेतु सब प्रकार का दारिद्र क्लेश अपमान और आत्मीय जन का निग्रह अम्लान बदन से सिर नीचा करके सहन किया। धन्य ! ईश्वर के विश्वास किङ्कर महम्मद ! आज मुसलमान धर्म्म के प्रवर्त्तक ईश्वर के आज्ञाकारी विश्वस्त भृत्य मुहम्मद के नाम और उन के प्रवर्त्तित पवित्र एकेश्वर के धर्म्म में एशिया से योरोप आफ्रिका तक कोटि कोटि मुसलमान एक सूत्र में ग्रथित हैं। वह ऐसा आश्चर्य धर्म्म का बन्धन जगत में संस्थापन कर गए हैं कि आज दिन उस के खोलने को किसी को सामर्थ्य नहीं है।

बीबी फ़ातिमा ।

अब हम लोग उस का जीवनचरित्र लिखते हैं जिस को करोड़ों मनुष्य सिर झुकाते हैं और जिस के दामन से प्रलय पीछे करोड़ों मनुष्य को ईश्वर के सामने अपने अपराधों को क्षमा मिलने की आशा है। यह बीबी फातिमा मुसलमान धर्म्माद्याचार्य्य महात्मा मुहम्मद की प्यारी कन्या थी। महात्मा मुहम्मद जैसे दुहितृवत्सल थे वैसेही बीबीफातिमा पितृभक्त थीं। यह बाल्यावस्थाही में मातृहीना होगई क्योंकि इनकी माता महात्मा मुहम्मद की प्रथमा स्त्री बीबी खदीजा इनको शैशवावस्थाही में छोड़ कर परलोक सिधारीं। यद्यपि महात्मा मुहम्मद को अनेक सन्तति थीं पर औरों का कोई

नाम भी नहीं जानता और इनको आबालवृद्ध वनिता सब जानते हैं।मुहम्मद ने अपने मुख से कहा है कि ईश्वर ने संसार की सब स्त्रियों से फातिमा को श्रेष्ट किया। इन्होंने आठ बरस तक जिस असाधारण निष्ठा और परम श्रद्धा से पिता की सेवा की पराकाष्टा की है वैसी सन्देह है कि किसी स्त्री ने भी न की होगी और न ऐसी पितृ गतप्राणा नारीरत्न और कहीं उत्पन्न हुई होगी। महात्मा मुहम्मद क्षण भर भी दृष्टि से इन को दूर रखने में कष्ट पाते थे। पिता के अलौकिक दृष्टान्त और उपदेशों के प्रभाव से शैशवावस्थाही से इन को अत्यन्त धर्मनिष्ठा थी। इनका मुख भोला भोला सहज सौन्दर्य्य से पूर्ण और सतोगुणी तेज से देदीप्यमान था। कभी इन्होंने सिंगार न किया सांसारिक सुख की ओर यौवनावस्था में भी इन्होंने तृणमात्र चित्त न दिया। धर्म्म की विमल ज्योति और ईश्वरी प्रताप इनके चिहरे से प्रगट था। धर्म्म साधन और कठिन वैराग्य व्रतपालनही में इनको आनन्द मिलता था और अनशनादिक नियमही इनका व्यसन था। इन के समस्त चरित्र में से दो एक दृष्टान्त स्वरूप यहा पर लिखे जाते हैं।

महात्मा मुहम्मद की चचेरे भाई और परम सहायक आदरणीय अलीसे इन का विवाह हुआ और सुप्रसिद्ध हसन हुसैन इनके दो प्रिय पुत्र थे।

एक बेर कुरेश वंशीय अनेक संभ्रान्तजन महात्मा मुहम्मद के पास आए और बोले कि यद्यपि हमारा आपका धर्म सम्बन्ध नहीं है पर हम आप एकही वंश के और एकही स्थान के हैं इससे हम लोगों की इच्छा है कि हम लोगों के यहां जो अमुक आप सम्बन्धी का अमुक से विवाह होने वाला है उस कार्य को आप की पुत्री फातिमा चल कर अपने हाथ से सम्पादन करे। महात्मा मुहम्मद ने अच्छा कहकर विदा किया और आप फातमा के निकट आकर कहने लगे वत्से! लोगों से सद्भाव, तथा शत्रुओं का उत्पीड़न सहन करना और शत्रुतारूपी विष को कृतज्ञता रूपी सुधा भाव से पानही हमारा धर्म है। आज अरब के अनेक मान्य लोगों ने अपने विवाह में तुम को बुलाया. यह हमारी इच्छा है कि तुम वहां जाओ परन्तु तुम्हारी क्या अनुमति है हम जानना चाहते हैं। फातिमा ने कहा ईश्वर और ईश्वर के भेजे हुए आचार्य्य की आज्ञा कौन उल्लंघन कर सकताहै हम तो आप की आज्ञाधीना दासी हैं इससे हमारी सामर्थ्य नहीं कि आप की आज्ञा टालें। हम विवाह सभा में जायंगे परन्तु हम को सोच यह है कि हम कौन सा वस्त्र पहन के

जायगी। वहां और स्त्री लोग महामूल्य वस्त्राभरणादिक धारण कर के आ-
वेंगी और हमारी फटी चद्दर देखकर वे लोग हमारा और आप का उपहास
करेंगी। अबूजुहल की बहिन आनवा की स्त्री और शिवा की बेटी इत्यादि
अनेक अरब की स्त्री कैसी असभ्यचारिणी और मन्दप्रकृति हैं यह आप भली
भांति जानते हैं और हमालन की बेटी आप के चलने की राहमें कांटा बिछा
आती थी तथा अबूसफियान की स्त्री को आपकी निन्दा के सिवा और कोई
कामही नहीं है यह भी आप को अविदित नहीं। सब उस सभा में उपस्थित
रहेंगी और रूम और मिस्र के बहुमूल्य अलङ्कार धारण कर के मणि पीठ के
ऊंचे आसन पर बड़े गर्व्वसे बैठेंगी उस सभामें आप की कन्या को एक मैली
फटी पुरानी चद्दर ओढ़ कर जाना होगा। इस को देखकर वे सब कहेंगी कि
इस कन्या को क्या हुआ। इसकी माता की अतुल सम्पत्ति क्या होगई जो इस
वेश से यह यहां आई है। पिता! इन लोगों को धर्म्मज्ञान और अन्तरचक्षु
नहीं है केवल जगत के वाह्याडम्बर में भूले हैं इस से हम को देख-कर वह
आप की निन्दा करेंगी और केवल हमारे कारण आप का अपमान होगा।

फातिमा पिता से यह कहती थीं और उन के नेत्रों से जल बहता था।
महात्मा महम्मद ने उत्तर दिया बेटी! तुम किञ्चिन्मात्र भी सोच मत करो।
हमारे पास उत्तम वस्त्राभरण और धन तो निस्सन्देह कुछ भी नहीं है परन्तु
निश्चय रक्खो कि जो आज लाल पीले वस्त्र पहन कर अहङ्कार के उद्यान में
फूली फूली दिखाई पड़ती हैं वे अपने दुष्कर्मों से काल तृण से भी तुच्छ
होकर नर्क की अग्नि में जलेंगी। हम लोगों का वस्त्र और शोभा वैराग्य है।
महात्मा महम्मद और भी कुछ कहा चाहते थे कि फातिमा ने कहा पिता!
क्षमा कीजिये अब विलम्ब करने का कुछ प्रयोजन नहीं आप की आज्ञा
हम को सर्व्वथा शिरोधार्य्य है।

यह कह-कर बीबी फातिमा घर से निकलीं * और उस विवाह सभा
की ओर अकेली चलीं परन्तु लिखा है कि ईश्वर के अनुग्रह से उन के अङ्ग
पर दिव्य अमूल्य वस्त्राभरण सज्जित हो गये। कुरैशवंश में और अरब की स्त्री
लोग अभिमान से फातिमा की मार्ग की परीक्षा कर रही थीं और कहती

* हमारे पुराणों में भी लिखा है कि सती जब उदास होकर दक्ष के
यज्ञ में बिना सिंगार कियेही चलीं तो मार्ग में कुबेर ने उन को उत्तम २

थीं कि आज हम लोगों की सभा में महात्मा महम्मद की बेटी फटा कपड़ा पहनकर आवेगी और हम लोगों के उत्तम वस्त्राभूषण देख के आज वह भली भांति लज्जित होगी इतने में विद्युल्लता की भांति साम्हने से फातिमा की शोभा चमकी और विवाह मण्डप में इनके आते ही एक प्रकाश होगया। फातिमा ने नम्र भाव से सब स्त्रियों को यथा योग्य अभिवादन किया परन्तु वे सब स्त्रियां ऐसी हतबुद्धि और धैर्य रहित हो गईं कि वे सलाम का उत्तर न दे सकीं। फातिमा का मुख चन्द्र देख कर अभिमानिनी स्त्रियों के हृदय कमल मुरझा गये और आंखों में चकचौंधी छा गई सब की सब घबड़ा कर उठ खड़ी हुईं और आपस में कहने लगीं कि यह किस महाराज की कन्या और किस राजकुमार की स्त्री है। एक ने कहा यह देवकन्या है। दूसरी बोली नहीं कोई तारा टूट कर गिरा है। कोई बोली सूर्य्य की ज्योति है। किसी ने कहा नहीं नहीं आकाश से चन्द्रमा उतरा परन्तु जिनके चित्त में धर्म्मवासना थी उन्हों ने कहा कि यह ईश्वरी ज्योति है यह अनेक अनुमान तो लोगों ने किये परन्तु यह सन्देह सब को रहा कि कोई होय पर यह यहां क्यों आई है अन्त में जब लोगों ने पहचाना कि यह बीबी फातिमा है तो सब को अत्यन्त लज्जा और आश्चर्य्य हुआ सब से ऊंचे आसन पर उन को लोगों ने बैठाया और आप सब सिर झुका कर उनके आस पास बैठ गईं कई उन में से हाथ जोड़ कर बोलीं हे महापुरुष महम्मद की कन्या! हम लोगों ने आप को बड़ा कष्ट दिया हम लोगों के कारण जो आप के नित्य कर्म्म में व्यवधान पड़ा हो उसे क्षमा कीजिये और हमारे योग्य जो कार्य्य हो आज्ञा कीजिये हम लोगों को जैसा आदेश हो वैसा भोजन और शरबत आप के वास्ते सिद्ध करें। बीबी फातिमा ने विनय पूर्वक उत्तर दिया भोजन और शरबत से हमारा सन्तोष नहीं हमारा और हमारे पितृदेव का विषय में विराग सहज सुभाव है अनशन व्रत हम लोगों को सुस्वाद भोजन के बदले अत्यन्त प्रिय है हमारा और हमारे पिता का सन्तोष ईश्वर की प्रसन्नता है तुमलोग देवी, देवता भूत, प्रेत इत्यादिकी पूजा और पाखण्ड

वस्त्राभरण पहिना दिया वैसे ही अनुमान होता है कि अपने आचार्य्य महात्मा मुहम्मद की बेटी को वस्त्रहीन देखकर उन के किसी धनिक सेवक ने अमूल्य वस्त्राभरण से उन को सजा दिया।

छोड़ कर सत्य धर्म के प्रकाश आओ एक परमेश्वर की भक्ति करो, परस्पर वैर का त्याग और आपस में प्रीति करो। अनेक स्त्रियां फातिमा का यह अतुल प्रभाव देख कर उसी समय मुसलमान हुईं और जिन्हों ने उन का धर्म्म नहीं ग्रहन किया उन्हों ने भी उन का बड़ा आदर किया।

किसी विशेष रोग के कारण इन का मृत्यु नहीं हुआ। पितृ वियोग का शोक ही इन की मृत्यु का मुख्य कारण है। कहते हैं कि महात्मा महम्मद के मृत्यु के पीछे फातमा शोक से अत्यन्त विह्वल रहीं किसी भांति भी इन का बोध नहीं होता था, रात दिन रोती थी और वारम्वार मूर्छित हो जाती थीं एक दिन उन्हों ने कुछ स्वप्न देखा और मृत्यु के हेतु प्रस्तुत होकर अपने प्रिय स्वामी आत्मीय अली को बुला कर कहा " कल पितृदेव को स्वप्न में देखा है जैसे वह चारो ओर नेत्र फैला कर किसी के मार्ग की प्रतीक्षा कर रहे हैं हम ने कहा पिता ! तुमारे विच्छेद से हमारा हृदय विदग्ध और शरीर अत्यन्त जीर्ण हो रहा है उन्हों ने उत्तर दिया पुत्री ! हम भी तो मार्ग ही देख रहे हैं फिर हम ने ऊंचे स्वर से कहा पिता ! आप किस का मार्ग देख रहे हैं तब उन्हों ने कहा कि तुम्हारा मार्ग देख रहे हैं पुत्री फातमा ! हमारा तुमारा वियोग बहुत दिन रहा इस्से तुमारे बिना अब हमारे प्राण व्याकुल है तुमारे शरीर त्याग का समय उपस्थित है अब तुम अपनी आत्मा को शरीर सम्पर्क शून्य करो इस निकृष्ट संकीर्णजगत का परित्याग करके उस प्रसारितउन्नत देदीप्यमान आनन्दमयजगत में गृहस्थापन करो संसार रूपी क्लेश कारागार से छुट कर नित्यसुखमयपरलोक उद्यान की ओर यात्रा करो फ़ातिमा ! जब तक तुम न आओगी तब तक हम नहीं जायगें हम ने कहा पिता ! हम भी तुम्हारी दर्शनार्थी हैं तुम्हारी सहवास सम्पत्ति लाभ करें यही हमारी भी आकांक्षा हैं इस पर उन्हों ने कहा तो फिर विलम्ब मत करो कलही हमारे पास आओ इस के पीछे हमारी नींद खुली, अब उस उन्नत लोक में जाने के लिये हमारा हृदय व्याकुल है हम को निश्चय है कि आज सांझ या पहर रात तक हम इस लोक का त्याग करेंगे हमारे पीछे तुम अत्यन्त शोकाकुल रहोगे इससे जिस्से हमारे सन्तान भूखे न रहें हम आज रोटी कर के रख देते हैं और पुत्र कन्या का वस्त्र भी धो देते हैं हमारे पीछे यह कौन करेगा इस हेतु हम आप ही इन कामों से छुट्टी कर रखते हैं हमारे अभाव में हमारे प्यारे पुत्रों को कौन प्यार करेगा ? हमारी इच्छा थी कि

आज इन का सिर सवारें परन्तु हम को सन्देह है कि कल कोई उन के मुंह की धूल भी न झारेगा "।

अली यह सुन कर अत्यन्त शोकाकुल होकर रोने लगे और कहा कि फातिमा! तुम्हारे पिता के वियोग से हृदय में जो क्षत है वह अब तक पूरा नहीं हुआ और उन महात्मा के चरण दर्शन बिना जो शोक है वह किसी प्रकार से नहीं जाता इस पर तुम्हारा वियोग भी उपस्थित हुआ यह आघात पर आघात और विपत्ति पर विपत्ति पड़ी, फातिमा ने कहा अली! उस विपत्ति में धैर्य किया है और इस में भी करो, इस क्षण में एक मुहूर्त भर भी हम से अलग मत रहो हमारे श्वास वायु अवसान का समय निकट है नित्यधाम में हम तुम फिर मिलेंगे यह प्रतिज्ञा रही।

बीबी फातिमा यह कहती थीं और हसन हुसैन के मुख की ओर देख कर दीर्घ श्वास के साथ अश्रुवर्षन करती जाती थीं। माता की यह बात सुन कर हसन हुसैन भी रोने लगे। फातिमा ने कहा प्यारे बच्चों! थोड़ी देर के वास्ते तुम लोग मातामह के समाधि उद्यान में जाओ और हमारे हेतु प्रार्थना करो वे लोग माता के आज्ञानुसार चले गये, फातिमा तब बि-छौने पर लेट गईं और अली से कहा प्रिय! तुम पास बैठो बिदा का समय उपस्थित है अली बैठे और शोक से रोने लगे, तब फातिमा ने आसमा नाम की दासी को बुला कर कहा कि अन्न प्रस्तुत रक्खो हमारे प्यारे हसन हुसैन आकर भोजन करेंगे जब वे घर आवें तब उन लोगों को अमुक स्थान पर बैठाना और भोजन कराना उनको हमारे निकट मत आने देना क्योंकि हमारी अवस्था देख कर वे घबड़ायंगे आसमा ने वैसा ही किया, इधर फा-तिमा ने अली से कहा हमारा सिर तुम अपनी गोद में ले बैठो अब जीवन में केवल कुछ क्षण बाकी हैं, अली ने कहा फातिमा! तुम्हारी ऐसी बातें हम नहीं सुन सकते, फतिमाने उत्तर दिया अली! पथ खुला है हम प्रस्थान कर-होंगे और मन अत्यन्त शोकाकुल है और तुम से कुछ कहना भी अवश्य है हमारी बात सुनो और हमारे वियोग का शर्बत बाध्य होकर पान करो अली फतिमा का सिर गोद में लेकर बैठे फातिमा ने नेत्र खोल कर अली के मुख की ओर देखा उस समय अली के नेत्रों से आंसू के बूंद फातिमा के मुख पर टपकते थे अली को रोते देख कर फातिमा ने कहा नाथ! यह रोने का समय नहीं है अवकाश बहुत थोड़ा है अन्तिम कथा सुन लो अली

ने कहा कहो क्या कहती हो ? फातिमा ने कहा हमें चार बात कहनी है, पहली यह कि हम तुमारे संग बहुत दिन तक रहे यदि हम से कोई अपराध हुआ हो तो क्षमा करो अली रोने लगे और बोले कभी तुम ने आज तक कोई ऐसी बात हो नहीं किया जो हमारे प्रतिकूल हो प्यारी ! तुम तो सर्व्वदा हमारी मनोरञ्जनी रहीं भूल कर भी तुम ने हम को कोई कष्ट नहीं दिया तुमने सब आपत्ति अपने ऊपर सहन किया परन्तु हम को दुख न दिया तुम उपकारणी थीं अपकारणी नहीं तुम को हम ने कोमल पुष्पमाला की भांति अपने हृदय पर धारण किया कण्टक की भांति नहीं। बोलो और बोलो और कौन बात है फातिमा ने कहा दूसरे यह कि हमारे प्यारे हसन हुसैन की रक्षा करना जिस लाड़ प्यार और राव चाव से हमने उन को पाला है उसमें कुछ न्यूनता न हो उनकी सब अभिलाषा पूरी करना तीसरे यह कि हमारे शव को रात्र को भूमिशायी करना क्योंकि जीवन दशा में जैसे पर पुरुष की दृष्टि हमारे शरीर पर नहीं पड़ी है वैसाही पीछे भी हो चौथे हमारी समाधि पर कभी २ आजाना इतने में हसन हुसैन भी आगए और माता की यह अवस्था देख कर बहुत रोने लगे फातिमा ने किसी प्रकार समझा कर फिर बाहर भेजा और दासी को बुला कर बीबी फातिमा* ने स्नान किया और एक धौत वस्त्र परिधान करके एक निर्जन ग्रह में दक्षिण पार्श्व से शयन करके ईश्वर का स्मरण करने लगीं इसी अवस्था में उन्हों ने परलोक गमन किया।

आदरणीय अली की मृत्यु का समाचार।

परम धार्म्मिक सुप्रसिद्ध अली मुसलमान धर्म्म के प्रवर्त्तक हजरत महम्मद के जामाता और शीआ सम्प्रदाय के पहिले एमाम (आचार्य) थे। हजरत महम्मद के लोकान्तर गमन पीछे मुसलमान धर्म्म की स्थिति और उन्नति अली केही ऊपर निर्भर थी। जैसे भक्तिभाजन ईसा को उनके शिष्य जूडाने त्रिंशत मुद्रा के लोभ से शत्रुहस्त में सम्पर्ण करके वध किया था वैसेही इबनुमुलज़म

* इफताम अरबी में बच्चे को दूध से छुड़ाने को कहते हैं, इनका फातिमा नाम इसी हेतु पड़ा था कि छोटेपनही में इन की माता की मृत्यु हुई थी।

नामक एक व्यक्ति ने एक दुश्चारिनी नारी के प्रलोभन में उसकी कुमंत्रना से स्वीय धर्म्माचार्य अली को स्वयं करवालाघात से निहत किया यह उससे भी भयंकर व्यापार है। इवनसुलज़म के भाव चरित्र की चंचलता देखकर पहिल ही उसके ऊपर अली का संदेह हुआ था। एक दिन इवन सुलज़म ने अली को एक उत्कृष्ट सामग्री उपहार दी थी, अली उस उपहार के प्रति अनादर प्रदर्शने करके बोले कि हम तुमारे इस उपढौकन ग्रहण में नहीं प्रस्तुत हैं तुम परिनाम में हमको जो उपढौकन प्रदान करोगे उसके लिए हम विशेष चिन्तित हैं। इसके कुछ दिन पीछे अली शिष्य सम्भलीकसाथकूफ़ानगर में उपस्थित हुए। वहां इवन् सुलजम ने कुत्तामा नाम की एक दुश्चरित्रा विधवा युवती के सौंदर्य से मुग्ध होकर उससे परिनय अभिलाषा प्रगट की। कुत्तामाने उसको प्रलोभन जाल में आवद्ध करके कहा हमारा तीन पण हैं सो पूर्ण करने से हम तुम्हारे साथ व्याह में सम्मत हैं। एक सहस्र दिरहम (ताम्रमुद्रा विशेष) एक जन सुगायिका सुन्दरी दासी और मुहम्मद के जामता अली का वध साधन। यह सुनकर इवन् सुलज़म बोला। पहिला पण दोनों कठिन नहीं हैं वह संसाधन कर सकेंगे, किन्तु तीसरा पण गुरुतर है इसके संसाधन में हम अक्षम हैं। कुत्तामा बोली शेषोक्तपणही सब में प्रधान है, अली हमारे पितृकुल का शत्रु है, उसका प्राणसंहार बिना किए कोई भांति विवाह नहीं हो सकता है। दुरात्मा एवन सुलज़म उसका सुदृढ़ पण देख कर उसमें भी सम्मत हुआ। एवं विषाक्त तीक्ष्ण करवाल के द्वारा गुरु को हत्या करने का सुयोग देखने लगा। एक दिन निशीथ समय में अली कूफाकी जामा मसजिद के दरवाजे पर खड़े होकर नमाज में प्रवृत्त हैं उस समय सुयोग समझ कर अतर्कित भाव से उसने अली के सिर में एक आघात किया। अली आघात पाकर चिल्ला कर भूतल शायी हुए। शोनित स्रोत से मसजिद प्लावित हो गई। उनके आहत मस्तक से मस्तिष्क उद्भिन्न हो कर गिरा। दुरात्मा इवन् सुलज़म उसी क्षण धृत हो कर बन्दी हुआ। पीछे उस ने दुष्कर्म का समुचित प्रतिफलभोग किया। अली ने दो दिवस बिष की विषम यन्त्रना भोग करके बन्धु बर्ग को शोक सागर में मग्न करके परलोक गमन किया। मृतत्र काल में स्वीय प्रियतम पुत्र हसन को यह अनुमति दिया कि हमारा देह निशीथ समय में किसी निभृत स्थान में निहित करना वही कार्य में परिणत हुआ। जब हसन पितृदेह भूमि निहित करके लौटते

थे उस समय एक व्यक्ति का रोने का शब्द सुन पड़ा, वह क्रन्दन का लच्च करके वहां उपस्थित हुए देखा कि एक दरिद्र अन्ध वृद्ध आकुल होकर रो रहा है, हसन ने रोने का कारन पूछा तो वह बोला कि प्रतिदिन रात को एक महापुरुष आकर हम को आहार देते थे और सुमिष्ट वचन से परितोष करते थे। आज तीन दिन से वह नहीं आते हैं, और वह मधुर वचन नहीं सुनने पाते हैं, हम अनाहार हैं। हसन ने पूछा, उन का नाम क्या है। अन्धा बोला उन्हीं ने हम को अपना परिचय नहीं दिया। परिचय पूछने से वह कहते थे, हमारे परिचय से तुम्हारा कोई प्रयोजन नहीं है तुम हमारी सेवा ग्रहण करो। उन का कंठस्वर ऐसा था, वह अल्ला अल्ला की सदा ध्वनि करते थे। हसन अन्धे की बात से जान गए कि वह महापुरुष उन के पिता थे। तब अश्रुपात करके बोले, कि आज वह महात्मा परलोक सिधारे हैं। अभी उन की अन्त्ये- ष्टि क्रिया समाधान करके हम चले आते हैं। वृद्ध यह सुनकर शोक से मू- र्छित हो गिर पड़ा। पीछे रोते रोते बोला तुम लोग हम को अनुग्रह करके उन की पवित्र समाधि भूमि में ले चलो। हसन हाथ पकड़ कर वृद्ध को वहां ले गए। वृद्ध ने वहां शोक और अनाहार से प्राण त्याग किया।

एक दिन किसी विपथगामी ईश्वर विरोधी व्यक्ति ने परम प्रेमिक अली से पूछा था कि, हे ज्ञानवान् अली! गृह चढ़ा और उच्च प्रासादशिखर पर भी ईश्वर तुमारे रक्षक हैं यह तुम स्वीकार करते हो? अली बोले "हां, शैशव में यौवन में सर्वक्षण सर्वस्थान में वह हमारे प्राण के रक्षक हैं।" यह बात सुनकर वह बोला, तुम अपने को इस अट्टालिका पर से गिरा कर ईश्वर तुम को रक्षा करते हैं इस विश्वास की पूर्णता प्रदर्शन करो, तब तुमारे वि- श्वास का हम विश्वास करेंगे और तुमारी ईश्वर निष्टा प्रमाण युक्त होगी। तब अली बोले, चुप रहो और चले जाओ और स्पर्धा करके जीवन को क- लंकित मत करो। मनुष्य की क्या साध्य है कि ईश्वर को परीक्षा में बुलावे। केवल उन को परीक्षा करने का अधिकार है, वह प्रति मुहूर्त्त में मनुष्य के निकट परीक्षा उपस्थित करते हैं। वह हम लोगों के पास हैं, । हम लोग क्या हैं वह प्रकाश कर देते हैं। अन्तर में हम लोग किस भांति धर्म्म भाव रखते हैं वह दिखला देते हैं। कौन मनुर्ष्य ईश्वर को ऐसी बात कह सकता है कि यह सब पाप अपराध करके हम ने तुम्हारी परीक्षा किया। हे ईश्वर! देखें तुमारी कितनी सहिष्णुता है। हा! ऐसा कहने का किस को अधिकार

है। तुमारी बुद्धि अत्यन्त दुष्ट हुई है। तुमारी यह उक्ति सब पापों से बढ़कर है। जो यह सुविशाल नभोमण्डलकारचयिता है, उस को तुम परीक्षा कर-ने क्या जानो ? तुम अपना शुभाशुभ तो जानते ही नहीं हो। पहिले अपनी परीक्षा करो, पीछे दूसरे की परीक्षा करना पथ प्रदर्शक अग्रगामी गुरू को जो शिष्य परीक्षा करता है वह मूर्ख हैं। जिस को तुम ने परीक्षक किया है हे अविश्वासी यदि उन्हीं को धर्म्म मार्ग में तुम परीक्षा करो तो तुमारी दुः-साहसिकता और मूर्खता प्रकाश होगी। तुम ईश्वर की क्या परीक्षा करोगे ? धूलिकणिका क्या पर्वत की परीक्षा कर सकती है ? मनुष्य अपने बुद्धिगत अनुमान से तुला यन्त्र प्रस्तुत करके ईश्वर को उस में स्थापन करने जाता है किन्तु ईश्वर बुद्धि के अनायत्त हैं उन के द्वारा बुद्धिनिर्मित परिमाण यन्त्र चूर्ण हो जाता है। ईश्वर की परीक्षा करना और उन को आयत्त करना एक-ही है। तुम एतादृश महाराज को आयत्त करने की चेष्टा मत करो, चित्रित वस्तु किस प्रकार से चित्रकार की परीक्षा करेगा। उन के असीम ज्ञान में जो सब चित्र विद्यमान हैं उन के पास परिदृश्यमान विश्वचित्र क्या पदार्थ है। जब परीक्षा ग्रहण की कुबुद्धि के द्वारा तुम आक्रान्त होते हो, तब जा-नना तुम को संहार करने के लिए दुर्भाग्य उपस्थित हुआ है। अकस्मात् ईश्वर में ऐसी कुबुद्धि उपस्थित हो तो भूमिष्ठ प्रणत होना। भूमि को शोकाश्रु स्रोत से अभिषिक्त करना और कहना हे ईश्वर ! इस कुचिन्ता से हमारी रक्षा करो। तब परम परीक्षक ईश्वर तुम को रक्षा करेंगे।

—०—

इमाम हसन और इमाम हुसैन।

महात्मा मुहम्मद के जन्म का समाचार पूर्व में लिखा जा चुका है। इन को १८ सन्तति हुई किन्तु वंश किसी के आगे नहीं चला केवल बीबी फा-तिमा को वंश हुआ। यह बीबी फातिमा आदरणीय अली से व्याही थीं। जब तक यह जीती थीं और विवाह आदरणीय अली ने नहीं किया केवल इन्हीं को अली मान कर इन्हीं के मुखपंकज के अली बने रहे। बीबी फातिमा को पांच सन्तति हुई, तीन पुत्र हसन हुसैन और मुहसिन, और जैनब और उम्म कुलसूम यह दो बेटियां थीं। इन में मु सिन छोटे पन ही में मरगए। अली ने बीबी फातिमा के मरने के पीछे उमुलनबीन से विवाह

किया उससे चार पुत्र अब्बास जाफर उस्मान और अबदुल्लाह उत्पन्न हुए जो चारो अपने भाई इमाम हुसैन के साथ करबला में वीर गति को गए इन में से अब्बास की सन्तति चली तीसरी स्त्री कैसी उससे अबदुल्लाह और अबूबकर यह दोनों भी करबला में मारे गए। चौथी स्त्री इसमानित से मुहम्मद और यहिया दो पुत्र हुए। इन चारो की सन्तति नहीं है। पांचवीं स्त्री सहबाई से उमर और रकिया जिन में से उमर की सन्तति है। छठवीं स्त्री अम्मामा इन को मुहम्मद मध्यम नामक पुत्र हुआ किन्तु आगे सन्तति नहीं। सातवीं स्त्री इनकी खूला है जिनके पुत्र बड़े मुहम्मद हुए जिन का वंश वर्त्तमान है। आदरणीय अली को इन बेटों के सिवा चौदह बेटियां भी हुईं। इन सब से इमामहसन इमामहुसैन अब्बास मुहम्मद और उमर का वंश है जिनमें इमामहसन और इमामहुसैन का सन्तति सैयद कहलाती है और शेष तीनों की साहबजादों के नाम से पुकारी जाती है। किन्तु शीया लोगों में अनेक इमाम हसन के वंश को भी सैयद नहीं कहते हैं और कहते हैं कि ठीक सैयद केवल इमाम जनलाबदीन (इमाम हुसैन के मध्यम पुत्र) का वंश है। आदरणीय अली सब के पहिले मुसल्मान हुए और दहिनी भुजा की भांति महात्मा मुहम्मद के सदा सहायक रहे। इन्ही अली के पुत्र इमाम हुसैन थे जिन का दुष्टों ने करबला में वध किया, जिसका हम क्रम से वर्णन करते हैं।

महात्मा मुहम्मद के [६३२ ई०] मृत्यु के पीछे अबूबकर [६३२ ई०] खलीफा हुए और उनके पी उमर [६३४ ई०] और फिर उसमान [६४४ ई०] इस में कुछ सन्देह नहीं कि महात्मा मुहम्मद पीछे उनके सब शिष्यों का धन और देश और शासन के लोभ ने ऐसा घेर लिया था कि सब धर्म्म को भूल गए थे। केवल आड़ के वास्ते धर्म्म था। यद्यपि उपद्रव तो मुहम्मद महात्मा की मृत्यु के साथ ही हुआ किन्तु तीसरे खलीफा (महन्त] के काल से उपद्रव बढ़ गया। यह हम पक्षपात छोड़ कर कह सकते हैं कि ऐसे घोर समय में आदरणीय अली ने बड़ा सन्तोष प्रकाश किया था। शाम (Asia minor) के लोग इन सब उपद्रवों की जड़ थे। उन में भी कूफा के सन् ६५६ में इन उपद्रवियों ने उसमान महन्त का व्यर्थ वध किया, और आदरणीय अली को खलीफा बनाया। यही समय मुहर्रम के अन्याय की जड़ है। उसमान खलीफा के समय में महात्मा मुहम्मद के निज शिष्यों में एक मनुष्य

मआविया [जो इनका गोत्रज भी था] नामक शाम और मिसर आदि देशों में गवर्नर था। जब अली खलीफा हुए तो इस मआविया ने चाहा कि उन को जय करके आप खलीफा हों। यहां तक कि अनेक युद्धों में मुसलमानों पर अपना अधिकार जमाता गया। सन् ६६१ में पांच बरस खलीफा रह कर अली एक दुष्ट के हाथ से मारे गए इनके पीछे इनके बड़े पुत्र और महात्मा मुहम्मद के नाती इमाम हसन खलीफा हुए किन्तु मआविआने इन को भी अपने राज्य लोभ से भांति २ का कष्ट देना आरम्भ किया। उस समय के लोग ऐसे क्रूर लोभी और दुष्ट थे कि धर्म्म छोड़ कर लोभ से बहुत मआविया से मिल गए और अपने परमाचार्य्य की एकमात्र सन्तति हसन हुसैन को दुःख देने लगे। इमाम हसन यहां तक दुःखी हुए कि चार लाख साल पिनशन पर निराश हो कर खिलाफत से बाज आए। कुछ ऊपर छ महीने मात्र ये खलीफा थे। किन्तु इस पिनशन के देने में भी मआविआ बड़ी देर और हुज्जत करता रहा। यहां तक कि सन् ४६ हिजरी [६७० ई०] में मुआविआ के पुत्र यजीद ने इमाम हसन को एक दुष्ट स्त्री जादा के द्वारा उन को विष दिलवाया। कहते हैं कि दो बेर पहिले भी इस दुष्टा स्त्री ने इस लोभ से कि वह यजीद की स्त्री होगी इमाम को विष दिया था किन्तु तीसरी बार का विष ऐसा था कि उससे प्राण न बच सके और इस असार संसार को छोड़ गए। पन्द्रह पुत्र और ८ कन्या इनको हुई थीं। अब लोग इन दुष्टों के धर्म्म को देखें कि साक्षात् परमाचार्य्य ईश्वर प्रिय 'बरञ्च ईश्वर तुल्य' अपने गुरू की सन्तति और गुरु पुत्र और स्वयं श्री गुरु उसका इन लोगों ने कैसे आनन्द से बध किया।

इमाम हसन के मरने पीछे यजीद बहुत प्रसन्न हुआ और अपने राज्य को निष्कण्टक समझने लगा। अब केवल इन लोगों की दृष्टि में इमाम हुसैन बचे जो कि रात दिन खटकते थे क्योंकि धर्म्मी और श्रद्धालु लोग इनके पक्ष पाती थे। मुआविया और उस के साथी लोग अब इस सोच में हुए कि किसी प्रकार इन को भी समाप्त करो तो निर्द्वन्द राज्य हो जाय। सन् ४८ के अन्त में मुआविया मर गया और यजीद नारकी मुसलमानों का महन्त हुआ। यह मद्यप परस्त्री गामी और बेईमान था इसी हेतु इस के महन्त अपने से अनेक लोगों ने अप्रसन्नता प्रकट की मक्के और मदीने के सभ्य और अनेक प्राचीन लोग उस के धर्म्म शासन से फिर गए और अनेक लोग नगर छोड़

छोड़ कर दूर जा बसे। इमाम हुसैन का तो मानो वह शत्रु ही था मदीना के हाकिम को लिख भेजा कि या तो इमाम हुसेन हमारा शिष्यत्व स्वीकार करें या उन का सिर काट लो। मदीने के हाकिम ने यह हत्त इमाम हुसैन से कहा और उन पर अधिकार जमाने को नाना प्रकार की उपाधी करने लगा। यह विचारे दुखी होकर अपने नाना और मा की समाधि पर विदा होने गए और रो रो कर कहने लगे कि नाना तुम्हारे धर्म्म के लोग निरपराध हुसैन को कष्ट देते हैं, हसन को विष दे कर मार चुके पर अभी इन को सन्तोष नहीं हुआ तुम्हारे एक मात्रपुत्र और उत्तराधिकारी दीन हुसैन को महन्ती का पद त्याग करने पर भी यह लोग नहीं जीता छोड़ा चाहते। इसी प्रकार अनेक बिलाप करके अपनी मा और भाई के समाधी पर से भी बिदा हुए और अपनी सपत्नी नानियों और सम्बन्धियों से बिदा हो कर मक्के की ओर चले। इसी समय कूफा के लोगों ने इमाम को एक पत्र लिखा उस में उन लोगों ने लिखा कि "हम लोग यजीद मद्यप के धर्म्म शासन से निकल चुके हैं आप यहां आइएं आप ही वास्तव में हमारे गुरु हैं हम लोग आप के चरण के शरण में रहेंगे और प्राण पर्य्यन्त आप से अलग न होंगे। इस बात को हम शपथ करते हैं।" इस पत्र पर कूफा के हजारों मुख्य के हस्ताक्षर थे। इस पत्र को पाकर इमाम ने कूफा जाना चाहा, उन के बन्धुओं ने उन से बहुत कहा कि कूफि के लोग झूठे होते हैं आप उन का विश्वास न कीजिए पर उन के ईश्वर की शपथ खानेपर विश्वास करके इमाम ने किसी का कहना न सुना और अपने मक्का की यात्रा को समय अपने चचेरे भाई मुसलिम को कूफियों के पास भेजा कि उन को मक्का से लौटती समय इमाम के कूफा आने का सम्बाद पहिले से दें। इन को इधर भेज कर आप बन्दना के हेतु मक्के चले। मुसलिम जब कूफि में पहुंचे तो इन का वहां के लोगों ने बड़ा शिष्टाचार किया और इमाम हुसैन के गुरुत्व का सब ने स्वीकार किया यह देख कर इन्हों ने इमाम को पत्र लिखा कि आप निश्शङ्क कूफा आइए यहां के लोग सब आप के दासानुदास हैं और तीसहजार आदमियों ने आप को गुरु माना है। इस पत्र के विश्वास पर इमाम हुसैन कूफि की ओर और भी निश्चिन्त हो कर चले और बान्धवों का वाक्य स्वीकार न किया किन्तु शोच की बात है कि बिचारे मुसलिम वहां मारे जा चुके थे कारण यह हुआ कि यजीद ने जब सुना कि कूफा में मुसलिम इमाम हुसैन का आचार्य्यत्व चला रहे हैं तो उस ने वहां

के हाकिम को बदल दिया और अबीदुल्लाह जियाद नन्दन को हाकिम बनाया और आज्ञा भेजा कि हुसैन को बकरे की भांति जिबह करो और मुसलिम को तो जाते ही मार डालो। जब जियाद पुत्र शाम का हाकिम हुआ तो मुसलिम के पकड़ने की फिक्र में हुआ। पहिले तो कूफे के लोग मुसलिम के साथ उस के मकान पर चढ़ गए परन्तु जब उस ने उन लोगों को धमकाया और लालच दिया तो एक एक करके सब मुसलिम का साथ छोड़ कर चले गए और मुसलिम बिचारे भाग कर एक घर में जा छिपे। परन्तु लोगों ने उन को वहां भी जाने न दिया और पकड़ लाए और इबने जियाद की आज्ञा से उन का सिर काटा गया और उन का साथी हानी भी मारा गया बरञ्च उन के दो लड़कों को भी मार डाला। महात्मा मुसलिम मरने के समय यही कहते थे कि मुझे अपने मरने का कष्ट नहीं क्योंकि सत्य मार्ग स्थापन में मेरे प्राण जाते हैं मुझे शोच यही है कि मेरे पत्र के विश्वास पर इन कृतघ्नी और विश्वास घाती कूफा वालों के विश्वास पर इमाम हुसैन यहां चले आवेंगे और उन महापुरुष के साथ भी ये का पुरुष कुपुरुष यही व्यवहार करेंगे और आचार्य मुहम्मद की सन्तान को निरपराध ये लोग बध कर डालेंगे। हाय उन के भाई मुसलिम कूफे में यों अनाथ की भांति मारे गये यह हुसैन को नहीं मालूम था और वे मंजिल मंजिल इधर ही बढ़े आते थे। यहां तक कि जब शाम के हाते के भीतर पहुंच चुके तब उन्हीं ने मुसलिम का मरना सुना। उस समय आपने अपने साथ के लोगों से कहा कि भाई अब सब लोग तुम अपने देस को लौट जाओ हम तो प्राण देने जाते हैं। उस समय वे सब लोग जो अरब से साथ आए थे प्राण के भय से अपने सच्चे स्वामी को छोड़ कर चले गये यहां तक कि हजारों की जमात में केवल ७२ मनुष्य साथ रह गए। जब इन लोगों के साथ इमाम सरलफ नामक स्थान पर पहुंचे तो हुर नामी अबीदुल्लाल का सेनापति दो हजार सिपाहियों के साथ मिला और वह इन लोगों को घेर कर शाम की तरफ बढ़ता हुआ ले चला इस समय इमाम ने फिर सब लोगों को जाने को कहा परन्तु अब तो वे लोग साथ थे जो सच्चे बन्धु थे। ऐसे कठिन समय में कौन साथ छोड़ कर जा सकता था। इसी समय शाम से और भी फौजें आने लगी इमाम ने उन लोगों को बहुत समझाया और कहा कि हम यजीद के राज्य के बाहर चले जांय किन्तु किसी ने उन की बात न सुनी। जब इमाम का डेरा करबला

नामक स्थान में पड़ा था उस समय शिमर नामक इबने जियाद के सेनापति ने फ़ुरात नहर का पानी भी इन पर बन्द कर दिया। एक तो गरमी के दिन दूसरे सफर की गरमी और उस पर यह आपत्ति कि पानी बन्द। शिमर और उमर इस लश्कर में मुख्य थे। यदि इन में से किसी को कभी दया और धर्म्म सूझता भी लोभ उसे हटा देता। कहते हैं कि यजीद हिमदानी ने साद से जाकर इमाम के वास्ते पानी मांगा और कहा कि क्या तुम को ईश्वर को मुंह नहीं दिखलाना है जो अपने गुरुपुत्र को निरपराध बध करते हो। इस के उत्तर में उस दुष्ट ने कहा कि हम रे को हाकिमी को धर्म से अच्छी समझते हैं। अन्त में अबीदुल्लाह ने सादपुत्र को आज्ञा लिखा कि क्यों इतनी देर करते हो या तो हुसैन का सिर लाओ या उन को यजीद के मत में लाओ। इस आज्ञा के अनुसार (सन् ६१ हिजरी के) ८ वीं मुहर्रम को संध्या को अट्ठाईस हजार सेना से उमर ने इमाम का लश्कर घेर लिया। इमाम उस समय संध्या की बन्दना में थे। उठ कर सेना से कहा कि रात भर की मुहि और फ़ुरसत दो उमर ने इस बात को माना। इमाम ने साथ के लोगों से कहा कि अब अच्छा है चले जाओ और मेरे पीछे प्राण मत दो। परन्तु किसी ने न माना और सब मरने को उद्यत हुए। रात भर सब लोग ईश्वर की स्तुति करते रहे। सबेरे इमाम ने स्त्रियों को धैर्य्य और सन्तोष का उपदेश दिया और आप ईश्वर का स्मरण करते हुए सब हथियार बांधकर अपने साथियों के साथ मरने को निकले। इन के साथ जितने लोग मारे गए उन की संख्या बहत्तर है। इन में ३२ सवार और ४० पैदल थे। सरदारों में मुसलिम बिन उनका जरंगाम:, वहब उनुस, मालिक, हुज्जाज, जहीर, असदी, आमिर, उस्मग, उमरान, शईद यसर, शूदब, और हबीब इबनें मजाहिर (एक वृद्ध मनुष्य) थे और इमाम के नातेदारों में इन की बहिन जैनब के दो लड़के मुहम्मद और उन, और तीन मुसलिम के भाई, पांच इमाम हुसैन के बिमात्र भाई अब्बास, उसमान, मुहम्मद अबदुल्लाह और जाफ़र और तीन पुत्र इमाम हसन के अबदुल्लाह जैद और क़ासिम। (किसी के मत से ५ अबूबकर और उम्र भी) और एक पुत्र इमाम हुसैन के अली अकबर (अठारह बरस के) इतने मनुष्य थे। युद्ध होने के पूर्व इमाम एक ऊंट पर बैठ कर सेना के सामने आए और मृदु और गम्भीर स्वर से बोले कि हम ने किसी की स्त्री छीनी या किसी का धन हरण किया या कोई और बात धर्म्म

विरुद्ध की किस बात पर तुम लोग हम को निरपराध बध करते हो। इसका उत्तर किसी ने न दिया तब इमाम यह कह कर ऊंट पर से उतरे कि हम ने संसार में तुम से हुज्जत समाप्त कर ली अब ईश्वर के यहां हमारा तुम्हारा झगड़ा है और घोड़े पर सवार हुए। युद्ध आरम्भ हुआ और बड़ी बीरता से इन के साथी सब मारे गए। अन्त में इमाम अपने एक छोटे बच्चे को जो प्यास से व्याकुल हो रहा था उन लोगों के सामने लाए और कहा कि इस नौ महीने के बच्चे पर दया करके केवल इस के पीने को तो पानी दो। इस के उत्तर में उन दुष्टों में से एक ने ऐसा तीर मारा कि वे वह बच्चा वहीं मर गया। और फिर चारो ओर से घेर कर हजारों वार लोगों ने किए यहां तक कि वे घोड़े पर से गिरे। उस समय किसी ने उनका सिर काटा किसी ने मरे पर भाला मारा किसी ने हाथ की उंगली नोची इस पर भी इन लोगों को सन्तोष न हुआ और उन लोगों के मरे शरीर पर घोड़े दौड़ाए। हाय! इतने बड़े मनुष्य की यह गति भूख प्यास से दुखी और दीन मनुष्य को निरपराध बाल बच्चे समेत स्त्रियों के सामने मारना इन्हीं लोगों का काम है उस पर भी गुरु पुत्र को।

इति

नंबर	नाम	बाप का नाम	मा का नाम	जन्म का समय	अवस्था
१	मुहम्मद	अबदुल्लाह	अमीना	१२ रबीउलअौवल५२ हिजरी के पूर्व	६३
२	फातिमा	मुहम्मद	खदीजा	६०४ ईसवी	२८
३	अली	अबीतालिब	फातिमा असद की बेटी	५९९ ईसवी ११ रजब मक्के में	६२
४	हसन	अली	फातिमा	१५ शाबानसन २ हिजरी ६१५ ई०	४५॥
५	हुसैन	अली	फातिमा	५ शाबानसन ४ हिजरी ६२६ ई०	५१ वर्ष ५ महीना ५ दिन
६	अबूबकर	अबीकुहाफ़	उमउल खैर	५७१ ईसवी	६३
७	उमर	खिताब	खुतमा	५८२ ईसवी	६३
८	उसमान	अफ़ान	अरदी	५७५ ईसवी	८२
९	इमामजैनलाबदीन	इमामहुसेन	शहरबान (नौशेरवां से पांचवीं	३६ हिजरी	५८
१०	इमामबाकर	हुसैन के पुत्र अली	उम्मे अबदुल्लाह ई हसनकी बेटी	५८ हिजरी	६२
११	इमामजाफर सादिक	बाकर	उम्मे फरदा अबुबकर की पोती	८० वा ८३ हिजरी	६७

मृत्यु का समय	सन्तति	गाड़े जाने का स्थान	विशेष विवरण
१२ रबीउलअो० ६३१ ईसवी ११ हिजरी	४ पुत्र ४ कन्या	मदीना	बहु देववादी भूतपिशाचोपासी अरब जाति में इन्हो ने एकेश्वर वादस्थापन कर के मुसलमानी मत चलाया ग्यारह विवाह किए० बुद्धि आश्चर्य कौशल सम्पन्न थे० किसी के मत में १४ विवाह १८ सन्तति०
११ हिजरी	३ पुत्र २ कन्या	मदीना	महात्मा मुहम्मद की एक मात्र वंश रखने वाली प्यारी कन्या थी० स्वभाव बहुत नम्र और दयालु था०
४० हिजरी १९ रमजान	१७ पुत्र वा १९ १७ कन्या	कूफा० नजफ ठीक नहीं मालूम	सुन्नियों के चौथे खलीफा० शीयाओंके पहले इमाम० पांच बरस तीन महीना खिलाफत किया० माता और पिता दोनों सम्बन्ध में यह म० मुहम्मद के बहुत पास थे अर्थात् चचेरे और मौसेरे भाई थे० यह सैयदों के वंशकर्त्ता और फकीरों के मूल गुरु हैं० नौ विवाह किए थे
१ रबीउलअौवल ४९ हिजरी ६७० ईसवी	१९ पुत्र और ८ कन्या	मदीना	सुन्नियों के पांचवें खलीफा तथा शीआओं के दूसरे इमाम थे० छ महीना खिलाफत किया० विष के शहीद हुए० पांच पुत्रों का कवंश है०
१० महर्रम ६१ हिजरी ६८३ ई०	६ पुत्र और ८कन्या	करबला	शीआओं के तीसरे इमाम० करबला के प्रसिद्ध युद्ध में शहीद हुए०
१३ हिजरी ६३४ ईसवी	३ पुत्र ३ कन्या	मदीना	सुन्नियों के पहले खलीफा थे० महात्मा मुहम्मद के पीछे २ बरस तीन महीना खलीफा रहे० महात्मा मुहम्मद की छोटी स्त्री आयशा के पिता थे० चार स्त्री थी० और मुसलमानी धर्म्म फैलाने को इन्हों ने बहुत सा द्रव्य व्यय किया था०
२३ हिजरी ४४ ईसवी	९ पुत्र ३ कन्या	मदीना	दूसरे खलीफा थे० १० बरस आठ महीने खलीफा रहे० शहीद हुए० छ पत्नी और दो उपपत्नी थी०
३५ वा ३४ हि० ६५२ ई०	३ पुत्र ४ कन्या	मदीना	तीसरे खलीफा थे० १२ बरस खलीफा रहे० इनको महात्मा मुहम्मद की दो बेटियां व्याही थीं किन्तु उनकी सन्तति नहीं थी० आठस्त्रीथी पूर्व्वोक्त तीनों खलीफाकीसन्ततिशेखकहलातेहैं,
९४ हिजरी।	९ पुत्र ८ कन्या	मदीना	शीआ लोग केवल इन्हो की सन्तति को सैयद मानते हैं०
११८ वा ११७ हिजरी	११ पुत्र ४ कन्या	मदीना	
१४८	६ पुत्र ३ कन्या	मदीना	

नम्बर	नाम	बाप का नाम	मा का नाम	जन्म का समय	अवस्था
१२	इमाम मूसाकाज़िम	जाफर	हमीदा	१२८ हिजरी	४५ वा ५५
१३	अलीरज़ा	मूसाकाज़िम	तकीम	१५३ हिजरी	४९४
१४	अबूजाफरनकी	अली	रहीना	१९५ हिजरी	२५
१५	अबुलहसनअसकरी-तकी	नका	समाना	२१४ हिजरी	४०
१६	अबूमहमूमद	असकरी	सौसन	२३२ हिजरी	२८
१७	अबुलकासिमसिहदी	अबूमुहम्मकी	नरगिस	२५५ हिजरी	०
१८	द०अबुहनीफा	साबित		८०	७०
१९	इमाममालिक	उन्स	उमउलमहसिनइमाम-हसनकीपरपोतीकीबेटी	९५	८४
२०	इमामशफई	इदरीस		१५०	५४
२१	इमामजम्मल	मुहम्मद		१६५	७६
२२	इमामगौस आज़म	अबासालिहइ-मामहसनबीरात	फातिमाउमउलखेरइ-मामहसनकेवंशमें	४७०	९१

मृत्यु का समय	सन्तति	गाड़े जाने का स्थान	विशेष विवरण
१८३	२ पुत्र १ कन्या	बुगदाद	शीआ कहते हैं कि सुन्नियों के उपद्रवमें घरव छोड़ कर चले गये० किन्तु सुन्नी कहते हैं. उस कालके खलीफा बगदाद में रहते थे इससेआदरके हेतु इनको भी वहीं बुला कर० बसाया० ये बड़े भारी वंशकर्त्ता हुए हैं०
२०३	८ पुत्र १२ कन्या	बुगदाद	शीआ मत का विशेष प्रचार किया० किन्तु सुन्नी लोग कहते हैं कि ये लोग भी सब सुन्नी थे।
२२०	५ पुत्र १ कन्या	बुगदाद	
२५४	२ पुत्र ९ कन्या	सरमनराय	
२६०	२ पुत्र १ कन्या	सरमनराय	
२६७	१ पुत्र	बुगदाद	शीआओं के मत से ९ वर्ष की अवस्था में पर्वत गुहा में चले गए फिर प्रलय के समय निकलैंगे० सुन्नियों के मत से अभी जन्म ही नहीं हुआ प्रलय में पैदा होंगे०
१५०	०	मदीना	
१७९	०	मिस्र	नं० १८ से २१ तक ये सुन्नी मत के चार इमाम हैं शीआ इनको नहीं मानते० ये चारो पृथक मत के प्रवर्त्तक हैं यथा हानिफी मालिकी शाफई और हम्बली०
२०४	०	बुगदाद	अकबर के वंश के बादशाह हानिफा थे० दत्तात्रेय की भांति अबूहनीफा ने अनेक गुरू किए थे० जिन में इमाम जाफर भी थे०
२४२	७	बुगदाद	सुन्नियों में इन्ही चारों की चार मुख्य मत शाखा हैं० ये क्रमसे एकके दूसरे शिष्य भी थे०
५६१	७	बुगदाद	सुन्नियों में ये एक प्रसिद्ध इमाम हुए हैं हसनी हुसैनी सैयद थे और बड़े भारी विद्वान और सिद्ध थे० शीआ लोग इन को नहीं मानते हैं बरंच सैयद भी नहीं कहते०
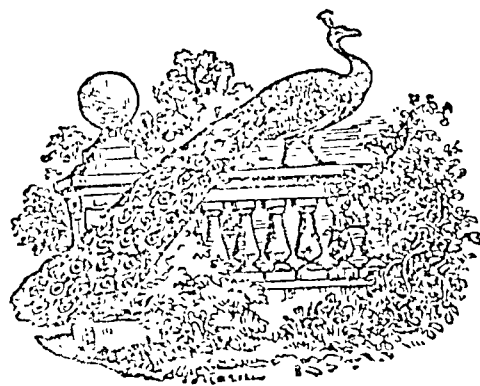
दिल्ली दरबार दर्प्पण

अर्थात्

श्रीमती राजराजेश्वरी के पट्टाभिषेक उत्सव में मिलित दिल्ली के महत् दरबार का सविशेष बर्णन

और

राजालोगों के सलामी की शोधी हुई नई फिहरिस्त ।

जयति राज राजेश्वरी , जय युवराज कुमार ।
जय नृप प्रतिनिधि कर्ज़न , जय दिल्ली दरबार ॥ १ ॥
स्नेह भरन तम हरन दोउ , प्रजन करन उजियार ।
भयो देहली दीप सो , यह देहली दरबार ॥ २ ॥

THE

DELHI ASSEMBLEGE MEMORANDUM.

दिल्ली दरबार दर्पण ।

सब राजाओं की मुलाकातों का हाल अलग २ लिखना आवश्यक नहीं क्योंकि सब के साथ वही मामूली बातें हुईं। सब बड़े २ शासनाधिकारी राजाओं को एक २ रेशमी झंडा और सोने का तगमा मिला। झंडे अत्यन्त सुन्दर थे। पीतल के चमकीले मोटे २ डंडों पर राजराजेश्वरी का एक एक मुकुट बना था और एक २ पटरी लगी थी जिस पर झंडा पाने वाले राजा का नाम लिखा था, और फरहरे पर जो डंडे से लटकता था स्पष्ट रीति पर उन के शस्त्र आदि के चिन्ह बने हुए थे। झंडा और तगमा देने के समय श्रीयुत वाइसराय ने हरएक राजा से ये वाक्य कहे :-

" मैं श्रीमती महारानी की तरफ़ से यह झंडा ख़ास आप के लिये देता हूं जो उन के हिन्दुस्तान की राजराजेश्वरी की पदवी लेने का यादगार रहेगा। श्रीमती को भरोसा है कि जब कभी यह झंडा खुलेगा आप को उसे देखते ही केवल इसी बात का ध्यान न होगा कि इंगलिस्तान के राज्य के साथ आप के ख़ैरख़ाह राजसी घराने का कैसा दृढ़ सम्बन्ध है बरन यह भी कि सरकार की यह बड़ी भारी इच्छा है कि आप के कुल को प्रतापी, प्रारब्धी और अचल देखे। मैं श्रीमती महारानी हिन्दुस्तान की राजराजेश्वरी की आज्ञानुसार आप को यह तगमा भी पहनाता हूं। ईश्वर करे आप इसे बहु.. दिन तक पहिनें और आप के पीछे यह आप के कुल में बहुत दिन तक रह कर उस शुभ दिन की याद दिलावे जो इस पर छपा है। "

शेष राजाओं को उन के पद के अनुसार सोने या चांदी के केवल तगमे ही मिले। किलात के ख़ां को भी झंडा नहीं मिला पर उन्हें एक हाथी जिस पर ४००० की लागत का हौदा था, जड़ाऊ गहने, घड़ी, कारचोबी कपड़े, कमख़ाब के थान वग़ैरह सब मिला कर २५००० की चीज़ें तुहफ़े में मिलीं। यह बात किसी दूसरे के लिये नहीं हुई थी। इस के सिवाय जो सरदार उन के साथ आए थे उन्हें भी ख़िलअतों में लगा कर दस हज़ार

रुपये की चीज़ें दी गईं। प्राय: लोगों को इस बात के जानने का उत्साह होगा कि खां का रूप और वस्त्र कैसा था। निस्सन्देह जो कपड़ा खां पहने थे वह उन के साथियों से बहुत अच्छा था तौभी उन को या उन के किसी साथी की शोभा उन मुग़लों से बढ़कर न थी जो बाज़ार में मेवा लिये घूमा करते हैं, हां कुछ फ़र्क़ था तो इतना था कि लम्बी गम्भिन दाढ़ी के कारण खां साहिब का चिहरा बड़ा भयानक लगता था। इन्हें झंडा न मिलने का कारण यह समझना चाहिये कि यह बिल्कुल स्वतन्त्र हैं। इन्हें आने और जाने के समय श्रीयुत वाइसराय ग़लीचे के किनारे तक पहुंचा गए थे पर बैठने के लिये इन्हें भी वाइसरायके चबूतरे के नीचे वही कुरसी मिली थी जो और राजाओं को। खां साहिब के मिज़ाज में रूखापन बहुत है। एक प्रतिष्ठित बंगाली इन के डेरे पर मुलाक़ात के लिये गए थे। खां ने पूछा क्यों आए हो? बाबू साहिब ने कहा आप की मुलाक़ात को। इस पर खां बोले कि अच्छा आप हम को देख चुके और हम आप को, अब जाइये।

बहुत से छोटे २ राजाओं की बोल चाल का ढंग भी जिस समय वे वाइसराय से मिलने आए थे संक्षेप के साथ लिखने के योग्य है। कोई तो दूर ही से हाथ जोड़े आए, और दो एक ऐसे थे कि जब एडिकांग के बदन झुका कर इशारा करने पर भी उन्हों ने सलाम न किया तो एडिकांग ने पीठ पकड़ कर उन्हें धीरे से झुका दिया। कोई बैठ कर उठना जानते ही न थे यहां तक कि एडिकांग को "उठो" कहना पड़ता था। कोई झंडा, तगमा, सलामी और ख़िताब पाने पर भी एक शब्द धन्यवाद का नहीं बोल सके और कोई बिचारे इन में से दो ही एक पदार्थ पा कर ऐसे प्रसन्न हुए कि श्रीयुत वाइसराय पर अपनी जान और माल निछावर करने को तैयार थे। सब से बढ़ कर बुद्धिमान हमें एक महात्मा देख पड़े जिन से वाइसराय ने कहा कि आप का नगर तो तीर्थ गिना जाता है पर हम आशा करते हैं कि आप इस समय दिल्ली को भी तीर्थ ही के समान पाते हैं। इस के जवाब में वह बेधड़क बोल उठे कि यह जगह तो सब तीर्थों से बढ़कर है जहां आप हमारे "खुदा" मौजूद हैं। नौवाब लुहारू की भी अंगरेज़ी में बात चीत सुन कर ऐसे बहुत कम लोग होंगे जिन्हें हंसी न आई हो। नौवाब साहिब बोलते तो बड़े धड़ाके से थे पर उसी के साथ क़ायदे और मुहावरे के भी खूबहाथ पांव तोड़ते थे। कितने वाक्य ऐसे थे जिन के कुछ अर्थ ही नहीं ह

सकते पर नौवाब साहिब को अपनी अंगरेज़ी का ऐसा कुछ बिश्वास था कि अपने मुंह से केवल अपने ही को नहीं बरन अपने दोनों लड़कों को भी अंगरेज़ी, अरबी, ज्योतिष, गणित आदि ईश्वर जाने कितनी विद्याओं का पंडित बखान गए। नौवाब साहिब ने कहा कि हम ने और रईसों की तरह अपनी उमर खेल कूद में नहीं गंवाई बरन लड़कापन ही से विद्या के उपार्जन में चित्त लगाया और पूरे पंडित और कवि हुए। इस के सिवाय नौशाब साहिब ने बहुत से राजभक्ति के वाक्य भी कहे। वाइसराय ने उत्तर दिया कि हम आप को अंगरेज़ी विद्या पर इतना मुबारकबाद नहीं देते जितना अंगरेज़ों के समान आप का चित्त होने के लिये। फिर नौवाब साहिब ने कहा कि मैंने इस भारी अवसर के वर्णन में अरबी और फ़ारसी का एक पद्य ग्रन्थ बनाया है जिसे मैं चाहता हूं कि किसी समय श्रीयुत को सुनाऊं। श्रीयुत ने जवाब दिया कि मुझे भी कविता का बड़ा अनुराग है और मैं आप सा एक भाई-कवि (Brother-poet) देख कर बहुत प्रसन्न हुआ, और आप की कविता सुनने के लिये कोई अवकाश का समय अवश्य निकालूंगा।

२८ तारीख़ को सब के अन्त में महारानी तंजौर वाइसराय से मुलाक़ात को आईं। ये तास का सब वस्त्र पहने थीं और मुंह पर भी तास का नक़ाब पड़ा हुआ था। इस के सिवाय उन के हाथ पांव दस्ताने और मोज़े से ऐसे ढके थे कि सब के जी में उन्हें देखने की इच्छा ही रह गई। महारानी के साथ में उन के पति राजा सखाराम साहिब और दो लड़कों के सिवाय उन की अनुवादक मिसेस फ़र्थ भी थीं। महारानी ने पहले आकर वाइसराय से हाथ मिलाया और अपनी कुर्सी पर बैठ गईं। श्रीयुत वाइसराय ने उन के दिल्ली आने पर अपनी प्रसन्नता प्रगट की और पूछा कि आप को इतनी भारी यात्रा में अधिक कष्ट तो नहीं हुआ। महारानी अपनी भाषा की बोलचाल में बेगम भूपाल की तरह चतुर न थीं इस लिये ज़ियादा बातचीत मिसेस फ़र्थ से हुई जिन्हें श्रीयुत ने प्रसन्न हो कर "मनभावनी अनुवादक" कहा वाइसराय की किसी बात के उत्तर में एक बार महारानी के मुंह से "यस" निकल गया जिस पर श्रीयुत ने बड़ा हर्ष प्रगट किया कि महारानी अंगरेज़ी भी बोल सकती हैं, पर अनुवादक मेम साहिब ने कहा कि वे अंगरेज़ी में दो चार शब्द से अधिक नहीं जानतीं।

इस वर्णन के अन्त में यह लिखना अवश्य है कि श्रीयुत वाइसराय लोगों

से इतनी मनोहर रीत पर बात चीत करते थे जिस से सब मगन हो जाते थे और ऐसा समझते थे कि वाइसराय ने हमारा सब से बढ़ कर आदर सत्कार किया। भेंट होने के समय श्रीयुत ने हर एक से कहा कि आप से दोस्ती करके हम अत्यन्त प्रसन्न हुए, और तगमा पहिनाने के समय भी बड़े स्नेह से उन की पीठ पर हाथ रखकर बात की ।

१ जनवरी को दरबार का महोत्सव हुआ ।

यह दरबार जो हिन्दुस्तान के इतिहास में सदा प्रसिद्ध रहेगा एक बड़े भारी मैदान में नगर से पांच मील पर हुआ था। बीच में श्रीयुत वाइसराय का षट्कोण चबूतरा था जिस की गुम्बदनुमा छत पर लाल कपड़ा चढ़ा और सुनहला रुपहला तथा शीशे का काम बना था। कंगुरे के ऊपर कलसे की जगह श्रीमती राजराजेश्वरी का सुनहला मुकुट लगा था । इस चबूतरे पर श्रीयुत अपने राजसिंहासन में सुशोभित हुए थे। उन के बगल में एक कुरसी पर लेडी साहिब बैठी थीं और ठीक पीछे खवास लोग हाथों में चंवर लिये और श्रीयुत के ऊपर कारचोबी छत्र लगाए खड़े थे। वाइसराय के सिंहासन के दोनों तरफ़ दो पेज (दामन बरदार) जिन में एक श्रीयुत महाराज जम्बू का अत्यन्त सुन्दर सब से छोटा राजकुमार, और दूसरा कर्नल बर्न का पुत्र था; खड़े थे, और उन के दहने बाएं और पीछे मुसाहिब और सेक्रिटरी लोग अपने २ स्थानों पर खड़े थे। वाइसराय के चबूतरे के ठीक सामने कुछ दूर पर उस से नीचा एक अर्धचंद्राकार चबूतरा था जिस पर शासनाधिकारी राजा लोग और उन के मुसाहिब, मदरास और बम्बई के गवरनर, पंजाब, बंगाल और पश्चिमोत्तर देश के लेफ्टेनेन्ट गवरनर, और हिन्दुस्तान के कमान्डरिनचीफ़ अपने २ अधिकारियों समेत सुशोभित थे। इस चबूतरे की छत बहुत सुन्दर नीले रंग के साटन की थी जिस के आगे लहरियादार छज्जा बहुत सजीला लगा था। लहरिये के बीच २ में सुनहले काम के चांद तारे बने थे। राजाओं की कुरसियां भी नीली साटन से मढ़ी थी और हर एक के सामने वे झंडे गड़े थे जो उन्हें वाइसराय ने दिये थे, और पीछे अधिकारियों की कुरसियां लगी थीं जिन पर भी नीली साटन चढ़ी थीं । हर एक राजा के साथ एक २ पोलिटिकल अफ़सर भी था। इन के सिवाय गवरमेन्ट के भारी २ अधिकारी भी यहीं बैठे थे। राजा लोग अपने २ मान्तों के अनु-

सार बैठाए गए थे जिस से ऊपर नीचे बैठने का बखेड़ा बिल्कुल निकल गया था। सब मिला कर ६३ शासनाधिकारी राजाओं को इस चबूतरे पर जगह मिली थी जिन के नाम नीचे लिखे हैं,

महाराज अजयगढ़, बड़ोदा, बिजावर, भरतपुर, चरखारी, दतिया, ग्वालियर, इन्दौर, जयपुर, जम्बू, जोधपुर, करौली, किशुनगढ़, पन्ना, मैसूर, रीवां, उर्छा; महारानाउदयपुर; महाराव राजा अलवर, बूंदी; महाराज राना झलावर; राना धौलपुर; राजा बिलासपुर, बमरा, बिरौंदा, चम्बा, छतरपुर, देवास, धार, फ़रीदकोट, जींद, खरौंद, कूचबिहार, मन्डी, नाभा नाहन, राजपीपला, रतलाम, समथर, सुकेत, टिहरी; रावा जिगनी टोरी; नौवाब, टोंक, पटौदी, मलेरकोटला, लुहारू, जूनागढ़, जौरा, दुजाना, बहावलपुर; जागीरदार, अलीपुरा; बेगम भूपाल; निज़ाम हैदराबाद; सरदार कलसिया; ठाकुर साहिब भावनगर, सुर्वी, पिपलोदा; जागीरदार पालदेव; मोर खैरपुर; महन्त कोंदका, नन्दगांव; और जाम नवानगर ।

वाइसराय के सिंहासन के पीछे परन्तु राजसी चबूतरे की अपेक्षा उस से अधिक पास धनुषखण्ड के आकार की दो श्रेणियां चबूतरों की और बनी थीं जो दस भागों में बांट दी गई थीं । इन पर आगे की तरफ़ थोड़ी सी कुरसियां और पीछे सीढ़ीनुमा बेन्चें लगी थीं जिन पर नीला कपड़ा मढ़ा था यहां ऐसे राजाओं को जिन्हें शासन का अधिकार नहीं है और दूसरे सरदारों, रईसों, समाचारपत्रों के सम्पादकों और यूरोपीयन तथा हिन्दुस्तानी अधिकारियों को जो गवरमेन्ट के नेवते में आए थे या जिन्हें तमाशा देखने के लिये टिकट मिले थे बैठने को जगह दी गई थी। ये ३००० के अनुमान होंगे। क़िलात के खां, गोआ के गवरनर जेनरल, बिदेशी राजदूत, बाहरी राज्यों के प्रतिनिधि समाज और अन्यदेश सम्बन्ध कान्सल लोगों की कुरसियां भी श्रीयुत वाइसराय के पीछे सरदारों और रईसों की चौकियों के आगे लगी थीं।

दरबार की जगह के दक्खिन तरफ़ १५००० से ज़ियादा सरकारी फ़ौज हथियार बांधे लैस खड़ी थी, और उत्तर तरफ़ राजा लोगों की सजीली पलटनें भांत २ की वरदी पहने और चित्र विचित्र शस्त्र धारण किये परा बांधे खड़ी थीं। इन सब को शोभा देखने से काम रखती थी। इस के सिवाय राजा लोगों के हाथियों के परे जिन पर सुनहली अमारियां कसी थीं

और कारचोबी झूलें पड़ी थीं, तोपों की क़िताऱें, सवारों की नंगी तलवारों और भालों की चमक. फरहरों का उड़ना, और दो लाख के अनुमान तमाशा देखने वालों की भीड़ जो मैदान में ठटी थी ऐसा समा दिखलाती थी जिसे देख जो जहां था वहीं हक्का बक्का हो खड़ा रह जाता था। वाइसराय के सिंहासन के दोनों तरफ हाइलेन्डर लोगों का गार्ड आव आनर और बाजेवाले थे, और शासनाधिकारी राजाओं के चबूतरे पर जाने के जो रास्ते बाहर की तरफ़ थे उन के दोनों ओर भी गार्ड आव आनर खड़े थे । पौने बारह बजे तक सब दरबारी लोग अपनी अपनी जगहों पर आ गए थे। ठीक बारह बजे श्रीयुत वाइसराय की सवारी पहुंची और धनुष्खंड आकार के चबूतरों की श्रेनियों के पास एक छोटे से खेमे के दरवाजे पर ठहरी । सवारी के पहुंचते ही बिलकुल फ़ौज ने शस्त्रों से सलामी उतारी पर तोपें नहीं छोड़ी गईं । खेमे में श्रीयुत ने जाकर स्टार आव इन्डिया के परम प्रतिष्ठित पद के ग्रांड मास्टर का वस्त्र धारण किया। यहां से श्रीयुत राजसी छत्र के तले अपने राजसिंहासन की ओर बढ़े । श्रीलेडीलिटन श्रीयुत के साथ थीं और दोनों दामनबरदार बालक जिन का हाल ऊपर लिखा गया है पीछे दो तरफ़ से दामन उठाए हुए थे। श्रीयुत के आगे २ उन के स्टाफ़ के अधिकारी लोग थे। श्रीयुत के चलते ही बन्दीजन [हेरल्ड लोगों] ने अपनी तुरहियां एक साथ बहुत मधुर रीत पर बजाईं और फौजी बाजे से ग्रान्ड मार्च बजने लगा। जब श्रीयुत राजसिंहासनवाले मनोहर चबूतरे पर चढ़ने लगे तो ग्रान्ड मार्च का बाजा बन्द हो गया और नेशनल ऐन्थेम अर्थात् [गाडसेव दि क्वीन—ईश्वर महारानी को चिरंजीव रक्खे] का बाजा बजने लगा और गार्डस आव आनर ने प्रतिष्ठा के लिये अपने शस्त्र झुका दिये। ज्योंही श्रीयुत राजसिंहासन पर सुशोभित हुए बाजे बन्द हो गए और सब राजा महाराज जो वाइसराय के आने के समय खड़े हो गए थे बैठ गए । इस के पीछे श्रीयुत ने मुख्यबन्दी [चीफ़ हेरल्ड] को आज्ञा की कि श्रीमती महारानी के राजराजेश्वरी की पदवी लेने के विषय में अंगरेजी में राजाज्ञापत्र पढ़ो। यह आज्ञा होते ही बन्दीजनों ने जो दो पांतों में राज्य सिंहासन के चबूतरे के नीचे खड़े थे तुरही बजाई और उस के बंद होने पर मुख्य बंदी ने नीचे की सीढ़ी पर खड़े होकर बड़े ऊंचे स्वर से राजाज्ञापत्र पढ़ा जिस का उल्था यह है ;—

महारानी विक्टोरिया ।

ऐसी अवस्था में कि हाल में पार्लमेन्ट की जो सभा हुई उन में एक ऐक्ट पास हुआ है जिस के द्वारा परम कृपालु महारानी को यह अधिकार मिला है कि यूनाइटेड किंगडम और उस के आधीन देशों की राजसम्बन्धी पदवियों और प्रशस्तियों में श्रीमती जो कुछ चाहें बढ़ा लें और इस ऐक्ट में यह भी वर्णन है कि ग्रेट ब्रिटन और आयरलैण्ड के एक में मिल जाने के लिये जो नियम बने थे उन के अनुसार भी यह अधिकार मिला था कि यूनाइटेड किंगडम और उस के आधीन देशों की राजसम्बन्धी पदवी और प्रशस्ति इस संयोग के पीछे वही होगी जो श्रीमती ऐसे राजाज्ञापत्र के द्वारा प्रकाश करेंगी जिस पर राज की मुहर छपी रहे और इस ऐक्ट में यह भी वर्णन है कि ऊपर लिखे हुए नियम और उस राजाज्ञापत्र के अनुसार जो १ जनवरी सन १८०१ को राजसी मुहर होने के पीछे प्रकाश किया गया हम ने यह पदवी ली "विक्टोरिया ईश्वर की कृपा से ग्रेट ब्रिटन और आयरलैण्ड के संयुक्त राज की महारानी स्वधर्म रक्षिणी," और इस ऐक्ट में यह भी वर्णन है कि उस नियम के अनुसार जो हिन्दुस्तान के उत्तम शासन के हेतु बनाया गया था हिन्दुस्तान के राज का अधिकार जो उस समय तक हमारी ओर से ईस्ट इण्डिया कम्पनी को सपुर्द था अब हमारे निज अधिकार में आ गया और हमारे नाम से उसका शासन होगा इस नये अधिकार की हम कोई विशेष पदवी लें, और इन सब वर्णनों के अनन्तर इस ऐक्ट में यह नियम सिद्ध किया गया है कि ऊपर लिखी हुई बात के स्मरण निमित्त कि हम ने अपने मुहर किये हुए राजाज्ञापत्र के द्वारा हिन्दुस्तान के शासन का अधिकार अपने हाथ में ले लिया हम को यह योग्यता होगी कि यूनाइटेड किंगडम और उस के आधीन देशों की राजसम्बन्धी पदवियों और प्रशस्तियों में जो कुछ उचित समझें बढ़ा लें इस लिये अब हम अपने प्रिवी काउन्सिल की सम्मति से योग्य समझकर यह प्रचलित और प्रकाशित करते हैं कि आगे को, जहां सुगमता के साथ हो सके, सब अवसरों में और सम्पूर्ण राजपत्रों पर जिन में हमारी पदवियां और प्रशस्तियां लिखी जाती हैं, सिवाय सनद, कमिशन, अधिकारदायक पत्र, दानपत्र, आज्ञापत्र, नियोगपत्र, और इसी प्रकार के दूसरे पत्रों के जिन का प्रचार यूनाइटेड किंगडम के बाहर नहीं है, यूनाइ-

टेड किंगडम और उस के आधीन देशों की राजसम्बन्धी पदवियों में नीचे लिखा हुआ वाक्य मिला दिया जाय, अर्थात लैटिन भाषा में "इन्डिई एम्प-रेट्रिक्स" [हिन्दुस्तान की राज राजेश्वरी] और अंगरेजी भाषा में "एम्प्रेस आव इन्डिया"। और हमारी यह इच्छा और प्रसन्नता है कि उन राजसम्बन्धी पत्रों में जिन का वर्णन ऊपर हुआ है यह नई पदवी न लिखी जाय। और हमारी यह भी इच्छा और प्रसन्नता है कि सोने चाँदी और तांबे के सब सिक्के जो आज कल यूनाइटेड किंगडम में प्रचलित हैं और नीतिविरुद्ध नहीं गिने जाते और इसी प्रकार तथा आकार के दूसरे सिक्के जो हमारी आज्ञा से अब छापे जायंगे हमारी नई पदवी लेने से भी नीतिविरुद्ध न समझे जायंगे, और जो सिक्के यूनाईटेड किंगडम के आधीन देशों में छापे जायंगे और जिन का वर्णन राजाज्ञापत्र में उन जगहों के नियमित और प्रचलित द्रव्य करके किया गया है और जिन पर हमारी सम्पूर्ण पदवियां या प्रशस्तियां या उन का कोई भाग रहे, और वे सिक्के जो राजाज्ञापत्र के अनुसार अब छापे और चलाए जायेंगे इस नई पदवी के बिना भी उस देश के नियमित और प्रचलित द्रव्य समझे जायंगे जब तक कि इस विषय में हमारी कोई दूसरी प्रसन्नता न प्रगट की जायगी।

हमारी विन्डसर की कचहरी से २८ अपरैल को एक हजार आठ सौ छिहत्तर के सन में हमारे राज के उनतालीसवें बरस में प्रसिद्ध किया गया।

ईश्वर महारानी को चिरंजीव रक्खे!

जब चीफ़ हेरल्ड राजाज्ञापत्र को अंगरेज़ी में पढ़ चुका तो हेरल्ड लोगों ने फिर तुरतही बजाई। इस के पीछे फ़ारिन सेक्रिटरी ने उर्दू में तर्जुमा पढ़ा। इस के समाप्त होतेही बादशाही झंडा खड़ा किया गया और तोपखाने से जो दरबार के मैदान में मौजूद था १०१ तोपों की सलामी हुई। चौंतीस २ सलामी होने के बाद बंदूकों की बाढ़ें दग़ीं और जब १०१ सलामियां तोपों से हो चुकीं तब फिर बाढ़ छूटी और नैशनल ऐन्थेम का बाजा बजने लगा।

इसके अनन्तर श्रीयुत वाइसराय समाज को अड्रेस करने के अभिप्राय से खड़े हुए। श्रीयुत वाइसराय के खड़े होतेही सामने के चबूतरे पर जितने बड़े २ राजा लोग और गवरनर आदि अधिकारी थे खड़े हो गए पर श्रीयुत ने बड़े ही आदर के साथ दोनों हाथों से हिन्दुस्तानी रीत पर बाईं

दार सलाम का को सब से बैठ जाने का इशारा किया। यह काम श्रीयुत का जिस से इन लोगों की छाती दूनी हो गई पायोनीयर सरीखे अंगरेज़ी समाचारपत्रों के सम्पादकों को बहुत बुरा लगा जिन की समझ में वाइसराय का हिन्दुस्तानी तरफ़ पर सलाम करना बड़े ढिठाई और लज्जा की बात थी। खैर यह तो इन अंगरेज़ी अख़बारवालों की मामूली बातें हैं। श्रीयुत वाइसराय ने जो उत्तम अड्रेस पढ़ा उस का तर्जुमा हम नीचे लिखते हैं:—

सन १८५८ ईसवी की १ नवम्बर को श्रीमती महारानी की ओर से एक इश्तिहार जारी हुआ था जिस में हिन्दुस्तान के रईसों और प्रजा को श्रीमती की कृपा का विश्वास कराया गया था जिस को उस दिन से आज तक वे लोग राजसम्बन्धी बातों में बड़ा अनमोल प्रमाण समझते हैं।

वे प्रतिज्ञा एक ऐसी महारानी की ओर से हुई थीं जिन्हों ने आज तक अपनी बात को कभी नहीं तोड़ा, इस लिये हमें अपने मुंह से फिर उन का निश्चय कराना व्यर्थ है। १८ बरस की लगातार उन्नति ही उन को सत्य करती है और यह भारी समागम भी उन के पूरे उतरने का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इस राज के रईस और प्रजा जो अपनी २ परम्परा की प्रतिष्ठा निर्विघ्न भोगते रहे और जिन को अपने उचित लाभों की उन्नति के यत्न में सदा रक्षा होती रही उन के वास्ते सरकार की पिछले समय की उदारता और न्याय आगे के लिये पक्की ज़मानत हो गई है।

हम लोग इस समय श्रीमती महारानी के राजराजेश्वरी की पदवी लेने का समाचार प्रसिद्ध करने के लिये इकट्ठे हुए हैं, और यहां महारानी के प्रतिनिधि होने की योग्यता से मुझे अवश्य है कि श्रीमती के उस कृपायुक्त अभिप्राय को सब पर प्रगट करूं जिस के कारण श्रीमती ने अपने परम्परा की पदवी और प्रशस्ति में एक पद और बढ़ाया।

पृथ्वी पर श्रीमती महारानी के अधिकार में जितने देश हैं—जिन का बिस्तार भूगोल के सातवें भाग से कम नहीं है, और जिन में तीस करोड़ आदमी बसते हैं—उन में से इस बड़े और प्राचीन राज के समान श्रीमती किसी दूसरे देश पर कृपादृष्टि नहीं रखतीं।

सब जगह और सदा इंगलिस्तान के बादशाहों की सेवा में प्रवीण और परिश्रमी सेवक रहते आए हैं परन्तु उन से बढ़कर कोई पुरुषार्थी नहीं हुए जिन की बुद्धि और बीरता से हिन्दुस्तान का राज सरकार के हाथ लग

और बराबर अधिकार में बना रहा। इस कठिन काम में जिस में श्रीमती की अंगरेज़ी और देसी प्रजा दोनों ने मिलकर भली भांत परिश्रम किया है, श्रीमती के बड़े २ स्नेही और सहायक राजाओं ने भी शुभचिंतकता के साथ सहायता दी है; जिन की सेना ने लड़ाई की मिहनत और जीत में श्रीमती की सेना का साथ दिया है; जिन की बुद्धिपूर्वक सत्यशीलता के कारण मेल के लाभ बने रहे और फैलते गए हैं; और जिन का यहां आज वर्त्तमान होना जो कि श्रीमती के राजराजेश्वरी की पदवी लेने का शुभ दिन है इस बात का प्रमाण है कि वे श्रीमती के अधिकार की उत्तमता में विश्वास रखते हैं और उन के राज में एका बने रहने में अपना भला समझते हैं।

श्रीमती महारानी इस राज को जिसे उन के पुरखों ने प्राप्त किया और श्रीमती ने दृढ़ किया एक बड़ा भारी पैतृक धन समझती हैं जो रक्षा करने और अपने वंश के लिये सम्पूर्ण छोड़ने के योग्य है; और उस पर अधिकार रखने से अपने ऊपर यह कर्त्तव्य जानती हैं कि अपने बड़े अधिकार को इस देश की प्रजा की भलाई के लिये यहां के रईसों के हक़ों पर पूरा २ ध्यान रखकर काम में लावें। इस लिये श्रीमती का यह राजसी अभिप्राय है कि अपनी पदवियों पर एक और ऐसी पदवी बढ़ावें जो आगे सदा को हिन्दुस्तान के सब रईसें और प्रजा के लिये इस बात का चिन्ह हो कि श्रीमती के और उन के लाभ एक हैं और महारानी की ओर राजभक्ति और शुभचिंतकता रखनी उन पर उचित है।

वे राजसी घरानों की श्रेणियां जिन का अधिकार बदल देने और देश की उन्नति करने के लिये ईश्वर ने अंगरेज़ी राज को यहां जमाया, प्रायः अच्छे और बड़े बादशाहों से ख़ाली न थीं परन्तु उन के उत्तराधिकारियें के राज्यप्रबन्ध से उन के राजा के देशों में मेल न बना रह सका। सदा आपस में झगड़ा होता रहा और अंधेर मचा रहा। निबल लोग बली लोगों के शिकार थे और बलवान अपने मद के। इस प्रकार आपस की काट मार और भीतरी झगड़ों के कारण जड़ से हिलकर और निर्जीव होकर तैमूरलंग का भारी घराना अन्त को मिट्टी में मिल गया, और उस के नाश होने का कारण यह था कि उस से पच्छिम के देशों की कुछ उन्नति न हो सकी।

आजकल ऐसी राजनीति के कारण जिस से सब जात और सब धर्म्म के लोगों की समान रक्षा होती है श्रीमती की हर एक प्रजा अपना समय निर्विघ्न

सुख से काट सकती है। सरकार के समभाव के कारण हर आदमी बिना किसी रोक टोक के अपने धर्म के नियमों और रीतों को बरत सकता है। राजराजेश्वरी का अधिकार लेने से श्रीमती का अभिप्राय किसी को मिटाने या दबाने का नहीं है बरन रक्षा करने और अच्छी राह बतलाने का। सारे देश को शीघ्र उन्नति और उस के सब प्रान्तों को दिन पर दिन वृद्धि होने से अंगरेज़ी राज के फल सब जगह प्रत्यक्ष देख पड़ते हैं।

हे अंगरेज़ी राज के कार्यकर्त्ता और सच्चे अधिकारी लोग,—यह आप ही लोगों के लगातार परिश्रम का गुण है कि ऐसे २ फल प्राप्त हैं; और सब के पहले आप ही लोगों पर मैं इस समय श्रीमती की ओर से उन की कृतज्ञता और विश्वास को प्रगट करता हूं। आप लोगों ने इस भारी राज की भलाई के लिये उन प्रतिष्ठित लोगों से जो आप के पहले इन कामों पर नियत थे किसी प्रकार कम कष्ट नहीं उठाया है और आप लोग बराबर ऐसे साहस, परिश्रम और सचाई के साथ अपने तन मन को अर्पण करके काम करते रहे जिस से बढ़कर कोई दृष्टान्त इतिहासों में न मिलेगा।

कीर्त्ति के द्वार सब के लिये नहीं खुले हैं परन्तु भलाई करने का अवसर सब किसी को जो उस को खोज रखता हो मिल सकता है। यह बात प्रायः कोई गवरमेन्ट नहीं कर सकती कि अपने नौकरों के पदों को जल्द २ बढ़ाती जाय, परन्तु मुझे विश्वास है कि अंगरेज़ी सरकार की नौकरी में 'कर्त्तव्य का ध्यान' और 'स्वामी की सेवा में तन मन को अर्पण कर देना' ये दोनों बातें 'निज प्रतिष्ठा' और 'लाभ' की अपेक्षा सदा बढ़कर समझी जायंगी। यह बात सदा से होती आई है और होती रहेगी कि इस देश के प्रबन्ध के बहुत से भारी २ और लाभदायक काम प्रायः बड़े २ प्रतिष्ठित अधिकारियों ने नहीं किये हैं बरन ज़िले के उन अफ़सरों ने जिन की धैर्यपूर्वक चतुराई और साहस पर सम्पूर्ण प्रबन्ध का अच्छा उतरना सब प्रकार आधीन है।

श्रीमती की ओर से राजकाज सम्बन्धी और सेना सम्बन्धी अधिकारियों के विषय में मैं जितनी गुणग्राहकता और प्रशंसा प्रगट करूं थोड़ी है क्योंकि ये तमाम हिन्दुस्तान में ऐसे सूक्ष्म और कठिन कामों को अत्यन्त उत्तम रीत पर करते रहे हैं और करते हैं जिन से बढ़ कर सूक्ष्म और कठिन काम सरकार अधिक से अधिक विश्वासपात्र मनुष्य को नहीं सौंप सकती। हे राज-

काज सम्बन्धी और सेना सम्बन्धी अधिकारियो,—जो कमसिनी में इतने भारी जिम्मे के कामों पर मुक़र्रर होकर बड़े परिश्रम चाहने वाले नियमों पर तन मन से चलते हो और जो निज पौरुष से उन जातियों के बीच राज्य प्रबन्ध के कठिन काम को करते हो जिन की भाषा धर्म और रीतें आप लोगों से भिन्न हैं—मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि अपने कठिन कामों को दृढ़ परन्तु कोमल रीत पर करने के समय आप को इस बात का भरोसा रहे कि जिस समय आप लोग अपने जाति की बड़ी कीर्त्ति को थामे हुए हैं और अपने धर्म के दयाशील आज्ञाओं को मानते हैं उसी के साथ आप इस देश के सब जाति और धर्म के लोगों पर उत्तम प्रबन्ध के अनमोल लाभों को फैलाते हैं।

उस पच्छिम की सभ्यता के नियमों को बुद्धिमानी के साथ फैलाने के लिये जिस से इस भारी राज का धन बराबर बढ़ता गया हिन्दुस्तान पर केवल सरकारी अधिकारियों ही का एहसान नहीं है, बरन यदि मैं इस अवसर पर श्रीमती की उस यूरोपियन प्रजा को जो हिन्दुस्तान में रहती हैं पर सरकारी नौकर नहीं हैं, इस बात का विश्वास कराऊं कि श्रीमती उन लोगों के केवल उस राजभक्ति ही की गुणग्राहकता नहीं करतीं जो वे लोग उन के और उन के सिंहासन के साथ रखते हैं किन्तु उन लाभों को भी जानती और मानती हैं जो उन लोगों के परिश्रम से हिन्दुस्तान को प्राप्त होते हैं तो मैं अपनी पूज्य स्वामिनी के विचारों को अच्छी तरह न वर्णन करने का दोषी ठहरूंगा।

इस अभिप्राय से कि श्रीमती को अपने राज के इस उत्तम भाग की प्रजा को सरकार की सेवा या निज की योग्यता के लिये गुणग्राहकता देखाने का विशेष अवसर मिले श्रीमती ने कृपापूर्वक केवल स्टार आव इन्डिया के परम प्रतिष्ठित पद वालों और आर्डर आव ब्रिटिश इन्डिया के अधिकारियों की संख्या ही में थोड़ी सी बढ़ती नहीं की है किन्तु इसी हेतु एक बिलकुल नया पद और नियत किया है. जो "आर्डर आव दि इन्डियन एम्पायर" कहलावेगा।

हे हिन्दुस्तान की सेना के अंगरेज़ी और देसी अफ़सर और सिपाहियो,—आप लोगों ने जो भारी २ काम बहादुरी के साथ लड़ भिड़ कर सब अवसरों पर किये और इस प्रकार श्रीमती की सेना की युद्धकीर्त्ति को

पासि रहे उस का श्रीमती अभिमान के साथ स्मरण करती हैं। श्रीमती इस बात पर भरोसा रखकर कि आगे को भी सब अवसरों पर आप लोग उसी तरह मिल जुल कर अपने भारी कर्त्तव्य को सचाई के साथ पूरा करेंगे, अपने हिन्दुस्तानी राज में मेल और अमन चैन बनाए रखने का विश्वास का काम आप लोगों ही को सपुर्द करती हैं।

हे वालन्टीयर सिपाहियो,—आप लोगों के राजभक्ति पूर्ण और सफल यत्न जो इस विषय में हुए हैं कि यदि प्रयोजन पड़े तो आप सरकार की नियत सेना के साथ मिलकर सहायता करें इस शुभ अवसर पर हृदय से धन्यवाद पाने के योग्य हैं।

हे इस देश के सरदार और रईस लोग,—जिन की राजभक्ति इस राज के बल को पुष्ट करनेवाली है और जिन की उन्नति इस के प्रताप का कारण है, श्रीमती महारानी आप को यह विश्वास करके धन्यवाद देती हैं कि यदि इस राज के लाभों में कोई विघ्न डाले या उन्हें किसी तरह का भय हो तो आप लोग उस की रक्षा के लिये तैयार हो जायंगे। मैं श्रीमती की ओर से और उन के नाम से दिल्ली आने के लिये आप लोगों का जी से स्वागत करता हूं, और इस बड़े अवसर पर आप लोगों के इकट्ठे होने को इंगलिस्तान के राजसिंहासन की ओर आप लोगों को उस राज राज भक्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण गिनता हूं जो श्रीमान प्रिन्स आव वेल्स के इस देश में आने के समय आप लोगों ने दृढ़ रीत पर प्रकट की थी। श्रीमती महारानी आप के स्वार्थ को अपना स्वार्थ समझती हैं, और अंगरेज़ी राज के साथ उस के कर देने वाले और स्नेही राजा लोगों का जो शुभ संयोग से सम्बन्ध है उस के विश्वास को दृढ़ करने और उस के मेल जोल को अचल करने ही के अभिप्राय से श्रीमती ने अनुग्रह करके वह राजसी पदवी ली है जिसे आज हम लोग प्रसिद्ध करते हैं।

हे हिन्दुस्तान को राज राजेश्वरी के देसी प्रजा लोग,—इस राज की वर्त्तमान दशा और उस के नित्य के लाभ के लिये अवश्य है कि उस के प्रबन्ध को जांचने और सुधारने का मुख्य अधिकार ऐसे अंगरेज़ी अफसरों को सपुर्द किया जाय जिन्हों ने राज काज के उन तत्वों को भली भांत सीखा है जिन का बरताव राजराजेश्वरी के अधिकार स्थिर रहने के लिये अवश्य है। इन्हीं राजनीति जानने वाले लोगों के उत्तम प्रयत्नों से हिन्दुस्तान सभ्यता में

दिन २ बढ़ता जाता है और यही उसके राजकाज सम्बन्धी महत्व का हेतु और नित्य बढ़नेवाली शक्ति का मुख कारण है, और इन्हीं लोगों के द्वारा पच्छिम देश का शिल्प, सभ्यता और विज्ञान, (जिन के कारण आज दिन यूरोप लड़ाई और मेल दोनों में सब से चढ़ बढ़ कर है) बहुत दिनों तक पूरब के देशों में वहां वालों के उपकार के लिये प्रचलित रहेगा ।

परन्तु हे हिन्दुस्तानी लोग ! आप चाहे जिस जाति या मत के हों यह निश्चय रखिये कि आप इस देश के प्रबन्ध में योग्यता के अनुसार अंगरेज़ों के साथ भली भांति काम पाने के योग्य हैं, और ऐसा होना पूरा न्याय भी है, और इंगलिस्तान तथा हिंदुस्तान के बड़े राजनीति जानने वाले लोग और महारानी की राजसी पार्लमेन्ट के व्यवस्थापकों ने बार बार इस बात को स्वीकार भी किया है। गवरनेन्ट आव इण्डिया ने भी इस बात को अपने सन्मान और राजनीति के सब अभिप्रायों के लिये अनुकूल होने के कारण माना है । इसलिये गवरमेन्ट आव इंडिया इन बरसों में हिंदुस्तानियों की कारगुज़ारी के ढंग में, मुख्यकर बड़े २ अधिकारियों के काम में, पूरी उन्नति देख कर संतोष प्रगट करती है ।

इस बड़े राज्य का प्रबन्ध जिन लोगों के हाथ में सौंपा गया है उन में केवल बुद्धि ही के प्रबल होने की आवश्यकता नहीं है बरन उत्तम आचरण और समाजिक योग्यता की भी वैसी ही आवश्यकता है। इस लिये जो लोग कुल, पद, और परम्परा के अधिकार के कारण आप लोगों में स्वाभाविक ही उत्तम हैं उन्हें अपने को और संतान को केवल उस शिक्षा के द्वारा योग्य करना अवश्य है जिस से कि वे श्रीमती महारानी अपनी राजराजेश्वरी की गवरमेन्ट की राजनीति के तत्वों को समझें और काम में ला सकें और इस रीत से उन पदों के योग्य हों जिन के द्वार उन के लिये खुले हैं ।

राजभक्ति, धर्म, अपक्षपात, सतर और साहस देश सम्बन्धी मुख्य धर्म हैं उन का सहज रीत पर बरताव करना आप लोगों के लिये बहुत अवश्य है, और तब श्रीमती की गवरमेन्ट राज के प्रबन्ध में आप लोगों की सहायता बड़े आनन्द से अंगीकार करेगी, क्योंकि पृथ्वी के जिन २ भागों में सरकार का राज है वहां गवरमेन्ट अपनी सेना के बल पर उतना भरोसा नहीं करती जितना कि अपनी सन्तुष्ट और एकजी प्रजा की सहायता पर जो

अपने राजा के वर्त्तमान रहने ही में अपना नित्य मंगल समझकर सिंहासन के चारो ओर जी से सहायता करने के लिये इकट्ठे हो जाते हैं।

श्रीमती महारानी निबल राज्यों को जीतने या आसपास की रियासतों को मिला लेने से हिन्दुस्तान के राज की उन्नति नहीं समझतीं बरन इस बात में कि इस कोमल और न्याययुक्त राजशासन को निरुपद्रव बराबर चलाने में इस देश की प्रजा क्रम से चतुराई और बुद्धिमानी के साथ भागी हो। जो हो उन का स्नेह और कर्त्तव्य केवल अपने ही राज से नहीं है बरन श्रीमती शुद्ध चित्त से यह भी इच्छा रखती हैं कि जो राजा लोग इस बड़े राज की सीमा पर हैं और महारानी के प्रताप की छाया में रहकर बहुत दिनों से स्वाधीनता का सुख भोगते आते हैं उन से निष्कपट भाव और मित्रता को दृढ़ रक्खें। परन्तु यदि इस राज के अमन चैन में किसी प्रकार के बाहरी उपद्रव की शंका होगी तो श्रीमती हिंदुस्तान की राजराजेश्वरी अपने पैटक राज की रक्षा करना खूब जानती हैं। यदि कोई विदेशी शत्रु हिन्दुस्तान के इस महाराज पर चढ़ाई करे तो मानो उस ने पूरब के सब राजाओं से शत्रुता की, और उस दशा में श्रीमती को अपने राज के अपार बल, अपने स्नेही और कर देने वाले राजाओं की वीरता और राजभक्ति और अपनी प्रजा के स्नेह और शुभ चिन्तकता के कारण इस बात की भरपूर शक्ति है कि उसे परास्त करके दंड दें।

इस अवर पर उन पूरब के राजाओं के प्रतिनिधियों का वर्त्तमान होना जिन्हों ने दूर २ देशों से श्रीमती को इस शुभ समारम्भ के लिये बधाई दी है, गवरमेन्ट आव इन्डिया के मेल के अभिप्राय, और आस पास के राजाओं के साथ उस के मित्र का स्पष्ट प्रमाण है। मैं चाहता हूं कि श्रीमती की हिन्दुस्तानी गवरमेन्ट की तरफ़ से श्रीयुत खानक़िलात, और उन राजदूतों को जो इस अवसर पर श्रीमती के स्नेही राजाओं के प्रतिनिधि हो कर दूर २ से अंगरेज़ी राज में आए हैं, और अपने प्रतिष्ठित पाहुने श्रीयुत गवरनर जेनरल गोआ, और बाहरी कान्सलों का स्वागत करूं।

हे हिन्दुस्तान के रईस और प्रजा लोग,—मैं आनन्द के साथ आप लोगों को वह कृपा पूर्वक संदेसा जो श्रीमती महारानी आप लोगों की राजराजेश्वरी ने आज आप लोगों को अपने राजसी और राजेश्वरीय नाम से भेजा है

सुनाता हूं। जो वाक्य श्रीमती के यहां से आज सवेरे तार के द्वारा मेरे पास पहुंचे हैं ये हैं :—

"हम, विक्टोरिया ईश्वर की कृपा से, संयुक्त राज (ग्रेट ब्रिटन और आयरलैंन्ड) की महारानी, हिन्दुस्तान की राजराजेश्वरी, अपने वाइसराय के द्वारा अपने सब राज काज सम्बन्धी और सेनासंबंधी अधिकारियों, रईसों, सरदारों और प्रजा को जो इस समय दिल्ली में इकट्ठे हैं अपना राजसी और राजराजेश्वरीय आशीर्वाद भेजते हैं और उस भारी कृपा और पूर्ण स्नेह का विश्वास कराते हैं जो हम अपने हिन्दुस्तान के महाराज्य की प्रजा की ओर रखते हैं : हम को यह देख कर जी से प्रसन्नता हुई कि हमारे प्यारे पुत्र का इन लोगों ने कैसा कुछ आदर सत्कार किया, और अपने कुल और सिंहासन की ओर उन की राजभक्ति और स्नेह के इस प्रमाण से हमारे जी पर बहुत असर हुआ। हमें भरोसा है कि इस शुभ अवसर का यह फल होगा कि हमारे और हमारी प्रजा के बीच स्नेह दृढ़ और होगा, और सब छोटे बड़े को इस बात का निश्चय हो जायगा कि हमारे राज में उन लोगों को स्वतन्त्रता धर्म और न्याय प्राप्त हैं, और हमारे राज का अभिप्राय और इच्छा सदा यही है कि उन के सुख की वृद्धि, सौभाग्य की अधिकता, और कल्याण की उन्नति होती रहे।"

मुझे विश्वास है कि आप लोग इन कृपामय वाक्यों की गुणग्राहकता करेंगे।

ईश्वर विक्टोरिया संयुक्त राज की महारानी और हिन्दुस्तान की राजराजेश्वरी की रक्षा करे।

इस अड्रेस के समाप्त होते ही नेशनल ऐन्थेम का बाजा बजने लगा और सेना ने तीन बार हुर्रे शब्द की आनन्दध्वनि की। दरबार के लोगों ने भी परम उत्साह से खड़े होकर हुर्रे शब्द और हथेलियों की आनन्दध्वनि करके अपने जी का उमंग प्रगट किया। महाराज सेंधिया, निज़ाम की ओर से सर सालारजंग, राजपुताना के महाराजों की तरफ़ से महाराज जयपुर, बेगम भूपाल, महाराज काश्मीर, और दूसरे सरदारों ने खड़े होकर एक दूसरे को बधाई दी और अपनी राजभक्ति प्रगट की। इस के अनन्तर श्रीयुत वाइसराय ने आज्ञा की कि दरबार हो चुका और अपनी चार घोड़े की गाड़ी पर चढ़कर अपने खेमे को रवाने हुए।

श्रीमती महारानी के राजराजेश्वरी की पदवी लेने के उत्सव में गवरमेन्ट आव इन्डिया ने हिन्दुस्तान के रईसों और साधारण लोगों पर जो अनेक अनुग्रह किये हैं उन्हें हम संक्षेप के साथ नीचे लिखते हैं ।

सलामी

जम्बू, ग्वालियर, इंदौर, उदयपुर और त्रावणकोर के महाराजों की सलामी उन की जिन्दगी भर के लिये १९ के बदले २१ तोप की हो गई, और महाराज जयपुर को १७ से बढ़ कर २१ ।

जोधपुर और रीवां के महाराजों के लिये उन की जिन्दगी भर को १७ से बढ़कर १९ तोप की सलामी हो गई ।

किशुनगढ़ और उर्छा के महाराजों की सलामी उन के जीवन समय के लिये १५ तोप के बदले १७ हो गई, और नौवाब टोंक को ११ से बढ़ कर १७। भूपाल की बेगम के पति और हैदराबाद के शमसुल उमरा नामी दूसरे मंत्री को सलामी नए सिर से १७ तोप की नियत हुई ।

नौवाब रामपुर को सलामी उमर भर के लिये १३ से १५ तोप हुई, और भाव नगर के ठाकुर, नवा नगर के जाम, जूनागढ़ के नौवाब और काठियावाड़ के राजा को ११ से बढ़ कर १५ । आरकट के शहजादे और बेगम भूपाल की सम्बन्धिनी कुदसिया बेगम को १५ तोप की सलमी नए सिर से मुक़र्रर हुई ।

महाराज पन्ना, राजा जींद और राजा नाभा को ११ से १३ तोप की सलामी जिन्दगी भर के लिये हो गई और महारानी तंजोर और महाराज बर्दवान को नए सिर से १३ तोप की सलामी मिली ।

मकला के नक़ीब और शिहर के जमादार को १२ तोप की सलामी उमर भर के लिये मिली ।

मलेरकोटला के नौवाब को सलामी जिन्दगी भर के लिये ९ से ११ हो गई, और मुरवी के ठाकुर साहिब और टिहरी के राजा के लिए नए सिर से ११ तोप की सलामी क़ायम हुई ।

नीचे लिखीहुई जगहों के राजाओं, सरदारों या ठाकुरों को जीवन समय के लिये नए सिर से नौ २ तोप की सलामी मिली—

धरमपुर, भोल, बलरामपुर, बंसडा, बिरोंदा, गोंदाल, जंजीरा, खुरींद,

किशनगढ़, किलरी, औंध, पालिटाना, राजकोट, सुकेत (के सुलतान), सुथील, वाह्वान और बंगानेर ।

यहां यह भी लिखना अवश्य है कि १ जनवरी सन १८७७ से श्रीमती राजराजेश्वरी की आज्ञानुसार उन को सलामी १०१ तोप की और राजकी झंडे तथा हिन्दुस्तान के गवरनर जेनरल की ३१ तोप की नियत हुई ।

नीचे लिखे हुए राजा और अधिकारी लोग "काउन्सिलर आफ़ दि एम्प्रेस" (राजराजेश्वरी के सलाहकार) नियत हुए :—

जीवन समय तक ।

महाराज काश्मीर, श्रीरणवीरसिंह जी० सी० एस० आइ० ।
" बूंदी, श्रीरामसिंह जी० सी० एस० आइ० ।
" ग्वालियर, श्रीजयाजीराव सेंधिया जी० सी० एस० आइ० ।
" इन्दौर, श्रीतुकाजीराव हुल्कर जी० सी० एस० आइ० ।
" महाराज जयपुर, श्रीरामसिंह जी० सी० एस० आइ० ।
" त्रावनकोर, श्रीरामवर्मा जी० सी० एस० आइ० ।
" जींद, श्रीरघुबीर सिंह जी० सी० एस० आइ० ।
" नौवाब रामपुर, कलबअलीखां जी० सी० एस० आइ० ।

पद का अधिकार रहने तक

श्रीयुत रिचार्ड ग्रान्डाजिनेट टेम्पेल जी० सी० एस० आइ० ड्यूक आव बकिंहैम ऐन्ड शान्डास, मद्रास के गवरनर ।

सर फ़िलिप उडहाउस जी० सी० एस० आइ०, के० सी० बी०, बम्बई के गवरनर ।

सर एफ़० हेन्स के० सी० बी०, हिन्दुस्तान के कमान्डरिनचीफ़ ।

सर रिचर्ड टेम्पल के० सी० एस० आइ० बंगाल के लेफ़्टेनेन्ट गवरनर ।

सर जार्ज कूपर सी० बी० पश्चिमोत्तर देश के लेफ़्टेनेन्ट गवरनर ।

सर राबर्ट डेवीस के० सी० एस० आइ०, पंजाब के लेफ़्टेनेन्ट गवरनर ।

सर जान स्ट्रेची के० सी० एस० आइ० गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर ।

सर हेनरी नार्मन के० सी० बी० गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर ।

आनरबल ए० राबहाउस क्यू० सी०, गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर ।

सर ए० क्लार्क के० सी० एस० जी०, सी० बी०, गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर।

आनरबल ई० बेली सी० एस० आइ० गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर।

सर ए० आरबुथनाट के० सी० एस० आइ०, गवरनर जेनरल की उन्सिल के मेम्बर।

नीचे लिखे हुए राजाओं को प्रधान श्रेणी के स्टार आव इन्डिया (जी० सी० एस० आइ०) की पदवी मिली :-

श्रीयुत महाराज रामसिंह, बूंदी ।

" महाराज ईश्वरीप्रसादनारायण सिंह, बनारस ।

" महाराज जसवन्त सिंह, भरतपुर ।

" प्रिन्स अज़ीमजाह बहादुर, आर्काट ।

इन लोगों को दूसरी श्रेणी के स्टार आव इन्डिया (के० सी० एस० आइ) की पदवी मिली :—

श्रीशिवाजी छत्रपति, राजा कोल्हापुर ।

राजा आनन्दराव पंवार, धारवाले ।

श्री मानसिंहजी, राजा ध्रांगध्रा ।

श्रीविभवजी, जाम नवानगर ।

आर० जे० मैकडोनल्ड, श्रीमती के ईस्ट इन्डीज़ की जहाज़ी फ़ौजों के कमान्डरिनचीफ़ ।

सर जार्ज कूपर सी० बी०, पश्चिमोत्तर देश के लेफ़्टेनेन्ट गवरनर ।

जेम्स स्टीवन साहिब, गवरनर जेनरल की काउन्सिल के पहले मेम्बर

आर्थर हावहाउस साहिब, गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर ।

ई० सी० बेली साहिब सी० एस० आइ० गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर ।

तीसरे दरजे के स्टार आव इंडिया [सी० एस० आइ०] की पदवी २५ आदमियों को मिली जिन में मथुरा के सेठ गोबिन्द दास, कश्मीर के दीवान ज्वाला सहाय, और तावणकोर के दिवान शशिया शास्त्री को भी गिनना चाहिये।
नीचे लिखेहुए राजाओं को उन के नाम के सामने लिखीहुई पदवियां मिलीं ।

महाराज गाइकवाड़ बड़ोदा—"फ़र्ज़न्दि ख़ास दौलति इंगलिशिया"

(अंगरेज़ी सरकार के मुख्य बेटे)

महाराज ग्वालियर—"हिसामुस्सलतनत" [राज्य की तलवार]

महाराज काश्मीर—"इन्द्रमहेन्द्र बहादुर सिपरिसल्तनत"(राज्य की ढाल)

महाराज अजयगढ़—"सवाई"

महाराज बिजावर—"सवाई"

महाराज चरखारी—"सिपहदारुलमुल्क" (देश के सेनापति)

महाराज दतिया—"लोकेन्द्र"

नीचे लिखे हुए सरदारों और रईसों को "महाराज" की पदवी अपनी जिन्दगी भर के लिये मिली :—

आनन्दराव पंवार, धार के राजा ।

छत्र सिंह, समथर के राजा बहादुर ।

धनुर्जय नारायणभंज देव, किलाकोंझार के राजा, उड़ीसा ।

देव्या सिंह देव, पुरी के राजा, उड़ीसा ।

जगदेन्द्रनाथ राय, [राजा नाटोर के घराने की बड़ी औलाद]

राजा ज्योतिन्द्र मोहन ठाकुर ।

कृष्णचन्द्र, मोरभंज वाले, उड़ीसा ।

महीपत सिंह, पटना ।

आनरबल राजा नरेन्द्रकृष्ण, कलकत्ता ।

राजा कृष्ण सिंह, सुसाग के राजा ।

राजा रतानाथ ठाकुर, कलकत्ता ।

नीचे लिखीहुई रानियों को उन के जीवन समय के लिये "महारानी" की पदवी मिली :—

रानी हरसुन्दरी देव्या, सिरसोल, बर्दवान ।

रानी हींगन कुमारी, पैंदरा, मानभूम ।

रानी सुरतसुन्दरी देव्या, राजशाही ।

राजा सर दिनकरराव के० सी० एस० आइ० को "राजा मुशीरिखास बहादुर" [राजा मुख्य सलाहकार बहादुर] की पदवी उन की जिन्दगी के लिये मिली ।

नीचे लिखेहुए सरदारों और रईसों को उन की जिन्दगी के लिये "राजा बहादुर" की पदवी मिली :—

रघुवीरदयाल सिंह, मिरोंदा के राजा ।

खड्गसिंह, सुरीला के राजा।

उदितप्रतापदेव, खरोंद के राजा।

राजा विश्वेश्वर मालिया, सिरसौल, बर्दवान।

राजा हरिवल्लभसिंह, बिहार।

राजा हरनाथ चौधरी, दुबलहट्टी, राजशाही।

राजा मंगलसिंह, भिनाई, अजमेर।

राजा रामरंजन चक्रवर्त्ती, बीरभूम।

नीचे लिखे हुए मनुष्यों को उन के जीवन समय के लिये "राजा" की पदवी मिली:—

बाबू अजीत सिंह, तरौल, प्रतापगढ़।

बाबा बलवन्त राव, जबलपुर।

बलवन्तसिंह, गंगवाना।

डमरू कुमार वेंकटिया नयुदू, ज़मींदार कलाहस्ती, उत्तर आरकाट।

देवा सिंह, राजगढ़।

दिगम्बर मित्र, कलकत्ता।

राव गंगाधरराम राव, ज़मींदार पितापुर, गोदावरी प्रान्त।

राव छत्रसिंह, ज़मींदार कन्याधन।

हरिश्चन्द्र चौधरी, मैमनसिंह।

कमलकृष्ण, कलकत्ता।

राय बहादुर चैतमोहनसिंह, दीनाजपुर।

कुंअर हरनरायनसिंह, हातरस।

कुंअर लछमनसिंह, डिप्टी कलेक्टर, बुलन्दशहर।

सर टी० माधवराव के० सी० एस० आई०, बड़ोदा के दीवान।

ठाकुर माधवसिंह, अजमेर।

प्रतापसिंह, अजमेर।

रामनरायनसिंह मुंगेर।

श्यामनन्द दे, बलेसर।

श्यामशंकर राय, टिउटा।

सरदार सूरत सिंह मंजिठिया सी० एस० आइ०।

राव साहिब त्र्यम्बक जी नाना अहीर, नागपुर के राव।

कांदीकिशोर भूपति ज़मींदार सुकोंदा, उड़ीसा।

यादोलव राव, ज़मींदार घोल, उड़ीसा।

२२ आदमियों को "राव बहादुर" की पदवी मिली जिन में गोपाल राव हरीदेशमुख, अहमदाबाद की स्मालकाज़कोर्ट के जज, और नारायण भाई दंडकार बरार के शिक्षाविभाग के डाइरेक्टर भी हैं।

२८ मनुष्यों को "राय बहादुर" की पदवी मिली जिन में डाक्टर राजेन्द्र लाल मित्र और बाबू कृष्णोदास पाल के नाम भी गिनने चाहिये।

८ आदमियों को "राव साहिब" की पदवी मिली, ४ को "राव" की, और ५ को "राय" की। इन में से अजमेर के पांच आदमी "रावसाहिब" और तीन "राय" हुए हैं। निस्संदेह अजमेर के चीफ़ कमिश्नर सिफ़ारश करने में बड़े उदार जान पड़ते हैं क्योंकि और भी बहुत सी पदवियां उधरवालों के हिस्से में आई हैं। हमारे पश्चिमोत्तर देश से तो सिवाय दो एक के कोई पूछा ही नहीं गया है यद्यपि योग्य पुरुषों की यहां कमी नहीं है।

राय मुन्शी अमीचंद अजमेर के जुडिशल असिस्टन्ट कमिश्नर को "सरदार बहादुर की पदवी मिली; रतनसिंह मध्य भरतखंड के पुलीस सुपरिन्टेन्डेन्ट को "सरदार" की; देवर परगना के ठाकुर हीरासिंह को "ठाकुर रावत" की; और लछमीनरायन सिंह बेरावाले को "ठाकुर" की पदवी दी गई। ४ आदमी "नौवाब" हुए। ४० को "खां बहादुर" का खिताब मिला जिन में से एक मौलवी अबदुललतीफ़ खां कलकत्ते के डिप्टी कलेक्टर भी हैं; और दो को "खां" का खिताब मिला।

इन सरदारों को उन के नाम के सामने लिखे हुए खिताब खानदानी मिले:—

महाराज सर जयमंगल सिंह बहादुर के० सी० एस० आइ० गिद्धौर, मुंगेर—"महाराज बहादुर"।

धर्मजीतसिंह देव, सरदार उदेपुर, छोटानागपुर महाल—"राजा उदयपुर।

नौवाब ख्वाजा अबदुलग़नी, ढाका—"नौवाब"

दीवान गयासुद्दीनअलीखां सज्जादानशीन, अजमेर, को उन की जिन्दगी भर के लिये "शेखुल्मशायख़" का खिताब मिला, और सरदार अतरसिंह बहादुर, भदौर, को "मआज़ुल उलमा उलफ़ीज़ला" का।

इस के सिवाय एक को "दीवान बहादुर" की, एक को "दीवान" की, और १२ को "आनररी असिस्टन्ट कमिशनर" की पदवी दी गई।

दो यूरोपियन महाशयों को फ़ारिन डिपार्टमेन्ट के आनररी असिस्टन्ट सेक्रिटरी का, और आनररी असिस्टन्ट प्राइवेट सेक्रिटरी का पद भी अलग २ दिया गया।

सेना के कितने अधिकारों के साथ भी "सरदार बहादुर" और "बहादुर" की पदवियां लगा दी गईं और सब छोटे २/अधिकारियों, जहाज़ी नौकरों, सेना के सिपाहियों और गोरों को एक २ दिन की तनखाह इनाम मिली और दूसरी रिआयतें भी इन के साथ की गईं। इस के सिवाय नेटिव कमिशन्ड आफ़िसर लोगों की तनखाह भी कुछ बढ़ा दी गई है।

रहीमखां खांबहादुर, असिस्टन्ट सर्जन लाहौर को "आनररी सर्जन" की पदवी मिली।

श्रीयुत रणबीर सिंह जी॰ सी॰ एस॰ आइ॰ महाराज जम्बू और कश्मीर, और श्रीयुत जयाजीराव सेंधिया जी॰ सी॰ एस॰ आइ॰ महाराज ग्वालियर को सेना के जेनरल [जरनैल] का पद प्रतिष्ठा की रीत पर श्रीमती राजराजेश्वरी की ओर से दिया गया।

राजालोगों के सलामी की शोधी हुई नई फ़िहरिस्त।

राज की सलामी

२१

गाइकवाड़ बड़ोदा, निज़ाम हैदराबाद और महाराज मैसूर।

१९

महारानी मेवाड, खान किलात; बेगम भूपाल; महाराज जम्बू, इन्दौर, ग्वालियर, ट्रैवंकोर और कोल्हापुर।

१७

बहावलपुर के नवाब, बूंदी के महाराव राजा, कोटा के महाराव, कोचीन के राजा, कच्छ के राव; और भरतपुर बीकानेर जैपुर करौली जोधपुर पटियाला और रीवां के महाराजा।

१५

धार, दतिया, ईडर, कृष्णगढ़, शिकम और उर्छा के महाराजा, देवास के छोटे बड़े राजा, प्रतापगढ़ के राजा, अलवर के महाराव राजा, रानाधौलपूर; डूंगरपूर और जैसलमेर के महा रावल, झालावार के महाराज राना, खैरपूर के खां और सिरोही के राव ।

१३

महाराज बनारस, जावरा और रामपूर के नवाब, कोंच बिहार, रतलाम और त्रिपुरा के राजा ।

११

चम्बा, छतरपूर, धांगध्रा, फरीदकोट, झबुआ, जींद, काहलूर, कपूरथला, मण्डी, नाभा, नरसिंहगढ़, राजपिप्पला, सीतामऊ, सिलहना, सिरमौर, और सुकेत के राजे। बावनी, कम्बे, जूनागढ़, राधनपूर, राजगढ़ और टोंक के नवाब। अजयगढ़, विजावर, चरखारी, पन्ना और समथर के महाराजे; बांसवारा के महारावल, भाव नगर के ठाकुर, नवा नगर के जाम, पालनपुर के दीवान और पोरबन्दर के राना ।

९

अली राजपूर, बड़वानी और लुनवारा के राना; बेरिया, छोटा उदयपूर, नागोद और सोंठ के राजा; बालासिनोर के बाबी, कुबदी और जञ्जा के सुलतान तथा सावन्तवाड़ी के देसाई और मालियर कोटला के नव्वाब ।

शारीरक सलामी ।

२१

महाराज दिलीप सिंह, महाराज जीयाजी राव सेंधिया, महाराज तुकोजी राव होल्कार, महाराना सज्जन सिंह जी उदयपूर, महाराज राम सिंह सवाई जयपूर, महाराज रणवीर सिंह काश्मीर, महाराज श्रीरामवरमा ट्रावेङ्कोर ।

१९

मुरशिदाबाद के नवाब निज़ाम, महाराज जसवन्त सिंह जोधपूर, महाराज सरजङ्ग बहादुर वज़ीर नयपाल, महाराज रघुराज सिंह रीवां ।

१७

बेगम भूपाल के पति, हैदराबाद के सालारजङ्ग और शमसुलउम्रा, महाराज पृथ्वीसिंह कृष्णगढ़, महाराज महेन्द्रप्रताप सिंह उर्छा और नवाब इब्राहीमखां टोंक ।

१५

आर्काट के प्रिन्स अज़ीमजाह, ठाकुर तख़्तसिंह जी भाव नगर, कुदसिया बेगम भूपाल, राना मानसिंह ध्रांगध्रा, नवाब महाबतखां जूनागढ़, जाम श्रीविभवजी नवा नगर, नवाब कलबलीखां रामपूर ।

१३

महाराज मेंहताबचन्द वर्दवान, महाराज जींद, महाराज पन्ना, महाराज विजयनगरम, राजा नाभा और रानी विजय महिम्नी मुन्नाबाई तंजौर ।

१२

उमर बिन सल्लह बिन मुहम्मद नक़ीब मकला, औध बिन उमर जमादार शहरा ।

११

नवाब मालियर कोटला, ठाकुर मोरवी और राजा टेहरी ।

९

महारावल बांसवाड़ा, महाराजा बलरामपुर, महारावल धरमपुर, भील गोंदल, लिमड़ी, पालीटाना, राजकोट और वादवान के ठाकुर, जंगीरा के और सुचीन के नवाब; खंरोड़, वंकनीर विरोंदा और मैहर के राजे और सुलतान मकोतरा तथा किलिचीपुर के राव ।

विदित रहे कि महाराज नैपाल, सुल्तान मसकत, सुलतान जंजीबार और अमीर काबुल की सलामी भी २१ है ।

कालचक्र

अर्थात्

संसार में जो बड़ी बड़ी घटना हुई हैं उन का समय निर्णय।

श्रीहरिश्चन्द्र लिखित.

ॐ कालात्मने भगवते श्रीकृष्णाय नमः

भूमिका ।

हाय ! इस 'कालचक्र' को पूरा करके छपाने की भी नौबत न पहुंची कि पूज्यपाद भारतेन्दु जी आप ही कालचक्र के कराल गाल में जा फंसे ! अस्तु भगवदिच्छा, अब कोई बश नहीं ।

यह उन का परिश्रम आप लोगों की सेवा में भेट किया जाता है, यदि इस से आप लोगों को कुछ भी सहायता मिलैगी तो सब परिश्रम सुफल हो जायगा ।

बनारस
वैशाष कृष्ण १ सं० १९४९.

सेवक
श्रीराधाकृष्ण दास ।

ॐ कालात्मने श्रीकृष्णाय नमः ।

कालचक्र ।

ईसवी के पूर्व का काल ।

घटना		समय	विशेष
सृष्टि का प्रारम्भ		१९७२९४७१०१	आर्य्य लोगों के मत से ।
सत्ययुग का प्रारम्भ		३८९११०१	,,
त्रेतायुग का प्रारम्भ		२१६३१०१	,,
द्वापरयुग का प्रारम्भ		८६७१०१	,,
कलियुग का प्रारम्भ		३१०१	ज्योतिष के मत से
,,		१८५७	भागवत ,,
,,		१६७५	ब्रह्माण्ड पुराण ,,
,,		१७२९	वायु पुराण ,,
,,		१०७८०	बौद्ध लोग ,,
इक्ष्वाकु का जन्म और प्रथम बुद्ध		२१८३१०२	पौराणिक मत से
,,	,,	५०००	जोन्स ,,
,,	,,	२७००	विलफर्ड ,,
,,	,,	१५२८	बेन्टली ,,
,,	,,	२२००	टाड ,,
,,	,,	३५००	जोन्स ने स्थानान्तर में माना है ।
श्रीराम	....	८६७१०२	पौराणिक मत से
,,	....	२०२९	जोन्स ,,
,,	....	१३६०	विलफर्ड ,,

घटना	समय	विशेष
श्रीराम	९५०	बेन्टली के मत से
,, ...	११००	टाड ,,
युद्धिष्टिर	३१०२	पौराणिक मत से
,, ...	५७६	बेन्टली ,,
,, ...	१४३०	बिलफ़र्ड ,,
,, ...	१३९१	डेविस ,,
,, ..	११८०	जोन्स और कोलब्रुक ,,
महाभारत का युद्ध	१३६७	बिल्सन के मत से
कश्मीर राज्य स्थापन	३७१४	
परीक्षित	३१०१	
श्री विष्णु स्वामी	३०००	
श्री निम्बार्क स्वामी	३०००	
जनमे जय	१३००	
सुमित्र और प्रद्योत	२१००	पौराणिक मत से
,, ...	१०२९	जोन्स ,,
,, ...	७००	बिलफ़र्ड ,,
,, ...	११९	बेन्टली ,,
,, ...	९१५	बिलसन ,,
,, ...	६००	बर्मावाले ,,
स्वायम्भुवमनु	४००६	
जयगुप्त ने नैपाल राज्य की स्थापना की	२५९९	
सृष्टि का प्रारम्भ	४००४	हिब्रु धर्म्म पुस्तक के मत से
,, ...	५८७२	अन्य बिद्वानों के मत से
,, ...	४७००	समारतिन मत से
,, ...	४७१०	जुलियन मत से

घटना	समय	विशेष
आदम की उत्पत्ति	४००४	
कायन की उत्पत्ति	४००३	
नूह का प्रलय	२३४९	
चीन राज स्थापन	२२०७	
मिश्र राज स्थापन	२१८८	
ईब्राहीम का जन्म	१९९६	
हिन्दुस्तान से एथिओपियन लोगों का मिश्र में जाना	१६१९	
मूसा की उत्पत्ति	१५७१	
यूनान की सभ्यता	१५००	
यूरोप में पहले पहल जहाज़ चलना	१४८५	
शाक्य सिंह	१०२७ ई० पू०	चीनियों के अनुसार
”	९६२ ई० पू०	तिब्बत के अनुसार
दायूद का काल	१०३४	
रुस्तम-हिन्दुस्तान में आकर कन्नौज में शिवराजवंश स्थापन किया	१०२७ ई० पू०	फरिश्ता
सलेमान का उदय	९९२	
क्वीन सैमीरेमिस अर्थात् शमीरामा देवी	८१०	तृतीय बलवश की स्त्री कहते हैं कि यह भारत-वर्ष में आई थी।
शिशु नाग	१९६२	पौराणिक मत से
”	८७०	जोन्स ”
तिब्बत राज्यारम्भ	९६२ ई० पू०	तिब्बत के अनुसार।
विलायत में चांदी तथा सोने का सिक्का बनना	८९४	
मालवा का राज्य चला (धनंजयस)	८४०	
विलायत में चन्द्रग्रहण गिना जाना	७२१	किसी के मत से इसी साल गौतम का जन्म.

घटना	समय	विशेष
शिशुनाग	७७७	
वलीदके काल में मुसल्मानों नेभारतवर्ष में उपद्रव मचाया	७११	
अन्हल चौहान	७००	
शंकर ने गौर (लखनौती नगर) बसाया.	७३१ ई० पू०	
चौहान) राज्यस्थापन अन्हल चौहान)	७०० ई०पू०	दिल्ली अजमेर का राज्य इस वंश में अब निमरान के राजा हैं।
चीनी रौतातारियों में बड़ी अलड़ाई	६३६	
नन्द	१६००	पौराणिक मत से
,,	६९९	जोन्स ,,
महावीर स्वामी (जैनों के)	६२९	
भारतवर्ष से विजयराज ने लंका में जाकर जीतकर राज स्थापन किये	५४३ ई० पू०	
ब्रह्माराज्य स्थापन	६९१ ई० पू०	
विलायत में गानविद्या का नियमित रूप से चलना	६००	
चन्द्रगुप्त	१५०२	पौराणिक मत से
,, ...	६००	जोन्स ,,
गौतम (बौद्ध मत का प्रचार)	६०८ ई० पू	बर्मा वालों के मत से
रोम नगर में पहिलेपहले मर्दुम शुमारी	५६६	
नौशेरवां की सैना हिन्दुस्तान में आई।	५३०	
एथीन नगर में पहलेपहल दुःखान्त नाटक खेला जाना	५३५	
पथशा गोरस मिशर में आया	५३४	

घटना	समय	विशेष
अशोक	१४७०	पौराणिक मत से
,, ...	९४०	जौन्स ,,
सिंहलद्वीप को भारतवर्ष से विजय राजा ने जा कर जीत कर राज्य स्थापन किया.	९४३	
अरस्तू का अंत और सुकरात का उदय	४६८	
नन्द	४१९	नवीन विद्वानों के मत से।
दहलू ने दिल्ली बसाई	४७१ ई० पू०	
सिकन्दर का जन्म	३९६	
चन्द्रबीज (मगध का अन्तिम राजा)	४९२	पौराणिक मत से
,,	३००	जोन्स ई० ,,
चन्द्रगुप्त	३१९ ई० पू०	
अशोक	३३० ई० पू०	
सिकन्दर	३३४ ,,	
सिकन्दर ने हिन्दुस्तान पर चढ़ाई की	३३१ ई० पू	
दूसरे अरस्तू जुकरात बुकरात आदि का उदय	३३०	
सिकन्दर का भारतवर्ष में आगमन	३३७	
सिकन्दर का मृत्यू	३२३	
कहकहा दीवाल का बनना	३००	
बली	९०८ ई० पू०	पौराणिक मत से
,, ...	१४९	जोन्स ,,
जैसलमेर में यादवों का राज्य स्थापन	१९० ई० पू०	
विक्रमादित्य	९६ ई० पू०	

ईसवी सन से पूर्व या ईसवी सन में।

घटना	समय	विशेष
विक्रमादित्य गद्दी पर बैठा	५७	
कैसर का उदय	५०	
ईशामशी फांसी पड़े	३३ ई०	
रोमवालों ने लन्डननगर बनवाया	५० ई०	
सौराष्ट्र में वल्लभी वंश	१ ई०	
मनीपुर राज्यारम्भ (पाखंबा)	३५ ई०	
फारस राज्य स्थापन (अर्द शेर)	२२६ ई०	
आमेर राज्य स्थापन (नल-नरवर गढ़)	२९४ ई०	
कर्णाट राज्यस्थापन	३०० ई०	
यूनान और एशिया में महाभूकम्प हुआ १५० एनगर नष्ट हो ग	३५८ ई०	
राठौर राज्य कन्नौज में स्थापन (यवनाश्व)	३००	
भोज	४८३ ई०	
मुहम्मद	५९४ ई०	जन्म ५६९ ई० मृत्यु ६३३ ई०
भारतवर्ष से यूरप में रेशम गया	५५१ ई०	
एलोमार्चिश	६४८	Poulomeon of chinese
अवूबकर	६३२ ई०	
उमर	६३४	
उसमान	६४४	
अली	६५६	

घटना	समय	विशेष
हुसन	६६१	
करबला का युद्ध	६८१	
मुहम्मद का मदीने पलायन हिजरी सन का स्थापन	६२२	
मुसल्मानों ने इसकन्दरिया का प्रसिद्ध पुस्तकालय जला दिया जिस में केवल पुस्तकों की अग्नि से महीनों सब काम हुआ. हा !	६४०	
गुजरात राज्य स्थापन (शैलदेव द्वारा)	६६९ ई०	
बापारावल	७१३ ई०	
हारुंरशीद	७८६	
ईशामसीह के. जन्म से ईसवी सम्वत की गणना चली	७४८	
वकील विद्या की यूनान और रोम में सृष्टि हुई.	७८८	
मेवाड़ राज्य स्थापन	७५०	
रुरिक ने रूस राज्य बसाया	८६१	
इङ्गलैंड के लोगों ने ईंटा बनाना सीखा और मोमबत्ती	८८४	
चालुक्य वंश राज्य	८१०	
सुबुकतगीन की भारतवर्ष पर चढ़ाई	९७०	
जयपाल और सुबकतंगी का युद्ध	९७७ ई०	
दूसरे आरडोनों ने स्पेन में सत्तर हज़ार मुसल्मानों को मारा।	९१८	

घटना	समय	विशेष
इङ्गलैंड में फ्रीमैसन चला	९२६	
यूरुप में गणित विद्याचली।	९४१	
तैलंग राज्य स्थापन (राजधानी बारंग गोला)	९६१	
महमूद गज़नवी की पहली चढ़ाई	१००१	
सोमनाथ का टूटना	१०२४	
यूरप में कागज़ गूदर से बना	१०००	
क्रूसेड का प्रसिद्ध धर्म युद्ध तीन लाख क्रुस्तानों ने आरंभ किया	१०९६	
हारावती (हाड़ा) राज्य स्थापन	१०२४ ई०	अब कोटा बूंदी
बंगाल राज्य स्थापन (भूपाल)	१०००	
विजय नगर राज्य स्थापन (नन्द) विद्यानगर	१०३४	
पृथ्वीराज	११९२ ई०	
मुहम्मद गोरी	११९३	
श्री रामानुज	११३७	
श्री शंकराचार्य	११२२	
शहाबुद्दीन की पहली चढ़ाई	११९१	
पृथीराज की हार भारत स्वाधीनता का अन्त	११९३	
युक्लिल इङ्गलैंड में गई	११३०	
पुस्तक बेंचने की चाल इङ्गलैंड में चली	११००	

घटना	समय	विशेष
इङ्गलैंड में कर में रुपया लेना चला अब तक अन्न आदि लियाजाता था.	११३६	
बेंकटागिरि राज्यस्थापन (पाटलमारि वेताल)	११४०	
गया उद्धार के हेतु उदयपुर के नौ रानाओं का वीरगति पाना	१२०० ई०	
रणथम्भौर का हम्मीर	१२०९ ई०	
चंगेजखान	१२०६	
हलाकू	१२५९	
कुतबुद्दीन एबक	१२०६	
चंगेज़ खां का भारत में उपद्रव	१२१२ ई०	
रजीयाबेगम स्त्री बादशाह हुई	१२३६ ई०	
दक्षिण पर मुसल्मानों की पहली चढ़ाई	१२९४	
हलाकू ने तातार राज्य स्थापन किया	१२५९	
बंगाले में (लखनौती गौर) मुसलमान राज्यारम्भ (बखतियार खिलजी).	१२०३	इन लोगों ने अकबर के समय तक राज्य किया।
इङ्गलैंड में जिआशर्फी गई	१२१०	
प्रसिद्ध मैगनाचार्टा पर हस्ताक्षर हुए और पार्लीमेंट इंगलैंड में चली	१२१५	२५ जून

घटना	समय		विशेष
कम्पनी बनाकर व्यापार करने की चाल चली	१२३२		
इंगलैंड में प्रतिष्ठित लोगों को इस्कायर कहने की चाल चली।	१२४४		
वहां राज कवि का पद प्रतिष्ठित हुआ	१२५१		
वहां पहले पहल सोने का सिक्का बना	१२५७		
राठौरों का जोधपुर में बसना	१२१०		
वीरबुक्कराज विजयपुर का राजा माधवाचार्य	१३३४	ई०	
तैमूर	१३९३		
श्रीमध्व	१३००		
जौनपुर की शाही स्थित हुई (ख्वाजा जहान)	१३९४	....	सन् १४७६ में यह राज बंगाले के मुसल्मानी राज में मिल गया।
गुजरात राज नाश	१३०९	....	अलाउद्दीन मुहम्मद शाह ने जीता।
कुलबर्गा की बहमनी बादशाहत का आरंभ	१३४७		
यूरुप में चांदी के बरतन चिमचेचले और अलजेबरा आया।	१३००		
वहीं हुंडी की चाल चली।	१३०७		

घटना	समय	विशेष
गोटा किनारी चला (यूरप में)	१३२०	
छठें चार्लस फरासीस के बादशाह के वास्ते ताश का खेल बना	१३९१	
मालवाराज्यध्वंस	१३३० ई०	मुसल्मानी राज्य में मिलगया।
गुरुनानक	१४१९	
गुरु अंगद	१४३०	
बीजापुर की बादशाहत का आरंभ	१४८९	
इंगलैंड में बारुद बनी	१४१८	
काठ के टाइप से योरुप में पहले पहल छापना चला	१४३०	
वहां शीशा बनाना चला	१४५७	
वहां तौल नियत हुई	१४९२	
वास्कोडिगामा का हिन्दुस्तान खोजने को चलना	१४९७	
कलम्बस के साथियों द्वारा अमेरिका प्रादुर्भाव	१४९९	
बीकानेर राज्य स्थापन. (बीका)	१४५८	
आसाम राज्यारम्भ	१४००	
मैसूर राज्य स्थापन (वड्डवाड्डियार)	१४९०	
सांगाराना का बाबर को जीतना।	१५०८	
राना प्रताप सिंह अकबर का घोर युद्ध।	१५८३	
गुरु अमरदास	१५५२	

घटना	समय	विशेष
गुरुरामदास	१५७४	
गुरुअर्जुन	१५८१	
श्रीवल्लभाचार्य	१५३५	
श्री कृष्णचैतन्य	१५४२	
श्री हितहरिवंशजी	१५८२	
बाबर का दिल्ली राज्य पर बैठना	१५२६	
सक्के ने चमड़े का सिक्का चलाया	१५३९	
गोलकुंडा की बादशाही का आरंभ	१५१२	
डिफेंडर अवदि फेथ का पद हेनरी (७) को दिया गया जो अब भी महारानी को है।	१५२१	Defender of the faith
प्रोटेस्टेंट मत स्थापन	१५२९	
इङ्गलैंड में डाक खानों की सृष्टि	१५३१	
वहां के लोगों ने सुई बनाना सीखा।	१५४५	
मेरी स्काटलैंड की रानी का सिर काटा गया।	१५८७	एलिज़ेबथ ने व्यर्थ यह पाप किया एलिजेबथ बड़ी पापासक्त थी किंतु प्रकट में धार्मिक बनी थी।
इङ्गलिश मर्क्यूरी नामक प्रथम समाचारपत्र चला	१५८८	English Mercury
कवि शेक्सपीयर का उदय	१५९५	
शिवाजी	१६४७ ई०	
गुरु हरिगोविन्द	१६०६	

घटना	समय	विशेष
गुरु हरिराय	१६४४	
गुरु हरिकृष्ण	१६६१	
गुरु तेगबहादुर	१६६४	
गुरु गोविन्दसिंह	१६७५	
व्याल जी	१६१२	
अकबर का मरना	१६०५	
सेवा जी का जन्म	१६२७	
ईस्टइण्डिया कम्पनी स्थापित हुई	१६००	
मदरास में अंगरेज जमे	१६२०	
तथा बम्बई में	१६६१	
बन्दा साहब	१७०८	
लंका का राज्य अङ्गरेजों ने लिया	१७९८ ई०	
हैदराबाद का राज्य आसिफजाह ने स्थापन किया	१७१७	
बाजीराव का अन्त	१७१८ ई०	
लखनऊ राज्यारम्भ	१७००	
पानी पत में भाऊ की हार	१७५९	
शाह आलम को गुलाम कादिर ने अन्धा किया	१७८८	
सिंहल (लंका) का अन्तिम राजा श्रीविक्रम राजसिंह	१७९८ ई०	अंगरेजों ने लिया
सर न्यूटन जोन्सी	१७००	
ईंगलिस्तान में सुत की कल तथा फारस में प्रथम बैल्यून	१७३०	
कलकत्ता अंगरेजो ने स्वाधीन किया	१७५६	

घटना	समय	विशेष
बगसर की सराजुद्दौला की लड़ाई	१७६४	
यह बात जानी गई की जल दो वायू मिलकर बनता है	१७८१	
अमेरिका स्वतन्त्र हुई सवा अरब रुपैया पचास हजार प्राणी और कई टापू गवां कर अंगरेज सांत हुए	१८७२	
विद्युतशक्ति प्रचारक वेनजमिनफ्रैंकलिन मरा	१७९०	
नेपोलियनवोनापार्ट	उदय १७९४ अस्त १८२१	
वारन हेस्टिंग्स–जिस ने राजा चेत सिंह से महा महा अन्याय पूर्वक बनारस का राज्य छीना था सात लाख रु० पार्लिमेंट में व्यय कर के सात वरस में उन लोगों की दृष्टि में दोष मुक्त हुआ।	१७९५	किन्तु न्यायकर्त्ता परमेश्वर के सामने से दोष मुक्त कब हो सकता है।
प[illegible]रासीस में अंगरेजों ने अति दुःखित जान [illegible]याालु आर्यों ने क[illegible] बंगदेश से पन्द-[illegible]ख और अन्य२ शिव[illegible] से करोड़ों [illegible] हुजा।	१७९८	इलवर्टविल विद्वेषी इस को पढ़ कर भी हमलोगों से कृतघ्न-ता करने में न चूकैंगे?
[illegible]ा अंगरेजों ने [illegible]ट्टन लिया।	१७९९	

घटना	समय	विशेष
हैदराबाद में निज़ाम राज्य स्थापन (आसिफजाह)	१७१७	
बनारस में सर्कार का राज्य	१७६३	राजा चेतसिंह को निकाल दिया १७८१
वजीर अली का उपद्रव	१७९८	
मथुरा में क़त्लेआम	१७५८	
नादिर शाही	१७३९ ई० १७३५	
कलकत्ता सर्कार ने लिया पलासी की लड़ाई	१७५८	
विजयनगर (विद्यानगर) राज्यनाश	१७५६	राजा त्रिमल्ल राव को सुलतान खां ने राज्य से उतारा।
पेशवा राज्यारम्भ	१७४०	
	१७३४	भोंसले
	१७२४	
	१७२४	
	१७२०	
	१८०५	
	१८१४	
	१८४७	
	१८०३	
	१८००	

घटना	समय
इन्जीन से नाव चलाना चला।	१८१२
शाहसुजा से महाराज रनजीत सिंह ने कोहनूर हीरा लिया।	१८१४
महरानी विक्टोरिया का जन्म	१८१९ से २०
लार्ड बेंटिक ने सती होना बन्द किया।	१८२९
अमेरिका से पहले पहल जहाज में बरफ़ भर के कलकत्ते में आया।	१८३३
अंगरेजी राज्य के सब टापू में लौंडी गुलाम स्वतन्त्र कर दिए गए।	१८३४
महरानी विक्टोरिया राज्य पर बैठी	१८३७ २० जून
महराणी विक्टोरिया का विवाह। दोस्तमहम्मद का पकड़ा जाना। रेल का नयमित रूप से चलना	१८४० फर्वरी
प्रिन्स आफवेलस का जन्म	१८४१
प्रेन्सेस आफ़वेल्स का जन्म	१८४४
हिन्दुस्तान में बलवा	१८५७
महारानी का ईस्टइंडिया कम्पनी से राज्य अपने हाथ में लेना	१८५८